गृह-व्यवस्था
एवं
गृह-कला

गृह-व्यवस्था एवं गृह-कला
HOUSEHOLD MANAGEMENT & HOUSEHOLD ART

(विभिन्न विश्वविद्यालयों के नवीन पाठ्यक्रमानुसार)

लेखिका

डा० (श्रीमती) जी० पी० शैरी, एम. ए., बी. टी.
डिप० होम साइन्स, ए. आई. ई. (लन्दन), पी-एच. डी.
उप-प्रधानाचार्या, महिला प्रशिक्षण विद्यालय
दयालबाग, आगरा

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

प्राक्कथन

मेरी पूर्व पुस्तक *'गृह व्यवस्था'* पाठकों मे *अत्यधिक* लोकप्रिय हुई किन्तु उसमें स्नातक कक्षाओं के गृह-विज्ञान विषय के पाठ्यक्रमानुसार सभी विषय समाविष्ट नही थे। छात्र तथा छात्राओं की इस कठिनाई की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया गया।

अतः इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु यह नवीन पुस्तक प्रिय छात्रों एव छात्राओं के हाथों में सौंपते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है।

इस पुस्तक मे इस तथ्य का पूर्णरूपेण ध्यान रखा गया है कि छात्र-छात्राओ को वाछित सामग्री एक ही स्थान पर उपलब्ध हो जावे और इस क्षेत्र में उनका ज्ञान अपूर्ण नही रह जावे। *आगरा, मेरठ, पटना, कानपुर, गोरखपुर, बनारस एवं राजस्थान आदि* सभी विश्वविद्यालयों द्वारा बी० ए० परीक्षा हेतु निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार इसमें सम्पूर्ण विषय-सामग्री उपलब्ध है।

इस नवीन पुस्तक मे *'गृह-व्यवस्था'* के अतिरिक्त *'गृहकला'* का विषय भी सम्मिलित किया गया है। इसमे गृह-कला और उसके सिद्धान्त एव तत्व, घर का आयोजन एवं गृह-सुसज्जा के सिद्धान्त तथा गृह-सज्जा पर विशेष बल दिया गया है।

विषय-वस्तु को सरल, बोधगम्य एवं वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इसे व्यावहारिक बनाने के लिये पर्याप्त उदाहरण एवं विशेषज्ञो द्वारा किये गये अध्ययन भी दिये गये हैं।

मुझे आशा ही नहीं अपितु दृढ विश्वास है कि प्रस्तुत पुस्तक छात्र-छात्राओ के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। पुस्तक में सुधार हेतु रचनात्मक सुझावों का मैं स्वागत करूँगी तथा हृदय से आभारी रहूँगी।

इस पुस्तक की भाषा परिमार्जित हेतु मैं डा० खुशीलाल परमार एम० ए०, *एम० एड० की अत्यन्त आभारी हूँ तथा साथ ही साथ मैं श्री* विनोद पुस्तक मन्दिर के प्रति भी आभार व्यक्त करना चाहती हूँ जिन्होंने बडे ही उत्साह एव लगन से पुस्तक को सुन्दर एवं आकर्षक ढंग से प्रकाशित किया।

१ जुलाई १९७०

जी० पी० शैरी

अनुक्रमणिका

अनुक्रमणिका

भाग २

गृह-व्यवस्था के मूल आधार

भाग ५

घर और सुसज्जा

विषय-प्रवेश

विज्ञान और शिल्प-विज्ञान की प्रगति के बढते हुए चरण मानवीय सुखसम्पन्न साधनों की खोज मे भूतल और सागर के अन्तराल को चीरते हुए आकाशस्थित मंगल और चन्द्रलोक तक पहुँच गये हैं। मानव की इन अद्वितीय सफलताओं ने उसके जीवन-दर्शन को पूर्णत. परिवर्तित कर दिया, परिणामत: उसके जीवन के मूल्य, उसकी आकांक्षाएँ, लक्ष्य एव जीवन-स्तर द्रुत गति से बदलते जा रहे हैं। भौतिक सुख-सुविधाओ के प्रसाधन आज विपुलता से उसे उपभोग हेतु उपलब्ध हैं। कोई भी परिश्रमशील, अध्यवसायी, प्रबुद्ध व्यक्ति इन्हे प्राप्त करने के लिए प्रयास कर सकता है। देश की वर्तमान लोकतान्त्रिक समाज-व्यवस्था मे नागरिको को अपने विकास हेतु समान अवसर प्रदान किए जा रहे हैं। परन्तु इतना सब होते हुए भी मानव-जीवन अशान्त, आशंकापूर्ण एव अनिश्चितता की स्थिति मे है। उसे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि भौतिक प्रगति तो साधन मात्र है, साध्य नही। उसकी प्रमुख साधना तो मानव-जाति की सेवा करते हुए आत्म-बोध प्राप्त करना है। इस परम लक्ष्य की उपलब्धि में सुखी एवं समृद्ध परिवार अपूर्व योग दे सकता है।

परिवार समाज की मौलिक एवं आधारीय इकाई है। परिवार के सदस्यों की प्रगति एव सुसंस्कृतिता मे ही देश, राष्ट्र और समाज की प्रगति निहित है। एक आदर्श गृह मे व्यक्ति श्रेष्ठ मानवीय गुणो का परीक्षण किया जाता है तथा उसे अपनी प्रतिभाओं के विकास के लिए विपुल अवसर प्रदान किये जाते हैं। विश्व के महान् अध्यात्म-वेत्ताओं, दार्शनिको, साहित्यकारो, वैज्ञानिको, राजनीतिज्ञो, समाज सुधारको के निर्माण में परिवार और गृह का अमूल्य योगदान सदा से रहा है और रहेगा।

ऐसी स्थिति मे प्रत्येक राष्ट्र का यह कर्त्तव्य होता है कि वह परिवार जैसी समाज की महत्त्वपूर्ण इकाई को सुदृढ़ एवं साधन सम्पन्न एवं सौहार्द्रपूर्ण बनाये। परिवार की समृद्धि एव सुख-सम्पन्नता का भार अन्त में गृहिणी पर आता है। सुगृहिणी ही आदर्श गृह की निर्मात्री होती है। वह पुत्री, बहिन, पत्नी, माता, गृहस्वामिनी के

रूप में परिवार के प्रत्येक सदस्य की आजीवन सेवा-सुश्रूषा करने में ही गौरव का अनुभव करती है। उनकी मनोकामना, आकांक्षा एवं जीवन का उद्देश्य परिवार के सदस्यों का कल्याण मात्र है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए दिन-रात परिश्रम करती है, अपने सुख और सुविधाओं का बलिदान करती है। परन्तु वे गृहिणियाँ ही अपने इस गम्भीर उत्तरदायित्व को सफलतापूर्वक वहन कर सकती हैं जिन्हें परिवार के स्वरूप, संगठन एवं उत्तरदायित्वों का पर्याप्त ज्ञान हो। इसके अतिरिक्त उसमें उपलब्ध साधनों का परिवार के कल्याण के लिए मितव्ययता एवं विवेकशीलता से व्यय करने की क्षमता हो। उसे यह भली प्रकार ज्ञान होना चाहिए कि गृह को किस प्रकार अधिकाधिक सुविधापूर्ण, आनन्ददायक और आकर्षक बनाया जा सकता है। इन सभी तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए यह पुस्तक प्रस्तुत की जा रही है। प्रस्तुत पुस्तक में उपर्युक्त उपयोगी विषय-सामग्री को निम्नानुसार चार भागों में बाँटा गया है; यथा—

भाग १

पारिवारिक जीवन

(१) परिवार का संगठन एवं स्वरूप—'परिवार' समाज की एक महत्त्वपूर्ण इकाई है। मानव की भौतिक, मनोवैज्ञानिक एवं सुरक्षात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति परिवार में ही होती है। गृहिणी को—परिवार क्या है? संयुक्त परिवार के क्या गुण-दोष हैं? संयुक्त परिवार के विघटन के क्या कारण हैं? परिवार में कौन-कौन सदस्य होते हैं, तथा उनके आपसी सम्बन्ध क्या होने चाहिए, आदि सभी बातों की पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए।

(२) परिवार के उत्तरदायित्व—परिवार के अनेक उत्तरदायित्व होते हैं। स्वस्थ जीवन दर्शन का निर्माण करना, उसका महत्त्वपूर्ण दायित्व है। उसे परिवार के सदस्यों के लिए जीवन-स्तर, लक्ष्य व स्तर का निर्धारण भी करना पड़ता है। उसे परिवार का विकास और वृद्धि सम्बन्धी कार्य भी करना पड़ता है। गृह-व्यवस्था करना तथा परिवार के सदस्यों को घर के कार्यों एवं सामाजिक, राष्ट्रीय स्तर के कार्यों के योग्य बनाने का पुनीत दायित्व परिवार का ही होता है। गृहिणी को इन दायित्वों से परिचित होना चाहिए, तभी वह उन्हें सफलतापूर्वक निभाने में योग दे सकती है।

(३) परिवार में गृहिणी का स्थान—गृहिणी को परिवार में गृह की आयोजिका, संगठन-कर्त्री, प्रबन्ध-कर्त्री, निर्देशिका, निरीक्षिका एवं मार्ग-दर्शिका, गृह-निर्मात्री और संचालिका आदि के रूप में अपनी प्रमुख भूमिका अदा करनी पड़ती है। ये समस्त कार्य वह कैसे कर सकती है तथा आदर्श गृहिणी में कौन-कौन से गुण होने चाहिए, यह ज्ञान उसके लिए आवश्यक है।

भाग २

गृह-व्यवस्था के मूल आधार

(१) **गृह-व्यवस्था से अभिप्राय**—गृह-व्यवस्था का सम्पूर्ण भार प्रधानतः गृहिणी पर ही होता है। उसे गृह-व्यवस्था के अभिप्राय तथा उसके क्षेत्र से भली-भाँति परिचित होना चाहिए।

(२) **गृह-व्यवस्था के तत्त्व**—गृह-व्यवस्था का प्रमुख लक्ष्य परिवार के समय, शक्ति एवं धन रूपी साधनों का परिवार के प्रत्येक सदस्य के अधिकतम सुख और समृद्धि के लिए अधिकतम कुशलता से व्यय करना है। अतः गृहिणी को मानवीय आवश्यकताओं, परिवार के विभिन्न साधनों तथा आवश्यकताओं के अनुकूल साधनों के उपयोग करने के सम्बन्ध में पूरी जानकारी होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त उसे परिवार के जीवन-चक्र का ज्ञान होना चाहिए, ताकि वह पहले से ही जान ले कि पारिवारिक जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में कौन-कौन से विशिष्ट व अतिरिक्त उत्तरदायित्वों के लिए उसे तैयार रहना है।

(३) **गृह-व्यवस्था-प्रक्रिया**—गृह-व्यवस्था एक सतत् प्रक्रिया है। इसके चार प्रमुख सोपान होते हैं। वे सोपान है—आयोजन, योजना के क्रियान्वयन का नियन्त्रण, मूल्यांकन तथा निर्णय। निर्णय करने की प्रक्रिया अन्य तीनों सोपानों में सदैव होती रहती है। गृहिणी को पग-पग पर योजनाएँ बनानी पड़ती हैं, उन्हें क्रियान्वित करना पड़ता है व निर्णय लेने पड़ते हैं। गृह-व्यवस्था-प्रक्रिया से उसे भली प्रकार विज्ञ होना चाहिए।

(४) **मानवीय आवश्यकताएँ**—आवश्यकताएँ अनेक होती हैं। आवश्यकताओं की प्रकृति को निर्धारित करने वाले भौतिक शारीरिक, नैतिक, सामाजिक, आर्थिक व समता विषयक अनेक तत्त्व होते हैं। आवश्यकताएँ कौन-कौन-सी होती हैं, उनकी सामान्य विशेषताएँ क्या हैं तथा उनकी पूर्ति किस क्रम से की जाय? ये तथ्य गृह-व्यवस्था की सफलता की दृष्टि से अपूर्व महत्त्व रखते हैं। गृहिणी को इनके सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए।

(५) **रहन-सहन का स्तर**—प्रत्येक परिवार को अपना एक स्तर निर्धारित करना पड़ता है। उसका स्तर ही उसकी सामाजिक स्थिति को निर्धारित करता है। गृहिणी को रहन-सहन के स्तर का अर्थ, उसे प्रभावित करने वाले तत्त्व, भारतीय परिवारों का जीवन-स्तर तथा जीवन-स्तर को उठाने के उपायों से भली प्रकार परिचित होना चाहिए।

भाग ३

धन, समय और शक्ति का व्यवस्थापन

(१) **धन का व्यवस्थापन**—'धन' मानव प्रगति का आधारीय साधन है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु धनोपार्जन करता है। परिवार की

आय के कौन-कौन से साधन हैं? आय को किन-किन मदों पर किस प्रकार व्यय करना है? पारिवारिक बजट का क्या महत्त्व है?—आदि सभी प्रश्नों का व्यावहारिक उत्तर प्रस्तुत करने की क्षमता गृहिणी में होनी चाहिए।

(२) बचत—अर्जित आय को पूर्णतः तत्काल ही व्यय कर देना, बुद्धिमत्ता नहीं है। गृहिणी को भावी आकस्मिक घटनाओं और विशेष अवसरों के लिए अपनी आय का कुछ भाग अनिवार्य रूप से बचाना चाहिए। उसे यह भी ज्ञात होना चाहिए कि बचत के धन को भविष्य की सुरक्षा तथा धनोपार्जन हेतु विभिन्न संस्थाओं में विनियोजित भी किया जा सकता है। देश में धन का विनियोग करने के विभिन्न तरीके हैं। इन सभी से गृहिणी को परिचित होना चाहिए।

(३) समय का व्यवस्थापन—पुराने समय में व्यक्ति के पास गप-शपों में व्यय करने के लिए पर्याप्त समय होता था, परन्तु आज मानव जीवन अधिक व्यस्तता-पूर्ण हो गया है। उसे समय के मूल्य को ध्यान में रखकर अपने समय का व्यवस्थापन करना आवश्यक है। गृहिणी को अनेक कार्य करने पड़ते हैं। सीमित समय में अपने दायित्वों को सफलतापूर्वक तभी निभा सकती है, जबकि वह समय का विवेकपूर्ण ढंग से आयोजन करके अपने विश्राम के लिए भी समय निकाले।

(४) शक्ति-व्यवस्थापन—प्रत्येक कार्य करने में शक्ति का व्यय होता है। गृहिणी को अनेक कार्य करने होते हैं। उसे इस कला में प्रवीण होना चाहिए। कम-से-कम शक्ति व्यय करके अधिक से अधिक कार्य किस प्रकार किया जा सकता है? उसे यह तथ्य भली प्रकार जानना चाहिए कि घर में किन-किन कार्यों में कितनी शक्ति व्यय होती है। उसे थकान के स्वरूप, उसके कारण और निवारण के उपायों के सम्बन्ध में जानकारी होनी चाहिए, तभी वह सुविधापूर्वक सभी कार्य कर सकती है।

(५) कार्य का सरलीकरण—गृह के विभिन्न कार्यों, जैसे—खाना पकाना, बर्तन साफ करना, घर व वस्त्रों की सफाई करना—को कम समय व कम शक्ति व्यय करने की दृष्टि से सरल बनाने के सम्बन्ध में विदेशों में अनेक अध्ययन किये गये हैं। इन अध्ययनों से गृहिणी को विज्ञ होना चाहिए ताकि वह कार्य करने की ऐसी विधियाँ खोज निकाले, जो शक्ति व समय की दृष्टि से मितव्ययी हों।

(६) समय-शक्ति-बचत साधन—वैज्ञानिक प्रगति के परिणामस्वरूप गृहस्थी के कार्यों को करने के अनेक उपकरण बन गए हैं। उनका उपयोग करके कम-से-कम समय व शक्ति व्यय करके अच्छे से अच्छा कार्य किया जाना सम्भव है। गृहिणी को इन समस्त उपकरणों की जानकारी, उनके उपयोग का ढंग तथा उनके उपयोग की सावधानियों से भली प्रकार परिचित होना चाहिए।

भाग ४

मकान एवं कला

(१) मकान का आयोजन—'मकान' मनुष्य को प्रश्रय प्रदान करता है। मकान ही वह स्थल है, जो पारिवारिक सम्बन्धो व क्रिया-कलापों का केन्द्र है। अच्छे व सुन्दर मकान में निवास करने की आकांक्षा प्रत्येक व्यक्ति की होती है। गृहिणी को मकान के लिए उचित स्थान का चयन, परिवार की आवश्यकताओं को ध्यान मे रख कर उसके निर्माण का आयोजन, विभिन्न उपयोगी कमरों की स्थिति एव आयोजन के सम्बन्ध मे पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए।

(२) रसोईघर—रसोईघर के कार्यो मे गृहिणी का समय व उसकी शक्ति अधिक व्यय होती है। रसोईघर की स्थिति, उसकी रचना एव व्यवस्था जितनी अच्छी होगी, गृहिणी को उतनी ही सुविधा एव कुशलतापूर्वक कार्य करने के अवसर प्राप्त होंगे। अत. उसे रसोईघर की स्थिति, रचना एवं सुसज्जा के विषय मे वांछित ज्ञान रखना चाहिए।

(३) घर और कला—सुसंस्कृत एवं उत्कृष्ट जीवन की अभिव्यक्ति कला के माध्यम से ही होती है। कलापूर्ण जीवन व्यतीत करने मे ही आनन्द की अनुभूति होती है। गृहिणी को घरेलू जीवन मे कलात्मकता लानी चाहिए। गृह की प्रत्येक व्यवस्था कलापूर्ण एवं आकर्षक होनी चाहिए। इसके लिए गृहिणी को कला की प्रकृति, कला के तत्त्व, डिजाइन के सिद्धान्त, रंगों का सयोजन आदि के सम्बन्ध मे पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए।

(४) सज्जा के उपसाधन—घर की सुसज्जा के लिए कतिपय उपसाधनों की आवश्यकता होती है। इनके माध्यम से घर को आकर्षक एव रोचक बनाया जाता है। गृहिणी को इन साधनों तथा इन्हे कलात्मक ढग से सजाने का विस्तृत ज्ञान होना परमावश्यक है।

(५) पुष्प-विन्यास—गृह मे पुष्पों की व्यवस्था मानव को प्रकृति-सौंदर्य का बोध कराती है। पुष्पों की सुन्दरता का आनन्द लेते समय व्यक्ति मानवीय कृत्रिम जीवन की कटुताओं को क्षण भर के लिए भूल जाता है। घर मे तरह-तरह के फूलों को विविध स्थानों पर अनेक ढगों से सजाकर घर को स्वर्ग बनाने का कार्य गृहिणी ही करती है। उसे पुष्प-विन्यास के महत्त्व व विधियों तथा इनसे सम्बन्धित अन्य जानकारी पर्याप्त रूप से होनी चाहिए।

(६) फर्नीचर—घर में फर्नीचर का उपयोग विभिन्न कार्यों मे किया जाता है। आकर्षक फर्नीचर को कलात्मक ढंग से सजाने से घर मे सजीवता, सुन्दरता एवं रोचकता उत्पन्न हो जाती है। गृहिणी को सुन्दरता एवं उपयोगिता—दोनों की दृष्टियों से फर्नीचर को सुसज्जित व व्यवस्थित करने की कला का ज्ञान होना चाहिये।

भाग १

पारिवारिक जीवन

- परिवार का संगठन एवं स्वरूप
- परिवार के उत्तरदायित्व
- परिवार में गृहिणी का स्थान

अध्याय १

परिवार का संगठन एवं स्वरूप

परिवार : एक सामाजिक इकाई

मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज के अभाव में उसका जीवन ही सम्भव नहीं है। अब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि—समाज क्या है ? सामान्यत. व्यक्तियों के समूह को 'समाज' कहते हैं। व्यक्ति ही समाज के निर्माता है, परन्तु वास्तविकता तो यह है कि केवल व्यक्तियों के समूह-मात्र को ही समाज नहीं कह सकते। इसके अतिरिक्त भी समाज के लिए कुछ और चाहिए। जैसा कि राइट महोदय ने कहा है कि "केवल व्यक्तियो के समूह को ही समाज नही कहते, यह व्यक्ति तथा समूह के बीच विद्यमान सम्बन्धो की व्यवस्था है।" समूह मे रहते हुए भी यदि व्यक्ति मे समुदाय के प्रति प्रेम, स्नेह एव आस्था के भाव नही है और वह समाज की मर्यादा का पालन नहीं करता तो उसे समाज का अग नही माना जा सकता। मानव मे जितनी तीव्र प्रवृत्ति समाज मे मिल-जुलकर रहने की होती है, लगभग उतनी ही [illegible] प्रवृत्ति स्वार्थपरता की होती है। इन दोनों ही प्रवृत्तियो मे विरोधाभास है। समाज ऐसे मानवों का ही समूह है, जो इन दोनों प्रवृत्तियो मे सामजस्य स्थापित [illegible] समाज के अन्य व्यक्तियो के साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित कर सके। जिन्सवर्ग [illegible] के अनुसार, "समाज व्यक्तियो के उस समूह को कहते है, जो कुछ [illegible] तथा व्यवहारो द्वारा आपस म आबद्ध रहते है। जो इन व्यवहारो [illegible] समानता नही रखते, वे समाज के अग नही हो सकते।"

परन्तु इसका यह तात्पर्य कदापि नही कि समाज मे [illegible] भिन्नता नही हो। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि व्यक्तियो मे भिन्[illegible] तथा कुछ सीमा तक इनका विकास भी होना चाहिए [illegible] हुए भी उसे सामाजिक आवश्यकताओ, मर्यादाओ मान्[illegible]

अभीष्ट सम्मान एवं वरीयता देनी होगी। अतः कहा जा सकता है कि समाज व्यक्तियों का वह समूह है जो मानवीय अन्तर्सम्बन्धों से आवद्ध हो तथा जिसमें व्यक्ति एक-दूसरे की चिन्ता करते हुए अपने व्यक्तित्व का विकास करता है।

व्यक्ति ने अपने को समाज के वन्धनों में क्यों आवद्ध कर रखा है ?—इस सम्वन्ध में यह पूर्णतः स्पष्ट तथ्य है कि व्यक्ति समाज के अभाव में जीवित नहीं रह सकता। संसार में मानव-शिशु अन्य प्राणियों के वच्चों की अपेक्षा सवसे निर्वल होता है एवं समर्थ होने में सवसे अधिक समयावधि की इसे आवश्यकता होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि उसे सवसे अधिक आश्रय की आवश्यकता होती है। उसके समुचित विकास एवं वृद्धि के लिए—उसकी निरीहावस्था में सुरक्षात्मक आवश्यकता वड़ी आवश्यक होती है। समाज जव तक उसके अस्तित्व की सुरक्षा, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं नैतिक सुरक्षा प्रदान न करे, तव तक वह समाज का सक्रिय एवं योग्य सदस्य नहीं वन सकता। उसके जीवन को सुखमय वनाने के लिए समाज ही उसकी शिक्षा-दीक्षा एवं सद्गुणों के विकास के लिए उपयुक्त सुविधएँ प्रदान करने का कार्य करता है। उसमें आत्मविश्वास, विवेकपूर्ण निर्णय, परस्पर प्रेम-स्नेह, त्याग, कर्त्तव्यपरायणता आदि मानवोचित गुणों का विकास समाज में ही हो सकता है। समाज ही उसकी कुप्रवृत्तियों को सद्कार्यों एवं सुमार्ग की ओर उन्मुख कर सकता है।

परन्तु अव समस्या यह है कि समाज अपने इस दुरूह एवं महत्त्वपूर्ण उत्तर-दायित्व को किस प्रकार निभाता है। यदि व्यावहारिक दृष्टि से इस तथ्य की खोज करें तो उक्त समस्त उत्तरदायित्वों का भार अन्त में उसी सामाजिक-संस्था पर आकर पड़ता है जो भावी मनुष्य को जन्म देती है। इसी संस्था को परिवार कहा जाता है। वास्तव में देखा जाय तो व्यक्ति के प्रति समाज द्वारा किए जाने वाले कार्य परिवार के अतिरिक्त कोई भी संस्था नहीं करती। परिवार ही उसकी विभिन्न प्रकार की सुरक्षा तथा विकास एवं वृद्धि का भार ग्रहण करता है। उसके अन्दर सद्गुणों का विकास तथा उसकी विभिन्न क्षमताओं एव योग्यताओं का विकास परिवार द्वारा प्रदत्त सुविधाओं के द्वारा ही हो सकता है। इस प्रकार समाज के नाम पर व्यक्ति के लिए किए जाने वाले अधिकांश कार्यों एवं उत्तरदायित्वों का निर्वाह परिवार को ही करना पड़ता है।

अतः स्पष्ट है कि 'परिवार' समाज की नितान्त आवश्यक, आधारीय एवं प्राथमिक मौलिक इकाई है। समाज की सुदृढ़ता एवं सुसंस्कृति परिवार की कुशल कर्त्तव्यपरायणता पर निर्भर करती है। जिस समाज में परिवार अपने उत्तर-दायित्वों का पालन ईमानदारी एवं निष्ठापूर्वक करते हैं तो वह समाज निश्चय ही आदर्श समाज होगा। अतः आदर्श समाज के निर्माण की दृष्टि से आदर्श परिवार का निर्माण परमावश्यक है।

परिवार की आवश्यकता—मनुष्य आकांक्षाओं का पुञ्ज है। मनुष्य के जीवन में संतोष कभी नहीं होता। यह असन्तोष की भावना ही उसे व्यग्र रखती है। प्रत्येक प्राणी की कुछ-न-कुछ आवश्यकताएँ (Needs) होती हैं। इस संसार में बिना इच्छा किसी मनुष्य का कोई कार्य कभी नहीं दिखाई पडता है। जो कुछ करता है वह सब इच्छा से ही करता है। मनुष्य की आवश्यकताएँ पशुओं और पक्षियों की आवश्यकताओं से भिन्न होती हैं। पशुओं की केवल भौतिक आवश्यकताएँ होती हैं—भोजन, यौन-क्रिया और आश्रय। मनुष्य की आवश्यकताएँ इन प्रारम्भिक या भौतिक आवश्यकताओं से अधिक होती हैं। मनुष्य की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के क्षेत्र में निरन्तर वृद्धि होती है। मुख्य रूप से मनुष्य की आवश्यकताओं को दो भागों में बांटा जा सकता है।

(१) भौतिक आवश्यकता (Physical Need)—इन आवश्यकताओं को तीन भागों में बाँट सकते हैं। प्रथम भाग में शरीर की रक्षा के लिए वायु, भोजन, जल, वस्त्र तथा आश्रय। दूसरी आवश्यकता कार्यों में आराम की वस्तुएँ। तीसरी आवश्यकता यौन-सम्बन्ध की है।

(२) मनोवैज्ञानिक आवश्यकता (Psychological Need)—मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य के लिए एकाकी जीवन सबसे बड़ा अभिशाप है। सबसे पहले मनुष्य को स्नेह और सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता होती है। मनुष्य प्रेम का भूखा है। वह चाहता है कि कोई-न-कोई उससे प्रेम करे। समाज में लोग उसकी आवश्यकता अनुभव करें। प्रत्येक मनुष्य के लिए अनुभव और अनुभव के संगठन तथा गुणों के सादृश्य की भी आवश्यकता है। समाज में मनुष्य अपना स्थान (Status) बनाना चाहता है तथा इस प्रकार कार्य करना चाहता है कि उसके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो। व्यक्ति पूर्ण रूप से आत्म-विश्वासी तथा आत्म-निर्भर हो सके।

यदि हम समाज की ओर देखें तो पता चलेगा कि मनुष्य ने अपनी कुछ प्रारम्भिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए रीति-रिवाजों, संस्थाओं तथा कानूनों के द्वारा समाज का एक संघटन करने का प्रयास किया है। मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जितने संघटन बनाये हैं उनमें परिवार प्रमुख है। मनुष्य की आवश्यकताओं का पूरक परिवार है।

परिवार के कार्य—परिवार का प्राथमिक कार्य—अपनी जाति को लुप्त होने से बचाये रखना है, अर्थात् बच्चों को पैदा करना तथा उनकी रक्षा करना है। इस प्रकार जीवन की धारा परिवार में में होकर बहती है।

सामाजिक सम्पत्तियों की रक्षा—एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सामाजिक सम्पत्ति को वंशजों के लिए पहुँचाने का कार्य परिवार ही करता है। जमीन,

तथा अन्य व्यक्तिगत सम्पत्तियाँ परिवार द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को जाती रहती हैं। जाति की आध्यात्मिक सम्पत्ति भी परिवार के द्वारा ही व्यक्ति पाता रहता है।

परिवार एक पाठशाला—बालक परिवार में रहकर इतना सीखता है कि बहुत से शिक्षा-विशेषज्ञों की धारणा है कि सामाजिक शिक्षा के कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग स्कूल में दिए ही नहीं जा सकते, क्योंकि उन्हें बालक कुटुम्ब में रहकर सीख सकता है। धार्मिक और नैतिक शिक्षा के सम्बन्ध में यह विशेषतः सत्य है। बालक के नैतिक चरित्र की नींव पारिवारिक जीवन में ही पड़ती है। अधिकार, आज्ञा-पालन, कर्त्तव्य, प्रेम और भक्ति, सहिष्णुता आदि सम्बन्धी गुण बालक परिवार की सहायता से ही सीखता है। यदि परिवार में बालक देश-भक्ति के प्रति प्रेम, राज्य नियम तथा नागरिकता के आदर्शों के प्रति आदर का भाव न अपना सका तो बाद में उसके अच्छे नागरिक होने की सम्भावना कम रहती है। परिवार नागरिक-गुणों की पहली पाठशाला है।

सामाजिक उन्नति में परिवार का स्थान—परिवार में ही बालक दूसरों से प्रेम करना, दूसरों की सेवा करना तथा दूसरों के अधिकार की रक्षा करना आदि गुणों को अपनाता है। मानव अपने विकास के क्रम में यह प्रयास करता रहा है कि समाज में वही सौहार्द आ जाय जो प्रायः एक आदर्श परिवार के लिए अपेक्षित होता है। अतः परिवार मानव की महत्त्वपूर्ण संस्था है।

परिवार का अर्थ :

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि परिवार समाज का आधार है। समाज का निर्माण परिवार के माध्यम से ही होता है। व्यक्ति की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति परिवार में ही होती है। यह परिवार ही है जो व्यक्ति को सामाजिकता के प्रथम पाठ की शिक्षा देता है। परिवार के बिना समाज का जीवित रहना असम्भव प्रतीत होता है। विभिन्न विद्वानों ने परिवार की परिभाषा अपने-अपने ढंग से दी है; यथा—

मैकाइवर व पेज के अनुसार, "परिवार वह समूह है जो यौन सम्बन्धों पर आधारित है और पर्याप्त रूप से सीमित एवं इतना स्थायी है कि सन्तानोत्पत्ति तथा सन्तान का पालन-पोषण करने योग्य है।"[1]

ईलियट व मरिल का कथन है—"परिवार पति-पत्नी तथा उनके बच्चों की एक जैविक सामाजिक इकाई है। परिवार को एक सामाजिक संस्था भी कहा

1. "The family is a group defined by a sex relationship sufficiently precise and endurling to provide for the procreation and upbringing of children."

—MacIver R. M., & Page C. H; *Society*, p. 238.

जा सकता है, एक समाज द्वारा मान्यता प्राप्त वह संघटन है, जो निश्चित मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।"[1]

बोसन्ज और बोसन्ज ने परिवार की परिभाषा देते हुए लिखा है—"परिवार वह आधारीय एवं सार्वभौम सस्था है जिस पर प्रत्येक समाज का अस्तित्व निर्भर करता है।"[2]

श्री मरडॉक के अनुसार, "परिवार वह सामाजिक समूह है जिसमे सामान्य आवास, आर्थिक सहयोग तथा सन्तानोत्पत्ति की विशेषताएँ हो। इसके अन्तर्गत दोनों *ही लिंगो के वयस्क सम्मिलित होते हैं, जिनमे से कम-से-कम दो समाज द्वारा मान्य* लैंगिक सम्बन्धो को बनाए रखें तथा जिनके स्वयं के अथवा सह-निवासी वयस्कों के गोद लिए हुए एक या अधिक बच्चे हो।"[3]

वर्जेस तथा लॉक के अनुसार "परिवार विवाह के बन्धन मे बँधे हुए, रक्त या गोद आदि के सूत्र मे बँधे हुए व्यक्तियों का एक समूह है, जो एक घर बनाकर, पति और पत्नी, माता और पिता, पुत्र और पुत्री, भाई और बहिन अपने सामाजिक कार्य में एक-दूसरे को अन्त तक प्रभावित करते हुए, सगठित हो एक सामान्य संस्कृति का *निर्माण करते हैं।" बर्से के अनुसार "परिवार माता-पिता और बच्चों का एक छोटा-*सा सामाजिक वर्ग है।" कुछ विशेषज्ञों के मत के अनुसार परिवार एक ऐसी सस्था है, जिसमें विवाह के पुनीत बंधन में बँधे हुए स्त्री या पुरुष को सन्तान उत्पन्न करने की स्वीकृति प्रदान की गई है तथा जिसमें स्त्री-पुरुष अपनी सन्तान के पालन-पोषण का उत्तरदायित्व ग्रहण करके साथ-साथ रहते हैं।

अपने सदस्यों के प्रति कुटुम्ब का उत्तरदायित्व कम या अधिक हो सकता है। कुटुम्ब का कर्त्तव्य अपने सदस्यों की आर्थिक सहायता करना, उन्हें शिक्षा देना, धार्मिक

---

1. "The family may be defined as the biological social un it composed of husband, wife and their children The family may also be considered as a social institution a socially approved organization for meeting defintie human needs "
—Elloitt & Merrill *Social Disorganization* p 359.

2. "The family is the basic and universal instiiution, upon it depends the survival of every society "
—Biesanz & Biesanz . *Modern Society*, p 203.

3. "The family is a social group characterized by common residence", economic co operation and reproduction. It includes adults *of both sexes, at least two of whom maintain a socially* approved sexual relationship and one or more children, own or adopted of sexually cohabiting adults."
—Mudrock, G P. . *Social Structure* p. 1.

निर्देशन देना, मनोरंजन के साधनों का आयोजन करना, विपत्तियों से उनकी रक्षा करना, स्नेह देना तथा विभिन्न सामाजिक भावनाओं के प्रकाशन का अवसर देना है। किसी समाज के अन्तर्गत कुटुम्ब के स्वरूप को समझने के लिए यह देखना है कि कुटुम्ब इन कर्त्तव्यों में से किन के लिए अपने को उत्तरदायी समझता है।

अतः परिवार पति-पत्नी, उनसे उत्पन्न सन्तान तथा अन्य रक्त-सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों का संघ है, जो कि एक साथ रहते हैं तथा विभिन्न परिस्थितियों में परस्पर सहयोग से कार्य करते हैं।

परिवार की मूलभूत विशेषताएँ

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर परिवार की निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण सामान्य विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं :—

१. विवाह का एक प्रकार।

२. लैंगिक सम्बन्ध।

३. एक-नाम पद्धति अथवा वंश-गणना।

४. सन्तानोत्पत्ति एवं सन्तान का लालन-पालन।

५. सामान्य आवास।

(१) **विवाह का एक प्रकार**—विवाह सम्बन्ध परिवार की सर्वप्रथम आवश्यकता है। इस सम्बन्ध व्यवस्था के माध्यम से स्त्री-पुरुष एक बन्धन में आवद्ध हो जाते हैं तथा वे पति-पत्नी के रूप में अपना जीवन व्यतीत करते हैं। विवाह का स्वरूप कुछ भी हो सकता है। सामाजिक परम्पराओं के अनुसार उसके स्वरूप में भिन्नता हो सकती है। मनुष्य की लैंगिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए विवाह ही एक समाज द्वारा मान्यता प्राप्त संस्था है। वास्तविकता यह है कि विवाह—परिवार की आधार-भूत शर्त है।

(२) **लैंगिक सम्बन्ध**—विवाह स्त्री-पुरुष के मध्य यौन सम्बन्ध स्थापित करने की समाज द्वारा मान्य सम्बन्ध-व्यवस्था है। वैवाहिक जीवन का प्रमुख लक्ष्य ही यौन-सम्बन्धी आवश्यकता की सन्तुष्टि करना है। अतः लैंगिक सम्बन्ध की स्थापना परिवार की एक आवश्यक विशेषता है।

(३) **सन्तानोत्पत्ति एवं सन्तान का लालन-पालन**—सन्तानोत्पत्ति परिवार की प्रमुख विशेषता है। यौन-सम्बन्ध के परिणामस्वरूप सन्तानोत्पत्ति आवश्यक है। सन्तान-हीन परिवार वास्तव में सुखी एवं समृद्ध परिवार नहीं कहा जा सकता। केवल सन्तानोत्पत्ति ही नहीं, वल्कि उसके लालन-पालन की समुचित व्यवस्था भी परिवार का आवश्यक लक्षण है। वच्चों तथा परिवार के अन्य सदस्यों के लिए भोजन, वस्त्र तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु व्यवस्था करने का कार्य परिवार ही करता है।

(४) एक नाम-पद्धति या वंश-गणना—प्रत्येक परिवार किसी न किसी वंश पर आधारित होता है, इसी वंश के नाम से उस परिवार को पहचाना जाता है। अधिकाश प्रजातियों में वंश का नाम पिता के नाम पर ही चलता है परन्तु कुछ में माता के नाम पर भी वंश का नामकरण होता है।

(५) सामान्य आवास व्यवस्था—परिवार के लिए सामान्य आवास व्यवस्था एक अनिवार्य स्थिति है। प्रत्येक परिवार का कोई न कोई स्थायी सामान्य निवास स्थान होता है, जहाँ परिवार के समस्त सदस्य मिलकर एक साथ रहते हैं। आज के युग में परिवार के सदस्य अस्थायी रूप से अलग-अलग भी रहने लगे हैं; जैसे—पिता नौकरी पर बाहर रहने लगे, बच्चे शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रावास मे रहते हैं, माता घर मे रहती है परन्तु वे समय-समय पर अपने स्थायी निवास-स्थान पर एकत्रित होते हैं।

मैकाइवर तथा पेज ने परिवार की कुछ अन्य विशेषताएँ बताई हैं। ये विशेषताएँ सामान्यत: अन्य सामाजिक सस्थाओं में नही पाई जाती। ये विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :—

(१) सार्वभौमिकता (Universality)—परिवार एक ऐसी सस्था है जो विश्व के समस्त समाजों मे पाई जाती है। समाज का प्रत्येक व्यक्ति कुछ न कुछ काल तक परिवार का सदस्य अवश्य ही रहता है। इस प्रकार यह संस्था एक अनिवार्य एवं सर्वव्याप्त सामाजिक संस्था है।

(२) संवेगात्मक आधार (Emotional Basis)—परिवार प्रधानत: सवेगात्मक बन्धनो मे आवद्ध सस्था है। मनुष्य में कुछ मूल प्रवृत्तियाँ तथा सवेग होते हैं, उन मूल-प्रवृत्तियों एवं सवेगो के स्वस्थ प्रकाशन एव उन्मुखीकरण पर ही परिवार की व्यवस्था निर्भर करती है।

(३) निर्माणशील प्रभाव (Formative Influence)—प्रत्येक परिवार का अपना जीवन-दर्शन होता है। बच्चा जन्म से परिवार का सदस्य बन जाता है तथा उसके व्यक्तित्व का निर्माण उसी जीवन-दर्शन व सस्कारो के आधार पर निर्मित होता है।

(४) सीमित आकार (Limited Size)—परिवार के सदस्यो की सख्या सीमित है क्योंकि इसकी सदस्यता जन्म-मूलक होती है। परिवार में सामान्यत: पति-पत्नी तथा बच्चे ही सम्मिलित होते हैं। आजकल परिवार नियोजन एव एक विवाह-प्रथा के परिणामस्वरूप परिवार का आकार और भी अधिक सीमित हो जाता है।

(५) सदस्यों का उत्तरदायित्व (Responsibility of the Members)—परिवार का प्रमुख आधार त्याग एवं नि:स्वार्थ भावना है। परिवार के प्रत्येक सदस्य अपने उत्तरदायित्वो को नि.स्वार्थ भाव से पूर्ण करते हैं। माता-पिता चौबीसो घण्टे घर के कार्यों को करने के लिए तत्पर रहते हैं। पुत्र पुत्री तथा घर के अन्य सद

घर के कार्यों में हाथ बँटाते हैं। इस प्रकार घर के समस्त कार्य सहयोग एवं प्रेम आधारित होते हैं।

(६) **समाज में केन्द्रीय स्थिति (Nuclear Position in the Social Structure)**—परिवार समाज की केन्द्रीय एवं आधारभूत इकाई है। समाज के स्वरूप को निर्धारित करने वाला प्रमुख सामाजिक संगठन परिवार ही है। अरस्तू का कथन सत्य ही है कि 'समुदाय परिवारों का एक समूह है।'[1] आज के व्यस्त एवं वैज्ञानिक युग में समाज की कुछ अन्य कल्याणकारी संस्थाओं एवं समितियों ने परिवार के कुछ कार्यों के उत्तरदायित्व को अपने ऊपर ले लिया है। इसलिए उसकी केन्द्रीय स्थिति उतनी अधिक नहीं रही है।

(७) **सामाजिक नियंत्रण (Social Control)**—सामाजिक नियंत्रण की सबसे अधिक प्रभावशील संस्था परिवार ही है। पारिवारिक परम्पराएँ, प्रथाएँ, रीति-रिवाज आदि के विपरीत कार्य करना सरल नहीं है। परिवार ही एक ऐसी संस्था है जो प्राचीन सांस्कृतिक, सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराओं को सुरक्षित रखने का कार्य करती है। किसी भी देश की प्राचीन संस्कृति के दर्शन परिवार में ही हो सकते हैं।

(८) **उसकी स्थायी व अस्थायी प्रकृति (Its permanent and temporary nature)**—परिवार एक स्थायी संस्था है। परिवार नाम की संस्था कभी भी समाप्त नहीं होती परन्तु परिवार विशेष पति या पत्नी की मृत्यु या तलाक की स्थिति में समाप्त हो जाता है। इस प्रकार यह एक स्थायी एवं अस्थायी संस्था है।

संयुक्त परिवार

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि परिवार समाज की एक स्थायी एवं अत्यधि प्रभाव पूर्ण इकाई है। यह विश्व के समस्त देशों तथा समुदायों में उपस्थित है आधुनिक परिवार में पति-पत्नी तथा उनके बच्चे सम्मिलित होते हैं परन्तु कुछ स पूर्व परिवार का क्षेत्र अधिक विस्तृत था। बुड्ढे दादा-दादी, चाचा-चाची, विवाहित भाई तथा उनकी बहुएँ तथा पुत्र व पुत्री घर में कार्य करने वाले न तथा अतिथि भी परिवार के ही सदस्य माने जाते थे। हमारे देश में तो अब भी सभी सदस्य एक ही परिवार में मिल-जुलकर रहते हैं। ऐसे परिवारों को या संयुक्त परिवार कहा जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में तो संयुक्त परिवार पर्याप्त रूप से प्रचलित है परन्तु अब वैज्ञानिक प्रगति के परिणामस्वरूप हुई और औद्योगिक परिस्थितियों बेकारी, आवास व्यवस्था की कमी, यात साधन का विकास आदि के परिणामस्वरूप संयुक्त परिवार व्यवस्था भंग होत

1. Aristotle, Politics; iii p. 3.

है। संयुक्त परिवार प्रणाली भारतीय समाज व्यवस्था की अब भी एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है अतः इसके सम्बन्ध मे यहाँ पर विस्तृत रूप से चर्चा की जाएगी।

संयुक्त परिवार की व्याख्या करते हुए डॉ० इरावती कार्वे ने लिखा है—"संयुक्त परिवार ऐसे व्यक्तियो का समूह है जो सामान्यतः एक ही आवास में रहते हैं, जो एक ही चूल्हे पर पका खाना खाते हैं, जिनका सम्मिलित सम्पत्ति पर स्वामित्व होता है एव जो सामान्य पूजा मे भाग लेते हैं तथा जो एक दूसरे से रक्त सम्बन्ध रखते हैं।"[1] श्री देसाई के अनुसार—"हम उस गृहस्थी को सयुक्त परिवार कहते हैं जिसमे स्वतन्त्र परिवार की अपेक्षा अधिक पीढ़ियो (अर्थात् तीन या अधिक) के सदस्य हों तथा जिसके सदस्य आपस मे सम्पत्ति, आय, पारस्परिक अधिकारो तथा उत्तरदायित्वो के माध्यम से सम्बन्धित हो।"[2]

अतः स्पष्ट है कि सयुक्त परिवारो मे स्वतन्त्र परिवार की अपेक्षा अधिक पीढ़ियों के लोग एक साथ मिल-जुलकर रहते व खाते-पीते हैं। इनकी सम्पत्ति तथा आय के साधन सम्मिलित ही होते हैं। उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर संयुक्त परिवार की निम्न सामान्य विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं—

(१) सामान्य निवास—सयुक्त परिवार की सर्वप्रथम विशेषता यह है कि इसके समस्त सदस्य एक ही भवन मे निवास करते हैं। यह आवास सभी का होता है।

(२) सामान्य पाकशाला—सयुक्त परिवार मे एक ही पाकशाला में सभी सदस्यों के लिए भोजन बनता है तथा वे मिल-जुलकर एक ही प्रकार का भोजन करते हैं।

(३) सम्मिलित सम्पत्ति तथा सामान्य कोष—सयुक्त परिवार की अपनी सामान्य सम्पत्ति होती है जिस पर सभी सदस्यो का स्वामित्व होता है। उस सम्पत्ति से होने वाली आय तथा सदस्यों द्वारा अर्जित धन एक सामान्य कोष मे एकत्रित किया जाता है। इसी निधि मे से समस्त परिवार का व्यय चलता है। व्यय का

1. "A joint family is a group of people who generally live under one roof, who eat food cooked at one hearth, who hold property in common and who participate in common worship and are related to each other by blood."—

   —*Dr. I. Karve* · Kinship Organization in India.

2. "We call that household a joint family which has greater generation depth (i. e. three or more) than the nuclear family and the members of which are related to one another by property, income and mutual rights and obligations"

   —Desai I. P.

घर के कार्यों में हाथ बँटाते हैं। इस प्रकार घर के समस्त कार्य सहयोग एवं प्रेम
पर आधारित होते हैं।

(६) **समाज में केन्द्रीय स्थिति** (Nuclear Position in the Social Structure)—परिवार समाज की केन्द्रीय एवं आधारभूत इकाई है। समाज के स्वरूप को निर्धारित करने वाला प्रमुख सामाजिक संगठन परिवार ही है। अरस्तू का कथन सत्य ही है कि 'समुदाय परिवारों का एक समूह है।'"[1] आज के व्यस्त एवं वैज्ञानिक युग में समाज की कुछ अन्य कल्याणकारी संस्थाओं एवं समितियों ने परिवार के कुछ कार्यों के उत्तरदायित्व को अपने ऊपर ले लिया है। इसलिए उसकी केन्द्रीय स्थिति उतनी अधिक नहीं रही है।

(७) **सामाजिक नियंत्रण** (Social Control)—सामाजिक नियंत्रण की सबसे अधिक प्रभावशील संस्था परिवार ही है। पारिवारिक परम्पराएँ, प्रथाएँ, रीति-रिवाज आदि के विपरीत कार्य करना सरल नहीं है। परिवार ही एक ऐसी संस्था है जो प्राचीन सांस्कृतिक, सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराओं को सुरक्षित रखने का कार्य करती है। किसी भी देश की प्राचीन संस्कृति के दर्शन परिवार में ही हो सकते हैं।

(८) **उसकी स्थायी व अस्थायी प्रकृति** (Its permanent and temporary nature)—परिवार एक स्थायी संस्था है। परिवार नाम की संस्था कभी भी समाप्त नहीं होती परन्तु परिवार विशेष पति या पत्नी की मृत्यु या तलाक की स्थिति में समाप्त हो जाता है। इस प्रकार यह एक स्थायी एवं अस्थायी संस्था है।

संयुक्त परिवार

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि परिवार समाज की एक स्थायी एवं अत्यधि[क] प्रभाव पूर्ण इकाई है। यह विश्व के समस्त देशों तथा समुदायों में उपस्थित [है।] आधुनिक परिवार में पति-पत्नी तथा उनके बच्चे सम्मिलित होते हैं परन्तु कुछ [समय] पूर्व परिवार का क्षेत्र अधिक विस्तृत था। बुड्ढे दादा-दादी, चाचा-चाची, [अ]विवाहित भाई तथा उनकी बहुएँ तथा पुत्र व पुत्री घर में कार्य करने वाले [नौकर] तथा अतिथि भी परिवार के ही सदस्य माने जाते थे। हमारे देश में तो अब [भी] सभी सदस्य एक ही परिवार में मिल-जुलकर रहते हैं। ऐसे परिवारों को [...] या संयुक्त परिवार कहा जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में तो संयुक्त परिवार [...] पर्याप्त रूप से प्रचलित है परन्तु अब वैज्ञानिक प्रगति के परिणामस्वरू[प] [...] हुई और औद्योगिक परिस्थितियों, बेकारी, आवास व्यवस्था की कमी, या[तायात के] साधन का विकास आदि के परिणामस्वरूप संयुक्त परिवार व्यवस्था भंग हो [...]

---

1. Aristotle, Politics; iii p. 3.

है। संयुक्त परिवार प्रणाली भारतीय समाज व्यवस्था की अब भी एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है अतः इसके सम्बन्ध में यहाँ पर विस्तृत रूप से चर्चा की जाएगी।

संयुक्त परिवार की व्याख्या करते हुए डॉ० इरावती कार्वे ने लिखा है—"संयुक्त परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो सामान्यतः एक ही आवास में रहते हैं, जो एक ही चूल्हे पर पका खाना खाते हैं, जिनका सम्मिलित सम्पत्ति पर स्वामित्व होता है एवं जो सामान्य पूजा में भाग लेते हैं तथा जो एक दूसरे से रक्त सम्बन्ध रखते हैं।"[1] श्री देसाई के अनुसार—"हम उस गृहस्थी को संयुक्त परिवार कहते हैं जिसमें स्वतन्त्र परिवार की अपेक्षा अधिक पीढ़ियों (अर्थात् तीन या अधिक) के सदस्य हों तथा जिसके सदस्य आपस में सम्पत्ति, आय, पारस्परिक अधिकारों तथा उत्तरदायित्वों के माध्यम से सम्बन्धित हों।"[2]

अतः स्पष्ट है कि संयुक्त परिवारों में स्वतन्त्र परिवार की अपेक्षा अधिक पीढ़ियों के लोग एक साथ मिल-जुलकर रहते व खाते-पीते हैं। उनकी सम्पत्ति तथा आय के साधन सम्मिलित ही होते हैं। उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर संयुक्त परिवार की निम्न सामान्य विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं—

(१) सामान्य निवास—संयुक्त परिवार की सर्वप्रथम विशेषता यह है कि इसके समस्त सदस्य एक ही भवन में निवास करते हैं। यह आवास सभी का होता है।

(२) सामान्य पाकशाला—संयुक्त परिवार में एक ही पाकशाला में सभी सदस्यों के लिए भोजन बनता है तथा वे मिल-जुलकर एक ही प्रकार का भोजन करते हैं।

(३) सम्मिलित सम्पत्ति तथा सामान्य कोष—संयुक्त परिवार की अपनी सामान्य सम्पत्ति होती है जिस पर सभी सदस्यों का स्वामित्व होता है। उस सम्पत्ति से होने वाली आय तथा सदस्यों द्वारा अर्जित धन एक सामान्य कोष में एकत्रित किया जाता है। इसी निधि में से समस्त परिवार का व्यय चलता है। व्यय का

1. "A joint family is a group of people who generally live under one roof, who eat food cooked at one hearth, who hold property in common and who participate in common worship and are related to each other by blood."—

—Dr I. Karve. Kinship Organization in India.

2. "We call that household a joint family which has greater generation depth (i. e three or more) than the nuclear family and the members of which are related to one another by property, income and mutual rights and obligations"

—Desai I P.

आधार व्यक्तिगत आय नहीं होता। परिवार के सभी सदस्य, स्त्री-पुरुष, विवाहित, अविवाहित, विधवा तथा बच्चे, चाहे वे कमाते हों या नहीं, परिवार में उपलब्ध समस्त सुख-सुविधाओं का उपभोग करने के समान रूप से अधिकारी होते हैं। इसके अतिरिक्त संयुक्त परिवार की सम्पत्ति का बँटवारा तब तक नहीं हो सकता जब तक कि उसका कोई सदस्य परिवार से अलग होकर अपने भाग की माँग नहीं करता।

(४) **सामान्य पूजा तथा धर्म-कर्म**—सामान्यतः संयुक्त परिवार के सभी सदस्य एक ही धार्मिक विचारधारा के होते हैं तथा उसी धर्म से सम्बन्धित धार्मिक विचारधारा के होते हैं तथा उसी धर्म से सम्बन्धित धार्मिक कर्त्तव्यों को सम्मिलित रूप से निभाते हैं। प्रत्येक सामाजिक कर्तव्यों को भी वे मिल-जुलकर पूर्ण करते हैं। विवाह आदि संस्कारों को सम्पन्न करने में संयुक्त परिवार उत्तरदायित्व को निभाते हैं।

संयुक्त परिवार से लाभ

आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से संयुक्त परिवार के निम्नलिखित लाभ होते हैं—

आर्थिक लाभ

(१) **व्यय में बचत**—एक ही स्थान पर अधिक लोगों का भोजन बनने के कारण कम व्यय करने पर ही आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है तथा भोजन कभी नष्ट नहीं होता। अन्य वस्तुएँ भी सम्मिलित परिवार के लिए इकट्ठी खरीदने से कम मूल्य पर मिल जाती हैं। इस प्रकार संयुक्त परिवार के कारण व्यय कम होता है।

(२) **संयुक्त परिवार में धन का समान वितरण होता है**—परिवार के प्रत्येक सदस्य पर संयुक्त आय से आवश्यकता के अनुसार व्यय किया जाता है। अधिक धन कमाने वाले, कम धन कमाने वाले तथा न कमाने वाले में किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं किया जाता। इससे समाज में स्वतन्त्र परिवार की अपेक्षा धन का अधिक समान वितरण होता है।

(३) **ग्रामीण क्षेत्रों में खेतों के विभाजन की कम सम्भावना**—एक ही घर में रहकर सब लोग इकट्ठे खेत पर काम करते हैं और खेती से होने वाली आय का समान रूप से आवश्यकता पूर्ति के लिए व्यय किया जाता है। एक साथ रहने के कारण खेतों के बँटवारे का प्रश्न भी नहीं उठता, अतः खेतों का विभाजन न होने से कम व्यय द्वारा अधिक उत्पादन होता है तथा छोटे और छिटके खेतों से होने वाली हानि से भी रक्षा होती है।

सामाजिक लाभ या कार्य

(१) **सामाजिक बीमा**—संयुक्त परिवार अपने परिवार के सदस्यों के लिये

बीमा कम्पनी का कार्य करता है। किसी भी प्रकार की या किसी भी कारण से होने वाली शारीरिक या मानसिक दुर्घटना या असमर्थता की दशा में यह अपने सदस्य की प्रत्येक प्रकार से रक्षा करता है। बीमार पड़ने पर रोगी का उपचार किया जाता है। उसकी सेवा-शुश्रूषा होती है। किसी भी सदस्य को किसी भी अवस्था में भूखों मरने का भय या चिन्ता नही रहती।

(२) बूढ़ों, विधवाओं व अनाथों के लिये आदर्श स्थान—संयुक्त परिवार में किसी भी पुरुष सदस्य की मृत्यु के उपरान्त उसकी विधवा पत्नी आश्रयहीन नहीं होती, उसके बच्चों को पिता का अभाव नहीं अखरता, क्योंकि वे उस परिवार में पूर्ववत् बने रहते हैं और उनका पालन-पोषण होता रहता है।

(३) बच्चों का समुचित पालन-पोषण—परिवार में अनेक सदस्य होने के कारण माता को बच्चों की चिन्ता नही रहती। पिता के कार्य पर चले जाने के बाद और माता के घर के कार्यों मे व्यस्त रहने के कारण बच्चो को अकेले नही रहना पड़ता, अपितु उनकी देखभाल उनके दादा-दादी और घर के अन्य वृद्ध-जन करते हैं।

(४) व्यक्तिवादिता पर प्रतिबन्ध एवं समष्टिवाद की भावना का विकास—संयुक्त परिवार व्यक्तिगत स्वार्थ पूर्ति के लिये नही, बल्कि सबके सामान्य हितों की रक्षा के लिये हुआ करता है। सहयोग, त्याग और सहनशीलता के आधार पर ही संयुक्त परिवार का कार्य होता रहता है। इस कारण व्यक्तिवादी भावना को पनपने का अवसर नही मिलता और समष्टिवाद की भावना का विकास होता है।

(५) मनोरंजन का उत्तम साधन—संयुक्त परिवार का आकार बड़ा होने के कारण यहाँ बच्चे, बूढे तथा युवक सब काफी संख्या मे मिलकर रहते हैं। अतः बच्चो की तोतली बातें परस्पर हँसी-मजाक द्वारा यथेष्ट मनोरंजन होता रहता है।

(६) पारिवारिक परम्परा की रक्षा—सबके साथ रहने से किसी भी नवागन्तुक सदस्य को बड़े होकर पारिवारिक परम्पराओं के विषय में अज्ञानता प्रकट करने का अवसर नही मिलता और न ही वह किसी परम्परा की अवहेलना कर सकता है। प्रत्येक सदस्य देखादेखी पारिवारिक परम्पराओं को मानने लगता है और उनकी अवहेलना न तो स्वयं करता है और न अपने से छोटे सदस्यों को करने देता है।

संयुक्त परिवार से हानियां अथवा दोष

(१) आर्थिक निर्भरता—संयुक्त परिवार के कारण परिवार के अधिकांश सदस्य आर्थिक दृष्टि से परिवार पर निर्भर रहते हैं।

(२) अकर्मण्य व्यक्तियों की वृद्धि—संयुक्त परिवार की व्यवस्था के कारण अकर्मण्यता को प्रोत्साहन मिलता है। घर के दो चार व्यक्तियों के परिश्रम से कमाये हुए धन से सबको समान सुविधाएँ मिलने के कारण कुछ लोग काम करते ही नहीं,

फलतः एक ओर तो अकर्मण्य व्यक्तियों की संख्या बढ़ती है और दूसरी ओर जी तोड़ परिश्रम करने वालों की कुशलता का ह्रास होता है।

(३) **सामान्य निर्धनता**—कुछ लोग कमाएँ और सब लोग खाएँ, के कारण परिवार की आमदनी में वृद्धि नहीं हो पाती, अतः सामान्यतः संयुक्त परिवारों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती।

(४) **श्रमिकों की गतिशीलता में बाधक**—परिवार, सम्बन्धी, जाति आदि के बन्धनों में बँधे रहने के कारण संयुक्त परिवार के सदस्य व्यक्तिगत उन्नति के अच्छे से अच्छे अवसरों को घर से बाहर जाकर पाने को तैयार नहीं होते। इस प्रकार श्रम की गतिशीलता में बाधा उपस्थित होती है।

(५) **द्वेष और कलह**—प्रायः संयुक्त परिवार में द्वेष और कलह का राज्य होता है, क्योंकि सदस्यों के पारस्परिक हितों में संघर्ष होता रहता है। विशेषकर स्त्रियों में छोटी-छोटी बातों को लेकर झगड़ा खड़ा हो जाता है। इन निरन्तर कलहों का परिणाम या तो घर का अशान्त वातावरण होता है या संयुक्त परिवार का विघटन हो जाता है।

(६) **व्यक्तित्व के विकास में बाधा**—संयुक्त परिवार में समानता का व्यवहार होने के कारण प्रतिभाशाली सदस्यों को अपने-अपने विकास का अवसर नहीं मिलता। निर्भर एवं पराश्रित होने के कारण अपनी उन्नति के लिए कोई भी सदस्य स्वतन्त्र मार्ग नहीं चुन सकता, प्रायः कूप-मंडूक ही बना रह जाता है।

(७) **बाल-विवाहों का बाहुल्य**—संयुक्त परिवार प्रणाली द्वारा बाल-विवाह को बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार के परिवारों में नवदम्पती पर किसी प्रकार का भार नहीं पड़ता, वर को छोटी आयु में अपने परिवार के भरण पोषण की चिन्ता नहीं करनी पड़ती। छोटी आयु में विवाह होने से दम्पती के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है और सन्तान भी अधिक तथा प्रायः दुर्बल होती है।

(८) **स्त्रियों की हीन दशा**—स्त्रियों का संयुक्त परिवार में कोई स्थान नहीं होता। किसी भी विषय में उनकी राय नहीं ली जाती तथा वे अपना सारा जीवन दासी की ही भाँति व्यतीत करती हैं। यहाँ तक कि उनके बच्चों के पालन-पोषण के विषय में भी उनकी राय का कोई महत्त्व नहीं होता।

(९) **कर्त्ता (मुखिया) की स्वेच्छाचारिता (Dictatorship)**—घर के कर्त्ता या मुखिया की ही हर बात मान्य होती है। प्रत्येक बात का निर्णय वह अपनी इच्छा से करता है। परिवार के अन्य सदस्यों की कर्त्ता की स्वेच्छाचारिता के सम्मुख कोई सुनवाई नहीं होती।

संयुक्त परिवार के विघटन के कारण

आर्थिक दृष्टिकोण से पिछड़े हुए स्थानों तथा खेती पर निर्भर करने वाले व्यक्तियों के लिए संयुक्त परिवार-प्रणाली लाभदायक थी। किन्तु समय की माँग के

(१) औद्योगीकरण—औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप नये-नये व्यवसाय विकसित होने लगे, काम मिलने के अवसर बढते गये। उधर भूमि पर अधिक दबाव होने से गाँव में कृषि की आय द्वारा जीवनयापन करना कठिन हो गया तो ग्रामीण जनता नगरो की ओर व्यवसाय की खोज मे निकली। नगरों मे काम मिलने की सुविधा के कारण सयुक्त परिवार विघटित होने लगे।

नगरों मे स्त्रियों को भी काम मिलने लगा और व्यक्तिवादी प्रवृत्ति का विस्तार होने मे भी संयुक्त परिवार एकाकी परिवारो मे परिवर्तित होने लगे।

(२) यातायात के साधनों मे उन्नति—आवागमन के साधनो के अभाव मे व्यक्ति इच्छा रहते हुए भी सयुक्त परिवार से अलग नही हो सकता था। किन्तु याता-यात के साधनो में वृद्धि होने से व्यक्ति सुगमतापूर्वक घर से अलग होकर नगरों में आकर बसने लगे और सयुक्त परिवार छिन्न-भिन्न होने लगे।

(३) सामान्य निर्धनता—सयुक्त परिवार मे प्राणी प्राय निर्धन ही बने रहते थे, किन्तु औद्योगीकरण के कारण नगरो मे अधिक व्यवसाय मिलने लगे। निर्धनता से मुक्ति पाने के लिये सयुक्त परिवार के सदस्य नगरो मे आकर रहने लगे और इस प्रकार संयुक्त परिवार टूटता चला गया।

(४) नागरीकरण और मकानों की समस्या—औद्योगीकरण के फलस्वरूप नगरो का विकास हुआ और इन उद्योगो मे काम करने वालो की संख्या दिन-प्रतिदिन बढती गई। जनसख्या बढने के साथ-साथ नगरो में मकानो की समस्या गम्भीर होती गई। औसत आय के लोगो के लिये शहर में बडा मकान लेकर सयुक्त रूप से रहना कठिन हो गया। फलत. सयुक्त परिवार के लोग अलग-अलग अपने मकान लेकर रहने लगे और सयुक्त परिवार विघटित होता गया।

(५) पाश्चात्य संस्कृति और शिक्षा का प्रभाव—पाश्चात्य आदर्शों ने भारत के लोगों को त्याग और कर्तव्य के पथ से विमुख कर व्यक्तिगत अधिकार सुख और समानता का पाठ पढाया जो कि सयुक्त परिवार के लिये हानिकारक था। पाश्चात्य शिक्षा के अनुसार परिवार की परिभाषा में सयुक्त परिवार नामक कोई वस्तु नहीं थी; आधुनिक शिक्षित युवक सयुक्त परिवार को व्यर्थ और उनकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता में बाधक मानकर एकाङ्की परिवारो की ओर झुकने लगे तथा संयुक्त परिवार प्रणाली कमजोर पड़ने लगी।

(६) व्यक्तिवाद का विकास—सयुक्त परिवार समष्टिवाद पर आधारित हैं। किन्तु पाश्चात्य सभ्यता के प्रसार से व्यक्तिवादी प्रवृत्ति का विकास हुआ और प्रत्येक व्यक्ति अपने और अपनी पत्नी तथा बच्चो के ही विषय में सोचने लगा। उसकी दृष्टि

में परिवार के लिये त्याग और बलिदान कुछ भी महत्त्व पूर्ण नहीं रहा जो स्वभावतः संयुक्त परिवारों को समाप्त करने वाला एक कारक है।

(७) **महिला आन्दोलन**—संयुक्त परिवार में स्त्रियों की स्थिति दयनीय थी। उन्हें कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। समाज का भी स्त्रियों के प्रति यही दृष्टिकोण था। जागृति के साथ महिलाओं ने अपने अधिकारों की रक्षा के लिये आन्दोलन किये। शिक्षा के प्रसार से भी उनमें जागृति आई और वे अब दासी के जीवन से मुक्ति पाने में विश्वास करने लगीं। अतः उन्होंने एकाकी परिवारों में रहकर अपने जीवन को सुखी बनाने का प्रयत्न किया। विवाह के उपरान्त उनका सर्वप्रथम कर्त्तव्य पति को संयुक्त परिवार से अलग करके अपने ढङ्ग से अपना गृह निर्माण करना था।

(८) **कानून सम्बन्धी कारण**—अंग्रेजी राज्य में कानूनी तौर से संयुक्त परिवार के कर्त्ता (मुखिया) को कर्ज की अदायगी के लिये सम्पत्ति बेचने का अधिकार दे दिया गया था। इस प्रकार संयुक्त सम्पत्ति का कोई भी भाग किसी भी समय बेचा जा सकता था। अब संयुक्त परिवार के सदस्यों की एकता का एक तत्त्व-संयुक्त सम्पत्ति भी कानून द्वारा कमजोर बना दिया गया था। जब एकता में बाँधने वाला सूत्र ही कमजोर हो तो कैसे सब लोग मिलकर एक साथ रहना पसन्द करेंगे ?

आज संयुक्त परिवार प्रणाली भारत में भी प्रायः दिनोंदिन नष्ट होती जा रही है। संयुक्त परिवार में गृह स्वामी तथा गृहिणी के ऊपर परिवार की सम्पूर्ण व्यवस्था का भार रहता है। परन्तु परिवार के अन्य सदस्यों जैसे—वृद्ध दादा-दादी, छोटे भाई, बहिन, पुत्र, पुत्री को भी पारिवारिक सुख-समृद्धि के लिए अपने-अपने उत्तरदायित्वों को समझना चाहिए तथा घर के स्वस्थ वातावरण के निर्माण करने के लिए सुमधुर पार- स्परिक सम्बन्ध स्थापित करने में योग देना चाहिए यद्यपि परिवार के गृह सम्बन्धी सभी कार्य गृहिणी के निर्देशन में होते हैं।

पारिवारिक सम्बन्ध

पुरुष व परिवार—भारतीय परिवार पितृ-सत्ताक है। पिता परिवार का स्वामी व प्रबन्धक होता है। पुरुष का कर्तव्य सर्वप्रथम पति के रूप में पत्नी की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। गृहस्थी की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन उपार्जन करना गृहस्थी का प्रथम कार्य है। गृहस्थी के भिन्न ध... रुचि लेना व परामर्श सम्मति देना भी पुरुष का कर्तव्य है।

पिता के रूप में संतान की भोजन-वस्त्र, शिक्षा व मनोरंजन आ... उत्तरदायित्व सम्भालने के लिए पुरुष को स्त्री का पूर्ण सहयोग लेना ह... पैतृक सहानुभूति नियन्त्रण व रुचि के वातावरण में बालकों का स्वाभाविक... सरलता से हो पाता है। पुत्र के मन में पिता एक आदर्श का स्थान पात... उसके व्यवहार का अनुकरण करने का प्रयत्न करता है। गृह स्वामी को अ...

परिवार की आवश्यकताओं के साथ ही अन्य सम्बन्धियों की समय-समय पर सहायता करनी पडती है। गृह मे मतभेद अथवा अशान्ति होने पर उसे निर्णय का पद ग्रहण करना पड़ता है। परिवार के हित के लिए उसे अपना स्वार्थ त्यागना पड़ता है। उत्सव-त्यौहार, ब्याह अथवा हर्ष-शोक के अवसर पर गृहस्वामी को बड़े संयम तथा कर्तव्य-पूर्वक अनेक क्रियाओं में प्रमुख भाग लेना पड़ता है। कर्मनिष्ठ भारतीय गृहस्थ इन सब विविध कर्तव्यों का पालन करने में आनन्द पाता है।

स्त्री व परिवार—विवाह-संस्कार के उपरान्त पत्नी पति के गृह की स्वामिनी हो जाती है। पति की अर्जित सम्पत्ति का विधिपूर्वक उपयोग करना, गृहस्थी के भिन्न कार्यों में पति की सहायता करना, योग्यतानुसार भोजन, वस्त्र व गृह-सम्बन्धी प्रबन्ध करना पत्नी के कर्तव्य हैं। आवश्यकता पड़ने पर धनोपार्जन में भी पति का हाथ बँटाना पत्नी के लिए श्रेयस्कर है।

माता के रूप में केवल सन्तानोत्पत्ति ही नही, उनके लालन-पालन, भरण, पोषण का मुख्य कार्य स्त्री को ही करना पडता है। शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध व प्रेम-पूर्ण वातावरण प्रदान करना माता का कर्तव्य है। पुत्र-पुत्रियों का विवाह करना व उनके वैवाहिक जीवन का सुख-दुख मे भाग लेने का कार्य माता बडी रुचि व सहानुभूति से करती है।

गृहस्वामिनी के रूप मे स्त्री को पति व सन्तान के अतिरिक्त अन्य सम्बन्धियों के प्रति अपना कर्तव्य पूर्ण करना पडता है। सरलता, शीलता एव सहिष्णुता के साथ वह परिवार के सब सदस्यों की सेवा शुश्रूषा व आवश्यकता पूर्ति करती है। संयुक्त-परिवार में तो स्त्री को सास, बहू, देवर-देवरानी, ननद-भावज आदि अनेक सदस्यों के निकट सम्पर्क मे आना होता है। अपनी कार्य,कुशलता ही नही, व्यावहारिक सामर्थ्य व स्वाभाविक गुणो के अनुरूप ही प्रत्येक स्त्री पारिवारिक वातावरण का आदर्श निर्माण कर पाती है।

पुत्र-पुत्री व परिवार—परिवार मे संतान न होना पति-पत्नी के लिए चिन्ता का विषय बन जाता है। वेदों के अनुसार पुत्र शब्द से आशय है 'जो नरक से बचाये' तभी प्रत्येक पति-पत्नी की आकांक्षा होती है कि उन्हें श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त हो। पुत्र को भी परिवार के भिन्न सदस्यों माता-पिता, बहिनों तथा अन्य सम्बन्धियों के प्रति अपना कर्तव्य निभाना होता है। सबके प्रति श्रद्धा व प्रेम का व्यवहार करना, आवश्यकता पड़ने पर सेवा व सहायता करना, शिक्षा पाकर धनोपार्जन में भाग लेना; ये सब प्रत्येक भारतीय पुत्र के कर्तव्य हैं।

परिवार मे पुत्रियों का स्थान भी अति सम्मानीय है। यद्यपि यह इस बात का प्रमाण देता है कि बहुत काल तक हिन्दू घरानों मे पुत्रियों की बडी दुर्दशा रही है, किन्तु प्राचीन काल में कन्याओं को देवी-मय मानना व आधुनिक काल मे उन्हें बहुत कुछ पुत्रों के समान ही स्थान देना, इस बात का साक्षी है कि वास्तव [illegible] श्रेय

में परिवार के लिये त्याग और बलिदान कुछ भी महत्त्व पूर्ण नहीं रहा जो स्वभावतः संयुक्त परिवारों को समाप्त करने वाला एक कारक है।

(७) महिला आन्दोलन—संयुक्त परिवार में स्त्रियों की स्थिति दयनीय थी। उन्हें कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। समाज का भी स्त्रियों के प्रति यही दृष्टिकोण था। जागृति के साथ महिलाओं ने अपने अधिकारों की रक्षा के लिये आन्दोलन किये। शिक्षा के प्रसार से भी उनमें जागृति आई और वे अब दासी के जीवन से मुक्ति पाने में विश्वास करने लगीं। अतः उन्होंने एकाङ्की परिवारों में रहकर अपने जीवन को सुखी बनाने का प्रयत्न किया। विवाह के उपरान्त उनका सर्वप्रथम कर्त्तव्य पति को संयुक्त परिवार से अलग करके अपने ढङ्ग से अपना गृह निर्माण करना था।

(८) कानून सम्बन्धी कारण—अंग्रेजी राज्य में कानूनी तौर से संयुक्त परिवार के कर्ता (मुखिया) को कर्ज की अदायगी के लिये सम्पत्ति बेचने का अधिकार दे दिया गया था। इस प्रकार संयुक्त सम्पत्ति का कोई भी भाग किसी भी समय बेचा जा सकता था। अब संयुक्त परिवार के सदस्यों की एकता का एक तत्त्व-संयुक्त सम्पत्ति भी कानून द्वारा कमजोर बना दिया गया था। जब एकता में बाँधने वाला सूत्र ही कमजोर हो तो कैसे सब लोग मिलकर एक साथ रहना पसन्द करेंगे?

आज संयुक्त परिवार प्रणाली भारत में भी प्रायः दिनोंदिन नष्ट होती जा रही है। संयुक्त परिवार में गृह स्वामी तथा गृहिणी के ऊपर परिवार की सम्पूर्ण व्यवस्था का भार रहता है। परन्तु परिवार के अन्य सदस्यों जैसे—वृद्ध दादा-दादी, छोटे भाई, बहिन, पुत्र, पुत्री को भी पारिवारिक सुख-समृद्धि के लिए अपने-अपने उत्तरदायित्वों को समझना चाहिए तथा घर के स्वस्थ वातावरण के निर्माण करने के लिए सुमधुर पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने में योग देना चाहिए यद्यपि परिवार के गृह सम्बन्धी सभी कार्य गृहिणी के निर्देशन में होते हैं।

पारिवारिक सम्बन्ध

पुरुष व परिवार—भारतीय परिवार पितृ-सत्ताक है। पिता परिवार का स्वामी व प्रबन्धक होता है। पुरुष का कर्तव्य सर्वप्रथम पति के रूप में पत्नी की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। गृहस्थी की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन उपार्जन करना गृहस्थी का प्रथम कार्य है। गृहस्थी के भिन्न क्षेत्रों में रुचि लेना व परामर्श सम्मति देना भी पुरुष का कर्तव्य है।

पिता के रूप में संतान की भोजन-वस्त्र, शिक्षा व मनोरंजन आदि का उत्तरदायित्व सम्भालने के लिए पुरुष को स्त्री का पूर्ण सहयोग लेना होता है। पैतृक सहानुभूति नियन्त्रण व रुचि के वातावरण में बालकों का स्वाभाविक विकास सरलता से हो पाता है। पुत्र के मन में पिता एक आदर्श का स्थान पाता है और उसके व्यवहार का अनुकरण करने का प्रयत्न करता है। गृह स्वामी को अपने निकट

परिवार की आवश्यकताओ के साथ ही अन्य सम्बन्धियो की समय-समय पर सहायता करनी पडती है। गृह मे मतभेद अथवा अशान्ति होने पर उसे निर्णय का पद ग्रहण करना पड़ता है। परिवार के हित के लिए उसे अपना स्वार्थ त्यागना पडता है। उत्सव-त्यौहार, ब्याह अथवा हर्ष-शोक के अवसर पर गृहस्वामी को बडे सयम तथा कर्तव्य-पूर्वक अनेक क्रियाओ मे प्रमुख भाग लेना पडता है। कर्मनिष्ठ भारतीय गृहस्थ इन सब विविध कर्तव्यों का पालन करने मे आनन्द पाता है।

स्त्री व परिवार—विवाह-सस्कार के उपरान्त पत्नी पति के गृह की स्वामिनी हो जाती है। पति की अर्जित सम्पत्ति का विधिपूर्वक उपयोग करना, गृहस्थी के भिन्न कार्यों में पति की सहायता करना, योग्यतानुसार भोजन, वस्त्र व गृह-सम्बन्धी प्रबन्ध करना पत्नी के कर्तव्य हैं। आवश्यकता पडने पर धनोपार्जन मे भी पति का हाथ बँटाना पत्नी के लिए श्रेयस्कर है।

माता के रूप मे केवल सन्तानोत्पत्ति ही नही, उनके लालन-पालन, भरण, पोषण का मुख्य कार्य स्त्री को ही करना पडता है। शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध व प्रेम-पूर्ण वातावरण प्रदान करना माता का कर्तव्य है। पुत्र-पुत्रियो का विवाह करना व उनके वैवाहिक जीवन का सुख-दुख मे भाग लेने का कार्य माता बडी रुचि व सहानुभूति से करती है।

गृहस्वामिनी के रूप मे स्त्री को पति व सन्तान के अतिरिक्त अन्य सम्बन्धियों के प्रति अपना कर्तव्य पूर्ण करना पडता है। सरलता, शीलता एव सहिष्णुता के साथ वह परिवार के सब सदस्यो की सेवा शुश्रूषा व आवश्यकता पूर्ति करती है। सयुक्त-परिवार मे तो स्त्री को सास, बहू, देवर-देवरानी, ननद-भावज आदि अनेक सदस्यो के निकट सम्पर्क मे आना होता है। अपनी कार्य,कुशलता ही नही, व्यावहारिक सामर्थ्य व स्वाभाविक गुणो के अनुरूप ही प्रत्येक स्त्री पारिवारिक वातावरण का आदर्श निर्माण कर पाती है।

पुत्र-पुत्री व परिवार—परिवार मे सतान न होना पति-पत्नी के लिए चिन्ता का विषय बन जाता है। वेदों के अनुसार पुत्र शब्द से आशय है 'जो नरक से बचाये' तभी प्रत्येक पति-पत्नी की आकाक्षा होती है कि उन्हें श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त हो। पुत्र को भी परिवार के भिन्न सदस्यों माता-पिता, बहिनों तथा अन्य सम्बन्धियो के प्रति अपना कर्तव्य निभाना होता है। सबके प्रति श्रद्धा व प्रेम का व्यवहार करना, आवश्यकता पड़ने पर सेवा व सहायता करना, शिक्षा पाकर धनोपार्जन मे भाग लेना; ये सब प्रत्येक भारतीय पुत्र के कर्तव्य हैं।

परिवार मे पुत्रियों का स्थान भी अति सम्मानीय है। यद्यपि यह इस बात का प्रमाण देता है कि बहुत काल तक हिन्दू घरानो मे पुत्रियो की बड़ी दुर्दशा रही है, किन्तु प्राचीन काल मे कन्याओ को देवी-मय मानना व आधुनिक काल में उन्हें बहुत कुछ पुत्रो के समान ही स्थान देना, इस बात का साक्षी है कि वास्तव मे भारतीय

में परिवार के लिये त्याग और बलिदान कुछ भी महत्त्व पूर्ण नहीं रहा जो स्वभावतः संयुक्त परिवारों को समाप्त करने वाला एक कारक है।

(७) **महिला आन्दोलन**—संयुक्त परिवार में स्त्रियों की स्थिति दयनीय थी। उन्हें कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। समाज का भी स्त्रियों के प्रति यही दृष्टिकोण था। जागृति के साथ महिलाओं ने अपने अधिकारों की रक्षा के लिये आन्दोलन किये। शिक्षा के प्रसार से भी उनमें जागृति आई और वे अब दासी के जीवन से मुक्ति पाने में विश्वास करने लगीं। अतः उन्होंने एकाङ्की परिवारों में रहकर अपने जीवन को सुखी बनाने का प्रयत्न किया। विवाह के उपरान्त उनका सर्वप्रथम कर्त्तव्य पति को संयुक्त परिवार से अलग करके अपने ढङ्ग से अपना गृह निर्माण करना था।

(८) **कानून सम्बन्धी कारण**—अंग्रेजी राज्य में कानूनी तौर से संयुक्त परिवार के कर्त्ता (मुखिया) को कर्ज की अदायगी के लिये सम्पत्ति बेचने का अधिकार दे दिया गया था। इस प्रकार संयुक्त सम्पत्ति का कोई भी भाग किसी भी समय बेचा जा सकता था। अब संयुक्त परिवार के सदस्यों की एकता का एक तत्त्व-संयुक्त सम्पत्ति भी कानून द्वारा कमजोर बना दिया गया था। जब एकता में बाँधने वाला सूत्र ही कमजोर हो तो कैसे सब लोग मिलकर एक साथ रहना पसन्द करेंगे ?

आज संयुक्त परिवार प्रणाली भारत में भी प्रायः दिनोंदिन नष्ट होती जा रही है। संयुक्त परिवार में गृह स्वामी तथा गृहिणी के ऊपर परिवार की सम्पूर्ण व्यवस्था का भार रहता है। परन्तु परिवार के अन्य सदस्यों जैसे—वृद्ध दादा-दादी, छोटे भाई, बहिन, पुत्र, पुत्री को भी पारिवारिक सुख-समृद्धि के लिए अपने-अपने उत्तरदायित्वों को समझना चाहिए तथा घर के स्वस्थ वातावरण के निर्माण करने के लिए सुमधुर पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने में योग देना चाहिए यद्यपि परिवार के गृह सम्बन्धी सभी कार्य गृहिणी के निर्देशन में होते हैं।

पारिवारिक सम्बन्ध

पुरुष व परिवार—भारतीय परिवार पितृ-सत्ताक है। पिता परिवार का स्वामी व प्रबन्धक होता है। पुरुष का कर्तव्य सर्वप्रथम पति के रूप में पत्नी की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। गृहस्थी की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन उपार्जन करना गृहस्थी का प्रथम कार्य है। गृहस्थी के भिन्न क्षेत्रों में रुचि लेना व परामर्श सम्मति देना भी पुरुष का कर्तव्य है।

पिता के रूप में संतान की भोजन-वस्त्र, शिक्षा व मनोरंजन आदि का उत्तरदायित्व सम्भालने के लिए पुरुष को स्त्री का पूर्ण सहयोग लेना होता है। पैतृक सहानुभूति नियन्त्रण व रुचि के वातावरण में बालकों का स्वाभाविक विकास सरलता से हो पाता है। पुत्र के मन में पिता एक आदर्श का स्थान पाता है और उसके व्यवहार का अनुकरण करने का प्रयत्न करता है। गृह स्वामी को अपने निकट

परिवार की आवश्यकताओं के साथ ही अन्य सम्बन्धियों की समय-समय पर सहायता करनी पड़ती है। गृह में मतभेद अथवा अशान्ति होने पर उसे निर्णय का पद ग्रहण करना पड़ता है। परिवार के हित के लिए उसे अपना स्वार्थ त्यागना पड़ता है। उत्सव-त्यौहार, व्याह अथवा हर्ष-शोक के अवसर पर गृहस्वामी को बड़े संयम तथा कर्तव्य-पूर्वक अनेक क्रियाओं में प्रमुख भाग लेना पड़ता है। कर्मनिष्ठ भारतीय गृहस्थ इन सब विविध कर्तव्यों का पालन करने में आनन्द पाता है।

स्त्री व परिवार—विवाह-संस्कार के उपरान्त पत्नी पति के गृह की स्वामिनी हो जाती है। पति की अर्जित सम्पत्ति का विधिपूर्वक उपयोग करना, गृहस्थी के भिन्न कार्यों में पति की सहायता करना, योग्यतानुसार भोजन, वस्त्र व गृह-सम्बन्धी प्रबन्ध करना पत्नी के कर्तव्य हैं। आवश्यकता पड़ने पर धनोपार्जन में भी पति का हाथ बँटाना पत्नी के लिए श्रेयस्कर है।

माता के रूप में केवल सन्तानोत्पत्ति ही नहीं, उनके लालन-पालन, भरण, पोषण का मुख्य कार्य स्त्री को ही करना पड़ता है। शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध व प्रेम-पूर्ण वातावरण प्रदान करना माता का कर्तव्य है। पुत्र-पुत्रियों का विवाह करना व उनके वैवाहिक जीवन का सुख-दुख में भाग लेने का कार्य माता बड़ी रुचि व सहानुभूति से करती है।

गृहस्वामिनी के रूप में स्त्री को पति व सन्तान के अतिरिक्त अन्य सम्बन्धियों के प्रति अपना कर्तव्य पूर्ण करना पड़ता है। सरलता, शीलता एवं सहिष्णुता के साथ वह परिवार के सब सदस्यों की सेवा सुश्रूषा व आवश्यकता पूर्ति करती है। संयुक्त-परिवार में तो स्त्री को सास, बहू, देवर-देवरानी, ननद-भावज आदि अनेक सदस्यों के निकट सम्पर्क में आना होता है। अपनी कार्य,कुशलता ही नहीं, व्यावहारिक सामर्थ्य व स्वाभाविक गुणों के अनुरूप ही प्रत्येक स्त्री पारिवारिक वातावरण का आदर्श निर्माण कर पाती है।

पुत्र-पुत्री व परिवार—परिवार में संतान न होना पति-पत्नी के लिए चिन्ता का विषय बन जाता है। वेदों के अनुसार पुत्र शब्द से आशय है 'जो नरक से बचाये' तभी प्रत्येक पति-पत्नी की आकांक्षा होती है कि उन्हें श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त हो। पुत्र को भी परिवार के भिन्न सदस्यों माता-पिता, बहिनों तथा अन्य सम्बन्धियों के प्रति अपना कर्तव्य निभाना होता है। सबके प्रति श्रद्धा व प्रेम का व्यवहार करना, आवश्यकता पड़ने पर सेवा व सहायता करना, शिक्षा पाकर धनोपार्जन में भाग लेना; ये सब प्रत्येक भारतीय पुत्र के कर्तव्य हैं।

परिवार में पुत्रियों का स्थान भी अति सम्माननीय है। यद्यपि यह इस बात का प्रमाण देता है कि बहुत काल तक हिन्दू घरानों में पुत्रियों की बड़ी दुर्दशा रही है, किन्तु प्राचीन काल में कन्याओं को देवी-मय मानना व आधुनिक काल में उन्हें बहुत कुछ पुत्रों के समान ही स्थान देना, इस बात का साक्षी है कि वास्तव में भारतीय

में परिवार के लिये त्याग और बलिदान कुछ भी महत्त्व पूर्ण नहीं रहा जो स्वभावतः संयुक्त परिवारों को समाप्त करने वाला एक कारक है।

(७) **महिला आन्दोलन**—संयुक्त परिवार में स्त्रियों की स्थिति दयनीय थी। उन्हें कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। समाज का भी स्त्रियों के प्रति यही दृष्टिकोण था। जागृति के साथ महिलाओं ने अपने अधिकारों की रक्षा के लिये आन्दोलन किये। शिक्षा के प्रसार से भी उनमें जागृति आई और वे अब दासी के जीवन से मुक्ति पाने में विश्वास करने लगीं। अतः उन्होंने एकाङ्की परिवारों में रहकर अपने जीवन को सुखी बनाने का प्रयत्न किया। विवाह के उपरान्त उनका सर्वप्रथम कर्त्तव्य पति को संयुक्त परिवार से अलग करके अपने ढङ्ग से अपना गृह निर्माण करना था।

(८) **कानून सम्बन्धी कारण**—अंग्रेजी राज्य में कानूनी तौर से संयुक्त परिवार के कर्त्ता (मुखिया) को कर्ज की अदायगी के लिये सम्पत्ति वेचने का अधिकार दे दिया गया था। इस प्रकार संयुक्त सम्पत्ति का कोई भी भाग किसी भी समय बेचा जा सकता था। अब संयुक्त परिवार के सदस्यों की एकता का एक तत्त्व-संयुक्त सम्पत्ति भी कानून द्वारा कमजोर बना दिया गया था। जब एकता में बाँधने वाला सूत्र ही कमजोर हो तो कैसे सब लोग मिलकर एक साथ रहना पसन्द करेंगे ?

आज संयुक्त परिवार प्रणाली भारत में भी प्रायः दिनोंदिन नष्ट होती जा रही है। संयुक्त परिवार में गृह स्वामी तथा गृहिणी के ऊपर परिवार की सम्पूर्ण व्यवस्था का भार रहता है। परन्तु परिवार के अन्य सदस्यों जैसे—वृद्ध दादा-दादी, छोटे भाई, बहिन, पुत्र, पुत्री को भी पारिवारिक सुख-समृद्धि के लिए अपने-अपने उत्तरदायित्वों को समझना चाहिए तथा घर के स्वस्थ वातावरण के निर्माण करने के लिए सुमधुर पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने में योग देना चाहिए यद्यपि परिवार के गृह सम्बन्धी सभी कार्य गृहिणी के निर्देशन में होते हैं।

पारिवारिक सम्बन्ध

पुरुष व परिवार—भारतीय परिवार पितृ-सत्ताक है। पिता परिवार का स्वामी व प्रबन्धक होता है। पुरुष का कर्तव्य सर्वप्रथम पति के रूप में पत्नी की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। गृहस्थी की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन उपार्जन करना गृहस्थी का प्रथम कार्य है। गृहस्थी के भिन्न क्षेत्रों में रुचि लेना व परामर्श सम्मति देना भी पुरुष का कर्तव्य है।

पिता के रूप में संतान की भोजन-वस्त्र, शिक्षा व मनोरंजन आदि का उत्तरदायित्व सम्भालने के लिए पुरुष को स्त्री का पूर्ण सहयोग लेना होता है। पैतृक सहानुभूति नियन्त्रण व रुचि के वातावरण में बालकों का स्वाभाविक विकास सरलता से हो पाता है। पुत्र के मन में पिता एक आदर्श का स्थान पाता है और उसके व्यवहार का अनुकरण करने का प्रयत्न करता है। गृह स्वामी को अपने निकट

परिवार की आवश्यकताओं के साथ ही अन्य सम्बन्धियों की समय-समय पर सहायता करनी पड़ती है। गृह में मतभेद अथवा अशान्ति होने पर उसे निर्णय का पद ग्रहण करना पड़ता है। परिवार के हित के लिए उसे अपना स्वार्थ त्यागना पड़ता है। उत्सव-त्यौहार, ब्याह अथवा हर्ष-शोक के अवसर पर गृहस्वामी को बड़े संयम तथा कर्तव्य-पूर्वक अनेक क्रियाओं में प्रमुख भाग लेना पड़ता है। कर्मनिष्ठ भारतीय गृहस्थ इन सब विविध कर्तव्यों का पालन करने में आनन्द पाता है।

स्त्री व परिवार—विवाह-संस्कार के उपरान्त पत्नी पति के गृह की स्वामिनी हो जाती है। पति की अर्जित सम्पत्ति का विधिपूर्वक उपयोग करना, गृहस्थी के भिन्न कार्यों में पति की सहायता करना, योग्यतानुसार भोजन, वस्त्र व गृह-सम्बन्धी प्रबन्ध करना पत्नी के कर्तव्य हैं। आवश्यकता पड़ने पर धनोपार्जन में भी पति का हाथ बँटाना पत्नी के लिए श्रेयस्कर है।

माता के रूप में केवल सन्तानोत्पत्ति ही नहीं, उनके लालन-पालन, भरण, पोषण का मुख्य कार्य स्त्री को ही करना पड़ता है। शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध व प्रेम-पूर्ण वातावरण प्रदान करना माता का कर्तव्य है। पुत्र-पुत्रियों का विवाह करना व उनके वैवाहिक जीवन का सुख-दुख में भाग लेने का कार्य माता बड़ी रुचि व सहानुभूति से करती है।

गृहस्वामिनी के रूप में स्त्री को पति व सन्तान के अतिरिक्त अन्य सम्बन्धियों के प्रति अपना कर्तव्य पूर्ण करना पड़ता है। सरलता, शीलता एवं सहिष्णुता के साथ वह परिवार के सब सदस्यों की सेवा शुश्रूषा व आवश्यकता पूर्ति करती है। संयुक्त-परिवार में तो स्त्री को सास, बहू, देवर-देवरानी, ननद-भावज आदि अनेक सदस्यों के निकट सम्पर्क में आना होता है। अपनी कार्य-कुशलता ही नहीं, व्यावहारिक सामर्थ्य व स्वाभाविक गुणों के अनुरूप ही प्रत्येक स्त्री पारिवारिक वातावरण का आदर्श निर्माण कर पाती है।

पुत्र-पुत्री व परिवार—परिवार में संतान न होना पति-पत्नी के लिए चिन्ता का विषय बन जाता है। वेदों के अनुसार पुत्र शब्द से आशय है 'जो नरक से बचाये' तभी प्रत्येक पति-पत्नी की आकांक्षा होती है कि उन्हें श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त हो। पुत्र को भी परिवार के भिन्न सदस्यों माता-पिता, बहिनों तथा अन्य सम्बन्धियों के प्रति अपना कर्तव्य निभाना होता है। सबके प्रति श्रद्धा व प्रेम का व्यवहार करना, आवश्यकता पड़ने पर सेवा व सहायता करना, शिक्षा पाकर धनोपार्जन में भाग लेना; ये सब प्रत्येक भारतीय पुत्र के कर्तव्य हैं।

परिवार में पुत्रियों का स्थान भी अति सम्माननीय है। यद्यपि यह इस बात का प्रमाण देता है कि बहुत काल तक हिन्दू घरानों में पुत्रियों की बड़ी दुर्दशा रही है, किन्तु प्राचीन काल में कन्याओं को देवी-मय मानना व आधुनिक काल में उन्हें बहुत कुछ पुत्रों के समान ही स्थान देना, इस बात का साक्षी है कि वास्तव में भारतीय

परिवार में पुत्री को पुत्र के समान ही आदर मिलता है। शिक्षा-दीक्षोपरान्त उसका योग्य वर से विवाह सम्पन्न कर दिया जाता है। पुत्री का विवाह के पूर्व व उपरान्त सदैव अपने माता-पिता व भाई-बहिनों के प्रति प्रेम व श्रद्धा का भाव रहता है व समय-समय वह उनको सहयोग व सहायता पहुँचाती है।

बालिका का माता-पिता के प्रति कर्तव्य—धर्म-शास्त्रों में माता-पिता को देवता कहा गया है, अतः पुत्री का यह कर्तव्य है कि वह उनका सम्मान करे तथा उनकी आज्ञा का पालन करे। पुत्री को माता-पिता के हितकर कार्यों में संलग्न रहकर उनकी शुश्रूषा करनी चाहिए तथा उनकी इच्छानुसार कार्य करे। पुत्री को माता की गृहस्थी के कार्यों में पूरी तरह से हाथ बँटाना चाहिए। इससे पुत्री को भावी जीवन के लिए प्रशिक्षण प्राप्त होगा तथा पति के घर जाने पर किसी असुविधा का सामना नहीं करना पड़ेगा।

बालिका का भाई-बहिनों के प्रति कर्तव्य—भाई-बहिनों में अगाध प्रेम होना स्वाभाविक है। हिन्दू परिवार में बहिन भाई का अमित स्नेह और संरक्षण पाती रहती है। बालिका को बड़े भाई का आदर पिता के समान ही करना चाहिये। धर्म शास्त्रों में अनेक स्थलों पर पिता के मृत एवं असमर्थ होने पर कन्याओं के भाई पर अवलम्बन का उल्लेख है। छोटे भाई बहिनों के प्रति उसका अगाध प्रेम होना चाहिये तथा उसे दैनिक कार्यों में सहायता पहुँचाना चाहिए। उनसे लड़ाई-झगड़ा करना, ईर्ष्या करना उचित नहीं है। बड़ी बहिन का स्थान ऊँचा होता है। छोटे भाई-बहिनों के अपराधों को क्षमा करते हुए उन्हें प्रीति पूर्वक समझाकर उचित मार्ग पर लाने का प्रयत्न करना चाहिए।

बालिका के वधू के रूप में कर्तव्य—वधू को सदैव हँस-मुख रहना चाहिए। गृह कार्यों को दक्षतापूर्वक सम्पादित करे। घर की सब वस्तुओं को साफ-सुथरी रखना चाहिए तथा अपव्यय नहीं करना चाहिए। वधू को उत्तम आचरण तथा संयम से रहते हुए सास-ससुर की सेवा करना तथा पति के प्रिय कार्यों में संलग्न रहना चाहिए।

यदि बालिकायें उपर्युक्त कार्यों में से अपनी रुचि एवं सामर्थ्यनुसार चुनकर अपने अवकाश के समय प्रारम्भ करेंगी तो यह निश्चितपूर्वक कहा जा सकता है कि उन्हें इसमें आनन्द के साथ-साथ विशेष रुचि आवेगी एवं प्रसन्नता होगी।

स्वतः परीक्षा प्रश्न

१. परिवार एक आधारीय सामाजिक इकाई है, इस कथन की पुष्टि कीजिए।

२. परिवार की मूलभूत विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

३. संयुक्त परिवार से क्या अभिप्राय है ? इसके गुण व दोषों की विवेचना कीजिए।

४. संयुक्त परिवार के विघटन के क्या कारण हैं ? विघटन का भारतीय पारिवारिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा है ? विघटन को रोकने के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं ?

५. परिवार के प्रमुख सदस्य कौन-कौन होते हैं ? उनके पारस्परिक सम्बन्धों की व्याख्या कीजिए।

अध्याय २

परिवार के उत्तरदायित्व

परिवार समाज की आधारभूत एवं अपरिहार्य इकाई है। समाज निर्माण का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व प्रायः परिवार का ही है। सफल एवं सुविकसित परिवार अपने उत्तरदायित्वों एवं कार्यों को निष्ठापूर्वक करके अपने सदस्यों तथा अन्ततः पूरे समाज का कल्याण करता है। इस अध्याय में परिवार के असीमित एवं महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्यों एवं दायित्वों के सम्बन्ध में विस्तृत रूप से चर्चा करेंगे।

परिवार के उत्तरदायित्वों को मोटे रूप से निम्न पाँच वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

१. पारिवारिक जीवन के सन्तोषजनक जीवन दर्शन एवं मूल्य का निर्माण तथा सुलभ पारिवारिक लक्ष्यों एवं स्तर के निर्धारण सम्बन्धी दायित्व।
२. परिवार के सदस्यों की वृद्धि एवं विकास से सम्बन्धित कार्य।
३. गृह-व्यवस्था सम्बन्धी कार्य।
४. गृह निर्माण एवं पारिवारिक जीवन के शारीरिक कार्य।
५. पारिवारिक कल्याण तथा सामाजिक एवं राष्ट्रीय कार्यों में भाग लेने वाले विषयक कार्य।

कार्यों एवं उत्तरदायित्वों का उपर्युक्त वर्गीकरण पूर्णतः निर्पेक्ष नहीं है। ये एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सह-सम्बन्धित तथा परस्पर एक दूसरे पर आश्रित हैं। इन उत्तरदायित्वों का निर्वाह परिवार का एक ही सदस्य नहीं करता, वरन् प्रत्येक सदस्य का किसी न किसी सीमा तक उत्तरदायित्व होता है। कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिनको पति-पत्नी दोनों ही पूर्ण करते हैं, कुछ कार्य पति-पत्नी के अतिरिक्त अन्य प्रौढ़ व्यक्तियों द्वारा सम्पादित किए जाते हैं तथा कुछ कार्यों को परिवार के बड़े बालक

करते हैं। परन्तु गृह-सम्बन्धी दैनिक निर्णयों एवं असंख्य कार्यों को करने का वास्तविक एवं अन्तिम उत्तरदायित्व गृहिणी का ही होता है। परिवार के कार्यों की प्रकृति एवं सीमा का निर्धारण घर की आन्तरिक स्थिति के अतिरिक्त परिवार का घर के बाहर के समाज में सम्बन्धों की प्रकृति भी करती है।

इन विभिन्न उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने में गृहिणी अपना अभीष्ट योग सफलतापूर्वक तभी प्रदान कर सकती है, जबकि उसे गृह-सम्बन्धी कुछ विशिष्ट प्रकार का ज्ञान हो, पर्याप्त रूप से विस्तृत अनुभव हो, उसमें समुचित रूप से व्यवस्था करने की कुशलता हो, उसमें परिवार के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर कार्य करने एवं उनको निर्देशित करने की क्षमता हो तथा गृह के उपकरणों एवं यंत्रों से कुशलतापूर्वक कार्य करने की योग्यता हो। सारांशतः विवेकशील सुविज्ञ, अनुभवी एवं कुशल गृहिणी ही परिवार के गम्भीर एवं महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्वों को परिवार के अन्य सदस्यों के सहयोग से सम्पन्न करने में सफल हो सकती है।

अब परिवार के उत्तरदायित्वों के विषय में विस्तृत रूप से चर्चा करेंगे।

(१) सन्तोषजनक जीवन-दर्शन—प्रत्येक व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह की जीवन के प्रति कुछ मान्यताएँ, विश्वास एवं दृष्टिकोण होते हैं और उन्हीं मान्यताओं, विश्वासों एवं धारणाओं के अनुकूल अपने जीवन व्यवहार को ढालता है। ये ही जीवन सम्बन्धी धारणा एवं विचार व्यक्ति अथवा समूह विशेष का जीवन दर्शन कहलाता है। प्रत्येक व्यक्ति तथा व्यक्ति-समूह का अपना जीवन दर्शन होता है चाहे वह इसके सम्बन्ध में चेतनाशील हो या नहीं। वास्तविकता तो यह है कि समाज में जितने व्यक्ति रहते हैं उतने ही प्रकार के जीवन दर्शन विद्यमान हैं। प्रत्येक स्त्री-पुरुष की जीवन सम्बन्धी मान्यताएँ अपनी विशेषता रखती है। इसमें से कुछ अपने अनुभवों के आधार पर जीवन-दर्शन का निर्माण करते हैं, कुछ ऐसे होते हैं जो प्रचलित परम्पराओं एवं रीति-रिवाजों द्वारा निर्धारित जीवन दर्शन को अपना लेते हैं तथा अन्य व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो परिस्थितियों से प्रभावित दृष्टिकोण को अपना लेते हैं।

प्रत्येक परिवार का अपना जीवन-दर्शन होता है, जिसका निर्धारण प्रधानतः पति-पत्नी का अपना जन्मजात स्वभाव, उनके जीवन के अनुभव, शैक्षिक पृष्ठभूमि, उनकी आदतें तथा शारीरिक एवं सामाजिक आनुवंशिकता करती है। प्रायः जीवन-दर्शन का विकास क्रमागत रूप से अनजाने में ही होता है।

जीवन-दर्शन का महत्त्व

जीवन-दर्शन का पारिवारिक जीवन में अत्यधिक महत्त्व है। जीवन, विचार, भावनाओं एवं अनुभवों की सार्थकता का बोध जीवन दर्शन के द्वारा ही होता है। परिवार के मानवीय सम्बन्धों की प्रकृति, परिवार की रुचियों, पारिवारिक वातावरण

का निर्धारण यहाँ तक कि जीवन के व्यवसाय का चयन जीवन-दर्शन से ही प्रभावित होता है। संक्षेप में जीवन-दर्शन का महत्त्व निम्नानुसार है—

(अ) यह परिवार के समस्त सदस्यों के आचरण को निर्देशित करता है।

(ब) पारिवारिक प्रयत्नों एवं प्रयासों में समस्त सदस्यों को पूर्णता एवं एकता की भावना का आधार यही जीवन-दर्शन होता है।

(स) विकल्प तथा निर्णय का निश्चय करने के लिये मापदण्ड के विकास में यह सहायक होता है।

(द) गृह-निर्माण एवं पारिवारिक जीवन के लक्ष्यों की उत्पत्ति जीवन-दर्शन से ही होती है।

गृहस्थ जीवन मानव अनुभवों का वह भाग है जो घर में अन्य व्यक्ति अथवा व्यक्ति-समूह के साथ जीवन व्यतीत करने पर केन्द्रित होता है। इस अनुभव के अन्तर्गत सामान्य साधनों में साझेदारी, व्यक्ति-विशेष के व्यक्तित्व का विकास, मिलकर कार्य करने एवं अनुभव प्राप्त करने के द्वारा सन्तुष्टि प्राप्त करना, परिवार की सामाजिक क्रियाओं में योगदान देना तथा सक्रिय रूप से भाग लेना आदि सम्मिलित हैं। इन पारिवारिक अनुभवों के आधार पर ही व्यक्ति सामाजिक उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने में भाग लेने का प्रशिक्षण प्राप्त करता है।

चूँकि परिवार के लक्ष्यों का तथा उनके प्राप्त करने की विधियों का निर्धारण मुख्यतः पारिवारिक जीवन-दर्शन के द्वारा ही होता है, अतः जीवन-दर्शन की उत्पत्ति एवं विकास के सम्बन्ध से जानकारी प्राप्त करना परमावश्यक है।

जीवन-दर्शन का निर्माण एवं विकास

जीवन-दर्शन का निर्माण अनुभवों के आधार पर होता है। ये अनुभव जीवन की विभिन्न क्रियाओं के माध्यम से प्राप्त होते हैं। इन क्रियाओं के अन्तर्गत मनोरंजनात्मक, विद्यालयीन, धार्मिक, व्यावसायिक आदि सम्मिलित होती हैं। ये समस्त क्रिया-कलाप एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं तथा जीवन-क्रम में एकीकृत हो जाते हैं। इन क्रिया-कलापों के परिणामस्वरूप परिवार के सदस्यों के ज्ञान, कौशल एवं अभिवृत्तियों में वृद्धि होती है। स्वस्थ जीवन के निर्माण के लिए निम्नलिखित क्रिया-कलापों की आवश्यकता होती है—

(१) **धार्मिक क्रिया-कलाप**—प्रायः प्रत्येक परिवार किसी न किसी धर्म को मानता है। जिस धर्म में उसकी आस्था हो, उस धर्म से सम्बन्धित उत्सवों का आयोजन नितान्त आवश्यक है। धार्मिक सिद्धान्तों एवं उत्सवों के परिणामस्वरूप परिवार के सदस्यों के विचारों एवं अभिवृत्तियों का निर्धारण होता है।

(२) **सांस्कृतिक क्रिया-कलाप**—किसी समाज या जाति-विशेष का जीवन-दर्शन सांस्कृतिक स्वरूप का निर्धारण करता है तथा उस समाज या जाति-विशेष

की सांस्कृतिक परम्पराएँ आगामी पीढ़ी के सदस्यों में अपनी संस्कृति को विश्वास एवं उसको अभिवृद्ध करने की भावना का संचार करती है। अतः परिवार का यह उत्तरदायित्व है कि वह स्वस्थ सांस्कृतिक रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं का मिलन करते हुए परिवार के सदस्यों को उनमें दीक्षित करे।

(३) विद्यालयीन क्रिया-कलाप—विद्यालय समाज व संस्कृति का सूक्ष्म स्वरूप ही होता है। बालक को घर में तो प्रारम्भिक शिक्षा मिलती ही है, परन्तु विद्यालय भी पाठ्यगामी तथा पाठ्येत्तर क्रिया-कलापों के माध्यम से बालकों के जीवन-दर्शन के निर्माण में अद्वितीय कार्य करता है। परिवार का उत्तरदायित्व है कि बालकों को ऐसे ही विद्यालय में शिक्षित करें जो स्वस्थ जीवन-दर्शन के निर्माण में सहायक हो।

(४) मनोरंजनात्मक क्रिया-कलाप—व्यक्ति के जीवन-दृष्टिकोण के निर्माण में मनोरंजनात्मक क्रिया-कलापों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। आज के युग में मनोरंजन की व्यवस्था व्यक्ति के समुचित विकास के लिए परमावश्यक है। परिवार सदस्यों के लिए ऐसी मनोरंजनात्मक क्रियाएँ आयोजित करे जो उसके द्वारा निर्धारित जीवन-दर्शन के विकास में सहायक सिद्ध हो सके। घर में आने वाली पत्र-पत्रिकाएँ, चलचित्र आदि अभिवृत्तियों के निर्माण के अत्यधिक प्रभावशाली साधन हैं।

(५) सामाजिक कार्यों का आयोजन—व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है। वह सामाजिक गुणों की शिक्षा समाज में रहकर ही प्राप्त करता है। समाज के व्यक्तियों के निकट सम्पर्क में आकर ही वह इन गुणों को ग्रहण कर पाता है। परिवार का यह उत्तरदायित्व है कि वह समाज अन्य व्यक्तियों अथवा समुदायों से सम्पर्क साधन के अवसर प्रदान करे। विवाह आदि सम्बन्ध समान जीवन-दर्शन रखने वाले व्यक्तियों के साथ स्थापित किए जायें।

उपर्युक्त क्रिया-कलाप के फलस्वरूप व्यक्ति में विशिष्ट अभिवृत्तियों का निर्माण होता है। जैसे-जैसे व्यक्ति का विकास होता जाता है वैसे ही अनुभव-जन्य ये अभिवृत्तियाँ जीवनक्रम को निर्देशित करने का कार्य करती हैं फलत जीवन-दर्शन का निर्माण होता है।

जब पति-पत्नी परिवार का निर्माण करते हैं, उस समय उनके दो विभिन्न प्रकार की अभिवृत्तियाँ होती हैं, परन्तु बाद में वे दोनों मिलकर एक तीसरे ही प्रकार की नवीन अभिवृत्ति का निर्माण करते हैं। ये तीनों ही प्रकार की अभिवृत्तियाँ मिलकर पारिवारिक जीवन दर्शन का प्रारम्भ करती हैं। इन्हीं के अनुसार नूतन परिवार के वातावरण की व्यवस्था की जाती है तथा घर का वातावरण अधिकांशतः उसके सदस्यों की अभिवृत्तियों तथा आदर्शों, पूर्वाग्रहों एवं संवेगात्मक भावनाओं का निर्धारण करते है। माता-पिता स्वयं अपने व्यवहार का आदर्श प्रस्तुत करके तथा विशिष्ट प्रकार के उत्तेजकों के माध्यम से बालकों की अभिवृत्तियों पर अद्भुत प्रभाव डालते हैं।

मानवीय मूल्य	पारिवारिक जीवन में मूल्यों को अनुभूत करने में सहायता प्रदान करने वाली अभिवृत्तियाँ।
प्रेम	पारिवारिक जीवन में स्नेह के महत्व; सामूहिक सुदृढ़ता हेतु विचारों, भावनाओं एवं आशाओं के स्वतन्त्र आदान-प्रदान के महत्व को स्वीकार करना, सामूहिक सम्बन्धों में सहकारिता की भावना के महत्व के मान्य करने की इच्छा।
ज्ञान एवं बुद्धिमत्ता	तथ्यों तथा आन्तरिक सम्बन्धों की जानकारी की आवश्यकता अन्य मूल्यों को प्राप्त करने हेतु स्वीकार करना; व्यक्तिगत साधन सम्पन्नता के महत्व को समझना; परिवार के प्रत्येक सदस्य की दृष्टि एवं विकास के महत्व को समझना, परिवार के सदस्यों की वैयक्तिक भिन्नताओं, आवश्यकताओं एवं रुचियों को समझना।
कला	प्रत्येक प्रकार के सौन्दर्य से अवगत होना व उसकी प्रशंसा करना; सौन्दर्यानुभवों से जन्म उत्तेजना एवं सन्तोष की अनूभूति करना।
स्वास्थ्य	इस तथ्य को स्वीकार करना कि अन्य मूल्यों को प्राप्त करने हेतु शारीरिक एवं मानसिक स्वस्थ्यता अनिवार्य है; थकान का शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्ध समझना।
आराम	जीवन को आरामदायक व आनन्दपूर्ण बनाने हेतु वस्तुओं और सेवाओं के उपयोग में रुचि।
महत्त्वाकांक्षा	इस तथ्य को मान्यता देना कि मानवीय कार्य सम्पादन में सफला की इच्छा एक प्रमुख प्रेरक तत्व तथा सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि व्यक्ति को उसकी समताओं के अनुकूल कार्य दिया जाय।
शिल्प विज्ञान सम्बन्धी रुचियाँ	सोद्देश्य क्रियाओं में कौशल के महत्व तथा रचनात्मक कार्य में आनन्द एवं सन्तुष्टि को समझना; प्रभावपूर्ण गृह-निर्माण हेतु कुशल व्यवस्था एवं कार्य को साधन के रूप में मान्यता देना; सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा के महत्व को समझना।
खेल	रचनात्मक काल्पनिक क्रिया द्वारा स्वतन्त्रता एवं विश्राम के मूल्य को समझना; खाली समय का बुद्धिमत्तापूर्ण एवं रचनात्मक कार्य में सदुपयोग करना।
धर्म	धर्म द्वारा प्रदत्त सुख एवं शान्ति की प्रशंसा करना।

लक्ष्य
(Goals)

नव दम्पतियाँ जिन लक्ष्यो की खोज एवं निर्माण करती हैं, वे स्वभावत: उनकी इच्छाओ, उनके अतीत के वातावरण एवं अनुभवों तथा उनके मूल्यो के सम्बन्ध मे दार्शनिक विचारधाराओ एव अभिवृत्तियो से अभिवृद्ध होती हैं। वे स्वय के लिए तथा अपनी भावी सन्तान के लिए सुख और सन्तोष प्रदान करने वाले व्यक्तिगत जीवन-क्रम की खोज करते हैं। इन इच्छाओ की पूर्ति हेतु कतिपय लक्ष्यों का निर्धारण इस आशा के साथ करते हैं कि उनकी पूर्ति होने पर सन्तोषप्रद जीवन व्यतीत करना सम्भव हो सकेगा। कुछ लक्ष्य सुनिश्चित हो सकते हैं व कुछ अस्पष्ट तथा अव्यावहारिक। सारांशत: यह कहा जा सकता है कि लक्ष्य जीवन के वे साध्य हैं, जिनको प्राप्त करने हेतु प्रत्येक व्यक्ति अथवा परिवार चेष्टा करता है।

लक्ष्यों का निर्माण—लक्ष्यों का निर्धारण एक सतत प्रक्रिया है। प्रत्येक परिवार जीवन-भर निरन्तर मूल्यों को कसौटी पर कसता रहता है तथा जीवन की उपलब्धियो एवं प्राप्तियों के विषय मे अपनी अभिवृत्तियो को परिवर्तित करता रहता है। इसके परिणामस्वरूप क्रियाओं को नवीन साध्य अथवा निर्धारित लक्ष्यो की प्राप्ति हेतु नवीन विधियो को खोजने की ओर निर्देशित किया जाता है। प्रत्येक घर मे परिवार के प्रत्येक सदस्य के व्यक्तिगत तथा परिवार के सभी सदस्यो के सामूहिक लक्ष्य होते हैं। जिस वस्तु को व्यक्ति अथवा परिवार चाहता है व इसे प्राप्त करने लिए वह प्रयत्न करेगा उसका स्पष्ट चित्र लक्ष्य मे देखने को मिल जाता है। इनमें से कई लक्ष्यों की प्राप्ति तो तुरन्त ही हो जाती है। कुछ की प्राप्ति भविष्य मे होने की सम्भावना रहती है। कुछ लक्ष्य ऐसे भी होते हैं जिन्हें खोजने के लिए जीवन का दीर्घकाल कम होता है, परिणामत: सदैव विद्यमान रहते हैं।

तात्कालिक एवं अल्पकालिक लक्ष्य जिनको व्यक्ति प्रतिदिन खोजता रहता है, वे असख्य होते हैं। वे सभी समान रूप से महत्वपूर्ण नही होते तथा उनमें से कुछ ऐसे होते हैं जिनका उपयोग अन्य किसी लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु किया जाता है।

गृहस्थी का निर्माण करते समय यह महत्वपूर्ण है कि नव दम्पती जिन लक्ष्यो को प्राप्त करना चाहते हैं उनका निर्धारण करते है। स्पष्ट रूप से निर्धारित लक्ष्य पारिवारिक साधनों के बुद्धिमत्ता पूर्ण उपयोग को ही प्रोत्साहित नही करते, अपितु जिन दो व्यक्तियो ने लक्ष्यो का निर्धारण किया है उनमें सहकारिता की भावना को भी उत्तेजित करते हैं। जो दम्पती लक्ष्यो को प्राप्त करने की आशा मात्र करते हैं, परन्तु उनको प्राप्त करने के लिए योजना का निर्माण व उसका क्रियान्वयन नही करते, वे अपनी इच्छाओं को व्यावहारिक रूप नहीं दे सकते। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता जाता

है, परिवार के लक्ष्य समूह की इच्छाओं को निर्देशित एवं नियन्त्रित करते हैं। इस प्रकार परिवार के जीवन का क्रम लक्ष्यों द्वारा निर्धारित हो जाता है।

दीर्घकालिक लक्ष्य—यद्यपि प्रत्येक परिवार के लक्ष्य तथा उनको प्राप्त करने की विधियाँ पृथक्-पृथक् होती हैं, तथापि कुछ दीर्घकालिक लक्ष्य ऐसे होते है जिनको प्राप्त करना प्रत्येक परिवार के लिए उपयोगी होता है। ये लक्ष्य संक्षेप में निम्नानुसार है—

१. परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिए अच्छा स्वास्थ्य।
२. परिवार के प्रत्येक सदस्य का जीवन पर्यन्त शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास।
३. सन्तोपजनक व्यक्तिगत एवं पारिवारिक सम्बन्ध।
४. परिवार के सदस्यों के स्वास्थ्य एवं कल्याण की सुरक्षा तथा प्रत्येक सदस्य के लिए शैक्षिक एवं मनोरंजनात्मक लाभ प्रदान करने हेतु पर्याप्त साधनों की व्यवस्था।
५. परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला सुनियोजित एवं उचित स्थान पर बना हुआ घर।
६. स्थानीय एवं राष्ट्रीय स्तर के कार्यों में व्यक्ति तथा परिवार का सक्रिय रूप से भाग लेना और विश्व की समस्याओं में ज्ञानपूर्ण रुचि।
७. उपर्युक्त लक्ष्यों की प्राप्ति की सुनिश्चिता के लिए पारिवारिक साधनों की व्यवस्था।

परिवार के लक्ष्यों के निरूपण एवं उनकी प्राप्ति हेतु गृहिणी के शारीरिक और मानसिक साधनों का अत्यधिक मात्रा में उपयोग किए जाने की आवश्यकता होती है। ज्ञान, स्वीकारात्मक जीवन-दर्शन, अच्छे निर्णय तथा पारिवारिक साधनों के प्रयुक्त करने के तरीकों को समझने की आवश्यकता होती है। साहस, अतिशय शक्ति तथा मूल्यों की जाँच करने हेतु धैर्य भी नितान्त आवश्यक है। आधुनिक जीवन में पारिवारिक साधनों के उपयोग का आयोजन तथा पारिवारिक जीवन से जो आशा रखता है, उसकी पूर्ति हेतु उनकी व्यवस्था करना गृहिणी तथा उसके परिवार का एक आधारीय कर्तव्य हो गया है।

स्तर
(Standards)

यद्यपि मूल्यों तथा लक्ष्यों को एक दूसरे से सम्बन्धित करना अपेक्षाकृत सरल है परन्तु स्तर को उक्त दोनों से सम्बन्धित करना कम सरल है। यद्यपि स्तर की उत्पत्ति मूल्य से हुई है, परन्तु अन्तर्सम्बन्ध की रेखा खोज निकालना कठिन है।

ऐसे स्तर हैं जो एक ही स्थिति अथवा क्षेत्र में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—भोजन अथवा वस्त्र अथवा आचरण का स्तर। लक्ष्य अथवा मूल्यों की अपेक्षा स्तर अधिक

सुनिश्चित होते हैं। कई विशिष्ट स्तरों का संयोग भी होता है, जिसे रहन-सहन का स्तर कहते हैं। स्तर उस सीमा को निर्धारित करते हैं, जिसे कोई व्यक्ति लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु स्वीकार करेगा। किसी दूसरे व्यक्ति के लक्ष्य एवं मूल्यों के सम्बन्ध में यदि हमको न बताया जाय तो हम केवल अनुमान मात्र ही लगा सकते हैं, परन्तु किसी व्यक्ति के स्तर का हम भली प्रकार निरीक्षण कर सकते हैं। यही पर स्तरों मे हमें प्रभावित करने की महान शक्ति छिपी हुई है।

गृह-व्यवस्था मे सम्बन्धित अधिकाश स्तरो को, जीवन को रहने योग्य बनाने हेतु आवश्यक समझी जाने वाली स्थितियों का मानसिक चित्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यदि इसकी प्राप्ति कर ली जाती है तो परिणामतः सन्तोष प्राप्त होता है। यदि प्राप्त नही किया जाय तो असन्तोष का अनुभव होता है। यदि एक निश्चित स्तर तक पहुँचने की योग्यता अथवा कुशलता में कमी भी हो तो, जब तक उस स्तर तक न पहुँचने के कारण असन्तोष रहता है तो भी वह स्तर ही रहता है। उदाहरणार्थ, फूलों को कलात्मक ढंग से सजाने की कुशलता की कमी के कारण एक व्यक्ति दुखी रहता हो। स्तर उपलब्धि के वास्तविक स्तर से अधिक ऊँचे हो सकते हैं परन्तु साधारणतः यह अन्तर बहुत अधिक नही होता। कॉलेज की एक छात्रा सप्ताह में एक बार नियमित रूप से बालों की सजावट कराती है तथा यदाकदा एक अतिरिक्त भी करा लेती है। वह यह भी सोच सकती है कि यदि उसके बालो की नियमित रूप से सप्ताह मे दो बार सजावट की जाए तो उसके बाल अधिक अच्छे दिखाई दे सकते हैं, परन्तु जब तक यह भावना अनिश्चित रहती है, तब तक वह स्तर शायद ही बना सकती हो। जब मानसिक चित्र या तो उसे कार्य रूप मे परिणत करने मे पर्याप्त रूप से प्रबल न हो जाए अथवा यदि कार्य रूप मे परिणत न हो सके तो पर्याप्त कष्ट और बेचैनी का अनुभव होने लगे तभी उसको स्तर कहा जा सकता है।

कोई बाह्य नियम ऐसा नहीं होता जो गृहिणी को विशेष कार्य करने को विवश अथवा निर्देशित करे। यह तो केवल एक आन्तरिक विश्वास जैसा होता है, जो उसे किसी कार्य विशेष को करने को विवश करता है तथा वह कार्य व्यक्ति विशेष एवं उसके समूह द्वारा मान्यता प्राप्त तरीकों से किया जाता है। इस प्रकार स्तर का नैतिक आधार होता है तथा उनके साथ यह भावना भी रहती है कि क्या उचित और ठीक है।

वर्गीकरण

गृह-व्यवस्था के सन्दर्भ मे परिवार अथवा समूह के मूल्यों के अनुसार स्तर [illegible] भिन्न होते हैं। मूल्यों के आधार पर इन्हें दो वर्गों मे वर्गीकृत कर सकते हैं—१. [illegible]गत, २ नमनीय या परिवर्तनशील। यदि सामाजिक स्वीकृति एवं [illegible] मूल्यों को अत्यधिक मान्यता दी जाती है तो मूल्यों मे परम्परागत [illegible] स्तरो को प्राप्त करने का हमारा लक्ष्य होगा। ऐसे स्तर किसी [illegible]

विशेष के बिन्दु पर निश्चित होते हैं। यदि, दूसरी ओर, आराम, समूह के अन्दर मित्रता तथा साधनों को प्रयुक्त करने के मध्य सन्तुलन अधिक प्रभावपूर्ण है, तो ऐसे मूल्यों के परिणामस्वरूप किसी स्थिति विशेष में उपयुक्त स्तर नमनीय स्तर की उत्पत्ति की सम्भावना उत्पन्न हो जाती है। पहले वर्ग के अन्तर्गत स्तर निश्चित होते हैं। व्यक्ति (यदि आवश्यक व सम्भव हो तो) उनके अनुकूल अपने को बनाने के लिए परिवर्तित होता है। परन्तु दूसरे वर्ग के स्तर का केन्द्र-बिन्दु व्यक्ति होता है। मानवीय आवश्यकता एवं स्थिति के अनुकूल स्तर परिवर्तित होते हैं। परम्परागत स्तरों की अपेक्षा नमनीय या परिवर्तनशील स्तरों में धन, समय अथवा प्रयत्नों को मूल्यों के रूप में अधिक मान्यता प्रदान की जाती है।

परम्परागत

परम्परागत स्तर वे होते हैं जो कि रूढ़िगत होते हैं तथा जिन्हें बड़े समुदाय अथवा समाज का एक बड़ा समूह स्वीकार कर लेता है। ऐसे स्तर का एक उदाहरण घर के फर्नीचर की प्रतिदिन सफाई करना है। यदि घर में अप्रत्याशित रूप से कोई मेहमान आ जाए और घर में धूल दिखाई दे तो गृहिणी क्षमा माँगते हुए कहेगी कि आज वह सफाई नहीं कर पाई है।

यह स्मरण रखना उचित होगा कि जिसे हम सामान्यतः उच्च स्तर कहते हैं, जो कि निम्न स्तर का विपरीत है, मुख्यतः परम्परागत स्तर हैं। इसको बनाए रखने के लिए निम्न स्तर की अपेक्षा अधिक प्रयत्न की आवश्यकता होती है।

नमनीय या परिवर्तनशील स्तर—परिवर्तनशील स्तरों को अपनाते समय समुदाय के अधिकांश लोग इन्हें स्वीकार नहीं करते। किसी दी हुई परिस्थिति के अनुकूल होने के कारण इन्हें जान-बूझकर अपनाया जाता है।

दोनों स्तरों में आपसी सम्बन्ध है। एक ही स्तर विभिन्न परिस्थितियों में उपयुक्त अथवा अनुपयुक्त प्रतीत होता है। अपरिवर्तनशील परम्परागत स्तर पर्याप्त खाली समय रखने वाली गृहिणी के लिए उपयुक्त हो सकता है, परन्तु तीन बच्चों वाली ऐसी माता के लिए जिसके घरेलू कार्यों में सहायता करने कोई भी न हो अनुपयुक्त हो सकता है। फर्नीचर की सफाई की दृष्टि से परिवर्तनशील स्तर वह होगा जिसमें फर्नीचर के जिन भागों पर धूल होगी उन्हीं की सफाई करनी होगी। ऐसा परिवर्तनशील स्तर सामान्यतः उन्हीं लोगों के लिए उपयुक्त होगा जिनके पास इस कार्य को भली प्रकार करने के लिए समय व शक्ति की कमी होगी।

परम्परागत अथवा परिवर्तनशील स्तरों का चयन करने की कसौटियाँ—परम्परागत स्तर की अपेक्षा परिवर्तनशील स्तर का चयन किया जाए अथवा परम्परागत स्तर को ही बनाए रखा जाए, यह तथ्य कतिपय प्रश्नों के उत्तर पर निर्भर करता है। यह सत्य है कि आदत के प्रभाव के कारण स्तर बहुधा स्थिर ही रहते हैं तथा यह अनिश्चित ही है कि एक ही समय में कई स्तरों को परिवर्तित किया जाए। प्रश्न हैं—

१. इस स्तर का समय, प्रयत्न और धन की दृष्टि से क्या मूल्य है ?
२. स्तर की उत्पत्ति किस प्रकार हुई ? क्या इसका अब भी कोई उपयोग है ?
३. इस स्तर को बनाए रखने में दूसरे व्यक्तियों पर क्या प्रभाव पड़ता है ?
४ इस क्षेत्र में कोई व्यक्ति किस सीमा तक परिवर्तनशील स्तरों को स्वीकार कर सकता है ?
५. मौलिक मूल्य से इस स्तर का क्या सम्बन्ध है ?

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि परिवार के सदस्यों में उनकी रुचियों, भूतकालीन पर्यावरण एवं अनुभवों के आधार पर अभिवृत्तियों, जीवन-मूल्यों तथा जीवन-दर्शन का निर्माण होता है। इन्हीं के अनुकूल पारिवारिक जीवन के तात्कालिक एवं दीर्घकालीन लक्ष्यों स्तर का निर्धारण होता है। निर्धारित लक्ष्यों स्तर को प्राप्त कर परिवार सुखमय जीवन व्यतीत करता है। यदि लक्ष्य अप्राप्य दिखाई देते हैं तो उनमें तथा अभिवृत्तियों, मूल्यों स्तर आदि में भी परिवर्तन होता रहता है। इस प्रकार जीवन-दर्शन, जीवन के मूल्यों एवं अभिवृत्तियों में सतत परिवर्तन की प्रक्रिया प्रायः चलती रहती है।

परिवार के सदस्यों की वृद्धि एवं विकास

जीवन-दर्शन एवं जीवन-मूल्यों के निर्धारण के बाद परिवार का दूसरा महत्त्वपूर्ण दायित्व परिवार के समस्त सदस्यों में व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास करने के लिए प्रयत्न करना है। परिवार स्वभावतः अपरिपक्व सदस्यों को सामाजिक परिपक्वता हेतु तैयार करता है। सफल परिवार निर्माण के लिए स्नेह तथा घर में मानवीय सम्बन्धों की समस्या का निराकरण करने के लिए विवेकपूर्ण एवं स्वस्थ्य निर्णय नितान्त आवश्यक है। इसके अतिरिक्त आर्थिक सुरक्षा तथा गृहस्वामी एवं सदस्यों में पारिवारिक जीवन के स्तर में परिवर्तन होने के परिणामस्वरूप उत्पन्न समस्याओं को सुलझाने के लिए सीखने की इच्छा भी अपरिहार्य है।

अच्छे पारिवारिक जीवन के निर्माण का अभिप्राय है, अच्छे समाज की रचना करना, क्योंकि परिवार समाज का ही संक्षिप्त रूप है। परिवार का संगठन साधारणतः विभिन्न आयु लिंग, भिन्न रुचियों तथा जीवन के प्रति विभिन्न अभिवृत्तियों वाले सदस्यों से होता है। इन भिन्नताओं के कारण परिवार के सदस्यों में सतत समायोजन बनाए रखने की बड़ी आवश्यकता होती है। स्वस्थ समायोजन स्थापित करने का गुण नागरिकता की अच्छी शिक्षा है। जिस प्रकार के आदर्शों, आदतों एवं अभिवृत्तियों की समाज के अच्छे नागरिक को आवश्यकता होती है, उनके निर्माण का प्रारम्भ घर में ही होता है। यदि परिवार अपने सदस्यों के सर्वाङ्गीण विकास के लिए सुविधाएँ प्रदान करेगा तो ही समाज तथा व्यक्ति-विशेष के प्रति अपना उत्तरदायित्व सफलतापूर्वक निभा सकेगा। परिवार का यह उत्तरदायित्व

किसी सदस्य-विशेष अथवा सदस्यों के किसी आयु-विशेष या व्यक्तित्व के किसी पक्ष-विशेष तक ही सीमित नहीं होता। सन्तानोत्पत्ति से लेकर मृत्यु-पर्यन्त, शिशु से लेकर वृद्धों तक तथा शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक एवं नैतिक दृष्टि से सभी की वृद्धि एवं विकास के लिए परिवार को प्रयत्न करना है। पारिवारिक जीवन-चक्र पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि इसके प्रारम्भ से अन्त तक कहीं भी विश्रृङ्खलता नहीं है। इतना अवश्य है कि इसमें कुछ स्पष्ट स्तर (Stages) अवश्य हैं। जीवन के ये स्तर एक दूसरे से इतने सह-सम्बन्धित हैं कि एक को दूसरे से पूर्णतः पृथक् नहीं किया जा सकता; फिर भी प्रत्येक स्तर की अपनी विशेष परिस्थितियाँ एवं समस्याएँ होती हैं। इनमें शिशु एवं बाल्यावस्था सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अवस्था होती है, क्योंकि इनकी इस अवस्था की वृद्धि व विकास उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व एवं जीवन-क्रम को निर्धारित करता है। विकास की इन अवस्थाओं में परिवार की आवश्यकताओं एवं वयस्कों की व्यक्तिगत इच्छाओं के मध्य बहुधा प्रतिद्वन्द्विता रहती है। परिणामतः कुण्ठाएँ एवं द्वन्द्व उत्पन्न हो जाने की सम्भावना रहती है। यदि वयस्कों में ऐसे स्वस्थ जीवन-दर्शन का विकास हो गया है जो परिवार को सम्पूर्ण इकाई मानकर निर्देशन प्रदान करे तो समायोजन अपेक्षाकृत अधिक सरलता से स्थापित किया जा सकता है तथा द्वन्द्वों का निराकरण अधिक सरलता से हो सकता है।

गृह-प्रबन्ध सम्बन्धी उत्तरदायित्व

घर के वातावरण में मानवीय साहचर्य का स्वाभाविक परिणाम गृह-प्रबन्ध है। जैसे ही गृहस्थी स्थापित होती है, व्यक्ति समान उद्देश्य के लिए मिलकर कार्य करना प्रारम्भ कर देते हैं, उत्तरदायित्व के वितरण हेतु तथा घर के मानवीय एवं वस्तुगत साधनों के उपयोग को संगठित एवं नियंत्रित करने के लिए कार्य के आयोजन के विकास की आवश्यकता उत्पन्न होती है। निरन्तर हल की जाने वाली समस्याओं की बहुलता तथा परिवार में किए जाने वाले निर्णयों के कारण गृह-प्रबन्ध पारिवारिक जीवन का एक महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व बन गया है।

गृह-प्रबन्ध के दो प्रत्यय—कुछ लोग गृह-प्रबन्ध का सम्बन्ध प्रमुख रूप से कुशलताओं के विकास, मानकीकृत कार्य, कार्यों को सम्पादित करने में प्रयुक्त किए गए उपकरण एवं साज-सज्जा के चयन तथा यांत्रिक कुशलता से स्थापित करते हैं। इस प्रत्यय के अन्तर्गत कुशलता एवं मानवीकरण का मापन परिवार के साधनों; जैसे—समय, शक्ति, तथा धन की इकाइयो द्वारा किया जाता है। यह दृष्टिकोण गृह-प्रबन्ध में आदर्श स्तर और कुशलता को साध्य मानकर इन पर बल देता है।

गृह-प्रबन्ध के दूसरे प्रत्यय को मानने वाले गृह-प्रबन्ध को जीवन का एक ढंग मानते हैं। उनकी दृष्टि में घर प्रेम और स्नेह के वातावरण में साथ-साथ रहने वाले मनुष्यों द्वारा निर्मित है। इस अर्थ के अनुसार गृह-प्रबन्ध परिवार के लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु साधनों को प्रयुक्त करने का एक माध्यम मात्र है। कुशलता का

मापन उच्च स्तर तथा व्यक्तिगत विकास एवं पारिवारिक जीवन को साधनो का प्रयोग किस प्रकार प्रभावित करता है, के सन्दर्भ मे किया जाता है।

मानवीय मूल्यो के सन्दर्भ मे कुशलता की व्याख्या विशिष्ट परिस्थितियो की आवश्यकताओ और व्यवस्था के स्तर के मध्य समायोजन द्वारा की जाती है। एक ही घर मे विभिन्न समय पर विभिन्न स्तर हो सकते हैं। इसका स्पष्टीकरण एक गृहिणी द्वारा दिया गया है। जिसका कथन है—"तीन प्रकार की सफाई हो सकती है : एक तो वह जिसमें आप घर की प्रत्येक वस्तु तथा प्रत्येक कोने की सफाई करते हैं; दूसरी वह जिसमें आप सर्वाधिक दिखाई देने वाली वस्तुओ व स्थानों की सफाई करते हैं; तथा तीसरी वह जिसमें आप बहुत मामूली सफाई करते हैं।"[1] अपनी परिस्थिति और आवश्यकता के अनुकूल एक गृहिणी ही यह निर्धारित कर सकती है कि उसे कब किस प्रकार की सफाई करनी है।

पारिवारिक जीवन के गृह-प्रबन्ध सम्बन्धी उत्तरदायित्व प्रमुखत: प्रत्येक गृहिणी द्वारा किए जाने वाले निम्नलिखित कार्यों से सम्बन्धित हैं—

१. स्वस्थ एव सन्तोषप्रद तरीकों से व्यक्तिगत सम्बन्धो को निर्देशित करना।
२. अपने समय व शक्ति के उपयोग को इस प्रकार आयोजित करना कि काम सम्पन्न हो जाय तथा जीवन की आवश्यकताएँ भी परिपूर्ण हो जाएँ।
३. परिवार के आर्थिक पक्ष का विभिन्न प्रकार से आयोजन करना व निर्देशित करना।
४. परिवार की आवश्यकताओ के अनुकूल घर का आयोजन व प्रदान करने की व्यवस्था करना।
५. गृह की साज-सज्जा को क्रय करने की योजना बनाना व निर्देशित करना।
६. परिवार के सदस्यो को पोषक भोजन व उपयुक्त वस्त्रो का आयोजन व व्यवस्था करना।
७. घर की देखभाल व व्यवस्था को आयोजित व नियन्त्रित करना।
८. परिवार के सदस्यो के स्वास्थ्य को बनाए रखने हेतु आयोजन [illegible] सहायता करना।
९. परिवार में व्यक्तियों के शैक्षिक एव सामाजिक विकास को [illegible] व निर्देशित करना।

इन प्रबन्ध-सम्बन्धी उत्तरदायित्वों का विश्लेषण करने पर अनेक अन्तर्सम्बन्ध का स्पष्टीकरण होता है। कुछ उत्तरदायित्व दूसरे उत्तरदायित्वों के प्रत्यक्ष परिणाम ऐसे होने के कारण उनके द्वारा सम्बद्ध हैं। उदाहरण के लिए पारिवारिक वित्तीय पक्ष तथा उनका व्यवस्थापन पारिवारिक जीवन के प्रत्येक पक्ष का स्पर्श करता है, क्योंकि ये परिवार के सभी सदस्यों की इच्छा को प्रभावित करते हैं तथा वे सम्पूर्ण जीवन में क्या प्राप्त कर सकते हैं व क्या कर सकते हैं इसको अधिकांशत: नियंत्रित करते हैं। वस्त्रों का आयोजन करते समय सर्वप्रथम परिवार के वित्तीय साधनों पर विचार कर लेना चाहिए तथा उपलब्ध धन की सहायता से सर्वोत्तम विधि से इच्छाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति करनी चाहिए। अन्य व्यवस्था सम्बन्धी उत्तरदायित्वों से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित समय व कार्य का व्यवस्थापन भी है। दैनिक कार्य को बिना किसी प्रकार के अवांछनीय कष्ट एवं तनाव के सम्पन्न करने के लिए, गृहिणी को प्रत्येक प्रबन्ध सम्बन्धी उत्तरदायित्व के विषय में तथा इसे पूर्ण करने के लिए आवश्यक समय व प्रयत्न के सन्दर्भ में इससे सम्बन्धित कार्य के विषय में निरन्तर सोचते रहना चाहिए।

पारिवारिक जीवन के शारीरिक कार्य-सम्बन्धी उत्तरदायित्व

पारिवार के सदस्यों के सर्वांगीण विकास की दृष्टि से घर में शारीरिक क्रियाओं की व्यवस्था एवं निर्देशन की नितान्त आवश्यकता है, क्योंकि जीवन की आवश्यकताओं—स्नेह, सम्मान, सुरक्षा तथा अनुभव—की पूर्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक कि प्रबन्ध और कार्य दोनों साथ ही साथ न किया जाए। परिवार निर्माण की समस्याएँ प्रधानत: मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति की विधियों तथा घर एवं समाज दोनों की ही एक सन्तोषजनक मानवीय सम्बन्धों के विकास हेतु उपयुक्त दशाओं से सम्बन्धित हैं। शारीरिक क्रिया तो प्रत्येक प्राणी के जीवन का अंग होती है। शारीरिक कार्य गृह-निर्माण का तांत्रिक पक्ष है। इसके अन्तर्गत उपकरणों व साधनों का उपयोग तथा वे प्रक्रियाएँ एवं प्रयत्न जिनके माध्यम से परिवार अपने दैनिक जीवन की क्रियाओं को सम्पादित करता है, आती हैं।

शारीरिक क्रियाएँ

गृह-निर्माण सम्बन्धी शारीरिक क्रियाओं को निम्नानुसार वर्गीकृत किया जा सकता है—

(१) बालकों की देखभाल तथा प्रशिक्षण सम्बन्धी शारीरिक क्रियाएँ।

(२) भोज्य पदार्थों को क्रय करना, तैयार करना, परोसना, सुरक्षित रखना, ...ह करना, रैफ्रीजीरेटर में रखना एवं संरक्षित रखना आदि।

(३) घर की स्वच्छता, सुरक्षा तथा व्यवस्था रखना।

(४) वस्त्रों का क्रय करना, धुलाई, सफाई, मरम्मत तथा संग्रह करना।

(५) गृह की साज-सज्जा सम्बन्धी वस्तुओं को क्रय करना, बनाना, मरम्मत करना एव स्वच्छ रखना।

(६) घर के आस-पास के वातावरण, आँगन, बगीचा, यदि कार हो तो उसकी तथा उसकी गैरेज की सफाई एव देखभाल रखना।

(७) अर्थ व्यवस्था में सम्बन्धित कार्य; जैसे—बैंक का कार्य करना, हिसाब-किताब रखना तथा बिलों का भुगतान करना।

कुछ गृह-प्रबन्धकों को गृह-निर्माण सम्बन्धी समस्त कार्य स्वयं ही करने पड़ते हैं। केवल कभी-कभी इन कार्यों के सम्बन्ध में परिवार के अन्य सदस्यों से सहायता मिलती है, परन्तु कुछ परिवारों के सभी सदस्य इन कार्यों में योगदान देते हैं। कुछ लोगों के पास नौकर की व्यवस्था होती है तो वे केवल कुछ कार्यों को स्वय करने हेतु चुन लेते हैं। जो परिवार आर्थिक दृष्टि से ऊँचे स्तर के होते हैं, वे उनमें गृह-प्रबन्धक केवल पथ-प्रदर्शन एव निर्देशन का कार्य ही करते हैं। वे स्वय शारीरिक क्रियाएँ नही करते।

परन्तु यह सुनिश्चित है कि प्रत्येक कार्य को करने मे मानवीय शक्ति व्यय होती है। आयोजन में मानसिक क्रिया करनी पड़ती है। आयोजन के क्रियान्वयन में मानसिक व शारीरिक क्रिया तथा ज्ञान, अनुभव एव तकनीकी कुशलता को इस प्रकार किया जाता है कि एक को दूसरे से पृथक् नहीं किया जा सकता। प्रत्येक गृह-प्रबन्धक अपनी विचार शक्ति का परीक्षण अपने कार्य तथा उसके परिणामों के माध्यम से करता है। इस प्रकार प्रबन्ध-सम्बन्धी तथा हस्तकला-सम्बन्धी कुशलताओं का विकास करते हैं तथा नवीन अनुभव एव ज्ञान प्राप्त करते है।

गृह-निर्माण की प्रमुख समस्याएँ हैं, बिना अत्यधिक समय एव शक्ति का व्यय किए प्रतिदिन के कार्य को करने, थकान जिसका होना अनिवार्य है।

प्रत्येक कार्य में शारीरिक व मानसिक शक्ति के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के उपकरणों व पदार्थों की आवश्यकता है, इसलिए घर के कार्यों को करने तथा कार्य-सम्बन्धी समस्याओं के समाधान सम्बन्धी विधियाँ गृह-प्रबन्ध एवं गृह-निर्माण के महत्त्वपूर्ण अग है। किसी भी कार्य-विधि का चयन करके उसके अनुसार आयोजन करने तथा कार्य को सफलतापूर्वक पूर्ण करने में परिवार के सदस्यों की रुचि, सहयोग एवं सहायता की आवश्यकता होती है। घर मे गृह-निर्माण सम्बन्धी क्रियाओं के सम्पन्न करने में गृह-प्रबन्धक किस प्रकार समय तथा शक्ति को प्रयुक्त करेगा, यह उसकी समायोजनशीलता तथा पारिवारिक जीवन मे विभिन्न तत्त्वों को नियन्त्रण करने की उस योग्यता पर निर्भर करता, जो उसकी समय व शक्ति व्यय करने सम्बन्धी प्रणाली को प्रभावित करता है।

स्थानीय एवं राष्ट्रीय कार्यों में भाग लेने की क्षमता उत्पन्न करने का उत्तरदायित्व

परिवार समाज का महत्त्वपूर्ण अग है। इसके समाज के प्रति कुछ उत्तर-

दायित्व होते हैं। आज के वैज्ञानिक युग ने तो विश्व की दूरी कम कर दी है, पड़ोस के वातावरण से परे के सामाजिक वातावरण में थोड़ा-सा परिवर्तन भी इसके वातावरण एवं व्यवस्था को प्रभावित करता है तथा बदले में घर का वातावरण पड़ोस, नगर, राज्य, राष्ट्र तथा अन्य देशों पर भी अपना निश्चित प्रभाव डालता है। यह परिवार का, विशेषकर माता-पिता का प्रमुख उत्तरदायित्व है कि वे ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करें जो समाज में सहकारी प्रयत्नों का एक रचनात्मक अंग बन सके। परिवार जिस समाज में रहता है, उस समाज की सेवा करने का कार्य तभी निभा सकता है, जबकि परिवार के सदस्यों के मस्तिष्क में समाज के कार्यों को समझने की अभिवृत्ति तथा उनमें रुचि विकसित करने का कार्य सम्पन्न किया जाए। इसके अतिरिक्त ऐसे नागरिकों को तैयार कर समाज में भेजे जो सामाजिक न्याय एवं सर्वोत्तम सामाजिक मूल्यों के लिए प्रयत्न करेगा।

सामाजिक उत्तरदायित्वों एवं सामाजिक न्याय की शिक्षा सर्वप्रथम घर में ही होती है। इस शिक्षा का प्रारम्भ व्यक्तिगत सम्बन्धों की प्रकृति से होता है जो माता-पिता के मध्य, माता-पिता एवं बच्चों के मध्य सम्बन्धों तथा परिवार के सदस्यों विशेषकर माता व पिता द्वारा अभिव्यक्त अभिवृत्तियों से स्पष्ट हो जाता है। माता के कार्य के प्रति पिता की अभिवृत्ति, उसका सामाजिक समस्याओं के प्रति बुद्धिमत्ता पूर्ण तथा मूर्खतापूर्ण अथवा न्यायपूर्ण और अन्यायपूर्ण समाधान, नागरिक के रूप में अपने कार्य तथा महत्त्व के विषय में अपनी अभिवृत्ति वालों के प्रति माता-पिता दोनों का सम्मिलिति उत्तरदायित्व तथा समूह और समाज के कार्यों में उनका भाग लेना बालकों की अभिवृत्ति के स्वरूप को निर्धारित करने में सहायता करते हैं। स्वयं एवं अन्य व्यक्तियों तथा सामाजिक समूहों के प्रति घर में स्थापित अभिवृत्तियों से उत्पन्न होते हैं ये सभी तथा परिवार के कार्य करने के ढंग बच्चों के दूसरे व्यक्तियों के साथ रहने के कार्य करने की विधि को निर्धारित करते हैं।

गलत-फहमी, विरोध तथा पूर्वाग्रह से सामाजिक द्वन्द्व उत्पन्न होते हैं। इन समस्याओं के प्रति अभिवृत्ति का निर्माण घर में तथा समाज और राष्ट्र में करना चाहिए। प्रजातंत्र की सफलता के लिए ईमानदार, योग्य एवं उपयुक्त नागरिकों का निर्माण घर में ही होता है।

जनसाधारण के हितार्थ कार्यों को करने में केवल व्यक्तिगत सन्तुष्टि ही नहीं मिलती बल्कि परिवार के अन्य सदस्यों के जीवन को भी सम्पन्न बनाते हैं। परिवारों का योगदान व्यक्तिगत रूप से बहुत ही नगण्य होता है, परन्तु सभी का मिला-जुला प्रभाव समाज पर अधिक पड़ता है। परिवार के समस्त सदस्यों में अपने नगर, राज्य, राष्ट्र तथा अन्ततः मानव-जाति के प्रति सहानुभूतिपूर्ण एवं त्यागपूर्ण अभिवृत्ति का निर्माण करना परिवार का महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व है।

स्वतः परीक्षा प्रश्न

१. परिवार के प्रमुख उत्तरदायित्व कौन-कौन-से है ?

२. "जीवन-दर्शन का पारिवारिक जीवन में अत्यधिक महत्त्व है।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।

३. जीवन-दर्शन का निर्माण व विकास परिवार में किस प्रकार किया जा सकता है ?

४. मूल्य, लक्ष्य व स्तर एक दूसरे से किस प्रकार सम्बन्धित है ?

५ मूल्य से क्या अभिप्राय है ? इनका निरूपण परिवार में किस प्रकार होता है ?

६. पारिवारिक जीवन के प्रमुख मूल्य कौन-कौन-से है। इनके निरूपण में अभिवृत्तियों का क्या स्थान है ?

७. लक्ष्य का अर्थ स्पष्ट करते हुए उनके निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।

८. स्तर के निर्धारण में मूल्यों और लक्ष्यों का क्या महत्त्व है ? स्पष्ट कीजिए।

९. परम्परागत और परिवर्तनशील स्तरों का अन्तर स्पष्ट कीजिए।

१०. गृह-प्रबन्ध से क्या अभिप्राय है ? परिवार के गृह-प्रबन्ध सम्बन्धी कार्यों का वर्णन कीजिए।

११. परिवार के शारीरिक-स्वास्थ्य सम्बन्धी क्रियाओं का वर्णन कीजिए।

अध्याय ३

परिवार में गृहिणी का स्थान

गत अध्याय में परिवार के प्रमुख उत्तरदायित्वों के सम्बन्ध में चर्चा की गई है। इन विस्तृत एवं महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वाह करने के लिए परिवार के समस्त सदस्यों का सक्रिय सहयोग एवं पारस्परिक सद्भाव नितान्त आवश्यक है। गृहस्वामी का उत्तरदायित्व प्रधानतः आर्थिक साधनों को जुटाने तक सीमित होता है। घर में सुमधुर वातावरण का निर्माण तथा सभी सदस्यों की भोजन, वस्त्र, आवास, मनोरंजन सम्बन्धी सुविधाओं की व्यवस्था का प्रत्यक्ष उत्तरदायित्व गृहिणी पर ही पड़ता है। परिवार की सुख-समृद्धि एवं सम्पन्नता गृहिणी की विवेकशीलता एवं कुशलता पर निर्भर करती है। बच्चों के विकास में उसका अद्वितीय योगदान होता है। वास्तव में यह गृहिणी ही है जो चाहे तो घर को स्वर्ग बना दे अथवा नरक। हिन्दुओं में तो गृहिणी को 'गृहलक्ष्मी' तक कहा जाता है। इसका सांकेतिक अर्थ है कि गृह की सम्पन्नता का श्रेय गृहिणी को ही है। गृहिणी पत्नी तथा माता के रूप में पति एवं बच्चों की सेवा शुश्रूषा एवं पालन-पोषण करके उनके शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास में अपूर्व योग देती है। धनी-से-धनी परिवार भी सुयोग्य एवं सुपात्र गृहिणी के अभाव में वास्तविक सुख व समृद्धि के लाभ से वंचित रहता है।

आधुनिक समय में वैज्ञानिक प्रगति के साथ-साथ परिवार के उत्तरदायित्वों में वृद्धि हो गई है। परिवार के सदस्यों की आवश्यकताएँ संख्या एवं गुण की दृष्टि से बढ़ गई हैं। परिवार का उत्तरदायित्व केवल परिवार के सदस्यों तक ही सीमित नहीं है, वरन् समुदाय, समाज, राष्ट्र तथा विश्व के प्रति उसके भी उत्तरदायित्व होते हैं। उसे शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार की क्रिया करनी पड़ती हैं। वह परिवार में एक

आयोजक, सगठक, प्रबन्धक, निर्देशिका, शिक्षिका, गृह-निर्मात्री एव संयोजिका के रूप मे परिवार के विभिन्न उत्तरदायित्वों को निभाती है। इनके सम्बन्ध मे संक्षिप्त वर्णन यहाँ प्रस्तुत है।

(१) आयोजिका के रूप में—गृहिणी आयोजिका के रूप मे अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। किसी कार्य के सफल एवं सुव्यवस्थित सम्पादन मे आयोजन का महत्त्व सर्वविदित है। विवेकपूर्ण ढङ्ग से बनाई हुई योजना कार्य को सरल एव लक्ष्यों की प्राप्ति सुनिश्चित करती है। दैनिक पारिवारिक जीवन में अनेक समस्याओं का समाधान तथा आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु अनेक क्रियाएँ की जाती हैं। इन्हे समय, शक्ति तथा धन की दृष्टि से मितव्ययितापूर्वक सम्पन्न करना परिवार के सदस्यों के कल्याण के उद्देश्य से परमावश्यक है। यह तभी किया जा सकता है, जब कि गृहिणी मे आयोजन करने की क्षमता हो।

गृहिणी ही यह आयोजित करती है कि घर में कौन-कौन-से कार्य किस समय, किस विधि मे तथा किन व्यक्तियों के द्वारा किए जाएँ। वह इन कार्यों का आयोजन करती है कि कम-से-कम समय में, कम-से-कम श्रम करके अधिक-से-अधिक कार्य किया जा सके। घर के आय के साधनों का आयोजन अधिक-से-अधिक सन्तोष एव सुविधाएँ प्राप्त करने के उद्देश्य से वह करती है। घर के किन सदस्यों को किस प्रकार के मनोरंजन की आवश्यकता होगी उसकी व्यवस्था की योजना वह बनाती है। घर मे होने वाले सामाजिक, सास्कृतिक एव धार्मिक उत्सवो एव पर्वों का आयोजन करने मे प्रधान कार्य उसी का होता है। भोजन-व्यवस्था का आयोजन वह परिवार के विभिन्न व्यक्तियों की शारीरिक, विकासात्मक एव स्वास्थ्य-सम्बन्धी आवश्यकताओं तथा रुचियों को ध्यान मे रखकर करती है। इसी प्रकार आयु, मौसम, तथा रुचि को ध्यान में रखकर उनके लिए वस्त्र आयोजन करने मे उसका महत्त्वपूर्ण कार्य होता है।

आजकल परिवार-नियोजन पारिवारिक एव राष्ट्रीय कल्याण की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। गृहिणी को परिवार-नियोजन सम्बन्धी कार्य भी करना होता है। सीमित परिवार सुख और समृद्धि का प्रतीक है। इतना ही नही, घर के बच्चो की मानसिक शक्तियो एव रुचियों को दृष्टिगत रखकर उनकी शिक्षा-दीक्षा एव भावी जीवन की दिशा के सम्बन्ध मे वह योजनाएँ बनाती है।

इसका तात्पर्य यह नहीं है कि गृह-सम्बन्धी समस्त आयोजन वह स्वेच्छाचारिता से करती हो। एक सुयोग्य गृहिणी विभिन्न क्रिया-कलापो तथा समस्या-समाधान की योजना बनाते समय परिवार के सदस्यो की रुचियों, आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए उनका सक्रिय सहयोग प्राप्त करती है। योजना-सम्बन्धी समस्त निर्णय परिवार के सदस्यो की सहायता से किये जाते हैं।

(२) संगठक के रूप में—संगठक के रूप में गृहिणी का स्थान पर्याप्त महत्त्व-पूर्ण है। परिवार के लिए आयोजित व्यवस्था के सफल एवं कुशल क्रियान्वयन के लिए विभिन्न क्रिया-कलापों का संगठन नितान्त आवश्यक है। योग्य, अनुभवी, कुशल एवं बुद्धिमान गृहिणी उपलब्ध साधनों का संगठन इस प्रकार करती है कि घर के रहन-सहन का स्तर पर्याप्त रूप से समुन्नत हो जाता है। धन को विभिन्न आवश्यकताओं पर व्यय करने का निर्धारण करते समय वह सम-सीमान्त उपयोगिता के नियम को दृष्टिगत रखती है, ताकि सीमित आय से अधिकतम उपयोगिता एवं संतुष्टि प्राप्त की जा सके तथा परिवार के समस्त सदस्यों की विकास, शिक्षा, व्यवसाय-सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।

इसी प्रकार घर में किए जाने वाले विभिन्न शारीरिक व मानसिक कार्यों का संगठन भी इसी विधि से किया जाता है कि परिवार के प्रत्येक सदस्य को अपनी क्षमता तथा रुचि के अनुकूल कार्य मिलता है। परिणामतः वह कम-से-कम समय में अनावश्यक थकान उत्पन्न किए बिना कुशलतापूर्वक सम्पन्न किया जा सके। पारिवारिक, धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का संगठन इस प्रकार करना चाहिए कि परिवार के प्रत्येक सदस्य को यथाशक्ति अपना योगदान करने का अवसर मिले। इसी प्रकार मनोरंजनात्मक, शिक्षा-सम्बन्धी आदि विभिन्न क्रिया-कलापों का संगठन करना चाहिए। स्पष्ट है, गृहिणी की संगठन क्षमता पारिवारिक जीवन में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण योग देती है।

(३) प्रबन्धक के रूप में—घर में गृहिणी ही एक सक्रिय प्रबन्धक के रूप में कार्य करती है। उसका कार्य केवल योजना बनाने तथा योजना के अनुकूल विभिन्न क्रिया-कलापों का सङ्गठन करने तक ही सीमित नहीं है, वरन् वह उन समस्त कार्यों का क्रियान्वयन करने या कराने का विस्तृत रूप से प्रबन्ध करती है। घर का वाता-वरण आकर्षक हो, परिवार के सदस्यों की आयु, लिंग, मौसम तथा रुचि के अनुकूल पौष्टिक भोजन, उचित वस्त्र व रहने का उचित प्रबन्ध करने का कार्य प्रधानतः वही करती है। घर में मनोरंजनात्मक, सामाजिक एवं धार्मिक क्रिया-कलापों का विस्तृत प्रबन्ध गृहिणी के ही जिम्मे होता है। वह विभिन्न कार्यों के सम्पादन का प्रबन्ध इस प्रकार करती है कि कम-से-कम समय व परिश्रम के द्वारा उन्हें कुशलतापूर्वक पूर्ण किया जा सके। इतना ही नहीं, परिवार के सदस्यों के मध्य स्वस्थ, सुदृढ़ एवं स्नेह-पूर्ण सम्बन्ध स्थापित हों, इसके लिए प्रबन्ध करने का प्रमुख कार्य वही करती है।

(४) निर्देशिका के रूप में—कार्य के सुपरिणाम विवेकपूर्ण एवं व्यावहारिक निर्देशन पर बहुत कुछ सीमा तक निर्भर करते हैं। गृहिणी चलचित्र निर्देशक के समान घर में निर्देशन का कार्य करती है। परिवार के निर्धारित स्तर, जीवन-मूल्यों एवं पारिवारिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से स्वयं अपने को, बच्चों को, यदि

घर में नौकर है तो उसे तथा कभी-कभी अपने पति को भी निर्देशित करनी है। निर्देशन जितना अधिक प्रभावपूर्ण होगा, कार्य उतनी ही कुशलता से सम्पन्न किए जायेंगे। गृहिणी को विनम्रता एवं मधुरतापूर्ण ढङ्ग से स्पष्ट तथा संक्षेप में निर्देशन देने चाहिए' ताकि निर्देशित व्यक्ति भली प्रकार समझकर प्रसन्नतापूर्वक निर्देशों का क्रियान्वयन कर सके। निर्देशन प्रसन्न मुद्रा में महानुभूतिपूर्ण ढङ्ग से देने चाहिए। निर्देशन यथासम्भव कम-से-कम दिए जाएँ।

परिवार से अन्य व्यक्तियों को निर्देशित करने से पूर्व गृहिणी को स्वयं अपने को निर्देशित करना चाहिए तथा अपने निर्देशों का पालन ईमानदारी से करना चाहिए तभी अन्य सदस्यों पर नैतिक प्रभाव पड़ेगा तथा निर्देशन अधिक प्रभावपूर्ण बन सकेंगे। आजकल शिक्षित परिवारों में गृहिणी नौकरी करती है। इसलिए घर का कुछ कार्य नौकरों से कराती हैं। धनी परिवारों में तो खाना बनाना सफाई करना आदि घर के कार्यों को नौकर ही करते हैं। नौकरों से कार्य लेने के लिए गृहिणी को निर्देशन देने पड़ते हैं। यदि गृहिणी अपनी इच्छानुसार नौकर से कार्य कराना चाहती है तो उसे उचित निर्देशन देना परमावश्यक है। यह ध्यान रखना चाहिए कि एक बार जो निर्देशन दिया है, उसमें बार-बार परिवर्तन नहीं होना चाहिए। एक बार सोच-समझ कर निर्देशन देना चाहिए। निर्देशन का पालन भली प्रकार हो रहा है या नहीं, इसकी ओर भी गृहिणी को भली प्रकार से सक्रिय रहना चाहिए, अन्यथा नौकर कार्य को बिगाड़कर रख देंगे।

परिवार में बच्चों को सतत निर्देशन की आवश्यकता होती है। बालकों में अच्छी आदतों के निर्माण तथा अवांछनीय आदतों से बचाने, उनके व्यक्तित्व के सर्वाङ्गीण वृद्धि तथा विकास का उत्तरदायित्व गृहिणी को ही है। उसे अपने इस उत्तरदायित्व को निभाने के लिए बच्चों को महानुभूति एवं स्नेहपूर्वक निर्देशित करना चाहिए। निर्देश देते समय उनकी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए।

कभी-कभी गृहिणी को अपने पति को भी निर्देशित करने की आवश्यकता होती है परन्तु ऐसे अवसर बहुधा कम ही आते हैं। यदि पति में मदिरापान जुआ खेलना, धन का अपव्यय करना जैसी अकल्याणकारी आदतें निर्मित होने लगें तो उसे पति की इन बुरी आदतों को छुड़ाने की दृष्टि से प्रभावपूर्ण निर्देशन प्रदान करने की आवश्यकता होती है।

(५) एक शिक्षिका एवं मार्गदर्शिका के रूप में--यह तथ्य सर्वमान्य है कि बालकों के लिए माता सबसे पहली शिक्षिका तथा घर सर्वप्रथम पाठशाला होती है। विश्व के इतिहास में शिवाजी, नैपोलियन आदि अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं जिनसे माता का शिक्षा सम्बन्धी महत्त्व प्रमाणित होता है। बच्चों के व्यक्तित्व के विकास का शिलान्यास माता ही करती है। बालक में उचित नैतिक मूल्यों, चारित्रिक

पारस्परिक व्यवहारकुशलता जैसे मानवोचित गुणों का समावेश माता ही अपने आदर्श व्यक्तित्व तथा व्यवहार के माध्यम से कर सकती है। वह बालकों को धार्मिक शिक्षा तथा विद्यालयीन शिक्षा में सहायता प्रदान करने का कार्य करती है। इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए उसमें शैक्षिक योग्यता, तत्पर बुद्धि तथा बच्चों को समाज द्वारा मान्य विधियों के अनुसार सिखाने व पथ-प्रदर्शन करने की योग्यता होना आवश्यक है।

वह परिवार के समस्त सदस्यों को अपना उत्तरदायित्व वहन करने के लिए शिक्षित करने व प्रोत्साहित करने का कार्य करती है। उसे विभिन्न प्रकार का ज्ञान होना चाहिए।

गृहिणी घर के सदस्यों का पथ-प्रदर्शन भी करती है। वह बच्चों में स्वस्थ जीवन-दर्शन निर्मित करने के लिए तथा परिवार के सदस्यों को राज्य-सम्बन्धी, समाज, राष्ट्र तथा विश्व-सम्बन्धी समस्याओं के प्रति पथ-प्रदर्शन करती है। उसे स्वस्थ व्यक्तिगत मानवीय सम्बन्धों को प्रोत्साहित करने के लिए पथ-प्रदर्शन करना चाहिए। सामाजिक तथा शैक्षिक विकास में मार्ग प्रशस्त करना चाहिए।

(६) गृह-निर्मात्री के रूप में—गृह-निर्माण का सम्पूर्ण श्रेय गृहिणी को ही होता है। गृहिणी परिवार के केवल नितान्त आधारीय आवश्यकताओं की ही पूर्ति नहीं करती, वरन् वही घर के स्तर को बनाए रखने तथा उसे समुन्नत करने का प्रयास भी करती है।

एक सफल गृह-निर्मात्री होने के लिए गृहिणी में कलात्मक चेतना तथा कला-सम्बन्धी सिद्धान्तों का ज्ञान होना चाहिए। उसमें साज-सज्जा के लिए उपलब्ध सामग्रियों को कलात्मक दृष्टि से सुसज्जित करने की क्षमता होनी चाहिए। घर के सभी सदस्यों के लिए यथाशक्ति अधिकतम सुविधाएँ प्रदान करनी चाहिए। कमरों को सजाने, फर्नीचर तथा साज-सज्जा की वस्तुओं को आकर्षक ढंग से लगाने में ही उसकी कलात्मकता का पता लगता है। उसमें परिवार के कल्याण की दृष्टि से फर्नीचर, वस्त्र आदि क्रय करने की योग्यता होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त फटी-पुरानी वस्तुओं को सुधार कर अपनी तथा अपने परिवार की आवश्यकताओं के अनुकूल सर्वोत्तम ढंग से प्रयुक्त करने की अन्तर्दृष्टि होनी चाहिए। साज-सज्जा तथा सुव्यवस्था करने की उसमें मौलिकता होनी चाहिए, ताकि उसे स्वय तथा परिवार के सदस्यों को आनन्द प्राप्त हो सके।

खाना बनाने, बैठक व्यवस्था करने तथा भोजन परोसने के ढंग से भी उसकी कलात्मकता का परिचय मिलता है। परिवार के सदस्यों का स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए तथा उन्हें यथेष्ट एवं आकर्षक वस्त्र पहनने के लिए दिए जाने चाहिए। स्वयं अपने तथा परिवार की आवश्यकताओं के अनुकूल वस्त्रों में सुधार अथवा परिवर्तन करने की पर्याप्त बुद्धि एवं कुशलता होनी चाहिए। परिवार के सदस्यों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक विकास की ओर ध्यान देना चाहिए। इसके

अतिरिक्त घर में सन्तोषजनक व्यक्तिगत तथा पारिवारिक सम्बन्ध बनाए रखने का कार्य करना चाहिए। उसे परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिए शैक्षिक तथा मनोरंजनात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति का ध्यान रखना चाहिए। उक्त समस्त लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए गृह-व्यवस्था कुशलतापूर्वक करनी चाहिए।

(७) संयोजिका के रूप में—घर के विभिन्न सदस्यों तथा क्रिया-कलापों के मध्य वह संयोजिका का महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। वह विभिन्न क्रियाओं तथा साहसी के कार्य के मध्य एकीकरण करना अथवा उसे सन्तुलित एवं व्यावहारिक रूप में आयोजित करने में सहायता प्रदान करती है। वह साथ-साथ काम करने वाले व्यक्तियों तथा परिस्थितियों की पूर्णता को समझने में सहायक होती है। जिस प्रकार शरीर का सुसयोजित मासपेशीय सस्थान इसलिए कुशलतापूर्वक नहीं होता कि कोई मासपेशी विशेष अथवा कुछ मांसपेशियाँ सुविकसित हैं, वरन् इसलिए कि सभी मासपेशियाँ एकीकृत एवं संयोजित रूप मे गतिशील होती हैं। इसी प्रकार घर के समस्त कार्य स्वाभाविक रूप से इसलिए सम्पन्न होते हैं कि गृहिणी उन सभी में संजोजन स्थापित करती रहती है। वही पारिवारिक जीवन को सुखमय एवं सुचारु रूप से सचालित करने का कार्य करती है।

गृहिणी का उत्तरदायित्व है कि वह परिवार के समस्त सदस्यों के मध्य सुमधुर, स्नेहपूर्ण एवं स्वस्थ पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य करे, तभी पारिवारिक जीवन सुखमय होगा तथा परिवार का प्रत्येक सदस्य सुरक्षा की भावना का अनुभव करेगा।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि घर में गृहिणी ही मुख्य धुरी है जिस पर परिवार-चक्र सतत गतिशील रहता है। यद्यपि परिवार के अन्य सदस्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उसके कार्यों में सहयोग देते रहते हैं, परन्तु परिवार का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व प्रत्यक्ष रूप से उसी के कोमल कन्धों पर है। जितनी कुशलता व बुद्धिमत्तापूर्वक वह अपने बहुमुखी उत्तरदायित्वों को वहन करेगी, परिवार उतना ही सुदृढ़, प्रगतिशील एवं सुखी होगा।

सुगृहिणी में आवश्यक गुण—गृहिणी में अपने दायित्वों को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए कुछ आवश्यक गुणों का होना नितान्त आवश्यक है।

ये गुण हैं—बुद्धि, उत्साह, मानव-स्वभाव को समझने की क्षमता, कल्पना-शक्ति, निर्णय शक्ति, सहनशीलता, ग्रहणशीलता, स्व-नियन्त्रण आदि।

(१) बुद्धि—गृह-प्रबन्ध की कुशलता व्यावहारिक बुद्धि पर बहुत कुछ निर्भर करती है। किसी समस्या के प्रमुख बिन्दुओं को चुनना सीखने की योग्यता परिस्थितियों को पूर्ण के रूप से देखना, नवीन एवं प्राचीन के मध्य सम्बन्ध देखना, पूर्व में प्राप्त ज्ञान को नई समस्या के समाधान मे प्रयुक्त कर लक्ष्य को प्राप्त करना सभी बुद्धि पर ही निर्भर करता है।

(२) **उत्साह**—सफल गृह-प्रबन्धक में अदम्य उत्साह होना चाहिए। यदि वह उत्साह से कार्य करेगी तो परिवार के अन्य सदस्यों पर इसका अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। क्षणिक उत्साह अधिक लाभप्रद नहीं होता। सतत, सजीव एवं स्वरूप उत्साह उत्तम होता है, इससे व्यक्ति के संवेगात्मक परिपक्वता एवं मानसिक सन्तुलन का बोध होता है। यदि परिवार में माँ अपने कार्य के प्रति सच्चा व सन्तुलित उत्साह प्रदर्शित करती है तो बच्चों में भी यह गुण संक्रमित हो जाएगा।

(३) **मानव-स्वभाव को समझने की क्षमता**—सफल गृह-प्रबन्धक में इस गुण का होना नितान्त आवश्यक है। घर में मानवीय अन्तर्सम्बन्धों तथा पारस्परिक समायोजन सम्बन्धी अनेक समस्याएँ उपस्थित होती हैं। इन समस्याओं के सुगमतापूर्वक समाधान में यह गुण अद्वितीय योग प्रदान करता है। गृह-व्यवस्था की योजना व कार्यान्वियन करते समय परिवार के सदस्यों की व्यक्तिगत भिन्नताओं, रुचियों व अरुचियों की ओर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है।

(४) **कल्पना-शक्ति**—प्रत्येक समस्या के व्यावहारिक समाधान के लिए कल्पना-शक्ति आवश्यक गुण है। नवीन योजना तथा कार्यों को व्यावहारिक रूप देने से पूर्व उनके हल की रूपरेखा मस्तिष्क में निर्मित हो जाती है, यहाँ कल्पना-शक्ति होती है। यथार्थता तो यह है कि मौलिकता एवं साधन-सम्पन्नता रचनात्मक कल्पना-शक्ति के ही प्रत्यक्ष परिणाम हैं। गृह-सम्बन्धी आयोजन तथा क्रियान्वयन के लिए रचनात्मक कल्पना-शक्ति नितान्त आवश्यक है।

(५) **निर्णय शक्ति**—गृह-प्रबन्ध में हर क्षण ऐसी परिस्थितियाँ एवं अवसर उपस्थित होते रहते हैं, जिनमें निर्णय अत्यावश्यक होता है। परिवार की सुख व समृद्धि विवेकपूर्ण एवं दूरदर्शी निर्णयों पर निर्भर करती है। निस्सन्देह इस प्रकार के निर्णय की क्षमता अनुभव के माध्यम से शनैः-शनैः विकसित होती है।

(६) **ग्रहणशीलता**—गृहिणी की सफलता इस बात पर पर्याप्त रूप से निर्भर करती है कि उसके अन्दर बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार स्वयं अपने में तथा अपनी योजनाओं में परिवर्तन करने की कितनी योग्यता है। परिवार के सदस्यों तथा विभिन्न कार्यों में पारस्परिक समायोजन स्थापित करने की दृष्टि से ग्रहणशीलता का गुण अति आवश्यक है।

(७) **सहनशीलता**—इस गुण के अन्तर्गत साहस एवं सहनशीलता दोनों का ही समावेश होता है। परिवार के प्रबन्धकों में ये गुण तथ्यों एवं समस्याओं की वास्तविकता समझने तथा कार्य को बिना सोचे-समझे करने की अपेक्षा पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के बाद करते हैं। इससे परिवार में दूरस्थ महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों तथा कार्यों को सम्पादित करने की क्षमता उत्पन्न हो जाती है।

(८) **आत्म-नियन्त्रण**—परिवार के प्रत्येक सदस्य में अपनी भावनाओं को सन्तुलित रूप से नियन्त्रित करने की विशेषता अच्छे गृह-प्रबन्ध की दृष्टि से परमावश्यक है। परिवार की प्रबन्ध-सम्बन्धी अनेक समस्याओं में व्यक्तिगत समायोजन एवं

अन्तर्सम्बन्ध सन्निहित हैं। संवेगात्मक एवं भावनात्मक दृष्टि से सुसन्तुलित गृह-प्रबन्धक गृह के प्रत्येक सदस्य के साथ विनम्रता एवं सन्तुलित रूप से कार्य करेगा तथा संवेगात्मक स्थितियों में अपनी भावनाओं का प्रदर्शन नहीं होने देगा।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-सम्बन्धी कार्यों के आयोजन में गृहिणी का क्या महत्त्व है ?
२. पारिवारिक कार्यों के संगठन और प्रबन्धक के रूप में गृहिणी का क्या महत्त्व है ?
३. गृहिणी घर में निर्देशन का कार्य किस प्रकार करती है ?
४. गृह-निर्मात्री के रूप में गृहिणी के कर्तव्यों का वर्णन कीजिए।
४. गृहिणी घर के विभिन्न सदस्यों व कार्यों के मध्य संयोजन स्थापित करने का कार्य किस प्रकार करती है ? इस कार्य का पारिवारिक जीवन में क्या महत्त्व है ?
६. आदर्श गृहिणी में किन-किन गुणों का होना आवश्यक है ? प्रत्येक का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

भाग २

गृह-व्यवस्था के मूल आधार

- गृह-व्यवस्था—अभिप्राय
- गृह-व्यवस्था—तत्त्व
- गृह-व्यवस्था—प्रक्रिया
- मानवीय आवश्यकताएँ
- रहन-सहन का स्तर

अध्याय ४

गृह-व्यवस्था—अभिप्राय

गृह-व्यवस्था का सम्बन्ध जीवन के विभिन्न पक्षों से होता है, क्योंकि यह उन तरीकों से सम्बन्धित है, जिनसे परिवार अपने साधनों का उपयोग करता है। गुडजॉन्सन ने गृह-व्यवस्था का महत्त्व बताते हुए लिखा है—"गृह-व्यवस्था समस्त देशों में अत्यधिक सामान्य व्यवसाय है, जिसमें अधिकांश व्यक्ति कार्यरत होते हैं तथा अधिकांशतः धन का उपयोग किया जाता है, और यह व्यक्तियों के स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।" गृह-व्यवस्था के महत्त्व का विस्तृत वर्णन करने से पूर्व शब्द 'गृह-व्यवस्था' को परिभाषित किया जाना अनिवार्य है।

गृह-व्यवस्था की परिभाषा

यद्यपि 'गृह-व्यवस्था' शब्द का प्रयोग दैनिक जीवन में साधारणतः किया जाता है तथा सामान्यतः प्रत्येक व्यक्ति इसके अर्थ से परिचित है, फिर भी इस शब्द के अर्थ को स्पष्ट किया जाना बुद्धिमत्तापूर्ण होगा, क्योंकि आगामी चर्चा का आधार यही शब्द है। सरलतम शब्दों में जो साधन हमारे पास हैं उनका उपयोग, जो कुछ हम प्राप्त करना चाहते हैं, उसे प्राप्त करने की व्यवस्था कहते हैं। इसका महत्त्व इस तथ्य में निहित है कि जो कुछ परिवार के लक्ष्य हैं, उन्हें प्राप्त करने हेतु यह एक प्रमुख साधन है। व्यक्ति जिन प्रयोजनों को महत्त्वपूर्ण समझता है, उनकी पूर्ति हेतु अपने प्रसाधनों को प्रयुक्त करने के लिए उसे उत्तेजित करता है। प्रसाधनों के अन्तर्गत परिवार के सभी सदस्यों के साधन सम्मिलित हैं। इनमें केवल समय, शक्ति, धन और भौतिक वस्तुएँ ही सम्मिलित नहीं होती, इनके अतिरिक्त परिवार के सदस्यों का ज्ञान, रुचियाँ, योग्यताएँ, कुशलताएँ व अभिवृत्तियाँ तथा सामुदायिक सुविधाएँ भी समावेशित होती हैं। दूसरे वर्ग के साधनों की प्रकृति भौतिक नहीं है, इसलिए पहले वर्ग के साधनों—भौतिक—के समान ही महत्त्वपूर्ण होने के बावजूद भी कम मान्यता प्रदान की जाती है।

'व्यवस्था' की ऐसी सरल परिभाषा से इस शब्द का अन्तिम प्रयोजन स्पष्ट हो जाता है, परन्तु यह तथ्य स्पष्ट रूप से प्रदर्शित नहीं होता कि व्यवस्था परिवार को अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में किस प्रकार सहायता प्रदान कर सकती है। इस तथ्य को स्पष्ट करने के लिए अधिक विस्तृत परिभाषा प्रस्तुत करना आवश्यक है। अतः यह कहा जा सकता है कि गृह-व्यवस्था के अन्तर्गत परिवार के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए परिवार के साधनों को प्रयुक्त करने की प्रक्रिया हेतु किये गए निर्णयों की शृङ्खला सम्मिलित है। इस प्रक्रिया के तीन Consecutive चरण हैं—आयोजन; योजना को क्रियान्वित करने में विविधि तत्त्वों का नियंत्रण, योजना का क्रियान्वयन चाहे स्वयं द्वारा किया जाए अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा; और परिणामों का मूल्यांकन जो कि भावी आयोजन के लिए भूमिका का कार्य करेगा। इस परिभाषा में दो नए विचार और सम्मिलित हो गए हैं वे हैं—गृह-व्यवस्था एक मानसिक प्रक्रिया है तथा इस प्रक्रिया के सुनिश्चित उत्तरोत्तर सोपान हैं।

व्यापारिक एवं औद्योगिक प्रबन्धकों के कार्य का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि उन सभी में एक सामान्य विशेषता होती है वह है—वे सभी निर्णय लेने के लिए उत्तरदायी होते हैं। गृह-व्यवस्था के सम्बन्ध में भी यह तथ्य सही है। कई गृहिणियों के मस्तिष्क में व्यवस्था-सम्बन्धी प्रक्रिया, निस्सन्देह ही अनिश्चित एवं अस्पष्ट ही रहती है। वे उक्त तीन भागों में से केवल एक या दो को ही पहचान पाती हैं। तीनों चरणों में से कोई एक अन्य दो के अभाव में क्रियाशील हो सकता है, परन्तु जब तक ये तीनों सम्पन्न नहीं हो जाते व्यवस्था की प्रक्रिया पूर्ण हुई नहीं मानी जा सकती। कोई गृहिणी किसी कार्य का आयोजन कर सकती है, परन्तु आयोजन को क्रियान्वित करने के ढंग की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता अथवा क्रियान्वयन सम्पन्न हो जाने के बाद उसकी सफलता का मूल्यांकन नहीं किया जाता; एक दूसरी गृहिणी क्रियान्वयन के चरण की ओर विशेष रूप से सचेत है; तथा तीसरी गृहिणी को एकाएक यह बोध हो सकता है कि समयाभाव के कारण उसे रुकना चाहिए व इस बात की जाँच करनी चाहिए कि वह क्या करने की योजना बनाती है तथा उसकी योजनाएँ कितनी अच्छी तरह सम्पन्न हो रही हैं। अन्य गृहिणियाँ ऐसी हो सकती हैं जो यथार्थ में तीनों चरणों की ओर विशेष ध्यान दिए बिना उन्हें क्रियान्वित करती हैं। व्यवस्था की प्रक्रिया के प्रत्येक चरण के कार्यों को मान्यता दी जाए तो परिवार के लक्ष्यों को अधिक शीघ्रता व सरलता से प्राप्त किया जा सकता है।

आयोजन तात्कालिक एवं दीर्घकालिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए क्रियान्वयन के क्रम का पूर्व चित्रण है। गृह में वैयक्तिक और पारिवारिक लक्ष्य होते हैं।

क्रियान्वित योजना के नियंत्रण का अर्थ होता है क्रियान्वयन करने हेतु वैयक्तिक अथवा संयुक्त प्रयत्न करना। इसमें योजना को सम्पन्न करने में स्वयं को अथवा दूसरों को मार्गदर्शन एवं निर्देशन प्रदान करने की आवश्यकता होती है।

जो कुछ क्रियान्वयन की प्रक्रिया में किया जा चुका है उस पर विचार करना और पारिवारिक लक्ष्यों के प्रकाश में परिणामों को जांच करना ही मूल्यांकन है।

गृह-व्यवस्था के समझने में भ्रान्तियां

यद्यपि गृह-व्यवस्था तथा उसके महत्त्व को लोग दिनोदिन शीघ्रता से समझने लगे हैं' तथापि गृह-व्यवस्था क्या है तथा इसके सुधारने के मार्ग में कौन-कौन-सी बाधाएं हैं, के सम्बन्ध में कुछ भ्रान्तियां अब भी प्रचलित हैं। इसलिए इस क्षेत्र में उपस्थित निषेधात्मक विचारों को स्पष्ट करना महत्त्वपूर्ण है। भ्रान्तियों का स्पष्टीकरण निम्नानुसार है—

व्यवस्था का अर्थ केवल कार्य-सम्पादन ही नहीं—गृह-व्यवस्था केवल कार्य का सम्पादन ही नही है। चूंकि भारत मे अधिकाश घरों मे व्यवस्थापक एव कार्य-सम्पादन कर्त्ता दोनो एक ही व्यक्ति होता है, इसलिए कार्य-सम्पादन मे व्यवस्थापक के पक्ष को पहचानना विशेष रूप से कठिन कार्य है। जब किसी कार्य की योजना एक व्यक्ति बनाता है और उसका क्रियान्वयन कोई दूसरा व्यक्ति करता है तो व्यवस्था की प्रशासनात्मक प्रकृति अधिक स्पष्ट हो जाती है। कोई क्रिया व्यवस्था-सम्बन्धी है या नहीं, इसकी कसौटी यह तथ्य है कि क्रिया के सम्पादन को किस सीमा तक नवीन निर्णयों की आवश्यकता पड़ी है।

व्यवस्था समूह के नेता तक ही सीमित नहीं होती—गृह-व्यवस्था के सम्बन्ध मे एक यह भ्रान्ति भी प्रचलित है कि प्रत्येक परिवार में एक व्यवस्थापक होना चाहिए। इससे यह अप्रिय भावना उत्पन्न हो जाती है कि इस व्यवस्थापक के हाथ मे अत्यधिक शक्ति होती है तथा वह घर के अन्य सदस्यो को व्यवस्थित करता है। यह व्यक्ति ही साधनों की व्यवस्था करता है अन्य व्यक्ति नही। यह सत्य है कि घर का एक व्यक्ति नेता होता है, निर्णय करने योग्य घर का प्रत्येक व्यक्ति गृह-व्यवस्था मे भाग ले सकता है और लेना चाहिए। सामूहिक साधनो एव लक्ष्यों के सन्दर्भ मे वे केवल विकल्प निश्चित करने में ही सहायता प्रदान नही करते, वरन् प्रत्येक व्यक्ति के पास कतिपय साधन होते हैं जिनका उत्तरदायी वह स्वय ही होता है। इसके अतिरिक्त परिवार का नेतृत्व समय-समय पर परिवर्तित होता रहता है। परिस्थिति के अनुसार नेतृत्व का भार एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति पर परिवर्तित होता रहता है।

अच्छे व्यवस्थापक जन्म से उत्पन्न नहीं होते, वरन् प्रशिक्षित किए जाते हैं—गृह-व्यवस्था सम्बन्धी तीसरी भ्रान्ति यह है कि व्यवस्थापक के गुण जन्म से किसी व्यक्ति में उपस्थित होते हैं, प्रशिक्षण द्वारा ये गुण उत्पन्न नही किये जा सकते। परन्तु यह धारणा त्रुटिपूर्ण है। यथार्थ मे प्रशिक्षण एवं अनुभव के द्वारा व्यक्ति मे व्यवस्था करने के गुण उत्पन्न किये जा सकते हैं।

व्यवस्था एक साधन मात्र है, साध्य नहीं—कुछ परिवार ऐसे भी होते हैं जो गृह-व्यवस्था के पीछे इतने पड़ जाते हैं कि उसे वे साध्य बना लेते हैं। वे यह भूल

है कि व्यवस्था साध्य नहीं है वरन् पारिवारिक लक्ष्यों को प्राप्त करने का माध्यम मात्र है। 'अत्यधिक स्वच्छ घर' के सम्बन्ध में सभी परिचित हैं, जहाँ व्यक्ति इस भय के कारण पत्रिका को पढ़ने के लिए मेज पर से नहीं उठाता कि मेज पर रखी पुस्तकें अव्यवस्थित न हो जावें।

परिवार के लक्ष्यों का निर्धारण एवं नियन्त्रण व्यवस्था द्वारा नहीं—एक यह त्रुटिपूर्ण धारणा प्रचलित है कि परिवार के लक्ष्य क्या होने चाहिए, इसका निर्धारण गृह-व्यवस्था करती है। यह भ्रान्ति इस ओर संकेत करती है कि लक्ष्यों का सावधानीपूर्वक चयन करना एक वार चुने गए लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु सावधानीपूर्वक चुने गए तरीकों के समान ही अथवा उनसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

लक्ष्य अनेक होते हैं जिनमें से व्यक्ति अथवा परिवार को चुनाव करना होता है। सभी लक्ष्यों का महत्त्व समान नहीं होता। प्रत्येक व्यक्ति या परिवार के लिए लक्ष्यों की वांछनीयता भिन्न-भिन्न होती है। यह सत्य है कि व्यवस्थापन प्रक्रिया वह प्रविधि है जिसका उपयोग लक्ष्य के महत्त्व और उसके प्रकार की ओर ध्यान दिये विना उसे प्राप्त करने हेतु किया जाता है।

गृह-व्यवस्था के सुधार में वाधाएँ

गृह-व्यवस्था को सुधारने के मार्ग में अनेक वाधाएँ उपस्थित होती हैं। ये वाधाएँ गृहिणी के लिए चुनौती के रूप में होती हैं, क्योंकि उनमें से प्रत्येक पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

कई परिवार व्यवस्थापन की प्रक्रिया से विज्ञ नहीं होते—कई परिवार व्यवस्थापन-प्रक्रिया के चरणों से विज्ञ नहीं होते अथवा व्यवस्थापन एक प्रक्रिया है, इसलिए इस सम्भावना को नहीं देख पाते कि लक्ष्यों को प्राप्त करने में यह सहायता प्रदान करेगी। कुछ व्यक्ति व्यवस्था को आयोजन का पर्याय मानते हैं तथा जव उनकी योजनाएँ क्रियान्वित नहीं हो पातीं तो निराश होते हैं। इन असफलताओं का अर्थ यह नहीं है कि व्यवस्थापन क्रियान्वित नहीं हो सकता। इसका अभिप्राय यही है कि व्यवस्थापन की सम्पूर्ण प्रक्रिया जव तक सम्पन्न नहीं होगी, तव तक वह सफल नहीं होगा तथा व्यवस्थापन के प्रत्येक चरण में किसी प्रकार का दोष भी नहीं होना चाहिए।

कुछ परिवार सभी सम्भावित साधनों से विज्ञ नहीं होते—अधिकांशतः परिवार उनके पास उपस्थित कुल साधनों अथवा उनकी विविधता विशेपकर अभौतिक साधनों की पूरी जानकारी नहीं होता। परिणामतः गृह-व्यवस्था अधिक सफलतापूर्वक सम्पन्न नहीं हो पाती। यदि परिवार में उपलव्ध समस्त साधनों का उपयोग किया जाए तो व्यवस्था में किसी प्रकार की कमी या वाधा उपस्थित नहीं हो सकती।

गृह-व्यवस्था निर्धारित लक्ष्यों के अनुकूल नहीं होती—कुछ परिवार अपने लक्ष्यों के प्रकाश में गृह-व्यवस्था के परिणामों का मूल्यांकन करने में असफल रहते हैं। इस प्रकार वे गत अनुभवों का लाभ यह समझने के लिए नहीं कर पाते, कि भविष्य के

गृह-व्यवस्था के कार्य को अधिक सफलतापूर्वक कैसे सम्पन्न कर सकते हैं। कुछ परिवार तो लक्ष्यों की पर्याप्त व्याख्या नही कर पाते, वास्तव में लक्ष्य क्रियान्वयन को उत्प्रेरित करने वाले होते हैं। उपलब्ध साधनों का सर्वोत्तम उपयोग निर्धारित लक्ष्यो पर निर्भर करता है। इसलिए लक्ष्य सोच-समझ कर निर्धारित किया जाना नितान्त आवश्यक है।

गृह-व्यवस्था सम्बन्धी समस्याओं के तैयार समाधानों की इच्छा—गृह-व्यवस्था के सुधार में एक यह भी बाधा है कि कई परिवार चाहते हैं कि कुछ ऐसे विशेषज्ञ हों जो गृह-व्यवस्था की प्रक्रिया मे उपस्थित होने वाली प्रत्येक समस्या का समाधान खोज कर तैयार रखें। परन्तु कोई भी दो परिवार लक्ष्यों व साधनों की दृष्टि से समान नही होते तथा व्यवस्था मे उपस्थित होने वाली समस्याएँ बड़ी जटिल होती हैं। इसलिए यह स्पष्ट है कि प्रत्येक परिवार को अपने स्वय के निर्णय लेने होगे तभी उसका कल्याण हो सकेगा।

गृह-व्यवस्था सम्बन्धी निर्णयों के लिए वांछित जानकारी की कमी—परिवार मे व्यवस्था-सम्बन्धी समस्याएँ इतनी जटिल होती हैं कि उन्हे सुलझाने के लिए अनेक प्रकार की जानकारी की आवश्यकता होती है। इस हेतु गृह-विज्ञान विशेषज्ञो तथा विषय पर उपलब्ध पुस्तको की सहायता ली जानी चाहिए।

गृह-व्यवस्था की सार्थकता अथवा महत्त्व

यद्यपि व्यवस्थापन सर्वव्यापी है, इसका उपयोग प्रत्येक घर मे किया जाता है, परन्तु इसके परिणामों का मूल्यांकन व्यवसाय और उद्योगों की अपेक्षा पारिवारिक जीवन मे कम वस्तुनिष्ठतापूर्वक किया जाता है। क्योंकि उन दोनो क्षेत्रो मे इनके परिणामो का मापन लाभ की कसौटी पर किया जाता है। परन्तु परिवार के पास कोई सरल व भौतिक मापने की इकाई नही होती। यद्यपि प्रभावपूर्ण एव कुशल व्यवस्था को पहचाना जा सकता है तथा उसके सुपरिणाम देखे जा सकते हैं।

अतीत मे गृह-व्यवस्था की आवश्यकता इसलिए अनुभव की गई कि साधन सीमित थे। मनुष्य का प्रयत्न होता था कि वह कम-से-कम परिश्रम करे। उपलब्ध कुछ अथवा समस्त साधनो के सम्बन्ध में आज भी कुछ परिवारो मे वैसी ही स्थिति है। जैसे-जैसे वातावरण अधिक जटिल बनता जाता है और साधनों की वृद्धि होती जाती है, परिवार को उसके साधनो के उपयोग करने की अनेक संभावनाओं का अधिकाधिक सामना करना पड़ रहा है। ऐसी अव्यवस्थित एव अनिश्चितता की स्थिति मे जबकि साधनों की विपुलता है, गृह-व्यवस्था का महत्त्व कम होने की अपेक्षा और भी अधिक बढ़ गया है।

अतः गृह-व्यवस्था शीघ्रता से बदलती हुई दुनिया मे समायोजन स्थापित करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। बौद्धिक प्रकृति, इसमें सन्निहित विस्तृत साधनो तथा जीवन-क्रम को निर्धारित करने वाले दूरगामी परिणामो के कारण इसका महत्त्व और भी अधिक बढ़ गया है।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-व्यवस्था से क्या अभिप्राय है ? इसके अर्थ सम्बन्धी कौन-कौन-सी भ्रान्तियाँ प्रचलित हैं ?

२. गृह-व्यवस्था को सुधारने में परिवार को किन-किन बाधाओं का सामना करना पड़ता है ?

३. परिवार के सदस्यों को गृह-व्यवस्था का अर्थ जानना क्यों आवश्यक है ?

अध्याय ५

गृह-व्यवस्था—तत्त्व

गृहिणी गृह की संचालक व निर्देशक है। प्रत्येक परिवार का सुख, स्वास्थ्य व जीवन-स्तर गृहिणी के गुणो पर निर्भर रहता है। समान आर्थिक व अन्य परिस्थिति वाले दो घरो का वातावरण व जीवन-स्तर, यदि एक की गृहिणी कुशल व दूसरे की फूहड़ है, तो वहुत भिन्न हो सकता है। किसी भी परिवार का वातावरण सुखदायक व उसका रहन-सहन ऊँचा करने के लिए अधिक धन या सम्पत्ति की इतनी आवश्यकता नही, जितनी गृहिणी के प्रवन्ध व कार्य-कुशलता की। एक धनवान परिवार का रहन-सहन व जीवन-स्तर भी गृहिणी की अज्ञानता के कारण एक निर्धन किन्तु सुघड़ गृहिणी के गृह की अपेक्षा वहुत नीचा हो सकता है।

गृह के कार्य अनेक प्रकार के हैं—गृह की सुव्यवस्था व सफाई करना, भोजन पकाना व खिलाना, कपड़े, वर्तन, अन्य सामान साफ करना आदि तो रोज के आवश्यक कार्य हैं ही। साथ ही वाजार से वस्तुएँ खरीदना, आय-व्यय का हिसाब रखना, समय-असमय अस्वस्थ व्यक्तियों की देखभाल करना, कपड़े सीना, वुनना व काढ़ना, वालको की पढ़ाई-लिखाई करवाना आदि भी ऐसे आवश्यक कार्य हैं, जिनका उचित प्रवन्ध हर गृहिणी को करना अनिवार्य है। घर का सब काम चाहे गृहिणी स्वय करे या दास-दासियो से करवाये अथवा गृह के भिन्न सदस्यो को सौंपे, चाहे गृहिणी घर से वाहर नौकरी करती हो या घर पर ही रहती हो, किन्तु यह निश्चित है कि गृह के विभिन्न कार्यों व क्षेत्रो का अन्तिम उत्तरदायित्व उसी पर है।

प्रत्येक गृहिणी को अपने विभिन्न कर्तव्यो का पूर्ण पालन करने के लिए गृह-व्यवस्था में कुछ सिद्धान्तो को ध्यान मे रखना अति आवश्यक है। गृह-व्यवस्था के मुख्य तत्त्व निम्न हैं—

१. परिवार का प्रत्येक सदस्य स्वस्थ, सुखी व सन्तुष्ट रहे।

२. गृह का व्यय आय के अन्दर ही रहे।

३. गृह के कार्य अधिकतम कुशलता से किये जायँ।

१. परिवार का सुख

परिवार के प्रत्येक सदस्य को सुखी रखने के लिए सब की विभिन्न आवश्यकताएँ पूर्ण होनी आवश्यक हैं।

(क) मूल आवश्यकताएँ—भोजन, वस्त्र व मकान प्रत्येक व्यक्ति की मूल आवश्यकताएँ हैं।

भोजन—गृह के प्रत्येक सदस्य को उचित स्वास्थ्यवर्द्धक भोजन मिले, इसके लिए गृहिणी को निम्न बातों का ज्ञान होना चाहिए—

(i) भोजन के तत्त्व व गुण तथा विभिन्न भोज्य पदार्थों की विशेपताएँ।

(ii) भिन्न-भिन्न स्वास्थ्य व आयु के व्यक्तियों की भिन्न-भिन्न भोज्य आवश्यकताएँ तथा रुचियाँ।

(iii) खाद्य सामग्री खरीदना व संभालना।

(iv) उत्तम भोजन पकाने की उचित विधियाँ।

(v) भोजन परोसने के मनोहर ढंग।

वस्त्र—उचित वस्त्रों का प्रवन्ध करने के लिए निम्न बातें जानना आवश्यक है—

(i) विभिन्न कपड़ों की विशेपताएँ।

(ii) भिन्न-भिन्न सदस्यों की विभिन्न मौसमों में वस्त्र सम्वन्धी आवश्यकताएँ।

(iii) कपड़ा खरीदने की ऐसी विधि जिससे कम-से-कम दाम में बढ़िया, मजबूत वस्त्र तैयार हो सकें।

(iv) आवश्यक वस्त्र काटना व सोना।

(v) वस्त्रों को सँभालकर रखना व मरम्मत करना।

मकान—मकान में प्रत्येक सदस्य को पूर्ण सुविधा मिल सके, इसके लिए आवश्यक है कि गृहिणी—

(i) उत्तम मकान के गुण जाने।

(ii) मकान को सुविभाजित व सुव्यवस्थित करे।

(iii) मकान को स्वच्छ व सन्दर रखे।

(ख) पर्याप्त कार्य, अवकाश व मनोरंजन का प्रवन्ध—केवल उपयुक्त भोजन व वस्त्र पाकर ही कोई व्यक्ति स्वस्थ नहीं रहता। शरीर व मन दोनों के स्वास्थ्य के लिए काम की आवश्यकता है। घर के वाहर दफ्तर, कारखाने, खेत या स्कूल आदि का काम तो भिन्न-भिन्न व्यक्तियों पर होता ही है, साथ ही घर में भी अपनी सामर्थ्य के अनुसार क्रमवद्ध कार्य करना स्वास्थ्यवर्द्धक होता है तथा सुविधा व गृह-कार्य की

कुशलता को भी बढाता है। किन्तु कार्य करने के पश्चात् अवकाश का महत्त्व गृह के सभी सदस्यो व स्वयं गृहिणी के लिए भी बहुत अधिक है, जिससे थका-माँदा शरीर पुनः काम करने को तैयार हो जाय। अवकाश का उचित उपयोग करने के लिए मनोरजन के साधनों—खेल-कूद, मिलने-जुलने या विश्राम—का उचित प्रबन्ध होना स्वास्थ्य व प्रसन्नता दोनो के लिए आवश्यक है।

(ग) गृह का वातावरण—गृह का वातावरण प्रेम व सहानुभूतिमय बनाना गृहिणी का कर्तव्य है। इसके लिए समस्त सदस्यो को परस्पर हित से रहना आवश्यक है। एक दूसरे का ध्यान रखना, एक दूसरे की सहायता करना, एक दूसरे के दु.ख में दुःखी व सुख मे सुखी होना प्रत्येक समझदार व्यक्ति का स्वभाव होना चाहिए। अपने स्वभाव तथा वर्ताव द्वारा गृहिणी गृह के अन्य सदस्यो के लिए आदर्श उपस्थित कर सकती है तथा आवश्यकता पडने पर इस विषय मे प्रेमपूर्वक परामर्श भी दे सकती है। सभी पारिवारिक सम्बन्धो की कुंजी प्रायः गृहिणी के ही हाथ है।

२· गृहिणी का आय-व्यय का सन्तुलन

गृह के खर्च को आमदनी से बाहर न जाने देने का सबसे सरल साधन है—खर्च करने के पूर्व बजट (Budget) अर्थात् आय-व्यय का अनुमानित चिट्ठा बना लेना। फिर इसी चिट्ठे के अनुसार खर्च करना व उसका उचित हिसाब रखना।

(क) बजट बनाना—प्रत्येक गृहिणी को बजट बनाने की जानकारी होना अपेक्षित है। इसके मूल सिद्धान्त निम्न हैं—

(i) गृहस्थी की मासिक अथवा वार्षिक आमदनी का हिसाब लगा लिया जाय।
(ii) गृह की विभिन्न आवश्यकताओ की सूची बना ली जाय।
(iii) आमदनी का विभाजन पूर्ण विचार करके प्रत्येक आवश्यकता के लिए इस प्रकार खर्च किया जाय कि कुछ धन अकस्मात खर्च के लिए भी बच जाय।

जिस प्रकार प्रत्येक विषय पर मासिक खर्च का हिसाब रखा जा सकता है, उसी प्रकार प्रत्येक माह का प्रत्येक विषय पर जितना व्यय हो उसे जोड कर वर्ष-भर का उसी विषय पर व्यय निकालना चाहिए। प्रत्येक विषय पर वार्षिक खर्च जोडने से कुल वार्षिक व्यय पता लग जायगा। यह सदैव वार्षिक आय से कम तथा वार्षिक अनुमान-पत्र के लगभग होना चाहिए, अन्यथा योजना व हिसाब सब व्यर्थ ही साबित होंगे। इस प्रकार का विस्तृत हिसाब रखने से अगले मासिक व वार्षिक बजट बनाने में बहुत सहायता मिलती है।

सामान खरीदना—सामान खरीदना भी एक कला है। कुछ व्यक्ति स्वभाव से ही चीजें खरीदने में कुशल होते हैं। अन्य अनुभव से इस सम्बन्ध मे बहुत कुछ

जाते हैं। किन्तु अधिकांश लोगों को सफल खरीदार बनने के लिए निम्न बातों को जानना आवश्यक है।

(१) अपनी व अपने परिवार की विभिन्न आवश्यकताएँ, रुचियाँ व आर्थिक सामर्थ्य—यदि इन तीनों में से किसी एक ओर ध्यान रखे बगैर कोई भी वस्तु खरीदी जायगी तो धन व्यर्थ जायगा। जो कोई भी वस्तु—भोज्य सामग्री, वस्त्र या गृह या अन्य आवश्यक साज-सामान जैसे फर्नीचर, दरी-कालीन आदि—खरीदनी हो, उसके गुण व प्रकार परखने चाहिए। इससे एक अच्छी किन्तु महँगी वस्तु के गुण, यदि एक अन्य सस्ती वस्तु से भी प्राप्त हो सकते हों तो गृहिणी अपनी आर्थिक क्षमतानुसार दूसरी वस्तु को खरीद सकती है। भोजन के सम्बन्ध में यह बात बहुत सत्य है। ऐसी दशा में कम दाम में भी स्वास्थ्य के लिए उत्तम-सन्तुलित आहार का प्रबन्ध किया जा सकता है। वस्त्रों में भी जहाँ सूती से काम चल सके वहाँ महँगा रेशम क्यों खरीदें।

(२) चीजें सदैव उस समय खरीदनी चाहिए जब वे सस्ती हों। इसके लिए भोजन की चीजें—सब्जी, फल आदि सदैव मौसम में खरीदनी चाहिए। बेमौसमी भोजन बहुत महँगा होता है। किन्तु विभिन्न प्रकार के वस्त्र आदि उनके प्रयोग करने के विशेष समय के अन्त में सस्ते मिल जाते हैं। उदाहरणार्थ ऊनी माल मार्च-अप्रैल में व ठण्डे वस्त्र नवम्बर-दिसम्बर में खरीदना सस्ता रहता है। यदि पहले से योजना बना ली जाय तथा पहले से सोच लिया जाय कि आने वाले वर्ष में क्या-क्या वस्तुएँ आवश्यक होंगी तो जब बाजार में सस्ती मिलें तभी खरीद लेनी चाहिए, अन्यथा आवश्यकता के समय खरीदने से वे प्रायः बहुत महँगी मिलती हैं। इसलिए गृहणी को सदैव बाजार के दामों से परिचित रहना चाहिए। खरीदने से पूर्व भिन्न-भिन्न दुकानों से उसी वस्तु के दामों की तुलना कर लेना भी लाभदायक रहता है।

सदा विश्वसनीय दुकानदारों से सामान खरीदना चाहिए। यदि ऐसा करने से कभी-कभी अन्य दुकानों से अधिक दाम भी देना पड़ जाय, तब भी कोई हानि नहीं, क्योंकि माल ठीक मिलता है और धोखे की शंका नहीं रहती। वास्तव में खरीदारी में मितव्ययिता से यह अभिप्राय नहीं है कि कम दाम में रद्दी व घटिया माल खरीद लिया जाय या आवश्यक वस्तुएँ भी न खरीदी जायें। मितव्ययिता का वास्तविक अर्थ तो यह है कि कम-से-कम दाम खर्च कर अधिक-से-अधिक लाभ प्राप्त हो। अतः मुख्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समझ-सोच कर इस प्रकार धन व्यय करना कि परिवार को अधिकतम सुख मिले, मितव्ययिता है। दुकानदारों के कहने में आकर अनावश्यक वस्तुएँ—चाहे वे सस्ती ही हों—खरीद लेना मूर्खता है।

सामान पर लगे लेबिलों व अन्य निशानों की पहचान सीखना चाहिए। इससे वस्तु की वास्तविक श्रेणी ज्ञात हो जाती है। जहाँ तक हो सके जाने हुए, अच्छे कारखानों व कम्पनियों का बना माल या सरकारी मुहर वाला माल खरीदने से मूल्या-नुसार ठीक माल मिलता है।

यथासम्भव सामान इकट्ठा खरीदना चाहिए। इससे वस्तु के दाम के अतिरिक्त अन्य प्रकार के खर्च—जैसे सवारी, सामान बँधवायी-उठवायी आदि के दामो में बचत हो सकती है और साथ ही साथ प्रतिदिन की चिन्ता से छुटकारा भी मिल सकता है। बहुधा इकट्ठा सामान खरीदने मे भाव सस्ता भी हो जाता है।

३. गृह-कार्य कुशलता

इससे हमारा अभिप्राय यह नही कि हर काम सर्वोत्तम श्रेणी का हो, वरन् यह है कि किसी भी कार्य को सर्वोत्तम श्रेणी का करने में कम-से-कम समय व शक्ति लगे। इसके लिए अनेक बातो की आवश्यकता है।

(क) ज्ञान—यह तो स्पष्ट ही है कि हम तब तक कोई कार्य पूर्ण कुशलता से नही कर सकते, जब तक उसे करने की सर्वोत्तम विधि न जानते हो। अनुभव से तो व्यक्ति बहुत कुछ सीखता ही है, किन्तु यदि गृह-कार्यों के सम्बन्ध में पहले से ही पूर्ण ज्ञान मिल जाय तो भूल-चूक का भय न रहे तथा समय व शक्ति दोनो की ही बचत हो। अत खाना पकाने, वस्त्र सीने, सफाई करने व बालकों की देख-रेख करने की सर्वोत्तम विधियो का ज्ञान होना गृहिणी के लिए नितान्त आवश्यक है। यदि सौभाग्य-वश गृहिणी को स्वय अपने हाथ से इन कामो को नही करना पडता। (क्योकि वह दास-दासी रख सकती है) तब भी नौकरो को सिखाने के लिए व उनसे सर्वोत्तम कार्य करवाने के लिए भी स्वय उसे सब कामो का ढग आना चाहिए। अथवा अन्य लोगों के द्वारा किये गये असन्तोषजनक कार्यों की त्रुटियों को वह न ठीक करवा सकेगी, न गृह-कार्य कुशलतापूर्वक हो पायेंगे।

(ख) योजना—गृह-कार्य की योजना के बिना गृह-प्रबन्ध सम्बन्धी कोई भी कार्य पूर्ण कुशलता से नहीं हो सकता। गृह-कार्य योजना बनाने के लिए सर्वप्रथम गृह-कार्यों की विस्तृत सूची बनानी चाहिए। गृहिणी को पूर्ण विचार कर लेना चाहिए कि उसे किन-किन कार्यों का प्रबन्ध करना है। उदाहरणार्थ गृह की सफाई के अन्तर्गत उसे न केवल विभिन्न कमरों की सफाई को ध्यान में रखना है, वरन् अहाते, आँगन, बराण्डे तथा सीढ़ियों आदि को भी; न केवल कमरो के फर्श को झाड़ना है वरन् फर्नीचर व अन्य साज-सामान, दरवाजो-खिडकियो व छत को भी। इसी प्रकार भोजन पकाने के सम्बन्ध में न केवल दैनिक खाना-नाश्ता पकाना ही गृहिणी का काम है, वरन् खाने का सामान खरीदना व सँभालकर रखना, अचार-चटनी बनाना तथा रसोईघर की पूर्ण सफाई भी। गृह की व्यवस्था व प्रबन्ध करने में अनेक छोटे किन्तु आवश्यक कार्य छूट सकते हैं।

समस्त कार्यों की विस्तृत सूची बन जाने पर आवश्यकता, अवकाश व सुविधा के विचार से विभिन्न कामो को समयानुकूल विभाजित करना चाहिए। उदाहरणार्थ यह ध्यान रखना चाहिए कि नाश्ता तैयार करने का उचित समय नाश्ता करने से प

आध घण्टा पूर्व है। समस्त घर की सफाई भी प्रातःकाल ही होनी चाहिए, किन्तु गृहिणी को दोपहर को अधिक अवकाश व सुविधा हो तो कुछ ऐसे कमरों की सफाई जिनकी दोपहर तक आवश्यकता न हो, उस समय के लिए छोड़ी जा सकती है। इस प्रकार गृह के समस्त कार्यों का विचारपूर्ण कार्यक्रम तैयार हो जाता है, जिसके अनुसार विभिन्न कार्यों को सम्पन्न करना चाहिए।

इस दैनिक कार्यक्रम के साथ ही सप्ताह या मास के विशेष दिनों के विशेष कामों का कार्यक्रम भी बनाना चाहिए। उदाहरणार्थ प्रतिदिन के उपर्युक्त कार्यक्रम के साथ ही रविवार व अन्य छुट्टियों का विशेष कार्यक्रम बनाना आवश्यक है, जिससे किसी भी दिन का कुछ भी समय नष्ट न हो व कार्य सुचारु रूप से हो सके। लम्बी छुट्टी के दिनों में गृह के फर्नीचर व अन्य सामान की सफाई तथा भण्डार की देखभाल व सफाई आदि करने का समय पहले से ही निश्चत होना चाहिए। ऐसे अन्य काम जैसे मौसमी अचार, चटनी व शरबत आदि बनाना भी गृहिणी की वार्षिक कार्य योजना में रहना चाहिए।

यदि गृहिणी की सहायता के लिए एक नौकर या नौकरानी कुछ समय या सारे दिन के लिए रखी गयी हो, तो उसका निश्चित कार्यक्रम बनाना तो और भी आवश्यक है। थोड़े समय के नौकर-नौकरानी तो केवल कुछ विशेष कार्यों के प्रयोजन (जैसे बर्तन माँजना या सफाई करना आदि) से ही रखे जाते है, उनका कार्य समयानुसार विभाजित करना चाहिए। पूरे दिन वाले नौकरों के कार्य में भोजन के लिए उचित समय के अतिरिक्त विश्राम व कभी-कभी मनोरंजन के लिए अवकाश प्रदान करना अति आवश्यक है।

(ग) परिवार का सहयोग—जहाँ गृहिणी एक है वहाँ गृह-कार्य अनेक होते हैं। यदि प्रातःकाल से उठकर रात के बारह बजे तक भी बिना विश्राम किये गृहिणी प्रत्येक कार्य को स्वयं करे तो भी या तो काम समाप्त ही न होंगे या वे भली-भाँति कुशलता से न हो सकेंगे। गृह के प्रत्येक कार्य को अधिकतम कुशलतापूर्वक करने के लिए तो गृह के प्रत्येक सदस्य की सहायता की आवश्यकता है। अतः गृहिणी को गृह के दैनिक, साप्ताहिक व वार्षिक कार्यों को विधिपूर्वक सोच-विचारकर नियोजित करने के पूर्व चाहिए कि वह गृहवासियों की कार्य-क्षमता, रुचि व समय के हिसाब से कार्य-विभाजन करे। उदाहरणार्थ, यदि गृह में कोई बड़ी-बूढ़ी महिला है तो उसे सब्जी काटने, अनाज छानने-बीनने व छोटे बच्चे का ध्यान रखने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। गृह-स्वामी का सहयोग उसके व्यावसायिक कार्य पर निर्भर रहेगा। यदि गृह-स्वामी दफ्तर या स्कूल में लिखा-पढ़ी का कार्य करता है तो गृह में प्रतिदिन ऐसा कार्य करना जिसमें उसके शरीर की मांसपेशियाँ काम आयें (जैसे पानी भरना, चारपाई उठाना, बच्चों के साथ खेलना आदि) अति लाभदायक रहेंगे। साथ ही रुचि हो तो भोजन पकाने, परोसने या भोजन-सूची बनाने या घर की खरीदारी में सहायता कर

सकता है। बालक-बालिकाओं को गृह के प्रत्येक कार्य में ज्ञान, रुचि व अभ्यास होने के विचार से उनका गृहिणी की सहायता करना अति लाभदायक है। अपने बिस्तर बिछाना, अपनी वस्तुएँ विधिपूर्वक रखना, अपने कमरे की सफाई करना तथा अन्य कमरों की सफाई, खाना बनाने व बर्तन साफ करने में गृहिणी की मदद करना, अपने कपड़ों व जूतों का ध्यान व सफाई करना आदि ऐसे कार्य हैं जो प्रत्येक १०-१२ वर्ष के बालक को करने चाहिए। ८-१० वर्ष से छोटे बालक भी अपनी क्षमतानुसार अपनी चीजें सँभालकर रख सकते हैं व थोड़ी-बहुत सफाई कर सकते हैं। वे अन्य लोगों को काम करते समय चीजें उठा-उठा कर दे सकते हैं व मिलने आने वालों को अन्दर लाकर बिठा सकते हैं। यथासम्भव बचपन से ही घर के कार्यों में सहयोग करने से यह एक स्वभाव हो जाता है जो जीवन में सदैव सुख पहुँचाता है।

(घ) उपयुक्त यन्त्र व साधन—इन सब बातों के अतिरिक्त गृहकार्य की पूर्ण कुशलता के लिए एक और बात भी आवश्यक है। किसी कार्य-विशेष को करने का हमें कितना ही पूर्ण ज्ञान हो, उसको पूर्ण योजनानुसार पर्याप्त समय भी दिया जाय तथा उसको करने में अन्य लोगों का पूर्ण सहयोग प्राप्त हो, तब भी यह अधिकतम कुशलता सहित नहीं हो सकेगा, जब तक कि हम कार्य को करने के सर्वोत्तम यन्त्र या साधनों का प्रयोग न करेंगे। उदाहरणार्थ, एक कमीज या ब्लाउज सीने में कुशलता तभी आयेगी, जब हमारी सिलाई की मशीन उचित दशा में हो, एक उत्तम स्वेटर या मोजा बुनने में ठीक नम्बर की सलाइयों का प्रयोग वाछनीय है, बढिया खाना पकाने के लिए उचित बर्तन व ठीक आँच की आवश्यकता है, ऊँचे स्तर की सफाई के लिए केवल झाड़ु व झाड़न से ही काम नहीं चल सकता। विभिन्न वस्तुओं की पूर्ण सफाई के लिए उपयुक्त साधन प्रयोग में लाने से ही सर्वोत्तम सफाई होती है। उचित यन्त्रों व साधनों के प्रयोग से समय व शक्ति भी बचते हैं। अतः एक गृहिणी के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक कार्य को उच्चतम श्रेणी का करने के लिए वह सबसे बढिया साधनों का ज्ञान रखे। यथासम्भव अपनी क्षमतानुसार उन्हें खरीदने के पश्चात् उनका सावधानी से प्रयोग करना व उनको सँभालकर रखना भी उसका परम कर्तव्य है।

पारिवारिक जीवन-चक्र को मोटे रूप में स्तरों या अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है। प्रत्येक अवस्था की सम्बन्ध-स्थापना विघायक विशिष्ट समस्याएँ होती हैं जिनके निराकरण हेतु निर्णय तथा समायोजन की आवश्यकता होती है। ये अवस्थाएँ निम्नानुसार हैं—

१. नव दम्पती में समायोजन की अवस्था
२. गृहस्थ के लिए वस्तु-संग्रह की अवस्था
३. सन्तानोत्पत्ति की अवस्था
४. शिक्षा की अवस्था
५. पुनः प्राप्ति अथवा पुनः खोज की अवस्था
६. अवकाश अवस्था।

(१) समायोजनावस्था—यह पारिवारिक जीवन की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अवस्था है। पारिवारिक जीवन-चक्र को गतिशीलता प्रदान करने में इस अवस्था का योगदान मौलिक एवं अद्वितीय है। परिवार का प्रारम्भ विवाह नामक संस्कार से प्रारम्भ होता है। यहीं से पुरुष व स्त्री पति-पत्नी के रूप में जीवन प्रारम्भ कर परिवार जैसी महत्त्वपूर्ण संस्था का उद्घाटन करते हैं। भावी पारिवारिक जीवन की सफलता एवं सुख नव दम्पती के पारस्परिक समायोजन पर निर्भर करता है। पाश्चात्य देशों में तो प्रणय-बन्धन में बँधने से पूर्व युवा स्त्री-पुरुष एक दूसरे के जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोणों, मूल्यों, मान्यताओं एवं आस्थाओं को समझने का प्रयास करते हैं, तत्पश्चात् ही वे पति-पत्नी के रूप में एक दूसरे को अपनाते हैं। इतना होते हुए भी उन्हें निकट आने के पश्चात् एक दूसरे को समझकर नवीन जीवन-क्रम निर्धारित करने की आवश्यकता होती है। पति-पत्नी में जितने अधिक सुमधुर सम्बन्ध स्थापित हो सकेंगे, उतना ही अधिक परिवार सुखमय एवं सुसमायोजित होगा।

भारत में तो नव वर-वधू के मध्य समायोजन का महत्त्व और भी अधिक है। यहाँ एक दूसरे को पहले से जाने बिना माता-पिता के निर्णयानुसार लड़का व लड़की विवाह संस्कार में आबद्ध होते हैं। यद्यपि इतना अवश्य है कि माता-पिता अधिकांशतः पुत्र अथवा पुत्री का सम्बन्ध स्थापित करने से पूर्व दूसरे पक्ष के सामाजिक स्तर, जीवन-दर्शन, जीवन सम्बन्धी मूल्यों एवं विश्वासों को दृष्टिगत रखते हैं। समान जीवन-दर्शन वाले परिवारों के पुत्र व पुत्री में सम्बन्ध स्थापित होने से समायोजन स्थापित करने में सरलता होती है। हिन्दुओं में तो ग्रह, नक्षत्र व राशि आदि के सम्बन्ध में विचार कर समान संस्कार वाले लड़के व लड़की के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। इस सबका प्रधान लक्ष्य नव विवाहित दम्पती के मध्य स्वस्थ समायोजन की सम्भावनाएँ ही ज्ञात करना होता है। अभी भारतीय समाज इतना प्रगतिशील नहीं हुआ है कि पुत्र व पुत्री को स्वेच्छा से जीवन-साथी ढूँढ़ने की स्वतन्त्रता हो परन्तु कुछ सुशिक्षित एवं पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित भारतीय परिवारों में पुत्र अथवा पुत्री के विकल्प को मान्यता दी जाती है। कुछ सीमा तक विवाह सम्बन्ध स्थापित करने से पूर्व नवयुवक व नवयुवती को जीवन-साथी के चयन के सम्बन्ध में नियंत्रित स्वतन्त्रता देना समायोजन की दृष्टि से श्रेयस्कर होगा।

विवाहोपरान्त पति-पत्नी एक दूसरे को भली प्रकार समझें। अपने पुराने वातावरण तथा संस्कारजन्य जीवन सम्बन्धी मान्यताओं में समन्वय स्थापित कर परिवार के नवीन जीवन-दर्शन का निर्माण करें तथा उसी के अनुकूल दोनों ही आचरण करें तो ऐसा परिवार निश्चय ही सुसमायोजित एवं सुखी होगा।

हमारे देश में अब भी संयुक्त परिवार प्रथा प्रचलित है। संयुक्त परिवारों में नव दम्पती को समायोजन की और भी अधिक कठिनाई होती है। यह कठिनाई विशेष

करके वधू को होती है, क्योंकि उसे सास, श्वसुर एवं अन्य परिवार के व्यक्तियों के आचरण एवं विचारों का आदर करना पड़ता है। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि समायोजन स्थापित करने के लिए उसे अपने पुराने सस्कारों एवं जीवन-दर्शन को बदल ही देना पड़ता है परन्तु जिस वधू में अपने को ससुराल के वातावरण के अनुकूल परिवर्तित करने की सामर्थ्य नही होती, उस परिवार में कलह व झगड़े होते हैं। परिणामतः पूरा परिवार कष्ट व क्लेशमय जीवन व्यतीत करता है। ऐसी स्थिति मे लड़के के माता-पिता तथा अन्य परिवार के सदस्यो को समझदारी से काम लेना चाहिए। नव दम्पती के सुसमायोजन स्थापित करने मे सक्रिय सहयोग देना चाहिए।

(२) संग्रह अवस्था—परिवार निर्मित होने के पश्चात् पति-पत्नी का प्रमुख कर्तव्य नवीन परिवार के वर्तमान एवं भावी सदस्यो की वृद्धि एव विकास सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विभिन्न साधनों एव सुविधाओं की आवश्यकता होती है। उनके शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एव नैतिक विकास हेतु परिवार को विशेष सुविधाओं एवं धन की व्यवस्था करनी होती है। गृह-स्वामी को आर्थिक सुरक्षा एव व्यवस्था की दृष्टि से कोई स्थायी उद्योग-धन्धा अपनाना पड़ता है। धन के अभाव मे परिवार के सदस्यो को भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा, मनोरंजन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति असम्भव हो जाएगी। यही कारण है कि विवाह से पूर्व इस बात को विशेष महत्त्व दिया जाता है कि लड़का किसी अच्छे धन्धे से लगा है या नहीं।

(३) सन्तानोत्पत्ति एवं लालन-पालन—यह पारिवारिक जीवन-चक्र की तीसरी अवस्था है। वास्तविकता तो यह है कि पारिवारिक जीवन का सही सूत्रपात सन्तानोत्पत्ति से होता है। परिवार के स्वरूप के अन्तर्गत सन्तान एक आवश्यक एवं अभिन्न स्थान रखती है। जैविक दृष्टि से सन्तानोत्पत्ति वैवाहिक जीवन का स्वाभाविक परिणाम है। भारतवर्ष में सन्तानोत्पत्ति का धार्मिक महत्त्व है। हिन्दू धर्म-ग्रन्थों के अनुसार पितृऋण से मुक्त होने के लिए प्रत्येक दम्पती का सन्तानोत्पत्ति करना परमावश्यक एवं पुनीत उत्तरदायित्व है। प्रत्येक दम्पती को विवाहोपरान्त पारस्परिक समायोजन स्थापित कर एवं परिवार के सदस्यो की आवश्यकता की पूर्ति हेतु आर्थिक एवं अन्य व्यवस्था कर सन्तानोत्पत्ति करना चाहिए।

(४) शिक्षा व पालन-पोषण की अवस्था—नव-शिशु के आगमन के साथ ही परिवार का उत्तरदायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है। परिवार के आकार में वृद्धि होने लगती है। परिवार के अन्य सदस्यों की देखभाल के साथ-साथ बच्चों के सर्वाङ्गीण विकास के लिए परिवार को विशेष प्रयत्न करने पड़ते हैं। बच्चो के लिए भोजन, वस्त्र आदि का प्रबन्ध करने के अतिरिक्त उनकी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को समझकर पूर्ण करना उनके विकास की दृष्टि से बड़ा महत्त्व का है। माता-पिता का उत्तरदायित्व है कि वे घर में ऐसा मनोवैज्ञानिक वातावरण निर्मित करें कि बालक सुरक्षा की भावना का अनुभव करने लगें तथा उसमें स्वस्थ अभिवृत्तियों एव आदर्श

का निर्माण हो सके। माता-पिता को आपस में समायोजन बनाए रखने के साथ-साथ बालकों के साथ भी सुमधुर सम्बन्ध स्थापित हों। इस समय माता-पिता का प्रधान लक्ष्य बच्चों की सुरक्षा एवं विकास की व्यवस्था करना है। बालकों के लिए मनोरंजनात्मक क्रियाओं की व्यवस्था तथा परिवार की सामूहिक क्रियाओं में भाग लेने के लिए अवसर प्रदान करना परमावश्यक है।

जब बच्चे कुछ बड़े होने लगते हैं तो उनके लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था करना नितान्त आवश्यक है। इस अवधि में उनको पोषक भोजन, उपयुक्त वस्त्र, स्वास्थ्य सुविधाएं तथा व्यक्तिगत विकास के लिए पर्याप्त आवास की व्यवस्था करनी चाहिए। घर में ऐसे वातावरण का निर्माण किया जाये कि उनमें अपनत्व की भावना उत्पन्न हो सके तथा उसे घर से बाहर के समुदाय तथा समाज के व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करने के अवसर मिल सकें। उन्हें घर के प्रबन्ध से सम्बन्धित आयोजन करते समय उन्हें भी मित्रतापूर्ण विचार-विनिमय करने का अवसर प्रदान करें। घर की महत्त्वपूर्ण समस्याओं तथा परिस्थितियों से उन्हें परिचित कराकर उनको उनके सम्बन्ध में विचार व्यक्त करने के लिए उत्प्रेरित किया जाय तथा किसी सीमा तक उन्हें मान्यता भी दी जाय।

किशोरावस्था प्राप्त करने पर माता-पिता को चाहिए कि उनकी सामान्य शिक्षा, व्यावसायिक व औद्योगिक शिक्षा में सहायता प्रदान करें तथा उनकी सामाजिक, मनोरंजनात्मक, व्यक्तित्व तथा व्यवसाय सम्बन्धी समस्याओं को हल करने में योगदान दें। जब बालक १८ वर्ष की आयु को प्राप्त कर लें तो उन्हें महाविद्यालयीन शिक्षा प्राप्त करने अथवा किसी उपयुक्त व्यवसाय में लगाने में सहायता करें। इस प्रकार बालकों के जन्म से व्यावसायिक एवं वैवाहिक जीवन प्रारम्भ करने तक उनके व्यक्तित्व के बहुमुखी विकास हेतु सतत् प्रयत्न करते रहें ताकि वे स्वस्थ, सुसमायोचित तथा सुखी भावी परिवार का निर्माण करने में समक्ष हो सकें।

(५) पुनः प्राप्ति अथवा पुनः खोज की अवस्था—जब बालक भली प्रकार से शिक्षित-दीक्षित हो आत्म-निर्भर हो जाते हैं तो माता-पिता के उत्तरदायित्व में कमी हो जाती है। अब उनका विशेष उत्तरदायित्व यह हो जाता है कि वे अपने जीवन को अधिक सुखमय बनाने के लिए कुछ सक्रिय अभिरुचियों की खोज करें। उन्हें बच्चों से परे रुचियाँ खोजने की आवश्यकता होती हैं। बच्चे स्वयं अपने लिए रुचियों का निर्माण करते हैं। इस प्रकार की रुचियाँ उत्पन्न करना वृद्धावस्था की दृष्टि से बड़ी ही महत्त्वपूर्ण होती हैं। इनसे जीवन में नवीनता, सरसता, सुसमायोजन की क्षमता पर्याप्त रूप से विकसित हो जाती हैं। इतना ही नहीं, किसी व्यवसाय-विशेष में वे पर्याप्त कुशलता उत्पन्न कर उसे जीवनयापन का साधन बना लेते हैं। ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं कि लेखन, चित्रकला, शिक्षण अथवा संगीत

जैसी व्यावसायिक अभिरुचियाँ रखने वाली स्त्रियाँ इस अवस्था मे इनको पुनः जाग्रत कर कुशल व्यवसायी बन गई हैं।

इस अवस्था को वृद्धावस्था के लिए सामाजिक व व्यावसायिक समायोजन के लिए प्रयास करने की आवश्यकता भी कहा जाता है। यदि व्यक्तियो में वृद्धावस्था के लिए पर्याप्तता एव आत्मनिर्भरता की भावना को विकसित करना है तो इस अवस्था के आगमन से पूर्व ही उसके लिए योजना बना लेनी चाहिए। इस खोज की अवस्था मे ऐसे रचनात्मक, व्यावसायिक अनुभव एव कलाएँ व्यक्ति में विकसित की जा सकती है जो कि वृद्धावस्था में, जबकि शक्ति, स्वास्थ्य, मानसिक एवं शारीरिक योग्यताएँ अपेक्षाकृत कम क्रियाशील हो जाती हैं, सहायक सिद्ध हो सकती है। सौभाग्यवश रुचि एव निर्माण करने की क्षमता ये दो विशेषताएँ ऐसी हैं जो व्यक्ति की अवस्था के साथ-साथ घटने के स्थान पर बढती है। आयु के बढने के बावजूद यदि मस्तिष्क का वैकल्पिक उपयोग किया जाए, जैसे—कुछ कला अथवा हस्तकौशल के कार्य के साथ अध्ययन। इससे आत्मनिर्भरता एव आत्मसन्तोष की भावना बनी रही सकती है और उसमें विकास भी होने की सम्भावना रहती है। जितना अधिक समझदारी मे इस अवधि में रुचियों एव व्यावसायिक कुशलताओं को उत्पन्न एव विकसित कर लिया जाएगा, उतना अधिक वृद्धावस्था सुखमय एव सुसमायोजित ढग से व्यतीत होगी।

(६) वृद्धावस्था—यह पारिवारिक जीवन की महत्त्व की दृष्टि से बाल्यकाल के बाद दूसरी महत्त्वपूर्ण अवस्था है। इस अवस्था मे व्यक्ति को अपेक्षाकृत अधिक समायोजन क्षमता की आवश्यकता होती है। अब उसकी आवश्यकताओं की तीव्रता तो कम हो जाती है परन्तु उसे सुरक्षा एवं देखभाल की अपेक्षाकृत अधिक आवश्यकता अनुभव होती है। इस अवस्था में शारीरिक परिवर्तन, वातावरण की परिस्थितियों में परिवर्तन, मानवीय अन्तर्सम्बन्धो मे परिवर्तन आदि सभी परिवर्तनों के साथ समायोजन करना पड़ता है। यदि व्यक्ति मे आवश्यक समायोजन स्थापित करने की कुशलता है तथा वह स्वस्थ है तो परिवार के भौतिक वातावरण मे परिवर्तन हो जाने पर भी मानवीय सम्बन्ध स्वरूप एव सन्तोषजनक बने रहेंगे। यह तभी सम्भव हो सकता है, जबकि वृद्धावस्था आने से पूर्व ही व्यक्ति में व्यावसायिक एव कलात्मक रुचियो और कुशलताओं को पर्याप्त रूप से विकसित कर दिया जाए। इनके विकास होने से परिवार का तथा स्वय व्यक्ति का जीवन बड़ा ही सुख व सन्तोष प्रदान करने वाला होता। भारत में जहाँ सयुक्त परिवार प्रणाली प्रचलित है, वृद्धावस्था कभी-कभी परिवार के लिए एक गम्भीर समस्या बन जाती है। पारिवारिक मूल्यो व परिस्थितियों मे परिवर्तन हो जाने के कारण तथा वृद्धो के पूर्णत. निष्क्रिय बने रहने का दुष्परिणाम घर कलह का केन्द्र बन जाता है। परिवार के मानवीय सम्बन्ध सुसमायोजन के अभाव में सुमधुर एव आकर्षक नही रहते।

प्रबन्ध की प्रक्रिया की स्पष्ट व्याख्या करने से पूर्व पारिवारिक साधनों के विषय में जानना पूर्णतः प्रासंगिक है; क्योंकि गृह-प्रबन्ध की सम्पूर्ण प्रक्रिया इन्हीं से पूर्णतः नियंत्रित एवं निर्देशित होती है।

पारिवारिक साधन

पारिवारिक साधनों को प्रधानतः दो शीर्षकों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) **मानवीय साधन** (Human Resources)—इसके अन्तर्गत स्वाभाविक एवं अवाप्त दोनों ही प्रकार की योग्यताएँ एवं कुशलताएँ कार्य को प्रोत्साहित अथवा निरुत्साहित करने वाली अभिवृत्तियाँ, तथ्यपरक एवं अन्तर्सम्बन्ध विषयक ज्ञान तथा परिवार के सदस्यों की क्रियाएँ सम्पन्न करने की शक्ति सम्मिलित होती हैं।

(२) **भौतिक साधन** (*Physical Resources*)—इसके अन्तर्गत वे भौतिक साधन आते हैं जो परिवार के दैनिक जीवन में उपयोग करने के लिए उपलब्ध होते हैं। उदाहरणस्वरूप—समय, धन, वस्तुएँ एवं सम्पत्ति तथा समाज द्वारा प्रदत्त सुविधाएँ; जैसे—पुलिस संरक्षण, सड़कें, उद्यान, विद्यालय व कॉलेज, पुस्तकालय आदि।

प्रत्येक के परिवार के साधनों की प्रकृति एवं सीमा अन्य परिवारों से भिन्न होती है। उसे अपने स्वयं के उपलब्ध साधनों तथा परिस्थितियों के अनुकूल कार्य करना पड़ता है। कभी साधनों की पूर्ति में परिवर्तन हो जाता है। कुशल गृह-प्रबन्धकर्त्ता इन समस्त परिस्थितियों को ध्यान में रखकर गृह-प्रबन्ध करते हैं।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-व्यवस्था के मूलभूत तत्त्व कौन-कौन-से हैं ?

२. पारिवारिक सुख के लिए गृहिणी को किन बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए ?

३. गृह-व्यवस्था में आय-व्यय के सन्तुलन का क्या महत्त्व है ? गृहिणी को परिवार की आय-व्यय का सन्तुलन बनाए रखने के लिए क्या करना चाहिए ?

४. गृह-कार्य कुशलता से क्या अभिप्राय है ? इसके प्रमुख आधारों का वर्णन कीजिए।

५. पारिवारिक जीवन-चक्र के प्रमुख सोपान कौन-कौन-से हैं ? प्रत्येक अवस्था की विशेषताएँ बताइए ?

६. पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के मानवीय और भौतिक साधन कौन-कौन-से हैं ? गृहिणी के लिए इन साधनों की जानकारी क्यों आवश्यक है ?

अध्याय ६

गृह-व्यवस्था की प्रक्रिया

गृह-व्यवस्था पारिवारिक जीवन का प्रशासनिक पक्ष है। इसी के द्वारा निर्माण की प्रक्रिया गतिशील रहती है। यह एक गत्यात्मक एवं परिवर्तनशील प्रक्रिया है। इसके अन्तर्गत प्रमुखतः निर्णय करना तथा तदनुसार क्रिया करना सम्मिलित है। यह गृह कार्यों व उत्तरदायित्वों को सम्पन्न करने का साधन है। गृह-व्यवस्था वस्तुतः वह सुनियोजित एवं सजीव क्रिया है जो परिवार के मूल्यों के पोषण एवं आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। इसमें जीवन की परिस्थितियों का सामना करने, समस्याओं का समाधान करने तथा परिवार में उत्पन्न अन्तर्द्वन्द्वों को समाप्त करने, में परिवार से सम्बन्धित उपलब्ध आर्थिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, शारीरिक, आध्यात्मिक तथा यान्त्रिक ज्ञान का उपयोग किया जाता है। संक्षेप में गृह-व्यवस्था पारिवारिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से किए गए पारिवारिक साधनों के आयोजन, नियन्त्रण एवं मूल्यांकन है। उपलब्ध साधनों से निर्धारित लक्ष्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया जा रहा है यह अधिकांशतः पति-पत्नी की प्रबन्ध करने की योग्यता, रुचि तथा नेतृत्व करने की क्षमता पर निर्भर करता है।

अतः गृह-व्यवस्था एक निरन्तर तथा विकासशील प्रक्रिया है, जिसमें परिवार के सभी सदस्यों की योग्यता व कुशलता के अनुसार योजनाबद्ध कार्य दिया जाता है। योजना तथा उसके क्रियान्वयन का साथ-साथ मूल्यांकन भी किया जाता है। गृह-व्यवस्था सम्बन्धी प्रक्रिया का विस्तृत वर्णन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

शब्द 'प्रक्रिया' बड़ा ही नमनीय रूप में परिभाषित शब्द है। इसकी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है कि इसके अन्तर्गत "क्रियाओं की ऐसी शृंखला सम्मिलित है जो उद्देश्यों की निष्पत्ति (Accomplishment) की ओर अग्रसित करती है।"[1]

---

1. W. H. Newman and C. E. Summer, Jar, The Process of Management (New York. Prentice—Hall. 1961), p. 9.

गृह-व्यवस्था की प्रक्रिया में एक दूसरे पर आश्रित चार सोपान हैं—आयोजन, योजना को क्रियान्वित करते समय इसे नियंत्रित करना, तथा भावी योजना की प्रस्तावना के रूप में परिणामों का मूल्यांकन करना, निर्णय करना। व्यवस्थापन की प्रक्रिया के चारों सोपान मानसिक प्रक्रिया की ही विभिन्न अवस्थाएँ हैं। नीचे की पंक्तियों में इन चारों चरणों की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है—

१. आयोजन—व्यवस्थापन के तीन सोपानों में से आयोजन का सोपान सर्वाधिक मान्यता-प्राप्त एवं सर्वाधिक प्राचीन है। अच्छे आयोजन के परिणाम लाभ-प्रद एवं अच्छे होते हैं। आयोजन इसलिए अधिक महत्त्वपूर्ण है कि कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व ही इसे सम्पन्न कर लिया जाता है। एक नाटकीय पूर्वाभ्यास द्वारा कोई भी व्यक्ति विभिन्न प्रक्रियाओं के परिणामों का अनुमान लगा सकता है तथा तदनुसार सर्वाधिक सन्तोषप्रद निराकरण खोज सकता है। इस प्रकार कार्य प्रारम्भ करने के बाद अनिश्चितता की स्थिति में किए जाने वाले समय व शक्ति के अपव्यय की सम्भावना को समाप्त किया जा सकता है। पूर्व-आयोजन करने के फलस्वरूप कार्य को पूर्ण इकाई के रूप में देखा जा सकता है। जो कार्यकर्ता प्रारम्भ से ही अपने कार्य में रुचि लेता है, जो यह समझता है कि उसे क्या करना है व कैसे करता है, वह अपने लक्ष्यों की प्राप्ति सरलता व शीघ्रता से कर लेता है।

आयोजन के द्वारा परिवार ऐसी विधियों को खोज निकालता है जिनका अनुसरण कर सीमित साधनों का उपयोग करके पारिवारिक जीवन के लक्ष्यों को अधिक सफलता एवं मितव्ययितापूर्वक प्राप्त कर सकता है। यदि लक्ष्य को प्राप्त करने का मार्ग स्पष्ट व सरल है तो आयोजन करने में अधिक कठिनाई नहीं होती परन्तु यदि लक्ष्यों को प्राप्त करने के मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ एवं अवरोध होते हैं तथा पूर्व अनुभव आयोजन में अधिक सहायक नहीं हो रहा है तो आयोजन करने में अधिक कठिनाई होती है। इसके लिए अधिक ज्ञान तथा अन्य व्यक्तियों से परामर्श प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। आयोजन का अन्ततः वास्तव में निर्णय करने का ही कार्य है। इसमें योजना बनाने वाले को विचारणा, स्मरण, निरीक्षण, तर्कना तथा कल्पना आदि मानसिक शक्तियों का प्रयोग करना पड़ता है। आयोजन में स्मरण-शक्ति के माध्यम से अतीत के अनुभवों का उपयोग किया जाता है, निरीक्षण के द्वारा सीखे हुए ज्ञान का उपयोग होता है, तर्कना के माध्यम से तथ्यों के मध्य सम्बन्धों को देखा जाता है तथा कल्पना के माध्यम से तथ्यों को नवीन सम्बन्धों के संदर्भ में व्यवस्थित किया जाता है। ये मानसिक शक्तियाँ जितनी अधिक विकसित होती हैं, आयोजन उतना ही अधिक यथार्थ एवं सरल होता जाता है।

२. योजना के क्रियान्वयन का नियन्त्रण—व्यवस्थापन के तीन सोपानों में से इस सोपान की ओर सबसे कम ध्यान दिया जाता रहा है। क्योंकि अधिकांशतः घरों में जो

योजना बनाने वाला होता है, साधारणतः वही उसे क्रियान्वित करने वाला होता है। कुछ व्यक्ति इस सोपान को केवल योजना के क्रियान्वयन का सोपान ही मानते है। वे इस तथ्य को भूल जाते है कि क्रियान्वयन के समय कुछ ऐसे निर्णय भी लेने पड़ते हैं जिनके परिणामस्वरूप योजना मे कुछ परिवर्तन भी करने पड़ सकते हैं। इस क्षेत्र मे कार्य करने वाले विशेषज्ञ यदि नियन्त्रण के सोपान को भली-भाँति नही समझ पाए हैं तो इसमे आश्चर्य नही कि गृहिणियो द्वारा इसका उपयोग व्यापक रूप मे जान-बूझकर नही किया गया है।

नियन्त्रण योजनाओं को क्रियान्वित करने, उन्हे सफलतापूर्वक पूर्ण करने तथा साधनो को सुरक्षित करने में सहायता प्रदान करता है। नियन्त्रण की प्रक्रिया में पारिवारिक लक्ष्यों की प्राप्ति-हेतु नेतृत्व एव परिवार के समूह मे मिल-जुल कर कार्य करने दोनो की ही आवश्यकता होती है। इसका अभिप्राय है कि एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों का छोटा-सा समूह सभी के जीवन पर हावी नही होगा, अपितु एक सदस्य दूसरो के साथ मिल-जुलकर इस प्रकार योजना बनायेगा कि उपलब्ध साधनों का उपयोग अत्यधिक कुशलतापूर्वक किया जा सके तथा यदि आवश्यकता अनुभव हो तो योजना को परिवर्तित किया जा सकें। इसका अर्थ यह भी है कि यदि आवश्यकता हो तो अधिक महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कुछ समय के लिए कुछ आकांक्षाओं व सन्तुष्टियों का त्याग भी करना पड़ सकता है।

नियन्त्रण में सोचने व आयोजन करने सम्बन्धी नमनीयता या लचीलापन होना चाहिए, अपरिवर्तनशीलता की आवश्यकता नही है।

जब किसी योजना को क्रियान्वित किया जाता है तो सामान्यत. आयोजन के सोपान मे किये गए निर्णयो को विस्तृत करने की आवश्यकता होती है। जब क्रियान्वयन का अधिकार किसी अन्य व्यक्ति को दिया जाता है तब तो विशेष रूप से इसकी आवश्यकता होती है। निर्णयों का विस्तृतीकरण नियन्त्रण के सोपान की अवस्थाओं के अन्तर्गत आता है। नियन्त्रण की प्रमुख तीन अवस्थाएँ हैं—(१) बल देना (Energizing) (२) निरीक्षण (Checking) (३) समायोजन (Adjusting)।

(१) क्रियान्वयन को बल देना या कार्य को प्रारम्भ करके उसे बनाए रखना व्यवस्थान की एक महत्त्वपूर्ण अवस्था मानी जाती है। यह तथ्य पूर्णतः सत्य है कि व्यक्तियो मे योजना को प्रारम्भ करके तदनुसार कार्य कराते रहने की योग्यता मे भिन्नता पाई जाती है। जिस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु व्यक्ति कार्य कर रहा है, उस लक्ष्य की सबलता या निर्बलता क्रिया को शक्ति प्रदान करने की प्रक्रिया के पीछे छिपी होती है। क्रियान्वयन को शक्ति प्रदान करने के लिए कतिपय माध्यमिक लक्ष्यो का निर्धारण किया जाना चाहिए, क्योंकि उनसे शीघ्र निष्पादन का अवसर मिल सकेगा। परिणामतः उसके साथ-साथ सन्तोष भी प्राप्त होगा।

(२) योजना के क्रियान्वयन के नियन्त्रण की दूसरी अवस्था योजना

का निरीक्षण करना है। यह क्रिया कई प्रकार से स्वत: ही होती रहती है। उदाहरणार्थ प्राय: प्रत्येक घर में रसोईघर की घड़ी होती है। क्यों ? भोजन बनाने में समय की योजनाओं को नियन्त्रित करने के लिए, यह जानने के लिए कि आलुओं को कब पकाने रखा जाए व कब उतारा जाए। रसोइया पकाई हुई वस्तुओं की गुणात्मकता का भी निरीक्षण करता है। निरीक्षण के आधार के रूप में कुछ मानक अथवा मध्यवर्ती लक्ष्यों का होना नितान्त आवश्यक है। निरीक्षण हेतु ध्यान को आकर्षित करने के लिए प्रविधियों (devices) का होना आवश्यक है। उदाहरणार्थ, ऊपर जिस घड़ी का जिक्र किया गया है वह ऐसे व्यक्ति के लिए बिल्कुल ही अनावश्यक सिद्ध होगी, जिसे यह ज्ञात नहीं है कि आलू को पकाने के लिए सामान्यत: कितना समय चाहिए।

(३) नियन्त्रण के सोपान की तीसरी अवस्था, यदि आवश्यक हो तो, योजना का समायोजन करना, इस प्रकार नवीन निर्णयों का निर्धारण करना है। स्थितियाँ बदल सकती हैं। जैसे दोपहर के भोजन के लिए सिके हुए आलू का आयोजन किया गया है। गृहिणी को जितने समय की आशा थी उतना समय भोजन बनाने के लिए नहीं मिल पाया तो सिके हुए आलू के स्थान पर उबले हुए आलू का प्रयोग करने का निर्णय कर लेती है। परिस्थिति बदल जाने की दशा में नवीन निर्णय लेने पड़ते हैं। कभी-कभी स्थितियाँ यथावत रहती हैं परन्तु योजना में भी दोष हो सकता है। तब हमें योजना में सुधार कर अपने निर्णयों में परिवर्तन करना पड़ता है।

३. मूल्यांकन (Evaluation)—व्यवस्थापन का सामान्य रूप से स्वीकृत सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध साधनों से अधिकाधिक सन्तोष प्रदान करने वाले परिणामों को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। इसका परीक्षण करने के लिए व्यवस्थापन प्रक्रिया का तीसरा सोपान मूल्यांकन है। नियंत्रण की अपेक्षा इस सोपान का व्यवस्थापन प्रक्रिया में अधिक व्यापकता से उपयोग किया जाता है परन्तु आयोजन के सोपान की अपेक्षा यह कम प्रयुक्त किया जाता है।

इस सोपान में पूर्व के दोनों सोपानों—आयोजन और योजना के क्रियान्वयन के नियन्त्रण पर दृष्टिपात इसलिए किया जाता है कि निर्पेक्ष अथवा सापेक्ष परिस्थितियों में कार्य अच्छी तरह किया गया या दोषपूर्ण ढंग से। साथ ही यह भी निर्धारित किया जाता है कि कितनी अच्छी तरह से कार्य किया गया है। मूल्यांकन नियन्त्रण के सोपान की निरीक्षण की अवस्था के समान ही है, परन्तु निरीक्षण में क्रियान्वयन की स्थिति में पग-पग पर प्रत्येक चरण का मूल्यांकन किया जाता है, व्यवस्थापन प्रक्रिया के पृथक् सोपान के रूप में मूल्यांकन के भविष्य में अच्छे व कुशल व्यवस्थापन के उद्देश्य से जो क्रिया सम्पन्न हो चुकी है, उस सबका पूर्ण इकाई के रूप में सिंहावलोकन किया जाता है।

लैविन[1] के अनुसार मूल्याकन के चार प्रयोजन होते हैं—(१) यह देखना कि कितनी उपलब्धि हो चुकी है, (२) आगामी योजना हेतु आधार का कार्य करना, (३) पूरी योजना को संशोधित करने हेतु आधार का कार्य करना, तथा (४) नवीन सूझ प्राप्त करना।

उक्त प्रयोजनों से मूल्याकन का महत्व स्पष्ट हो जाता है। मूल्याकन से किसी स्थिति को नवीन ढग से देखने तथा स्वय को एव अन्य व्यक्तियों को परम्परागत ढंग से सोचने के स्थान पर नवीन ढग से सोचने में सहायता मिलती है। किसी परिस्थिति के विषय में योजना बनाते समय जैसा सोचा गया था, उससे वह बुरी भी हो सकती है और अच्छी भी। यदि विभिन्न साधनों के आधार पर मूल्याकन किया जाता है व उसका निर्वाचन किया जाता है तो हम स्थितियों को उस दृष्टि से अधिक अच्छी तरह देख सकते हैं जैसी कि वे दूसरों को दिखाई देती हैं।

मूल्याकन का मौलिक आधार वे मूल्य, लक्ष्य और स्तर होते हैं जिन्हे प्रत्येक व्यक्ति जाने-अनजाने में प्राप्त कर चुका होता है। सुनिश्चित लक्ष्य ही मूल्यांकन की दृष्टि से उपयोगी होते हैं।
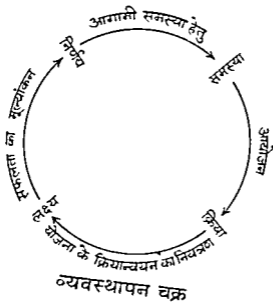
व्यवस्थापन चक्र

Kurt Dewin. 'Group Decision and social change,' in E. E. Maccoby, T. M. New comb and E. L. Hartley, Readings in Social Psychology,, 3rd ed. (New york, Holt, Rinehart and winston, 1858), pp. 200-201.

४. *निर्णय*—जब किसी समस्या का निराकरण करना हो अथवा किसी विकल्प का चयन करना हो तो व्यवस्थापन की प्रक्रिया सम्पन्न होती है। व्यवस्थापन की प्रक्रिया के विभिन्न सोपान यथार्थ में निर्णयों की शृङ्खला मात्र है जिसमें सोपान अन्ततः निर्णय पर ही आधारित होता है। ये निर्णय परिवर्तन को जन्म देते हैं।

निर्णय करना अथवा विकल्प का चयन करना क्रिया के विभिन्न क्रमों में से किसी एक क्रिया को चुनना अथवा किसी को भी न चुना ही है। निर्णयों की पृष्ठभूमि में जीवन-मूल्य उत्प्रेरक का कार्य करते हैं साथ ही साथ निर्णय मूल्यों को क्रियान्वित करते हैं। "निर्णय करने में उन उद्देश्यों का अतिस्तत्व निहित है जिनके प्रति निर्णयों का प्रतिस्थापन किया गया है।"[1] एक निर्णय करने की अपेक्षा व्यवस्था की प्रक्रिया कहीं अधिक जटिल है। इसके प्रत्येक सोपान में अनेक अन्तर्सम्बन्धित निर्णयों की आवश्यकता होती है। इस प्रकार निर्णय करना व्यवस्था का केन्द्र-बिन्दु है। एस्लर क्रू ब्रेटन के अनुसार निर्णय व्यवस्था की प्रक्रिया में सर्वाधिक छोटी इकाई है परन्तु यह भौतिक विज्ञान में अणु के समान है।

निर्णय करने की प्रक्रिया—निर्णय करने की विधि नवीनतम अनुसन्धान का विषय है। निर्णय करने की प्रक्रिया के पाँच प्रमुख अंग हैं—

(१) निर्णय की जाने वाली समस्या की परिभाषा करना।
(२) वैकल्पिक हलों की खोज करना।
(३) विकल्पों के सन्दर्भ में सोचना।
(४) एक विकल्प का चयन करना।
(५) निर्णय करने के उत्तरदायित्व को स्वीकार करना।

(१) **समस्या की व्याख्या करना**—अधिकांशतः ऐसा देखा गया है कि लोग क्या निश्चित किया जा रहा है यह जाने बिना निर्णय ले लेते हैं। जिस समस्या को हल करने के लिए निर्णय लिया जाना है वह निर्णय कर्ता के मस्तिष्क में पूर्णतः स्पष्ट होना चाहिए। यदि यह प्रारम्भिक बात ही स्पष्ट नहीं है तो निर्णय करने के आगामी सोपान सन्तोषजनक विधि से क्रियान्वित नहीं हो सकते।

(२) **विकल्पों की खोज**—व्यवस्था करने वाले व्यक्तियों को विकल्प ढूंढने तथा प्रत्येक विकल्प के परिणामों को जानने हेतु अत्यधिक ज्ञान की आवश्यकता होती है। यह ज्ञान एक या अधिक साधनों से बिल्कुल विशिष्ट रूप से सम्बन्धित होना चाहिए तथा उपलब्ध ज्ञान की मात्रा प्रत्येक साधन की भिन्न-भिन्न होती है। कदाचित् सबसे अधिक जानकारी जो प्राप्त की जा सकती है, वह धन अथवा भोजन से तथा सबसे कम 'समय' से सम्बन्धित है।

---

1. D. Woods Thomes, "*Sociological Aspects of the Decision—Making Process.*" Journal of Farm Economics, 1955-1956, p. 1115.

जब व्यक्ति विकल्पो की खोज करता है तो सिद्धान्ततः उसे समस्त सम्भावनाओं से विज्ञ होना चाहिए। परन्तु समय और अनुभव सीमित होने के कारण ऐसा बहुत कम ही होता है। लोग निर्णय करने के इस सोपान की ओर कुछ क्षेत्रों में ही अधिक सचेत रहते हैं। उदाहरणार्थ जब खरीददारी विशेषकर स्थायी व मूल्यवान वस्तुओं को क्रय करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखते है।

(३) **समस्त विकल्पो के सम्बन्ध मे विचार करना**—इस अवस्था में मस्तिष्क समस्त विकल्पों के परिणामों के विषय मे विचार करता रहता है। यह अवस्था बड़ी कष्ट दायक होती है। वैसे तो निर्णयकर्ता को समस्त परिणामो के विषय मे पूर्व मे ही सोच लेना चाहिए परन्तु व्यवहारिक दृष्टि से ऐसा कर सकना सम्भव नहीं है। कतिपय विकल्पों के भावी परिणामो के विषय में पर्याप्त चिन्तन कर लेना चाहिए। जॉन ड्यूवी ने निर्णय करने के इस सोपान को 'नाटकीय पूर्वाभ्यास' बताया। इसका तात्पर्य है कि प्रत्येक सम्भावित विकल्प का काल्पनिक क्रियाचयन कर लेना चाहिए। उसकी अच्छाइयों और बुराइयो के सम्बन्ध में भलीप्रकार विचार कर लेना चाहिए।

(४) **विकल्प का चयन**—निर्णय करने की प्रक्रिया का चौथा सोपान कई विकल्पों में से एक विकल्प का चयन करना है। वास्तव में समस्त ज्ञात विकल्पो व उनके परिणामों पर एक साथ ध्यान केन्द्रित कर सकना प्राय असम्भव ही होता है। एक समय में मस्तिष्क सीमित मात्रा में ही वस्तुओं को ग्रहण कर सकता है, कदाचित ५ या ६ से अधिक नहीं। इसलिए मस्तिष्क के समक्ष कम मात्रा में ही विकल्प होने चाहिए।

मस्तिष्क के समक्ष कौन-कौन से विकल्प प्रस्तुत किए गए हैं व कौन-से चुने गए हैं यह संयोग के ऊपर बहुत कुछ निर्भर करता है। संयोग का तत्व बाह्य उत्तेजक पर निर्भर रहता है।

(५) **निर्णय के उत्तरदायित्व को स्वीकार करना**—यद्यपि यह सोपान निर्णय करने की प्रक्रिया में सदैव सम्मिलित नहीं होता, तथापि यह एक आधारीय सोपान है। यह सोपान निर्णय करने के कार्य को व्यवस्थापन की अधिक जटिल प्रक्रिया में सम्मिलित करता है।

किए जाने वाले निर्णयों के विषय में, विशेषकर विकल्पों के खोजने व उनके विषय मे चिन्तन करने के लिए ज्ञान का होना परमावश्यक है। किसी विकल्प-विशेष के चुनाव करने का जोखिम ज्ञान पर आधारित होना चाहिए।

पारिवारिक परिस्थितियों में अथवा अन्य सामूहिक जीवन में समस्त सम्बन्धियों के निर्णयो का विकास होता है। यह आवश्यक नहीं कि सामूहिक निर्णय उन निर्णयों से अच्छे ही हो परन्तु सामूहिक निर्णय को जनसमूह सरलता से और अधिक कुशलतापूर्वक क्रियान्वित करता है। यदि निर्णयों में द्वन्द्व

उत्पन्न हो गया हो तो इसका सर्वोत्तम हल यह है कि निर्णयों में एकीकरण किया जाय तथा मत भेदों को स्वीकार किया जाय।

निर्णय करने का सर्वोत्तम प्रशिक्षण देने हेतु व्यक्ति को निर्णय करने के अवसर प्रदान किए जायें। प्रारम्भ में निर्णय करने के अवसर ऐसी परिस्थितियों में प्रदान किये जायें जिन पर निर्णय-कर्ता का अधिकार हो। क्रमशः परिस्थितियों को सरल से जटिल व जटिल से जटिलतर व जटिलतम बनाते चले जाना चाहिए।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-व्यवस्था प्रक्रिया से क्या अभिप्राय है? इस प्रक्रिया का गृह-संचालन में क्या महत्त्व है।
२. गृह-व्यवस्था-प्रक्रिया के प्रमुख सोपान कौन-कौन-से हैं?
३. 'आयोजन का क्या अभिप्राय है'? इसका गृह-व्यवस्था में महत्त्व बताइए।
४. योजना के क्रियान्वयन के नियंत्रण से आप क्या समझते हैं? इसकी प्रमुख अवस्थाओं को स्पष्ट कीजिए।
५. आयोजन तथा उसके क्रियान्वयन में मूल्यांकन का क्या महत्त्व है?
६. गृह-व्यवस्था-प्रक्रिया में निर्णय का क्या महत्त्व है?
७. निर्णय-प्रक्रिया के प्रमुख अंग कौन-कौन-से हैं? प्रत्येक का स्पष्ट रूप से वर्णन कीजिए।

अध्याय ७

मानवीय आवश्यकताएँ

मानव की दैनिक जीवन सम्बन्धी अनेक आवश्यकताएँ होती हैं। वह उनकी पूर्ति करने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहता है। आर्थिक क्षेत्र मे आवश्यकताओ का अत्यधिक महत्त्व है। सीमित साधनो के युग मे सुखी एव सम्पन्न जीवन व्यतीत करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को आवश्यकताओं के प्रकार तथा सापेक्षिक महत्त्व को समझना नितान्त आवश्यक है। आवश्यकताओं के सम्बन्ध मे एक गृहिणी को जानकारी प्राप्त करना तो और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। परिवार की सुख एव समृद्धि गृहिणी के मितव्ययता एवं बुद्धिमता पूर्ण ढङ्ग से आर्थिक साधनो का उपयोग करने पर बहुत कुछ निर्भर करती है।

आवश्यकता का अर्थ—साधारण बोलचाल मे 'आवश्यकता' और 'इच्छा' प्रायः एक ही अर्थ में दोनो शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं परन्तु अर्थशास्त्र की दृष्टि से इनमें अन्तर है। मनुष्य की अनेक इच्छाएँ होती हैं परन्तु सभी इच्छाएँ पूर्ण नही की जा सकती *क्योंकि इच्छाओ को पूर्ण करने के साधन सीमित हैं।* वे इच्छाएँ जो कि व्यक्ति की आर्थिक सामर्थ्य के अनुकूल हैं, आवश्यकता की श्रेणी मे आ सकती हैं, उदाहरणस्वरूप, सौ रुपए प्रतिमास वेतन पाने वाले व्यक्ति की कार रखने की इच्छा आवश्यकता नही हो सकती परन्तु एक हजार मासिक वेतन पाने वाले अथवा किसी धनी व्यक्ति की कार रखने की इच्छा आवश्यकता हो सकती है। इस प्रकार आर्थिक सामर्थ्य के अनुकूल इच्छा ही आवश्यकता कही जा सकती है।

परन्तु किसी वस्तु की इच्छा होना व उसकी पूर्ति हेतु आर्थिक साधनो की पर्याप्तता ही आवश्यकता की आवश्यक बातें नही हैं। इन दोनों से अधिक महत्वपूर्ण तत्त्व 'तत्परता' है। यदि धनी व्यक्ति कार खरीदने के लिए पर्याप्त धन एव इच्छा

होते हुए भी कार क्रय करने के लिए धन का त्याग करने को तत्पर नहीं है तो यह उसकी 'आवश्यकता' नहीं कही जा सकती। वह केवल 'इच्छा' कहलाएगी। सारांशतः जब कोई 'इच्छा' प्रभावहीन एवं निष्क्रिय होती है तो उसे 'इच्छा' कहते हैं, परन्तु जब इच्छा प्रभावोत्पादक एवं सक्रिय होती है तो वह 'आवश्यकता' कहलाती है। आवश्यकता में इन तीन बातों का होना आवश्यक है—(१) किसी वस्तु की इच्छा होना, (२) इच्छा की पूर्ति के लिए पर्याप्त साधनों का होना, तथा (३) इच्छा को पूर्ण करने के लिए उपलब्ध साधनों का त्याग करने की तत्परता। अतः 'आवश्यकता' मनुष्य की उस इच्छा को कहते हैं जिसके पूरा करने के लिए उसके पास पर्याप्त साधन तथा शक्ति विद्यमान हो तथा उस साधन को इच्छा की तुष्टि में लगाने को तत्पर हो।

आवश्यकताएँ आर्थिक क्रियाओं की मूलाधार होती हैं। व्यक्ति की रहन-सहन के स्तर तथा उत्पादक कुशलता का निर्धारण ये ही करती हैं। मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानवीय आवश्यकताओं की संख्या एवं विविधता में अपूर्व वृद्धि हुई है। आवश्यकता की प्रकृति तथा तीव्रता को निर्धारित करने वाले प्रमुख तत्त्व निम्नलिखित हैं—

भौतिक तत्त्व—भौगोलिक तत्त्व किसी स्थान-विशेष पर रहने वाले व्यक्तियों की आवश्यकताओं के प्रकार एवं प्रकृति पर प्रभाव डालते हैं। शीत-प्रधान देशों में रहने वाले लोगों को शरीर की शीत से रक्षा करने के लिए वर्ष भर ऊनी वस्त्र पहनना नितान्त आवश्यक है, इसी प्रकार उन्हें गर्म तथा सक्रिय रहने के लिए मादक पेय का प्रयोग भी आवश्यक है परन्तु भारत जैसे गर्म देश में सूती वस्त्र ही पर्याप्त होते हैं। मादक पेय तो ऐसे देशों में अनावश्यक तथा हानिप्रद सिद्ध होते हैं।

शरीर रचना सम्बन्धी तत्त्व—आवश्यकताओं के निर्धारण में शारीरिक रचना भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालती है। सामान्यतः व्यक्ति को स्वस्थ, सशक्त एवं हृष्ट-पुष्ट बनने के लिए बहुत पोषक आहार की आवश्यकता होती है परन्तु यदि कोई मोटा व्यक्ति सशक्त, स्वस्थ होना चाहता है तो उसे भिन्न प्रकार का आहार चाहिए। उसे अपने आहार से ऐसे सभी तत्त्वों को कम करना होगा जो कि उसके मोटेपन को बढ़ाने में योग देते हैं।

नैतिक तत्त्व—जो व्यक्ति नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास को जीवन में अधिक महत्त्व देते हैं, उनका जीवन सरल एवं सात्त्विक होगा। उनकी आवश्यकताएँ अपेक्षाकृत कम होंगी परन्तु विषयासक्त व्यक्ति जटिल एवं अनेक आवश्यकताओं के मध्य आनन्द का अनुभव करता है।

सामाजिक तत्त्व—कुछ आवश्यकताएँ ऐसी भी होती हैं जिनकी अनिवार्यता व्यक्तिगत जीवन के कारण नहीं वरन् सामाजिक जीवन के कारण होती है। मनुष्य

सामाजिक प्राणी है। उसे समाज के निर्धारित मानदण्डों के अनुरूप जीवन व्यतीत करना पड़ता है—उदाहरण के लिए; प्रत्येक समाज के विवाह, अन्तिम संस्कार आदि की परम्पराएँ व रीतिरिवाज विशिष्ट प्रकार के होते हैं। समाज के प्रत्येक सदस्य को इनको विधिवत् मान्यता देनी पड़ती है। समाज में प्रचलित खान-पान वेश-भूषा आदि का परिपालन करने की आवश्यकता समाज द्वारा ही निर्धारित की जाती है।

5 आर्थिक तत्त्व—मानवीय आवश्यकताओं के निर्धारण में आर्थिक तत्त्व अत्यधिक प्रभाव डालता है। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन की आवश्यकता होती है। स्वाभाविक है, जिन व्यक्तियों के पास पर्याप्त धन होगा उनकी आवश्यकताएँ निर्धन व्यक्ति की अपेक्षा अधिक होगी। निर्धन व्यक्ति तो आधारीय आवश्यकताओं की भी पूर्ति बड़ी कठिनाई से कर पाता है परन्तु धनी व्यक्ति की आवश्यकताएँ अनेक होती हैं। वह आरामदायक एवं विलासितापूर्ण आवश्यकताओं पर भी धन व्यय कर सकता है। आज के व्यावहारिक जीवन ने स्पष्ट कर दिया है कि आर्थिक सम्पन्नता विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं को जन्म देती हैं।

6 वर्तमान फैशन, आदतें तथा रीतिरिवाज सम्बन्धी तत्त्व—आजकल व्यक्ति के जीवन-स्तर में दिन-प्रतिदिन परिवर्तन हो रहा है। इस परिवर्तन का एक महत्त्वपूर्ण कारण नए-नए फैशन हैं। समाज में जो कोई नया फैशन प्रचलन में आया अधिकाश लोग उसका अनुकरण करने लगते हैं। इस प्रकार नई-नई आवश्यकताएँ पैदा होती हैं। व्यक्ति की व्यक्तिगत आदतें भी उसकी आवश्यकता के निर्धारण में महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालती हैं। प्रारम्भ से मनुष्य की रहन-सहन व खान-पान सम्बन्धी जैसी आदतें पड़ जाती हैं, वे प्रायः जीवन-भर बनी रहती हैं। उनसे मुक्ति पाना अत्यधिक दूभर होता है।

मानवीय आवश्यकताओं की विशेषताएँ

मनुष्य की अनेक आवश्यकताएँ होती हैं। विभिन्न युगों अथवा विभिन्न देशों में रहने वाले व्यक्तियों की आवश्यकताएँ समान नहीं होतीं। भौगोलिक तथ्य, सभ्यता के विकास का क्रम तथा सामाजिक व्यवस्था उसकी आवश्यकताओं में विविधता उत्पन्न करते रहते हैं परन्तु विविधता होते हुए भी मानवीय आवश्यकताओं में कुछ समान लक्षण पाए जाते हैं, वे लक्षण निम्नानुसार हैं—

(१) आवश्यकताएँ असीमित होती हैं—मानव स्वभावतः प्रगतिशील प्राणी है। जैसे-जैसे वह प्रगति करता जाता है, वैसे ही वैसे उसका जीवन स्तर समुन्नत होता जाता है। परिणामतः उसकी आवश्यकताएँ बढ़ती जाती हैं। आज के वैज्ञानिक युग में उसकी आवश्यकताएँ इतनी अधिक बढ़ गई हैं कि उन सभी को पूर्ण करना असम्भव हो गया है। आर्थिक सम्पन्नता के साथ-साथ आवश्यकताएँ बढ़ती जा रही हैं। वह एक आवश्यकता को पूर्ण कर भी नहीं पाता तब तक दूसरी आवश्यकता सामने आ खड़ी

होती है। आवश्यकताओं का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। आवश्यकताओं की संख्या एवं प्रकृति दिनोंदिन बढ़ती रहती है।

(२) **किसी आवश्यकता-विशेष को सन्तुष्ट किया जा सकता है**—सामान्यतः आवश्यकताएँ संख्यात्मक दृष्टि से असीमित होती हैं व सभी को तृप्त नहीं किया जा सकता। परन्तु किसी मनुष्य की आवश्यकता विशेष को सन्तुष्ट किया जा सकता है। उदाहरणस्वरूप भूखे मनुष्य को एक के बाद एक रोटी देते जाइए। इस प्रकार वह ज्यों-ज्यों रोटी खाता जाएगा त्यों-त्यों उसकी भूख कम होती जाएगी। कुछ रोटियाँ खाने के पश्चात् एक ऐसी स्थिति आएगी कि उसकी भूख मिट जाएगी और उसे रोटी की आवश्यकता बिल्कुल भी नहीं रहेगी। यही दशा प्रत्येक मानव-आवश्यकता की होती है। आवश्यक वस्तु की कतिपय इकाइयाँ उपभोग करने के पश्चात् किसी आवश्यकता-विशेष को सन्तुष्ट किया जा सकता है।

(३) **आवश्यकताएँ आवर्तक होती हैं**—यह सत्य है कि किसी एक आवश्यकता को समय-विशेष पर पूर्णतः तृप्त किया जा सकता है परन्तु यह तथ्य भी उपेक्षनीय नहीं है कि समय-विशेष पर सन्तुष्ट की गई आवश्यकता कुछ समय व्यतीत होने पर पुनः अनुभव होने लगती है। भूखा मनुष्य कतिपय रोटियाँ खाकर अपनी क्षुधा को शान्त कर लेता है परन्तु कुछ घण्टे बाद ही पुनः वह भूख का अनुभव करने लगता है। यह बात प्रायः सभी आवश्यकताओं के सम्बन्ध में सत्य है।

(४) **आवश्यकताओं में आपस में प्रतिस्पर्धा होती है**—आवश्यकताएँ अनेक होने के कारण उनमें प्रतिस्पर्द्धा होती है। व्यक्ति के साधन सीमित होते हैं, वह किसी आवश्यकता-विशेष को ही सन्तुष्ट करने के लिए चुनता है। उदाहरणस्वरूप यदि किसी विद्यार्थी के पास पाँच रुपये हैं वह इनका उपयोग कई प्रकार से कर सकता है। पुस्तक खरीद सकता है, कपड़ा बनवा सकता है, मिठाई खा सकता है, सिनेमा देख सकता है, बैडमिन्टन रैकिट खरीद सकता है, आदि-आदि। इन सभी वस्तुओं में आपस में प्रतियोगिता होगी। वह उसी वस्तु पर धन व्यय करेगा जिसकी उपयोगिता सबसे अधिक होगी।

(५) **आवश्यकताओं की तीव्रता भिन्न-भिन्न होती है**—वस्तुतः आवश्यकताएँ प्रतिस्पर्धी होती हैं परन्तु उन सभी की तीव्रता समान रूप से अनुभव नहीं होती। मनुष्यों को भिन्न-भिन्न समय पर भिन्न-भिन्न आवश्यकताओं की तीव्रता भिन्न-भिन्न अनुभव होती है। बुद्धिमान मनुष्य तीव्रतम आवश्यकता की पूर्ति सर्वप्रथम करता है। भूखा व्यक्ति भोजन की आवश्यकता की पूर्ति के पश्चात् ही अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा।

(६) **आवश्यकताएँ पूरक भी होती हैं**—कुछ आवश्यकताएँ ऐसी होती हैं जिनकी पूर्ति सामूहिक या पारस्परिक होती है। समूह की केवल एक वस्तु आवश्यकता को पूर्ण रूप से तृप्त नहीं कर सकती। उसकी तृप्ति के लिए समूह की समस्त वस्तुओं का उपभोग आवश्यक है। उदाहरण के लिए, बिना स्याही के फाउन्टेन पैन, बिना

पेंट्रोल के कार, बिना घोड़े के तांगा, बिना दूध के चाय की आवश्यकता की पूर्ति नहीं की जा सकती। स्याही, पेंट्रोल, घोड़ा तथा दूध, ये पूरक आवश्यकताएँ हैं।

(७) कुछ आवश्यकताएँ वैकल्पिक होती हैं—कुछ आवश्यकताएँ ऐसी भी होती हैं जिनकी पूर्ति एक से अधिक वस्तुओं से लगभग समान रूप से हो जाती है। इन कई वस्तुओं में से यदि कोई एक भी घर में उपलब्ध है तो आवश्यकता की पूर्ति हो सकती है। उदाहरणस्वरूप, चाय की आवश्यकता को कॉफी अथवा कोको से, प्यास को लस्सी, लेमन अथवा शर्बत से तृप्त किया जा सकता है। रात्रि में प्रकाश प्राप्त करने के लिए मिट्टी के तेल का लैम्प, मोमबत्ती अथवा बिजली का प्रयोग किया जा सकता है। अतः स्पष्ट है कि कुछ आवश्यकताएँ वैकल्पिक होती हैं।

(८) आवश्यकताएँ आदत में बदल जाती हैं—जब व्यक्ति अपनी प्रमुख आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए विभिन्न वस्तुओं का उपभोग बार-बार करता है तो वे वस्तुएँ उनके जीवन का अंग बन जाती है। वह उनका इतना अभ्यस्त हो जाता है कि उनके उपभोग के अभाव में उसे कष्ट होता है यहाँ तक कि उसकी शक्ति, योग्यता एवं कार्य-क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, उदाहरण के लिए अच्छा भोजन, फर्नीचर, पान, सिगरेट का उपभोग करने का आदी मनुष्य इन्हें कठिनाई से ही छोड़ पाता है।

(९) कुछ आवश्यकताएँ सामाजिक रीति-रिवाजों का परिणाम होती हैं—मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसे सामाजिक रीति-रिवाजों का पालन करना अनिवार्य होता है। उसकी अनेक आवश्यकताएँ सामाजिक परम्पराओं का ही परिणाम है। साधारणतः व्यक्ति का खान-पान, पोशाक, मनोरंजन आदि उसके परिवार में प्रचलित मानदण्डों द्वारा निर्धारित होते हैं। हमारे देश में व्यक्ति को विवाह, मृत्यु आदि अवसरों पर अनिच्छा होते हुए भी परम्पराओं के अन्तर्गत धन व्यय करना ही पड़ता है।

(१०) वर्तमान आवश्यकताएँ भविष्य की आवश्यकताओं से अधिक तीव्र प्रतीत होती हैं—अधिकांशतः व्यक्ति तात्कालिक सन्तुष्टि के लिए उपभोग करता है। वर्तमान निश्चित है। उसका प्रभाव तत्काल ही उसके जीवन पर पड़ता है। भविष्य अनिश्चित है। उसका प्रभाव उसके जीवन पर आगे चलकर ही पड़ सकता है। इसलिए वर्तमान आवश्यकताएँ व्यक्ति को अधिक तीव्र प्रतीत होती हैं तथा उनकी पूर्ति हेतु वह सर्वप्रथम उद्यत होता है।

(११) ज्ञान से आवश्यकताओं में वृद्धि होती है—जैसे-जैसे व्यक्ति नए-नए आविष्कार करता जाता है वैसे उसकी आवश्यकताएँ भी बढ़ती व बदलती जाती हैं; उदाहरण के लिए मोटरकार का आविष्कार होने से पूर्व धनी लोग घोड़ागाड़ी से ही सन्तुष्ट थे परन्तु इस आविष्कार ने मोटर-कार को उनकी आवश्यकता बना दिया। इसी प्रकार रेडियो, टेलीविजन, टेरालिन आदि ज्ञान-वृद्धि के कारण ही आवश्यकता की श्रेणी में आ गई हैं।

आवश्यकताओं का वर्गीकरण

आवश्यकताओं की विशेषताओं के अन्तर्गत एक यह तथ्य भी सामने आया कि आवश्यकताओं की तीव्रता भिन्न-भिन्न होती है। कुछ आवश्यकताएँ इतनी तीव्रता से अनुभव होती हैं कि उनकी पूर्ति तत्काल ही की जाती है, कुछ की तीव्रता अपेक्षाकृत कम होती है। उनकी पूर्ति को कुछ समय के लिए स्थगित किया जा सकता है। तीव्रता के आधार पर ही अर्थशास्त्रियों ने आवश्यकताओं का वर्गीकरण किया है। इस दृष्टि से आवश्यकताएँ तीन प्रकार की होती हैं : (१) आवश्यक आवश्यकताएँ, (२) आरामदायक आवश्यकताएँ, (३) विलासिता सम्बन्धी आवश्यकताएँ।

(१) आवश्यक आवश्यकताएं (Necessaries)—ये आवश्यकताएँ प्रारम्भिक एवं आधारी होती हैं। इनकी सन्तुष्टि न होने पर अत्यधिक कष्ट होता है। इनके तीन उपभेद होते हैं—(अ) जीवनरक्षक आवश्यकताएं, (ब) कार्य-कुशलता रक्षक आवश्यकताएं, (स) प्रतिष्ठा रक्षक आवश्यकताएँ।

(अ) जीवन रक्षक आवश्यकताएं (Necessaries for Existence)—इनकी पूर्ति मानव का अस्तित्व बनाए रखने के लिए आवश्यक है। इनके अन्तर्गत भोजन, जल, वस्त्र, मकान सम्मिलित होते हैं।

(ब) कार्य-कुशलता रक्षक आवश्यकताएं (Necessaries for Efficiency)—मनुष्य की कार्य-कुशलता में वृद्धि करने के लिए इन आवश्यकताओं की पूर्ति अनिवार्य होती है। मोरलैण्ड ने इस दृष्टि से निम्नलिखित आवश्यक वस्तुएं बताई हैं—

(क) जीवनरक्षक भोज्य पदार्थों के अतिरिक्त अधिक पोषक भोजन।

(ख) अच्छे कपड़े व निवास हेतु स्वच्छ एव फर्नीचर से सज्जित गृह।

(ग) चिकित्सक आमोद-प्रमोद की पर्याप्त सुविधाएँ।

(घ) भावी संतति को कम से कम अपने माता-पिता के बराबर शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा।

(स) प्रतिष्ठा रक्षक आवश्यकताएं (Conventional Necessaries)—समाज के कुछ अपने मानदण्ड होते हैं, व्यक्ति को इनका पालन करना व अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखना भी आवश्यक होता है। वह अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए इनकी पूर्ति करता है; उदाहरणस्वरूप अतिथियों का पान-सुपारी से स्वागत करना, विवाह के अवसर पर भोज देना, मृत्यु के समय के विशेष संस्कारों को सम्पन्न करना आदि-आदि। इनको पूर्ण न करने पर समाज में व्यक्ति की बदनामी होती है।

(२) आरामदायक आवश्यकताएँ—व्यक्ति जीवन की नितान्त अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति करके अपने जीवन को अधिक सुखमय एवं सुसंस्कृत बनाने हेतु आरामदायक आवश्यकताओं को पूर्ण करने का प्रयास करता है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति से उसे आनन्द के साथ-साथ उसकी कार्य-कुशलता में भी थोड़ी-बहुत वृद्धि होती है परन्तु यदि इनकी पूर्ति न भी हो तो उसे विशेष कष्ट नहीं होता यद्यपि

निपुणता में जो थोड़ी-बहुत वृद्धि हो जाती, वह नही हो पाएगी। गर्मियों मे पंखे का उपयोग, सर्दियों में हीटर का उपयोग, अच्छा कलम, घर, घूमने और कार्यालय जाने के अलग-अलग जूते आदि आरामदायक वस्तुएँ हैं।

(३) विलासिता सम्बन्धी आवश्यकताएं—इस वर्ग मे मनुष्य की वे आवश्यकताएँ आती हैं जिनकी पूर्ति मे उसे अधिक आनन्द मिलता है किन्तु उसकी कार्यक्षमता मे तनिक भी वृद्धि नही होती। रहन-सहन का स्तर उत्कृष्ट हो जाता है। *शानदार महल, अधिक मूल्यवान कार, विश्व-विख्यात चित्रकारों के चित्र, शराब का* अन्धाधुन्ध उपयोग आदि विलासिता सम्बन्धी आवश्यकताएँ हैं। बहुत से लोग इन्हे पूर्णतः अनावश्यक समझते है। प्रो० जीड के अनुसार "विलासिता अनावश्यक आवश्यकताओं का सन्तुष्टीकरण है।" यदि इन आवश्यकताओं की पूर्ति नही भी की जाय तो व्यक्ति को कष्ट नही होता। शराब आदि कुछ विलासिता की वस्तुएँ तो ऐसी हैं कि इनका उपभोग करने से कार्य-कुशलता काफी घट जाती है।

आवश्यकताओं को तीन वर्गों मे विभाजित किया है परन्तु इन तीनो शब्दों—आवश्यक, आराम तथा विलास का प्रयोग सापेक्षिक रूप से होता है। यह आवश्यक नही कि आवश्यक, आराम तथा विलासिता की वस्तुएँ सदैव सभी व्यक्तियों को समान अर्थ रखती हों। एक ही वस्तु एक व्यक्ति के लिए आवश्यक, दूसरे के लिए आरामदायक तथा तीसरे के लिए विलासपूर्ण हो सकती है, उदाहरणार्थ—मोटर-कार डाक्टर के लिए आवश्यक, प्रोफेसर के लिए आरामदायक तथा क्लर्क के लिए विलासिता की वस्तु होगी। समय का भी प्रभाव आवश्यकताओं के वर्गीकरण पर पड़ता है; उदाहरण के लिए—शिशु विद्यालय मे पढ़ते समय बालक के लिए कलम विलास की वस्तु है, जब वह प्राथमिक या माध्यमिक विद्यालय मे पढ़ने जाता है तब वह विलास की वस्तु, परन्तु जब वह कालेज मे पढ़ने जाता है तो यही उसके लिए आवश्यक वस्तु हो जाती है। स्थान का प्रभाव भी आवश्यकताओं के वर्गीकरण पर पड़ता है। ठण्डे स्थानो पर गर्म कोट आवश्यक वस्तु है परन्तु गर्म स्थानो पर गर्म कोट रखना विलास की वस्तु होगा। इसी प्रकार वस्तुओ की इकाई संख्या का प्रभाव भी वर्गीकरण पर पड़ता है। एक जोड़ी जूते रखना आवश्यक है। दो या दो से अधिक जोडी जूते रखना आराम अथवा विलासिता की वस्तु होगा। डॉ० वसु के अनुसार वस्तुओं का आवश्यक, आरामदायक अथवा विलासपूर्ण होना समय, स्थान, व्यक्ति तथा वस्तुओ की इकाई की मात्रा से सम्बन्धित है।

आवश्यकताओ के वर्गीकरण का वास्तविक आधार उनकी तीव्रता की अनुभूति है। अत्यधिक तीव्रता से अनुभव होने वाली आवश्यकताएँ आवश्यक, साधारण तीव्रता से अनुभव होने वाली आवश्यकताएँ आरामदायक तथा सबसे कम तीव्रता से अनुभव होने वाली आवश्यकताएँ विलासपूर्ण कहलाती हैं।

प्रतिस्थापन का सिद्धान्त

आवश्यकताएँ अनेक हैं परन्तु उनकी पूर्ति करने के साधन सीमित हैं। दैनिक जीवन में अनेक प्रकार की आवश्यकताएँ अनुभव करते हैं परन्तु साधनों की सीमितता के कारण उपभोक्ता के समक्ष सबसे जटिल समस्या यह उपस्थित हो जाती है कि वह किन-किन आवश्यकताओं की पूर्ति किस सीमा तक करे। उसका सदैव यही प्रयत्न रहता है कि उपलब्ध धन का व्यय विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए इस प्रकार किया जाए कि उसे अधिकतम सन्तुष्टि मिल सके। व्यय करने की प्रक्रिया में मार्ग निर्देशन करने वाला प्रमुख तत्त्व आवश्यकता की तीव्रता होता है। सबसे पहले उसी आवश्यकता की पूर्ति की जाती है जिसकी पूर्ति किया जाना नितान्त आवश्यक समझा जाता है। जैसे-जैसे आवश्यकता की पूर्ति होती जाती है वैसे ही वैसे उसकी तीव्रता कम होती जाती है। एक स्थिति ऐसी आ जाती है जबकि उपभोक्ता उस आवश्यकता की पूर्ति की अपेक्षा किसी अन्य आवश्यकता को सन्तुष्ट करना अधिक उपयुक्त अनुभव करने लगता है। विभिन्न आवश्यकताओं पर व्यय करने का यह क्रम तब तक चलता रहता है जब तक कि सीमान्त उपयोगिता प्रत्येक दशा में समान न हो जाए। क्योंकि सीमान्त उपयोगिताएँ समान हो जाने पर ही उसे अधिकतम उपयोगिता का लाभ मिलता है। वह उन वस्तुओं का क्रय करना स्थगित कर देता है जिनकी सीमांत उपयोगिता गिर रही है तथा उस वस्तु का खरीदना प्रारम्भ कर देता है जिसकी सीमान्त उपयोगिता उस समय अपेक्षाकृत अधिक है। इस प्रकार एक वस्तु को खरीदता है, दूसरी को स्थगित करता है। इस प्रकार वह अधिक उपयोगी वस्तुओं का प्रतिस्थान कम उपयोगी वस्तुओं के स्थान पर तब तक करता रहता है जब तक उसका पूरा धन व्यय नहीं हो जाता। इसी को प्रतिस्थापन अथवा सम-सीमान्त उपयोगिता का नियम कहते हैं। जे० आर० हिक्स ने प्रतिस्थापन के सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए लिखा है कि प्रत्येक दशा में जब व्यय की सीमान्त इकाई के समान उपयोगिता प्राप्त होती है तभी अधिकतम उपयोगिता मिलेगी। प्रो० मार्शल के अनुसार—"यदि एक साधन विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है तो उपभोक्ता उस साधन से अधिकतम उपयोगिता प्राप्त करने के लिए, साधन को अलग-अलग आवश्यकताओं की पूर्ति में इस प्रकार बाँटेगा कि उसे प्रत्येक के लगभग बराबर सीमान्त उपयोगिता मिले।"

उदाहरण द्वारा इस सिद्धान्त को अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। माना एक व्यक्ति के पास १२ रुपए हैं—वह उन्हें आटा, चावल तथा दाल पर व्यय करना चाहता है। नीचे प्रत्येक वस्तु की इकाई की उपयोगिता तथा धन की इकाई मात्रा दी हुई है—

	रु०	१	२	३	४	५	६
उपयोगिता इकाई में	आटा	२०	१८	१५	१३	१०	६
	चावल	१७	१५	१२	१०	७	३
	दाल	१६	१४	१०	८	४	२

उपभोक्ता १२ रु० को इस प्रकार व्यय करेगा कि उसे अधिकतम उपयोगिता उपलब्ध हो सके। वह प्रथम २ रुपए आटा क्रय करने के लिये व्यय करेगा। इसके पश्चात् तीसरा रुपया चावल पर, चौथा दाल पर, पांचवां आटे पर, छटवां चावल पर इस प्रकार वह उपलब्ध धनराशि को इस प्रकार व्यय करता रहेगा कि विभिन्न वस्तुओं पर व्यय की गई धन की अन्तिम इकाई से समान उपयोगिता मिलती रहे। वह ५ रुपए आटे पर, ४ रुपए चावल पर व ३ रुपए दाल पर व्यय करेगा। प्रत्येक वस्तु पर व्यय की जाने वाली धन की अन्तिम इकाई से उसे १० इकाई उपयोगिता मिलती है। इस प्रकार व्यय करने पर उसे कुल १७० इकाई उपयोगिता प्राप्त होती है। यह इस धन को व्यय करने पर प्राप्त होने वाली अधिकतम उपयोगिता है। यदि व्यय की गई धन की इकाइयो के इस वितरण मे कही भी परिवर्तन करता है तो उसे १७० इकाई उपयोगिता से कम ही उपयोगिता प्राप्त होगी। इस प्रकार उदाहरण से यह स्पष्ट है कि व्यक्ति प्रतिस्थापन के नियम का बुद्धिमत्तापूर्ण अनुशीलन करने पर व्यय की जाने वाली धनराशि से अधिकतम उपयोगिता ग्रहण कर सकेगा।

प्रतिस्थापन के नियम की व्यावहारिक उपयोगिता

प्रतिस्थापन का नियम हमारे दैनिक जीवन मे अत्यन्त लाभदायक है। यह उत्पत्ति, उपभोग, विनिमय वितरण आदि सभी आर्थिक क्षेत्रों मे नितान्त उपयोगी है।

उपभोक्ता के लिये महत्त्व

उपभोग मे इसका मौलिक उपयोग है। प्रत्येक उपभोक्ता चाहता है कि वह अपने धन का व्यय इस प्रकार करे कि उसे अधिकतम उपयोगिता मिल सके। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु वह कम उपयोगी वस्तुओ के स्थान पर अधिक उपयोगी वस्तुओं का प्रतिस्थापन करता है। वह किसी वस्तु की इकाई का उपभोग उसी सीमा तक करता है जिस सीमा तक उस वस्तु से उपलब्ध होने वाली उपयोगिता अन्य वस्तु की इकाई के उपभोग से प्राप्त उपयोगिता से कम न हो। जैसे ही उपयोगिता कम प्रतीत होती है तुरन्त ही वह उसके स्थान पर अन्य अपेक्षाकृत अधिक उपयोगी वस्तु पर आगामी धन की इकाई व्यय करता है। इस प्रकार प्रत्येक उपभोक्ता जाने-अनजाने इस नियम का उपयोग अपने जीवन मे करता है।

उत्पादन कर्त्ता के लिए उपयोग

प्रत्येक उत्पादन कर्त्ता का उद्देश्य अधिकतम लाभ की प्राप्ति करना होता है। अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए वह उत्पादन के विभिन्न साधनो का समावेश अत्यधिक आर्थिक एवं मितव्ययतापूर्वक करता है। कभी वह मानव श्रम के स्थान पर यन्त्रों का उपयोग करता है तो कही वह यन्त्रो के स्थान पर मानव श्रम का उपयोग करता है। इस प्रकार वह उत्पत्ति के साधनों को इस प्रकार प्रयुक्त करता है कि उसे अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके।

विनिमय कर्ता के लिए महत्त्व—विनिमय के क्षेत्र में भी प्रतिस्थापन का नियम महत्त्वपूर्ण है। इसी नियम की क्रियाशीलता के कारण बाजार में किसी वस्तु के मूल्य में प्रायः समानता पाई जाती है। इस नियम से बाजार में किसी वस्तु की न्यूनता अधिक तीव्र नहीं होने पाती क्योंकि लोग उस वस्तु के स्थान पर दूसरी आसानी से उपलब्ध हो सकने वाली अन्य वस्तु का उपभोग प्रारम्भ कर देते हैं। वास्तविकता तो यह है कि विनिमय एक वस्तु के स्थान पर दूसरी वस्तु के प्रतिस्थापन के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

वितरण कर्ता के लिए महत्त्व—वितरण के सिद्धान्त में भी प्रतिस्थापन का नियम उपयोगी है। वितरण में हमारा सम्बन्ध उत्पादन के विभिन्न साधनों के अंशदान के निर्धारण से है। इन अंशदानों का निर्धारण सीमान्त उत्पादकता के सिद्धान्त पर होता है। प्रो० मार्शल के विचारानुसार उत्पादन के किसी साधन के वास्तविक सीमान्त उत्पादन की प्राप्ति तभी हो सकती है जब कि उत्पादन कर्ता प्रतिस्थापन के सिद्धान्त को पूर्णतः प्रभावशील करता है। इस प्रकार यह सिद्धान्त विवरण के सीमान्त उत्पादन के सिद्धान्त के क्रियाशील होने में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

नियम की सीमाएँ—व्यावहारिक जीवन में यह नियम उतना अधिक प्रभावपूर्ण ढङ्ग से क्रियान्वित नहीं होता जितना कि आर्थिक सिद्धान्तों में। इसकी प्रमुख सीमाएँ निम्नलिखित हैं—

(१) **रीति-रिवाज एवं परम्पराएँ**—हमारे समाज में रीति-रिवाज का महत्त्व इतना अधिक है कि धन का पर्याप्त अभाव होते हुए भी कुछ वस्तुओं के लिए हमें व्यय करना ही पड़ता है। विवाह, मृत्यु-संस्कार, नामकरण एवं मुण्डन-संस्कार आदि पर ऋण लेकर भी लोग व्यय करते हैं। यदि यह धन जीवन की अन्य अधिक उपयोगी आवश्यकताओं पर व्यय किया जाता तो निश्चय ही अधिक उपयोगिता प्राप्त हो सकती परन्तु रीति-रिवाज की अनिवार्यता से वाध्य होकर यह धन अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु व्यय नही किया जा सकता।

(२) **फैशन**—कभी-कभी इच्छा न होते हुए भी व्यक्ति को समाज में प्रचलित फैशन पर भी व्यय करना पड़ता है। निम्न मध्यमवर्ग के लोगों को वाध्य होकर वस्त्र तथा अन्य फैशन के वाह्य उपकरणों पर साधनों के सीमित होते हुए भी व्यय करना पड़ता है। इसी धन को वह बच्चों को अच्छा व पौष्टिक भोजन देने के लिए व्यय करके अधिक उपयोगिता प्राप्त कर सकता है। इस स्थिति में भी प्रतिस्थापन या सम-सीमान्त उपयोगिता का नियम लागू नहीं होता।

(३) **अज्ञानता**—यदि व्यक्तियों को वस्तुओं के उचित मूल्य तथा उचित मूल्य पर वस्तुएँ मिलने के स्थान के विषय में पर्याप्त जानकारी नहीं है तो वह व्यय की जाने वाली धन की इकाई से अधिकतम लाभ नहीं उठा पाएगा। जो वस्तु अन्य स्थान पर कम मूल्य में मिल सकती है, उसके लिए उसे अधिक मूल्य देना पड़ेगा।

(४) लापरवाही—कुछ लोग ऐसे लापरवाह होते हैं कि वे विभिन्न वस्तुओं पर व्यय की जाने वाली धन की इकाइयों की सीमान्त उपयोगिता के विषय में सोचने का कष्ट ही नहीं करते। ऐसे व्यक्ति कदाचित् ही इस नियम का लाभ उठा पाते हैं।

(५) अविभक्तता—कुछ वस्तुएँ अविभक्त होने के कारण सीमान्त उपयोगिता प्रदान नहीं कर पाती।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. मानवीय आवश्यकता से क्या अभिप्राय है ? इसकी प्रकृति तथा तीव्रता को निर्धारित करने वाले प्रमुख तत्त्व कौन-कौन से हैं ?

२. मानवीय आवश्यकताओं की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

३. आवश्यक, आरामदायक एवं विलासिता सम्बन्धी आवश्यकताओं से क्या अभिप्राय है ? प्रत्येक की व्याख्या उदाहरण सहित कीजिए।

४. प्रतिस्थापन के नियम से आप क्या समझते हैं ?

५. प्रतिस्थापन के नियम की व्यावहारिक उपयोगिता क्या है।

अध्याय ८

रहन-सहन का स्तर

आय की मात्रा तथा व्यय करने के ढंग पर पारिवारिक-सुख समृद्धि निर्भर करती है। परिवार के धन अर्जित करने वाले सदस्य अधिक से अधिक आय प्राप्त कर उसे विवेकपूर्ण ढङ्ग से परिवार की आवश्यकताओं के महत्त्व को दृष्टिगत रखकर व्यय करेंगे तो परिवार के सदस्यों की अधिक से अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकेगी तथा वे अच्छे जीवन सम्बन्धी अधिक सुविधाएँ उपलब्ध कर सकेंगे। दूसरे शब्दों में, उनके रहन-सहन का स्तर ऊँचा हो जाएगा। रहन-सहन का स्तर क्या है, इसको निर्धारित तथा प्रभावित करने वाले तत्त्व कौन-कौन-से हैं तथा इसे किस प्रकार सुधारा जा सकता है। इन सभी महत्त्वपूर्ण समस्याओं पर इस अध्याय में विचार किया जाएगा।

रहन-सहन के स्तर से अभिप्राय

सीजर महोदय के अनुसार रहन-सहन के स्तर का अर्थ है, "क्रिया की विधि एवं सुविधाओं का स्तर जिसे एक व्यक्ति अपनी प्रसन्नता के लिए अपरिहार्य समझता है तथा जिसे सुरक्षित बनाए रखने के लिए वह कोई न्यायसंगत त्याग, जैसे—अधिक समय तक परिश्रम अथवा विवाह को स्थगित करने को स्वेच्छा से तत्पर रहता है।"

रहन-सहन का स्तर एक व्यक्ति के उपभोग की आदतों का सूचक होता है। इससे व्यक्ति की उन आवश्यकताओं का पता लगता है जिनकी पूर्ति करने के लिए वह अभ्यस्त होता है। इससे ज्ञात होता है कि व्यक्ति की मौलिक, आरामदायक तथा विलासितापूर्ण आवश्यकताएँ कौन-सी हैं। अतः रहन-सहन का स्तर व्यक्तियों की एक आदत के रूप में ही होता है जिसे शीघ्रता व सरलता से परिवर्तित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक व्यक्ति की हार्दिक उत्कंठा होती है कि उसे अपने रहन-सहन के स्तर

सुधारने का अवसर मिले। वह उन वस्तुओं एवं सेवाओं का लाभ उठाना चाहता ...ो पूर्व में उसे उपलब्ध नहीं हो पाती थी। वह जिन वस्तुओं व सुविधाओं का लाभ ...ने का अभ्यस्त हो जाता है, उनसे वंचित रहने के परिणामस्वरूप रहन-सहन के ...र के निम्न होने का भय उसे रहता है। रहन-सहन के स्तर के निम्न हो जाने से ...ाज में व्यक्तिगत गौरव तथा आत्मसम्मान में कमी हो जाने की सम्भावना रहती ...। स्पष्ट है कि रहन-सहन का स्तर व्यक्ति की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति ...था उसके व्यक्तित्व के मनोवैज्ञानिक स्वरूप को निर्मित करने में महत्त्वपूर्ण कार्य ...करता है।

रहन-सहन के स्तर को प्रभावित करने वाले तत्त्व

रहन-सहन के स्तर का निर्धारण कई महत्त्वपूर्ण तत्त्वों के द्वारा होता है। किसी एक तत्त्व को निरपेक्ष रूप से स्तर को प्रभावित करने का श्रेय नहीं दिया जा सकता। कुछ प्रमुख तत्त्व निम्नलिखित हैं—

(१) परम्पराएँ—हम अपने माता-पिता से रहन-सहन के स्तर को ग्रहण करते हैं। जीवन के प्रारम्भिक काल में माता-पिता एक निश्चित प्रकार के गृह के स्तर की परिस्थितियों में बालक का पालन-पोषण करते हैं। यही से हमारी जीवन सम्बन्धी उपलब्ध सुख-सुविधाएँ एक विशेष प्रकार का जीवन व्यतीत करने का अभ्यस्त बना देती हैं। प्रायः इसी स्तर तथा जीवन के ढङ्ग को अपनी रुचियों, स्वभाव, शिक्षा, अनुभव, सामाजिक वातावरण इत्यादि के अनुरूप थोड़ा बहुत परिवर्तन कर अपना लेते हैं तथा सामान्यतः इसे ही जीवन भर बनाए रखने या इसमें सुधार कर उच्च उठाने का प्रयास करते हैं। प्रत्येक जाति, राष्ट्र का रहन-सहन भिन्न-भिन्न प्रकार का हो सकता है। कभी-कभी तो एक ही जाति अथवा राष्ट्र के लोगों का जीवन-स्तर विभिन्न समयावधि में विभिन्न प्रकार का हो सकता है।

(२) आर्थिक दशा—किसी व्यक्ति अथवा परिवार-विशेष की आर्थिक दशा का उसके रहन-सहन के स्तर पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। उच्च रहन-सहन के स्तर से अभिप्रायः है, अपेक्षाकृत अधिक संख्या में आवश्यकताओं की सन्तुष्टि। इसके विपरीत निम्न स्तर का व्यक्ति अपेक्षाकृत कम आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाता है। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त धन की आवश्यकता है। जिस व्यक्ति की आय के साधन अधिक होंगे, वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति अधिक सीमा तक कर सकेगा। जिस देश के लोगों का आर्थिक स्तर उच्च होगा, सामान्यतः वहाँ के लोग का जीवन-स्तर भी उच्च होगा। भारत की अपेक्षा संयुक्त राज्य अमे...रिका अधिक धनी देश है, इसीलिए वहाँ के निवासियों का रहन-सहन का स्तर अधि...कांश भारतीयों की अपेक्षा ऊँचा है।

परन्तु केवल अधिक धन होना ऊँचे रहन-सहन के लिए पर्याप्त नहीं ... व्यय करने का ढङ्ग भी स्तर को निर्धारित करने में महत्त्व रखता है। आवश्यक न...

कि अत्यधिक अपव्यय करने वाले व्यक्ति का जीवन-स्तर ऊँचा ही हो तथा मितव्ययी व्यक्ति का स्तर नीचा ही हो। रहन-सहन का स्तर ऊँचा होने का कारण विवेकपूर्ण ढङ्ग से चयन की गई अधिक से अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है जबकि निम्न स्तर में अपेक्षाकृत कम आवश्यकताओं की पूर्ति होती है अथवा अविवेकपूर्ण ढङ्ग से चुनी गई आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है। दो व्यक्तियों की आय समान होते हुए यदि एक विवेकपूर्ण ढङ्ग से तथा दूसरा मूर्खतापूर्ण ढङ्ग से व्यय करे तो दोनों के रहन-सहन के स्तर में अन्तर हो सकता है। इस प्रकार जीवन-स्तर केवल आय की मात्रा पर ही निर्भर नहीं करता परन्तु उसके व्यय करने के ढङ्ग से भी पर्याप्त सीमा तक प्रभावित होता है।

(३) धन की क्रय-शक्ति—धन की पर्याप्त मात्रा विवेकपूर्ण ढङ्ग से व्यय करने के अतिरिक्त धन की क्रयशीलता का भी रहन-सहन के स्तर को निर्धारित करने में महत्त्वपूर्ण प्रभाव है। इसका स्पष्ट प्रभाव हमें आजकल अपने जीवन में दिखाई दे रहा है। आज से ५-६ वर्ष पूर्व जिस व्यक्ति की आय ५०० रुपए थी तथा आज ६६० रुपए है वह आय की मात्रा अधिक होने पर भी उतनी आवश्यकता की वस्तुओं, सेवाओं तथा सुविधाओं का उपभोग नहीं कर पा रहा है जितना केवल ५०० रुपए में आज से ५ वर्ष पूर्व उठा रहा था। इसका प्रमुख कारण यह है कि पाँच वर्ष पूर्व धन की क्रय शक्ति अपेक्षाकृत अधिक थी। आज महँगाई के कारण रुपए का मूल्य बहुत गिर गया है। वस्तुएँ जितनी सस्ती होंगी, एक निर्धारित आय से रहन-सहन का स्तर उतना ही ऊँचा होगा। इसके विपरीत वस्तुएँ जितनी महँगी होंगी, रहन-सहन का स्तर निम्न होता जाएगा।

(४) परिवार के सदस्यों की संख्या—घर में रहने वाले सदस्यों की संख्या रहन-सहन के स्तर को प्रभावित करती है। यदि परिवार में धन अर्जित करने वालों की संख्या कम है तथा उपभोग करने वालों की संख्या अधिक है तो परिवार में अधिक सुख-सुविधा की व्यवस्था होने में कठिनाई होती है। निश्चित आय में उपभोग करने वाले सदस्यों की संख्या जितनी कम होगी, रहन-सहन का स्तर उतना ही ऊँचा होने की सम्भावना रहती है। इसके विपरीत यदि संख्या बढ़ जाती है तो स्तर गिरता चला जाएगा। भारतीयों के स्तर के निम्न होने का एक कारण परिवार नियोजन की ओर उदासीनता है।

(५) शिक्षा—रहन-सहन के स्तर को निर्धारित करने में शिक्षा का अद्भुत योगदान है। हम अपने दैनिक जीवन में प्रायः यह देखते है कि २००) मासिक पाने वाले क्लर्क का स्तर ४००) कमाने वाले साधारण अशिक्षित दूकानदार से अच्छा होगा। शिक्षित व्यक्ति सामाजिक स्तर के महत्त्व को समझकर धन का व्यय विवेकपूर्ण ढङ्ग से करेगा। आवश्यकताओं की पूर्ति अर्थशास्त्र के प्रतिस्थापन के नियम के

आधार पर की जाएगी। वह मादक वस्तुओं, सामाजिक व धार्मिक परम्पराओं पर व्यर्थ ही अपव्यय न करके बच्चों की शिक्षा-दीक्षा-स्वास्थ्य तथा मनोरंजनात्मक आवश्यकताओं पर उस धन को व्यय करेगा। खाद्य पदार्थों के भोज्य मूल्यों का ज्ञान होने के कारण वह कम मूल्य में अधिक पोषक भोजन परिवार के सदस्यों को दे सकेगा। इसके अतिरिक्त शिक्षित व्यक्ति सदैव आय के साधनों की सीमा के अन्तर्गत ही व्यय करेगा। उसका व्यय पूर्व नियोजित एवं व्यवस्थित रूप से होगा परन्तु अशिक्षित व्यक्ति अधिकांशतः विवाह आदि अवसरों पर अत्यधिक व्यय कर देते है यहाँ तक कि ऋण लेकर भी व्यय करते हैं। परिणाम यह होता है कि वे ऋणग्रस्त हो जाते हैं तथा परिवार अनेक सुख-सुविधाओं—शिक्षा-दीक्षा, मनोरंजन, स्वास्थ्य सेवायें आदि—से वंचित रह जाता है। परिणामतः उसका स्तर गिरता चला जाता है। जिस देश या राष्ट्र मे शिक्षा का प्रसार अधिक होगा, उस देश या राष्ट्र के लोगों का जीवन-स्तर उच्च श्रेणी का होगा।

(६) **सामाजिक एवं धार्मिक रीति-रिवाज**—सामाजिक व धार्मिक रीति-रिवाज प्रत्येक जाति तथा समाज में प्रचलित होते हैं तथा वे जीवन का आवश्यक अंग होते हैं परन्तु इन रीति-रिवाजों के पालन करने के ढङ्ग में परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तन करने की क्षमता से रहन-सहन का स्तर प्रभावित होता है। जो व्यक्ति अन्धवत् परिस्थितियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखे बिना उनका पालन करेगा तो उसके रहन-सहन का स्तर नीचे गिर सकता है। पुराने समय मे विवाह, मृत्यु-भोज, पुत्र-जन्म संस्कार, नामकरण संस्कार आदि पर सैकड़ों व्यक्तियों को भोजन कराया जाता था परन्तु आज की परिस्थिति मे यदि हम उसी स्तर पर इन रीति-रिवाजों का पालन करें तो हम अपने तथा अपने परिवार वालों को मिलने वाली उच्च जीवन स्तर सम्बन्धी सुविधाओं का बलिदान कर देंगे। भारतवर्ष मे अब भी लोग, विशेषकर ग्रामीण व अशिक्षित, इन रीति-रिवाजों को पुराने ही ढङ्ग से मानकर कर्ज लेकर भी व्यय करते हैं। परिणामतः वे अधिक निर्धन होते चले जाते हैं तथा उनका जीवन-स्तर भी निम्न होता चला जाता है।

(७) **जीवन-दर्शन**—व्यक्तियों के खाने-पीने, रहने-सहने का ढङ्ग उनके जीवन दर्शन से प्रभावित होता है। निराशावादी व्यक्ति जीवन की सुख-सुविधाओं का उपयोग आशावादी व्यक्ति के समान उत्साह एवं विश्वास के साथ नही कर सकते। उनके रहन-सहन का स्तर अधिक आकर्षक नही होगा। इसी प्रकार आध्यात्मिक मूल्यों में विश्वास रखने वाले व्यक्ति जीवन मे भौतिक वस्तुओं के अभाव मे ही जीवन की सार्थकता समझते हैं जबकि भौतिकवादी के जीवन की साधना ही भौतिक वस्तुओं का अधिकतम उपभोग करना है। भारत मे अनेक व्यक्ति ऐसे है जो पर्याप्त धन होते हुए भी अत्यधिक साधारण जीवन व्यतीत करते हैं।

(८) **भौगोलिक परिस्थितियाँ**—भौगोलिक परिस्थितियाँ प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से रहन-सहन के स्तर को निर्धारित करने मे योग प्रदान करती है। जिस प्रदेश की

करने का प्रयास करते हैं। वास्तविकता तो यह है कि किसी राष्ट्र विशेष के निवासियों का जीवन-स्तर वहाँ की प्रगति अथवा पिछड़ेपन का सूचक है। उच्च रहन-सहन के स्तर का तात्पर्य है कि व्यक्ति को उत्तम प्रकार का भोजन, सुन्दर व उपयुक्त वस्त्र तथा रहने के लिए अच्छा घर उसे प्राप्त है। इनके अतिरिक्त उसे शिक्षा-स्वास्थ्य एव मनोरजन की पर्याप्त सुविधायें उपलब्ध हैं।

भारतवर्ष में अधिकाश निवासियो के रहन-सहन का स्तर साधारण से भी निम्न श्रेणी का है। इसे उठाने की परमावश्यकता है। इसका यह तात्पर्य कदापि नही कि उन्हें विलासितापूर्ण आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु साधन प्रदान किये जायें। सर्वप्रथम उनकी जीवनरक्षक आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु सुविधायें प्रदान की जानी चाहिए। यहाँ असख्य लोग ऐसे भी हैं जिन्हें उपयुक्त वस्त्र व मकान तो दूर रहा, रूखा-सूखा भोजन भी भरपेट मिल जाये। सौ रुपए मासिक पाने वाला व्यक्ति ४ या ५ सदस्यों के परिवार का इस मँहगाई के युग मे किस प्रकार भरण-पोषण कर सकता है यह तथ्य विचारणीय है। इस ओर शासन, राजनीतिज्ञों तथा समाज-सुधारकों को विशेष रूप से प्रयत्नशील होने की आवश्यकता है। जीवनरक्षक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सुविधाएँ प्रदान करने के पश्चात् उनको निपुणता प्रदान करने वाली आवश्यकताओ तथा अन्त में आरामदायक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रयास करना चाहिए।

१०-२० प्रतिशत व्यक्तियों के रहन-सहन के स्तर को ऊँचा करने से जन-साधारण के स्तर को ऊँचा नही कहा जा सकता। देश में रहने वाली अधिकतम जनता का स्तर ऊँचा होना चाहिए।

रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए निम्नलिखित उपाय करना नितान्त आवश्यक है—

(अ) परिवार नियोजन,
(ब) आर्थिक उन्नति,
(स) शिक्षा का प्रसार,
(द) यातायात के साधनो का विकास,
(य) प्रवास।

(अ) परिवार नियोजन—भारतीयों के रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाने की दृष्टि से परिवार नियोजन का अत्यधिक महत्त्व है। निर्धनता, अज्ञानता आदि रहन-सहन के स्तर को प्रभावित करने वाले कारण प्रत्यक्ष रूप से परिवारो की अत्यधिक वृद्धि से सम्बन्धित है। आज जिस गति से जनसख्या बढ़ रही है, उस गति से आय के साधनो में प्रगति नहीं हो रही है। प्रो० माल्थस के अनुसार—"जनसख्या गुणात्मक तथा भोज्य-सामग्री योगात्मक गति से बढ़ती है। इस प्रकार बढती हुई जनसख्या की

आवश्यकताओं की पूर्ति सीमित साधनों से नहीं हो सकती। इसलिए रहन-सहन का स्तर और भी नीचे गिरता जायगा। भारत में निर्धनता व अज्ञानता के कारण जन-संख्या वृद्धि विश्व के प्रगतिशील देशों की अपेक्षा अधिक तीव्र गति से बढ़ रही है।

भारतीय जनसंख्या के बढ़ने के निम्न कारण हैं—

१. प्रारम्भिक अवस्था में विवाह—अशिक्षित तथा ग्रामीण निवासियों में अब भी बाल-विवाह प्रथा प्रचलित है। सामान्यतः १४-१५ वर्ष की आयु में विवाह कर दिया जाता है। १६ व १७ वर्ष की आयु में ही नवदम्पत्ति सन्तानोत्पत्ति प्रारम्भ कर देती है। यदि विवाह २५ वर्ष की आयु के आस-पास किया जाय तो जनसंख्या की वृद्धि को नियंत्रित किया जा सकता है।

२. विवाह एक अनिवार्य संस्कार—भारतवर्ष में विवाह संस्कार प्रायः अनिवार्य-सा ही माना जाता है। प्रत्येक लड़के व लड़की को चाहे उनकी इच्छा हो या नहीं, विवाह के बन्धन में बँधना ही पड़ता है। इसे एक धार्मिक कर्तव्य माना जाता है।

३. अधिक उर्वरता—भारतवासी गर्म देश के निवासी हैं। यहाँ के लोगों में जैविक दृष्टि से उर्वरण क्षमता अधिक है। ठण्डे देशों के निवासियों में इतनी अधिक उर्वरण क्षमता प्रायः नहीं होती। जनसंख्या वृद्धि में यह तथ्य महत्त्वपूर्ण कार्य करता है।

४. समाज में अनुपयुक्त लोगों का अस्तित्व—हमारे समाज में अनेक रोगी, आलसी तथा अपराधी आदि व्यक्ति हैं जो देश की उत्पादन क्षमता में तो वृद्धि नहीं करते परन्तु सन्तानोत्पत्ति करने के कर्तव्य को बड़ी तत्परता एवं नियमित रूप से निभाते हैं। ये जनसंख्या वृद्धि की संख्या को और अधिक जटिल बनाने में योग देते हैं।

५. निर्धनता—निर्धनता भी जनसंख्या की वृद्धि में अप्रत्यक्ष रूप से योग देती है। निर्धनता के कारण व्यक्ति को पर्याप्त शिक्षा नहीं मिल पाती। उनमें सुसंस्कृत एवं कलात्मक रुचियों का निर्माण नहीं हो पाता। इसके अतिरिक्त मनोरंजन के स्वस्थ्य साधनों का लाभ भी धनाभाव के कारण उपलब्ध नहीं होता। परिणामतः उनकी लैंगिक मूलप्रवृत्ति लैंगिक सम्बन्ध स्थापित करके ही सन्तुष्टि प्राप्त करती है जो कि सन्तानोत्पत्ति का प्रमुख कारण है।

६. अज्ञानता—देश की अधिकांश जनता अशिक्षित है। वह राष्ट्रीय समस्याओं को नहीं समझती अधिक जनसंख्या किस प्रकार राष्ट्र के लिये तथा स्वयं उनके लिए घातक है। इस तथ्य की वास्तविकता से वे परिचित नहीं होते। इसलिए इसे रोकने का प्रयास भी नहीं करते। इसके अतिरिक्त अशिक्षित होने के कारण सन्तानोत्पत्ति रोकने, स्थगित करने आदि के वैज्ञानिक साधनों एवं विधियों से भी परिचित नहीं हैं।

जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि होने से नागरिकों के व्यक्तिगत जीवन पर तथा राष्ट्रीय जीवन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इससे लोगों के रहन-सहन का स्तर गिरने लगता है। इसके महत्त्वपूर्ण कुप्रभाव अग्रलिखित हैं—

१. अपर्याप्त खाद्य सामग्री—आज हमारे देश मे खाद्य समस्या अत्यधिक गम्भीर रूप धारण किये हुए है। भारत कृषि-प्रधान देश होते भी खाद्यान्न के लिए अन्य देशो पर आश्रित है। पिछले दिनो बिहार आदि राज्यो मे उत्पन्न अकाल की स्थिति से कोई भी व्यक्ति आँखें बन्द नही कर सकता। प्राकृतिक प्रकोप तथा अन्य कारणों के साथ अत्यधिक जनसख्या भी इस दयनीय एव चिन्ताजनक स्थिति को उत्पन्न करने में सहायक है। लोगो को सन्तुलित एवं पोषक भोजन मिलना तो दूर रहा, पेट भर सूखा अनाज मिलना भी कठिन है। ऐसी स्थिति मे जनसख्या पर नियन्त्रण नितान्त आवश्यक है।

२. बेरोजगारी में वृद्धि—बेरोजगारी भी हमारे राष्ट्र का बहुत बड़ा कलक है। यहाँ शिक्षित व अशिक्षित दोनों ही प्रकार के लोगो मे बेरोजगारी फैली हुई है। यह कुछ सीमा तक जनसख्या मे वृद्धि का ही प्रत्यक्ष दुष्परिणाम है।

३. भूमि पर अत्यधिक भार—यहाँ अधिकाश जनता ग्रामो में रहती है तथा उनका मुख्य उद्योग-धन्धा कृषि ही है। जनसख्या वृद्धि होने पर जनसख्या का अधिकाश भार कृषि पर ही पड़ता है। परिणामत भूमि बिखरी हुई व टुकडो-टुकडों मे बँट जाती हैं जो कि आर्थिक दृष्टि से व्यर्थ हो जाती हैं। इसका देश की आर्थिक स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है।

४. जनसख्या का गुणात्मक पतन—अधिक जनसख्या के कारण सभी नागरिको को उपयुक्त भोजन, शिक्षा-दीक्षा तथा अन्य स्वास्थ्य एव सन्तुलित व्यक्तिगत निर्माण की सुविधाएँ उपलब्ध नही हो पाती। इस प्रकार उसका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एव आध्यात्मिक विकास भली प्रकार नही हो पाता। इन अविकसित नागरिको की सन्तानें उनसे भी अधिक निम्नकोटि की उत्पन्न होती हैं तथा उन्हे भी स्वस्थ व्यक्तित्व के विकास के लिए उपयुक्त सुविधाएँ नही मिल पाती। इस प्रकार पीढ़ी-दर-पीढ़ी जनसख्या का गुणात्मक पतन होता रहता है। यह राष्ट्र के लिए बहुत बडी क्षति है।

उक्त समस्त दुष्परिणामो से बचने के लिए परिवार नियोजन एक सर्वोत्तम एव प्रभावपूर्ण साधन है। राष्ट्रीय सरकार ने इसकी महत्ता को दृष्टिगत रखकर ही इसे राष्ट्रीय नीति का एक आवश्यक अङ्ग बना लिया है। प्रत्येक दम्पति का कर्तव्य है कि वह राष्ट्र के इस जन-कल्याणकारी प्रयास मे अपना अमूल्य सक्रिय सहयोग प्रदान करें।

परिवार नियोजन से लाभ

परिवार नियोजन के प्रमुख लाभ सक्षेप में निम्नलिखित हैं—

(१) रहन-सहन के स्तर में सुधार—घर मे कम सदस्य सख्या होने पर प्रति व्यक्ति किये जाने वाले व्यय की मात्रा बढ जाएगी। इससे परिवार के सदस्यों की अपेक्षाकृत आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव हो सकेगी। परिणामस्वरूप उनके रहन-सहन का स्तर सुधरेगा।

(२) **शिशु व मातृ मृत्यु-दर में कमी**—परिवार नियोजन के कारण सन्तानोंत्पत्ति में कमी होगी तथा रहन-सहन का स्तर सुधरने से नवजात शिशु तथा गर्भिणी दोनों को ही भोजन, स्वास्थ्य आदि से सम्बन्धित सुविधाएँ अधिक मिल सकेंगी। इससे शिशु तथा मातृ मृत्यु-दर में कमी होगी।

(३) **खाद्य समस्या, निर्धनता आदि समस्याओं के समाधान में सहायक**—परिवार नियोजन के माध्यम से जनसंख्या का भार कम हो जाने के कारण राष्ट्र की अन्न समस्या, बेरोजगारी, निर्धनता आदि को समाप्त करने में सहायता मिलती है।

(४) **अवांछनीय गर्भाधान से मुक्ति**—परिवार नियोजन में कृत्रिम साधनों के द्वारा सन्तानोत्पत्ति को स्थगित अथवा रोका जाता है। इसलिए सन्तान तभी उत्पन्न की जाती है जबकि दम्पत्ति आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टि से तत्पर एवं समर्थ होते हैं। अविवाहित सन्तानें उत्पन्न होने की सम्भावना बहुत कम हो गई है।

(५) **देश के नागरिकों के स्वास्थ्य में सुधार**—कम सन्तानें होने के कारण उनके भोजन व स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिया जा सकता है। इससे नागरिक अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ होंगे।

(ब) **आर्थिक उन्नति**—लोगों की आर्थिक स्थिति रहन-सहन के स्तर से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखती है। आर्थिक दृष्टि से उन्नत व सुविकसित देश के नागरिकों का स्तर प्राय: ऊँचा ही होता है क्योंकि आज के भौतिकवादी युग में धन हमारे जीवन के महत्त्वपूर्ण आधारों में से एक है। देश की आर्थिक प्रगति के लिए राष्ट्रीय शासन को प्रयत्न करने चाहिए। देश की आर्थिक उन्नति के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं—

(१) **कृषि की उन्नति**—कृषि यहाँ का बुनियादी धन्धा है। लगभग ८० प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर ही आधारित है। भारत का कल्याण कृषि की ही उन्नति में है। कृषि की उन्नति के लिए किसानों को नए प्रकार के औजार, बीज तथा खाद उपलब्ध कराए जाएँ। उन्हें कम ब्याज पर ऋण तथा कृषि सम्बन्धी उपकरण क्रय करने के लिए देने चाहिए। किसानों को कृषि के नवीन साधनों के लाभ तथा प्रयोग करने के तरीके से भी भली प्रकार परिचित करना चाहिए।

इतना ही नहीं, शिक्षित लोगों को कृषि उद्योग अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। वे अशिक्षित किसानों के सामने आदर्श किसान के रूप में उदाहरण प्रस्तुत करें। गत कुछ वर्षों से शासन ने कृषि की ओर विशेष ध्यान दिया है। इसी का परिणाम है कि कृषि की ओर लोगों की रुचि विकसित हुई है।

(२) **कुटीर तथा लघु उद्योग-धन्धों का विकास**—देश में विद्यमान पूर्ण बेरोजगारी व अर्ध-बेरोजगारी को समाप्त करने के लिए ये उद्योग धन्धे-बड़े लाभदायक सिद्ध हुए हैं। किसान वर्ष में लगभग ६ माह बेकार रहते हैं अथवा उनके परिवार के

अधिकाश लोग वेकार रहते हैं । ऐसे लोग इन धन्धो को अपनाकर परिवार की आय मे वृद्धि कर रहन-सहन के स्तर को सुधारने में योग दे सकते हैं ।

(३) औद्योगीकरण—देश के नागरिको की आर्थिक प्रगति हेतु औद्योगिक विकास बहुत महत्त्वपूर्ण है । नए-नए उद्योग व कारखाने खोले जाने चाहिए ताकि वेकारो को रोजगार मिल सके ।

(४) सामान्य शिक्षा की अपेक्षा व्यावसायिक एव तकनीकी शिक्षा पर अधिक बल दिया जाना चाहिए । शिक्षित वर्ग मे प्रचलित बेरोजगारी को रोकने के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण साधन है ।

(५) धन का समान वितरण करने का प्रयत्न—भारत के धन का अत्यधिक असमान वितरण है जिसके कारण थोड़े से लोग जनसाधारण के रक्त का शोषण कर विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं । आज की परिस्थितियो में जीवन की न्यूनतम आवश्यकताएँ निर्धारित कर उनकी पूर्ति के हिसाब से मजदूरी की न्यूनतम दर निर्धारित कर देनी चाहिए । पूँजीपतियो को होने वाले लाभ का कुछ प्रतिशत बोनस के रूप मे मजदूरो को दिया जाना चाहिए ।

(६) वस्तुओ का मूल्य निर्धारण—जीवनरक्षक सम्बन्धी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए आवश्यक वस्तु, जैसे—अनाज, अन्य खाद्य सामग्री तथा मोटे कपडे के उचित मूल्य निर्धारित कर देने चाहिए ताकि निश्चित आय वाले व्यक्तियों की क्रय शक्ति समान ही बने रहे । इससे उनका रहन-सहन का एक निश्चित स्तर बना रहेगा ।

(स) शिक्षा का प्रसार—शिक्षा द्वारा लोगो को सफाई, स्वास्थ्य, मनोरंजन, बच्चो की शिक्षा आदि के महत्त्व का ज्ञान कराया जाना नितान्त आवश्यक है । प्रौढ़ों को समाज शिक्षा के माध्यम से शिक्षित किया जाए । गृहिणियों को विशेष रूप से शिक्षा देने की आवश्यकता है ।

(द) यातायात के साधनों का विकास—यातायात के साधन राष्ट्रीय जीवन में रुधिर वाहिनियों के समान है । इनके विकास का रहन-सहन के स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता है । यातायात के साधनो के कारण शहरो मे उपलब्ध होने वाली सभी वस्तुएँ सस्ते मूल्य पर ही गाँवों मे भी उपलब्ध हो जाती हैं ।

(य) प्रवास—अधिकाशत: भारतीय इतने भावुक होते हैं कि उनकी कितनी भी दीन-हीन अवस्था क्यों न हो, वे अपने जन्म स्थल को छोड़कर रोजगार की तलाश मे बाहर नही जाना चाहते । उनकी इस प्रवृत्ति को निरुत्साहित कर उन्हें धन्धे की तलाश मे बाहर जाने के लिए प्रवृत्त किया जाना चाहिए । इससे बेरोजगारी समाप्त होगी, उनकी आर्थिक स्थिति मे सुधार होगा तथा परिणामत: उनका जीवन-स्तर सुधरेगा ।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. रहन-सहन के स्तर से क्या अभिप्राय है ? इसको प्रभावित करने वा
प्रमुख तत्त्व कौन-कौन से हैं ?

२. भारतवर्ष में रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए कौन-कौन
उपाय आवश्यक हैं ?

३. भारतीय रहन-सहन के स्तर को जनसंख्या की वृद्धि ने किस प्रक
प्रभावित किया है ? स्पष्ट कीजिए।

४. परिवार नियोजन से किन लाभों की आशा की जाती है ?

भाग ३

धन-समय-शक्ति का व्यवस्थापन

अध्याय ६

धन का व्यवस्थापन

परिवार की सम्पूर्ण व्यवस्था का सचालन रुपये पर आश्रित है। प्रत्येक परिवार की एक निश्चित आय होती है और वह उस आय का व्यय अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करता है। व्यय की परिसीमा एवं प्रकृति बहुत कुछ आय की राशि पर निर्भर करती है। यदि आय के साधन अधिक हैं तथा गृहिणी उनका उपयोग विवेकपूर्ण एव मितव्ययतापूर्वक करती है तो परिवार के सदस्यो को अधिक तथा उच्च श्रेणी की सुविधाएँ उपलब्ध हो सकती हैं। परिणामतः परिवार के रहन-सहन का स्तर ऊँचा होगा। परिवार की आय को दो वर्गों मे विभाजित कर सकते हैं—(१) प्रत्यक्ष आय, (२) अप्रत्यक्ष आय।

(१) प्रत्यक्ष आय—परिवार की प्रत्यक्ष आय वह होती है जो प्रत्यक्षतः धन के रूप मे उपलब्ध होती है। इसके अन्तर्गत प्रमुखतः गृह स्वामी द्वारा अर्जित धन-राशि आती है। चाहे वह वेतन के रूप मे हो अथवा व्यापार या व्यवसाय के माध्यम से कमाई गई धनराशि। यदि गृहिणी तथा घर के कोई अन्य सदस्य भी नौकरी करके अथवा कोई दूसरा उद्योग-धन्धा करके धन अर्जित करते हैं तो वह भी प्रत्यक्ष में सम्मिलित किया जाता है।

इसके अतिरिक्त कुछ व्यक्तियो के पास मकान, दूकान, जमीन आदि के रूप मे अचल सम्पत्ति होती है। इसको वह किराये पर उठाकर धन प्राप्त कर सकता है। बैंक मे जो धनराशि जमा होती है, उससे ब्याज प्राप्त होता है। इस प्रकार उक्त सभी साधनों से प्राप्त धन प्रत्यक्ष आय के अन्तर्गत ही सम्मिलित किया जाता है।

(२) अप्रत्यक्ष आय—यह वह आय होती है जो परिवार को उन सुविधाओं के रूप मे प्राप्त होती है जिनके प्राप्त न होने पर गृहस्वामी को अपनी प्रत्यक्ष आय मे से व्यय करना पड़ता है; उदाहरणस्वरूप, रहने के लिए बिना किराए का मकान

मुफ्त चिकित्सा सुविधाएँ, निःशुल्क शिक्षा की सुविधाएँ, मुफ्त यातायात, दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुओं के मूल्य में रियायत आदि।

अतः स्पष्ट है कि आय के अन्तर्गत एक निश्चित समयावधि में आर्थिक प्रयत्नों के फलस्वरूप प्राप्त धन तथा सुविधाएँ सम्मिलित होती हैं।

परिवार की आय का कुछ विद्वानों ने एक अन्य प्रकार से वर्गीकरण किया है। इसके अनुसार आय दो प्रकार की होती है—(१) वास्तविक आय (Real Income) (२) पारिवारिक आय (Family Income)।

(१) वास्तविक आय—यह वह आय है जो गृहस्वामी को नियमित रूप से नौकरी, व्यापार या अन्य उद्योग-धन्धा करने के माध्यम से धनराशि के रूप में प्राप्त होती है। मजदूर की एक निश्चित समय की मजदूरी, अध्यापक का वेतन, दूकानदार का लाभ, वकील का महनताना—ये सब वास्तविक आय के अन्तर्गत सम्मिलित हैं।

(२) अन्य साधनों से आय—गृहस्वामी उक्त नियमित व्यवसाय या धन्धे को करने के अतिरिक्त अन्य कोई सहायक धन्धा करता है, परिवार के अन्य सदस्य आंशिक-काल कार्य करके अर्जित धन, स्थायी सम्पत्ति से किराए के रूप में प्राप्त धन, बैंक से प्राप्त ब्याज, अंशदान से प्राप्त लाभ आदि समस्त धन इस वर्ग के अन्तर्गत आता है। इसके अतिरिक्त निःशुल्क चिकित्सा, बच्चों की निःशुल्क शिक्षा, बिना किराए का मकान, मुफ्त यातायात सुविधा, दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुओं के मूल्य में रियायत आदि भी पारिवारिक आय ही कहलाती हैं। परिवार को पैंशन, पुस्तकों की रॉयलटी आदि के रूप में प्राप्त धन पारिवारिक आय है।

व्यय

परिवार की विभिन्न साधनों से जो आय प्राप्त होती है, उस आय को कैसे, कितना तथा किस प्रकार खर्च करना 'व्यय' कहलाता है।

दिन-प्रतिदिन हम जो कुछ व्यय करते हैं, उसे निम्न ३ वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(१) निर्धारित व्यय (Fixed Expenditure)

(२) अर्ध-निर्धारित व्यय (Semi Fixed Expenditure)

(३) अन्य व्यय।

(१) निर्धारित व्यय (Fixed Expenditure)—प्रति माह एक निश्चित धन राशि आय कर, मकान किराया, बीमा शुल्क, बॉन्ड, प्रॉवीडेन्ट फण्ड, अंशदान आदि के रूप में अनिवार्य रूप से व्यय करनी पड़ती है। इसी प्रकार के व्यय निर्धारित व्यय कहलाते हैं। इनमें किसी भी प्रकार की कमी नहीं की जा सकती है।

(२) अर्ध-निर्धारित व्यय (Semi-fixed Expenditure)—इस वर्ग के अन्तर्गत वे व्यय आते हैं जिनका किया जाना अनिवार्य है परन्तु धनराशि की सीमा में

आवश्यकतानुसार कुछ सीमा तक कमी या वृद्धि की जा सकती है; उदाहरणस्वरूप भोजन, वस्त्र आदि। यदि धन कम है तो सादा भोजन व वस्त्र से भी काम चलाया जा सकता है परन्तु यदि आय अधिक होने लगती है तो उच्च कोटि का भोजन व वस्त्र प्रयुक्त किए जा सकते हैं।

(३) अन्य व्यय—ये अनिर्धारित व्यय होते हैं। धन की कमी के कारण इन खर्चों को प्राय. समाप्त भी किया जा सकता है और यदि धन पर्याप्त मात्रा में मिलने लगे तो बहुत कुछ व्यय किया जा सकता है। इस श्रेणी के अन्तर्गत मनोरंजन, धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्रिया-कलापों पर तथा अन्य विलासिता की वस्तुओं पर किए जाने वाले व्यय सम्मिलित हैं।

मनुष्य आर्थिक प्रयत्नों के द्वारा जो आय प्राप्त करता है, उसका प्रधान लक्ष्य उसकी दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है। उसकी आवश्यकताएँ असीमित होती हैं परन्तु आय सीमित होती है। सीमित आय के द्वारा वह अपनी अधिक से अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने का प्रयास करता है। सर्वप्रथम वह अपनी उन आवश्यकताओं की पूर्ति करता है जो उसके स्वयं तथा परिवार के सदस्यों को जीवित रखने के लिए नितान्त आवश्यक हैं जिन्हें अर्थशास्त्र में मूल आवश्यकताएँ कहते हैं। इनमें भोजन, वस्त्र एवं आवास सम्मिलित हैं।

इसके पश्चात् यदि उसके पास धन बचता है तो वह परिवार के सदस्यों की कार्यक्षमता को बढ़ाने की दृष्टि से जो आरामदायक आवश्यकताएँ हैं, उन पर व्यय करता है। इसके पश्चात् भी यदि उसकी आय का कुछ भाग शेष रहता है तो उसे वह विलासितापूर्ण आवश्यकताओं पर व्यय करता है। किसी व्यक्ति की कौन-सी आवश्यकता आरामदायक है व कौन-सी विलासपूर्ण इसका निर्धारण व्यक्ति का व्यवसाय, समाज में स्तर, उसके निवास-स्थान की स्थिति आय की मात्रा आदि तत्त्व करते हैं।

कुशल गृहिणी वही है जो अपने सीमित आय के साधनों के अन्तर्गत ही व्यय करके परिवार के सदस्यों को अधिकतम सुख-सुविधा प्रदान कर सके। यदि परिवार की आय कम है तो मूल आवश्यकताओं की पूर्ति को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए। यह कहावत पर्याप्त सीमा तक सत्य है कि "कमाने से खर्च करने का ढङ्ग अधिक महत्त्वपूर्ण है।" इस मँहगाई के युग में बुद्धिमतापूर्ण व्यय करने का महत्त्व और भी अधिक बढ़ गया है। व्यय करने में साधारण-सी लापरवाही परिवार के लिए सङ्कट का कारण बन सकती है। साधारण परिस्थिति में आय और व्यय के बीच सन्तुलन बनाए रखना चाहिए। इतना ही नहीं, आय का एक निश्चित प्रतिशत भविष्य में उत्पन्न हो सकने वाली आवश्यकताओं—बच्चों की शिक्षा, विवाह, दुर्घटना एवं बीमारी के लिए बचा कर रखना चाहिए। यदि व्यय आय से अधिक हुआ तो परिवार ऋण-ग्रस्त हो जाएगा तथा पारिवारिक जीवन की मधुरता एवं सुखमय स्थिति समाप्त हो जाएगी।

व्यय को प्रभावित करने वाले तत्त्व

निस्सन्देह धन तथा सुविधाओं के रूप में प्राप्त आय परिवार के वजट व रहन-सहन के स्तर को प्रभावित करती है परन्तु इसके अतिरिक्त भी कुछ वातें ऐसी होती हैं जो आय-व्यय को प्रभावित करती हैं। वे तत्त्व निम्नलिखित हैं—

(१) **परिवार का स्वरूप**—भारत में प्रायः दो प्रकार की परिवार व्यवस्था प्रचलित है—संयुक्त परिवार व्यवस्था एवं स्वतन्त्र या एकाकी परिवार व्यवस्था। संयुक्त परिवार व्यवस्था में अनेक व्यय ऐसे होते हैं जो या तो पूर्णतः वच जाते हैं अथवा उनमें कमी हो जाती है, जैसे—मकान किराया, भोजन व्यय, नौकर पर होने वाला व्यय आदि। इसके अतिरिक्त आय अधिक होती है। परिवार में जितने भी धनार्जन करने वाले सदस्य हैं, उन सवका धन आय के अन्तर्गत सम्मिलित होता है। इसके विपरीत स्वतन्त्र परिवार में कमाने वाला प्रायः एक ही व्यक्ति होता है परन्तु व्यय लगभग उतना ही होता है।

(२) **परिवार की सदस्य संख्या**—परिवार संयुक्त हो या स्वतन्त्र परन्तु यदि कमाने वाले सदस्य कम हैं और खाने वाले अधिक तो पर्याप्त आय होने पर भी परिवार को अधिक सुविधाएँ नहीं मिल पाएँगी, परन्तु यदि परिवार में आश्रितों की संख्या कम है तो उतनी आय से ही परिवार को अपेक्षाकृत उच्च स्तर की सुविधाएँ प्रदान की जा सकती हैं।

(३) **वच्चों की संख्या**—यदि आश्रित प्रौढ़ हैं तो व्यय उतना अधिक नहीं होगा परन्तु यदि घर में वच्चे अधिक हैं तो उनकी आयु के वढ़ने के साथ-साथ खर्चों में भी वृद्धि हो जाती है। उनकी शिक्षा, मनोरंजन, खेल-कूद आदि पर पर्याप्त व्यय करना पड़ता है।

(४) **सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराएँ**—प्रत्येक समाज में कुछ सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराएँ प्रचलित होती हैं। यदि परिवार रूढ़िवादी है तो उसकी आय का कुछ प्रतिशत धार्मिक एवं सामाजिक पर्वों के अवसरों पर व्यय होता है। परिणामतः आवश्यक खर्चों में कमी करनी पड़ती है। इसके विपरीत सुशिक्षित परिवार अनावश्यक रूढ़ियों एवं परम्पराओं पर व्यर्थ का व्यय नहीं करते। इसके स्थान पर परिवार के स्तर को ऊँचा उठाने हेतु आवश्यक मदों पर अधिक व्यय करते हैं।

(५) **परिवार का स्तर**—जिस परिवार का स्तर पूर्व से ही ऊँचा है, उस परिवार को निम्न स्तर वाले परिवार की अपेक्षा अधिक व्यय करना पड़ेगा। इसलिए अधिक आय के साथ-साथ व्यय भी अधिक होगा।

(६) **गृहस्वामी अथवा धन अर्जित करने वाले सदस्यों का व्यवसाय**—कुछ व्यवसाय ऐसे होते हैं जिन पर व्यवसायकर्ता को अपनी आय का कुछ भाग उस व्यवसाय पर व्यय करना पड़ता है; जैसे—चिकित्सक को अपने चिकित्सालय पर,

वकील को पुस्तकों पर, बीमा एजेण्ट को आने-जाने पर। यह व्यय उनकी आय में कमी कर देता है। परिणामतः उसे अन्य खर्चों में कमी करनी पड़ती है।

(७) रहने का स्थान एवं स्थिति—यदि परिवार किसी छोटे कस्बे में रहता है तो वह उतनी ही आय वाले उस परिवार की अपेक्षा उच्च स्तर बनाए रख सकता है जो कि बड़े शहर में रहता है। बड़े शहर में रहने वाले को मकान का किराया, यातायात तथा अन्य ऐसी ही बातों पर छोटे कस्बे में रहने वाले परिवार की अपेक्षा अधिक व्यय करना पड़ेगा। इसी प्रकार यदि मकान, नौकरी अथवा व्यवसाय करने वाले स्थल से दूर है तो भी यातायात पर अधिक व्यय करना पड़ेगा। परिणामतः अन्य खर्चों में कमी करनी पड़ेगी।

(८) गृहिणी की विवेकशीलता एवं कुशलता—उक्त समस्त तत्त्वों से अधिक महत्त्वपूर्ण गृहिणी की व्यय करने की कुशलता है। यदि पत्नी उपलब्ध आय को सीमान्त उपयोगिता तथा प्रतिस्थापन के आर्थिक नियमों को दृष्टिगत रखकर विवेकपूर्ण ढंग से व्यय करती है तो परिवार को अधिक सुख-सुविधाएँ प्रदान कर सकती है। इसके विपरीत व्यय करने की कुशलता के अभाव मे उतनी ही आय से एक स्त्री उतनी सुख-सुविधाएँ परिवार को प्रदान नही कर सकती।

पारिवारिक बजट

प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यय किये गये रुपये या धन से अधिकतम तुष्टि प्राप्त करना चाहता है। अधिकतम तुष्टि प्राप्त करने के लिये उसे अपना पारिवारिक बजट बनाना चाहिये। पारिवारिक बजट मे किसी कुटुम्ब की आय और व्यय का विस्तृत ब्यौरा दिया जाता है और उसका सम्बन्ध किसी विशेष अवधि—एक माह या एक वर्ष-से होता है। अत पारिवारिक बजट की निम्न परिभाषा दी जा सकती है—
"किसी कुटुम्ब की किसी विशेष अवधि मे होने वाली आय और व्यय के विस्तृत ब्यौरे को पारिवारिक बजट कहते हैं।"

पारिवारिक बजट के अध्ययन से हमें निम्न जानकारी प्राप्त होती है—

(१) कुटुम्ब के सदस्यों की संख्या, लिंग तथा आयु—किसी परिवार के बजट से उस परिवार के सदस्यो की संख्या, लिंग तथा आयु की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

(२) आय—पारिवारिक बजट से गृहस्वामी को आय की पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। उसकी कुल आय तथा आय के मुख्य साधनों का ज्ञान प्राप्त होता है।

(३) बजट की अवधि—बजट के अध्ययन द्वारा यह ज्ञात हो जाता है कि यह कितने समय के लिये बनाया गया है। प्रायः यह अवधि एक माह की होती है।

(४) व्यय का भेद—बजट के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अमुक परिवार किन-किन मदों पर कितना व्यय करता है?

व्यय को प्रभावित करने वाले तत्त्व

निस्सन्देह धन तथा सुविधाओं के रूप में प्राप्त आय परिवार के बजट व रहन-सहन के स्तर को प्रभावित करती है परन्तु इसके अतिरिक्त भी कुछ बातें ऐसी होती हैं जो आय-व्यय को प्रभावित करती हैं। वे तत्त्व निम्नलिखित हैं—

(१) **परिवार का स्वरूप**—भारत में प्रायः दो प्रकार की परिवार व्यवस्था प्रचलित है—संयुक्त परिवार व्यवस्था एवं स्वतन्त्र या एकाकी परिवार व्यवस्था। संयुक्त परिवार व्यवस्था में अनेक व्यय ऐसे होते हैं जो या तो पूर्णतः बच जाते हैं अथवा उनमें कमी हो जाती है, जैसे—मकान किराया, भोजन व्यय, नौकर पर होने वाला व्यय आदि। इसके अतिरिक्त आय अधिक होती है। परिवार में जितने भी धनार्जन करने वाले सदस्य हैं, उन सबका धन आय के अन्तर्गत सम्मिलित होता है। इसके विपरीत स्वतन्त्र परिवार में कमाने वाला प्रायः एक ही व्यक्ति होता है परन्तु व्यय लगभग उतना ही होता है।

(२) **परिवार की सदस्य संख्या**—परिवार संयुक्त हो या स्वतन्त्र परन्तु यदि कमाने वाले सदस्य कम हैं और खाने वाले अधिक तो पर्याप्त आय होने पर भी परिवार को अधिक सुविधाएँ नहीं मिल पाएँगी, परन्तु यदि परिवार में आश्रितों की संख्या कम है तो उतनी आय से ही परिवार को अपेक्षाकृत उच्च स्तर की सुविधाएँ प्रदान की जा सकती हैं।

(३) **बच्चों की संख्या**—यदि आश्रित प्रौढ़ हैं तो व्यय उतना अधिक नहीं होगा परन्तु यदि घर में बच्चे अधिक हैं तो उनकी आयु के बढ़ने के साथ-साथ खर्चों में भी वृद्धि हो जाती है। उनकी शिक्षा, मनोरंजन, खेल-कूद आदि पर पर्याप्त व्यय करना पड़ता है।

(४) **सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराएँ**—प्रत्येक समाज में कुछ सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराएँ प्रचलित होती हैं। यदि परिवार रूढ़िवादी है तो उसकी आय का कुछ प्रतिशत धार्मिक एवं सामाजिक पर्वों के अवसरों पर व्यय होता है। परिणामतः आवश्यक खर्चों में कमी करनी पड़ती है। इसके विपरीत सुशिक्षित परिवार अनावश्यक रूढ़ियों एवं परम्पराओं पर व्यर्थ का व्यय नहीं करते। इसके स्थान पर परिवार के स्तर को ऊँचा उठाने हेतु आवश्यक मदों पर अधिक व्यय करते हैं।

(५) **परिवार का स्तर**—जिस परिवार का स्तर पूर्व से ही ऊँचा है, उस परिवार को निम्न स्तर वाले परिवार की अपेक्षा अधिक व्यय करना पड़ेगा। इसलिए अधिक आय के साथ-साथ व्यय भी अधिक होगा।

(६) **गृहस्वामी अथवा धन अर्जित करने वाले सदस्यों का व्यवसाय**—कुछ व्यवसाय ऐसे होते हैं जिन पर व्यवसायकर्ता को अपनी आय का कुछ भाग उस व्यवसाय पर व्यय करना पड़ता है; जैसे—चिकित्सक को अपने चिकित्सालय पर,

वकील को पुस्तकों पर, बीमा एजेन्ट को आने-जाने पर। यह व्यय उनकी आय में कमी कर देता है। परिणामतः उसे अन्य खर्चों में कमी करनी पड़ती है।

(७) रहने का स्थान एवं स्थिति—यदि परिवार किसी छोटे कस्बे में रहता है तो वह उतनी ही आय वाले उस परिवार की अपेक्षा उच्च स्तर बनाए रख सकता है जो कि बड़े शहर में रहता है। बड़े शहर मे रहने वाले को मकान का किराया, यातायात तथा अन्य ऐसी ही बातो पर छोटे कस्बे में रहने वाले परिवार की अपेक्षा अधिक व्यय करना पड़ेगा। इसी प्रकार यदि मकान, नौकरी अथवा व्यवसाय करने वाले स्थल से दूर है तो भी यातायात पर अधिक व्यय करना पड़ेगा। परिणामतः अन्य खर्चों में कमी करनी पड़ेगी।

(८) गृहिणी की विवेकशीलता एवं कुशलता—उक्त समस्त तत्वो मे अधिक महत्वपूर्ण गृहिणी की व्यय करने की कुशलता है। यदि पत्नी उपलब्ध आय को सीमान्त उपयोगिता तथा प्रतिस्थापन के आर्थिक नियमो को दृष्टिगत रखकर विवेकपूर्ण ढग से व्यय करती है तो परिवार को अधिक सुख-सुविधाएँ प्रदान कर सकती है। इसके विपरीत व्यय करने की कुशलता के अभाव में उतनी ही आय से एक स्त्री उतनी सुख-सुविधाएँ परिवार को प्रदान नही कर सकती।

पारिवारिक बजट

प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यय किये गये रुपये या धन से अधिकतम तुष्टि प्राप्त करना चाहता है। अधिकतम तुष्टि प्राप्त करने के लिये उसे अपना पारिवारिक बजट बनाना चाहिये। पारिवारिक बजट में किसी कुटुम्ब की आय और व्यय का विस्तृत ब्यौरा दिया जाता है और उसका सम्बन्ध किसी विशेष अवधि—एक माह या एक वर्ष से होता है। अत. पारिवारिक बजट की निम्न परिभाषा दी जा सकती है—
"किसी कुटुम्ब को किसी विशेष अवधि मे होने वाली आय और व्यय के विस्तृत ब्यौरे को पारिवारिक बजट कहते हैं।"

पारिवारिक बजट के अध्ययन से हमे निम्न जानकारी प्राप्त होती है—

(१) कुटुम्ब के सदस्यों की संख्या, लिंग तथा आयु—किसी परिवार के बजट से उस परिवार के सदस्यों की संख्या, लिंग तथा आयु की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

(२) आय—पारिवारिक बजट से गृहस्वामी को आय की पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। उसके कुल आय तथा आय के मुख्य साधनो का ज्ञान प्राप्त होता है।

(३) बजट की अवधि—बजट के अध्ययन द्वारा यह ज्ञात हो जाता है कि यह कितने समय के लिये बनाया गया है। प्रायः यह अवधि एक माह की होती है।

(४) व्यय का भेद—बजट के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अमुक परिवार किन-किन मदों पर कितना व्यय करता है?

(५) प्रति इकाई मूल्य तथा कुल व्यय—पारिवारिक वजट के अध्ययन से यह भी पता चलता है कि उपभोग्य वस्तुओं का प्रति इकाई मूल्य क्या है तथा विभिन्न वस्तुओं पर कुल कितना व्यय किया गया है। इससे यह भी पता चलता है कि व्यय की मुख्य पदों पर आमदनी का कितना प्रतिशत व्यय किया गया है।

(६) वचत या घाटा—पारिवारिक वजट यह भी वताता है कि अमुक परिवार में कुछ वचत भी होती है कि नहीं और यदि वचत होती है तो कितनी और यदि नहीं होती तो उस पर कितना ऋण है।

पारिवारिक वजट का महत्त्व

पारिवारिक वजट किसी परिवार की आर्थिक दशा का दर्पण होता है। इसलिए गृहस्वामियों के अतिरिक्त अर्थ-शास्त्रियों व राजनीतिज्ञों तथा समाज-सुधारकों और सरकार के लिए भी यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

गृहस्वामियों को लाभ

(१) विवेकपूर्ण व्यय—व्यय करने के पूर्व वजट वनाने का उद्देश्य ही सोच-समझ कर व्यय करना है। कोई भी व्यक्ति वजट वनाने के पूर्व विभिन्न मदों पर किये जाने वाले व्यय पर मनन करता है जिससे कि उसकी आमदनी का उचित उपयोग हो सके।

(२) समसीमान्त उपयोगिता नियम (Law of Equi-marginal Utility)—इसके आधार पर व्यय करने की सम्भावना वजट वनाते समय विभिन्न आवश्यकताओं पर व्यय, उनकी तीव्रता के आधार पर किया जाता है किन्तु यदि वजट वनाने के वाद व्यक्ति को यह आभास हो कि विलासिता की वस्तुओं पर अधिक व्यय हो रहा है तो वह उसमें कटौती करके आवश्यक वस्तुओं पर अधिक व्यय करेगा। इस प्रकार वह प्रत्येक मद पर खर्च की जाने वाली धन की इकाई से अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त कर सकेगा। वह समसीमान्त उपयोगिता नियम के अनुसार धन का व्यय करेगा।

(३) आमदनी का वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताओं के वीच उचित विभाजन—वजट की सहायता से प्रत्येक व्यक्ति अपनी सीमित आय का इस प्रकार व्यय करेगा कि न तो उसकी वर्तमान आवश्यकताएँ ही अपूर्ण रहें और भविष्य के लिए भी कुछ वचत हो जाये। वह सोच-समझकर कुछ धन जो उसकी आवश्यकताएँ पूरा करने के वाद वच रहेगा, उसे भविष्य के लिए जमा करेगा। यह तभी सम्भव है जव कोई व्यक्ति नियमित ढंग से व्यय करे।

(४) वजट के अनुसार व्यय—वजट वनाकर उसी के अनुसार व्यय करने से व्यक्ति अपनी आय के अनुकूल ही जीवन-यापन करने के अभ्यस्त हो जाते हैं। उनमें अनावश्यक रूप से अवव्यय करने अथवा आय से अधिक व्यय करने जैसी आदतें नहीं पड़ पातीं।

(५) सावधानीपूर्वक व्यय—बजट के अनुसार व्यय करने के लिए व्यय का व्यवस्थित व नियमित रूप से हिसाब रखना आवश्यक हो जाता है। हिसाब के आलेख का विश्लेषण करके गृहस्वामी यह भली-भाँति जान लेता है कि व्यय करने मे उसने क्या त्रुटियाँ की हैं। फलस्वरूप वह भविष्य में सावधानीपूर्वक व्यय करने का प्रयास करता है।

(६) बचत—बजट के अन्तर्गत बचत एक आवश्यक मद होता है। गृह-स्वामिनी को आवश्यक रूप से आय का कुछ प्रतिशत बचाना ही पड़ता है। परिणामतः अनावश्यक व्यय अथवा कर्ज लेने की प्रवृत्ति समाप्त हो जाती है।

(७) पर्वों व उत्सवों पर व्यय—बजट का व्यवस्थित रूप मे हिसाब रखने से गृह-स्वामिनी को यह भली प्रकार ज्ञात हो जाता है कि धार्मिक व सामाजिक उत्सवो एव पर्वों पर माह या वर्ष मे कितनी धनराशि व्यय की गई है। आगामी माह का बजट बनाते समय वह इस धनराशि मे आवश्यक सुधार कर सकती है।

अर्थशास्त्रियों को लाभ

(१) देश के विभिन्न वर्गों की आर्थिक दशा की जानकारी—पारिवारिक बजट उपभोक्ताओं (Consumers) द्वारा उपभोग की गई वस्तुओ की मात्रा व प्रकार पर प्रकाश डालता है। विभिन्न प्रकार के बजटों का अध्ययन करके यह निर्धारित किया जा सकता है कि किसी देश की आर्थिक दशा कैसी है तथा विभिन्न आर्थिक स्तर के लोगों का व्यय किन मदों पर अधिक होता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न कालों व देशों के बजट से तुलना भी की जा सकती है।

(२) विभिन्न वर्गों की कर अदा करने की क्षमता की जानकारी व कर प्रणाली का निर्धारण—बजटों के अध्ययन से समाज मे धन के वितरण का ज्ञान प्राप्त करके अर्थशास्त्री विभिन्न वर्गों की करदेय क्षमता का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। कौन-सा वर्ग किन मदों पर अधिक व्यय करता है, यह जानकर धनी और निर्धन वर्ग की विषमताओं को मिटाने के लिए न्यायपूर्ण कर प्रणाली लागू करने का सुझाव दे सकते हैं। धनी वर्ग द्वारा प्रयोग मे आने वाली विलासिता की वस्तुओं पर अधिक कर लगाकर राष्ट्रीय आय मे वृद्धि करने का सुझाव दिया जा सकता है।

(३) देशवासियों के व्यय के तरीकों की जानकारी—बजटों के अध्ययन से यह ज्ञात हो जाता है कि देश के विभिन्न वर्ग के लोग अपनी आय किन मदों पर और किस प्रकार व्यय कर रहे हैं। उनकी व्यय करने की नीति विवेकपूर्ण है अथवा नही, यदि नही तो उनकी इस नीति को परिवर्तित करने के लिये सुझाव दिये जा सकते हैं।

(४) मुद्रा के मूल्य परिवर्तन तथा अन्य सरकारी नीतियों के प्रभाव की जानकारी—मुद्रा के मूल्य परिवर्तन, मूल्य-नियन्त्रण तथा राशनिंग, आयात-निर्यात नीति का जनता की आर्थिक स्थिति पर काफी प्रभाव पड़ता है। मुद्रा के अवमूल्यन के पूर्व

और उपरान्त विभिन्न वर्ग के बजटों का तुलनात्मक अध्ययन से अवमूल्यन के प्रभाव को जाना जा सकता है। यदि किसी क्षेत्र में इसका कुप्रभाव हो तो उसको सुधारने के लिये उपाय खोज निकाले जा सकते हैं।

(५) जीवन-निर्वाह-सूचक अंक बनाना—बजट से प्राप्त सामग्री के आधार पर ही अर्थशास्त्री जीवन-निर्वाह सूचक-अङ्कों (Cost of Living Index) का संकलन करते हैं। ये अङ्क मजदूरी निर्धारण में सहायता प्रदान करते हैं और दूसरे देशों के जीवन-निर्वाह-सूचक अङ्कों से तुलना करने में सहायता करते हैं।

(६) आर्थिक नियमों की रचना—ऐंजिल का उपभोग नियम पारिवारिक बजटों के अध्ययन से ही निकाला गया है। इन बजटों के अध्ययन द्वारा ही व्यय एवं बचत सम्बन्धी नवीन नियमों का प्रतिपादन किया जा सकता है तथा वर्तमान नियमों में संशोधन किये जा सकते हैं।

राजनीतिज्ञों तथा समाज-सुधारकों को लाभ

(१) राजनीतिज्ञों व समाज-सुधारकों को आर्थिक विषमता की जानकारी—बजटों के अध्ययन से राजनीतिज्ञों तथा समाज-सुधारकों को देश की आर्थिक स्थिति का ज्ञान होता है। विभिन्न वर्गों की दरिद्रता तथा सम्पन्नता का पता लग जाता है। समाज में प्रचलित दोषों, शोषण इत्यादि के कारण जो वर्ग दरिद्र होता है, उसकी स्थिति सुधारने के प्रयत्न किये जा सकते हैं।

(२) सरकारी नीतियों का मूल्यांकन—पारिवारिक बजटों द्वारा समाज-सुधारक व राजनीतिज्ञ समाज में धन के वितरण के आधार पर सरकार द्वारा अपनाई गई कर-नीति, राशनिंग इत्यादि के औचित्य का अनुमान लगा सकते हैं। यदि किसी सरकारी नीति से समाज के किन्हीं वर्गों को हानि हो रही है तो उसमें सुधार करने के लिये सुझाव दिये जा सकते हैं।

(३) स्वस्थ व शिक्षित समाज की स्थापना—बजटों द्वारा यह ज्ञात हो जाता है कि विभिन्न वर्गों के व्यक्ति अपने बच्चों की शिक्षा व स्वास्थ्यवर्धक एवं रक्षक मदों पर कितना धन व्यय करते हैं। जिस वर्ग के अधिकांश लोग कम आय के कारण अपने बच्चों का अच्छा स्वास्थ्य नहीं बनाये रख पाते तथा उन्हें शिक्षित नहीं कर पाते, उस वर्ग के लिये सरकार की ओर से निःशुल्क स्वास्थ्य सेवाएँ एवं शिक्षा का प्रबन्ध किया जा सकता है। इस प्रकार देश की जनता को स्वास्थ्य व शिक्षित बनाने में बजटों का ज्ञान सहायक होता है।

(४) मादक व हानिकारक पदार्थों के उपभोग पर प्रतिबन्ध—बजटों द्वारा मादक पदार्थों पर किये जाने वाले व्यय का अनुमान हो जाता है। यदि किसी देश के बजटों के अध्ययन से यह ज्ञात हो कि वहाँ के लोग मादक व हानिकारक पदार्थों पर अधिक धन व्यय करते हैं तो सरकार द्वारा नियम बनाकर इन पदार्थों की बिक्री एवं

उत्पादन पर प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है। समाज-सुधारकों द्वारा किये गए आंदोलन भी मादक पदार्थों से होने वाली हानि से जनता की रक्षा करने मे सहायक हो सकते हैं।

सरकार के लाभ

(१) सरकार को देश के विभिन्न वर्गों की आय की जानकारी प्राप्त होती है। इसी जानकारी के आधार पर सरकार धन के समान वितरण का प्रबन्ध करती है।

(२) सरकार को उचित व न्यायपूर्ण राजस्व सम्बन्धी नीति निर्धारण करने में सहायता मिलती है—बजटों के अध्ययन द्वारा ही सरकार कर-नीति निर्धारित करती है। करों का भार आय के आधार पर ही पड़ना न्यायोचित है। सरकार बजटो की जानकारी के आधार पर उन्ही वस्तुओं पर अधिक कर लगायेगी जो कि जीवनरक्षा के अतिरिक्त विलासिता की वस्तुएँ हैं।

(३) समाज या देश के विभिन्न वर्गों द्वारा की जाने वाली बचत का ज्ञान—बजटो द्वारा सरकार को समाज के विभिन्न वर्गों द्वारा की जाने वाली बचत का ज्ञान प्राप्त होता है और वह जनता को इस रकम को देश के विकास कार्यों मे लगाने के लिये प्रोत्साहित कर सकती है। जिन लोगो की बचत नही होती, उन्हे बचत करने के लिये प्रोत्साहित कर सकती है।

(४) हानिकारक वस्तुओ पर रोक—बजटो के ज्ञान से हानिकारक वस्तुओं पर किये जाने वाले व्यय का ज्ञान प्राप्त होता है। यदि जनता अपनी आय का अधिकाधिक भाग इन वस्तुओं पर व्यय करती है तो सरकार कानून द्वारा इन वस्तुओ के क्रय-विक्रय पर रोक लगा सकती है।

बजट में व्यय के प्रमुख मद

प्रत्येक परिवार का बजट उसकी आय एव आवश्यकताओ के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है परन्तु व्यय-मदो मे कोई विशेष अन्तर नही होता। प्रत्येक परिवार के बजट के अन्तर्गत निम्नलिखित व्यय सम्मिलित होते हैं—

१. भोजन,
२. वस्त्र,
३. आवास,
४. घर के अन्य आवश्यक व्यय,
५. शिक्षा एव स्वास्थ्य,
६. मनोरजन आदि,
७. बचत।

(१) भोजन—यह बजट का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मद है। परिवार कैसा भी परिवार क्यों न हो, उसकी कुल आय का सबसे बड़ा प्रतिशत भोजन

है, क्योंकि भोजन मनुष्य की सर्वप्रथम मूल आवश्यकता है। पौष्टिक भोजन ही परिवार के सदस्यों के स्वास्थ्य का आधार है। इस मद पर अत्यधिक विवेकपूर्ण ढङ्ग से व्यय करने की आवश्यकता होती है। कुशल गृहिणी सीमित आय से पुष्ट एवं सन्तुलित भोजन प्रदान करने की व्यवस्था करती है। इस मद के अन्तर्गत वह सभी धन सम्मिलित होता है जो परिवार के लिए आवश्यक भोजन-सामग्री क्रय करने हेतु व्यय किया जाता है।

(२) वस्त्र—व्यय का दूसरा महत्त्वपूर्ण मद वस्त्र है। स्त्री, पुरुष व बच्चों के पहनने के वस्त्रों पर व्यय होता है। इसके अतिरिक्त ओढ़ने-बिछाने, तकिए, पर्दे आदि के लिए जिन वस्त्रों की आवश्यकता होती है, उन पर किया गया व्यय तथा वस्त्रों की सिलाई का व्यय इसी के अन्तर्गत सम्मिलित है। परिवार की आय के अनुसार साधारण, मोटे व सस्ते अथवा अच्छी किस्म के महँगे वस्त्र क्रय किये जाने चाहिए।

(३) आवास—प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आय का कुछ भाग मकान के लिए व्यय करना होता है। शहरों में अधिकांश लोग किराये के मकानों में रहते हैं। वे किराये के रूप में मकान पर व्यय करते हैं परन्तु जिन व्यक्तियों के पास अपने स्वयं के मकान हैं, उन्हें भवन-कर तथा समय-समय पर मरम्मत के लिए व्यय करना पड़ता है।

(४) घर के अन्य व्यय—इसके अन्तर्गत बिजली या प्रकाश पर किया गया व्यय, धोबी, नौकर, घर की सजावट, फर्नीचर, बर्तनों की मरम्मत, घर की सफाई आदि पर किए गए व्यय सम्मिलित हैं। कुछ परिवारों में भोजन बनाने एवं अन्य घरेलू कार्यों हेतु बिजली के यंत्रों का प्रयोग किया जाता है। इन पर किया गया व्यय भी इस मद में डाला जाता है।

(५) शिक्षा एवं स्वास्थ्य—यह व्यय का महत्त्वपूर्ण मद है। बच्चों के लिए उचित शिक्षा का समुचित प्रबन्ध करना परिवार का एक महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व है। बच्चों की पुस्तकों, कापियों, शुल्क, पत्र-पत्रिकाओं तथा लेखन-सामग्री पर किया गया व्यय इस मद के अन्तर्गत आता है। इसके अतिरिक्त परिवार के सदस्यों के बीमार होने पर उनकी चिकित्सा पर किया गया व्यय भी इसमें सम्मिलित है।

(६) मनोरंजन आदि—मनोरंजन का मनुष्य के जीवन में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रत्येक परिवार प्रौढ़ों तथा बच्चों के मनोरंजन हेतु कुछ-न-कुछ धन अवश्य ही व्यय करता है। इसके अन्तर्गत बच्चों के लिए खेलने की वस्तुओं को क्रय पर किया गया व्यय, पिकनिक, क्लबों, मनोरंजनात्मक भ्रमण पर व्यय, नाटक, सिनेमा आदि पर व्यय सम्मिलित होते हैं।

(७) बचत—बच्चों की शिक्षा, विवाह तथा बीमारी आदि आकस्मिक खर्चों के लिए आय का एक निश्चित प्रतिशत प्रतिमाह प्रत्येक व्यक्ति को बचाना नितान्त आवश्यक है। परिवार की मासिक आय में से दैनिक व्यय निकालने के पश्चात्

जो धनराशि शेष रहती है, वही बचत कहलाती है। यह भी बजट का एक आवश्यक मद है।

बजट बनाना

प्रत्येक गृहिणी को परिवार की आय व व्यय में सन्तुलन बनाए रखने के लिए बजट बना लेना चाहिए तथा इस अनुमानित आय-व्यय के विवरण के अनुसार व्यय करना चाहिए। बजट बनाने के मूल सिद्धान्त निम्नलिखित हैं—

(१) परिवार की मासिक अथवा वार्षिक आय का हिसाब लगा लिया जाए।

(२) गृह की विभिन्न आवश्यकताओं की सूची बना ली जाए।

(३) आय का विचारपूर्ण विभाजन इस प्रकार किया जाय कि कुछ धन आकस्मिक व्यय के लिए भी बच जाए।

प्रायः गृह का बजट एक माह के लिए बनाया जाना ठीक रहता है। एक या एक से अधिक जितने भी साधनों से आय प्राप्त हो, उसे मासिक आय में जोड़ना चाहिए। तत्पश्चात् गृह की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर व्यय के मद तथा व्यय की जाने वाली धनराशि का प्रतिशत निर्धारित किया जाना चाहिए। विभिन्न आवश्यकताओं पर आय का कितना-कितना भाग व्यय किया जाए, इसका अनुमान लगाना विभिन्न परिस्थितियों पर निर्भर करता है। इन परिस्थितियों के सम्बन्ध में इसी अध्याय में पूर्व में वर्णन किया जा चुका है, किन्तु इसका एक प्रमुख सिद्धान्त यह है कि आमदनी जितनी कम होगी, जीवन की मूल आवश्यकताओं अर्थात् भोजन, वस्त्र व आवास पर आय का उतना ही अधिक प्रतिशत व्यय करना पड़ेगा। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री अर्नेस्ट एंजिल ने जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं पर जीवन-स्तर के अनुकूल व्यय का प्रतिशत निर्धारित किया है जो कि निम्न तालिका से स्पष्ट है—

व्यय के मद	व्यय का प्रतिशत		
	मजदूर वर्ग	मध्यम वर्ग	धनी वर्ग
भोजन	६०%	५५%	५०%
वस्त्र	१८%	१८%	१८%
आवास	१२%	१२%	१२%
प्रकाश	५%	५%	५%
शिक्षा और स्वास्थ्य	५%	१०%	१५%

ऐंजिल के अनुसार जैसे-जैसे आय बढ़ती जाती है—(१) भोजन पर व्यय का प्रतिशत मात्रा में घटता जाता है, (२) वस्त्र, आवास व प्रकाश पर व्यय का प्रतिशत लगभग एक-सा ही रहता है, तथा (३) मनोरंजन, विलासिता, शिक्षा, स्वास्थ्य पर व्यय का प्रतिशत बढ़ता जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि आमदनी के बढ़ने पर मूल आवश्यकताओं पर व्यय का प्रतिशत बढ़ता नहीं है, बल्कि भोजन पर तो व्यय के प्रतिशत की मात्रा कम होने लगती हैं परन्तु सांस्कृतिक एवं विलासितापूर्ण आवश्यकताओं पर व्यय का प्रतिशत आय के बढ़ने के साथ-साथ बढ़ता जाता है।

ऐंजिल महोदय द्वारा निर्धारित सिद्धान्त पर्याप्त सीमा तक उपयुक्त हैं परन्तु समय के परिवर्तन के साथ इसमें परिवर्तन की आवश्यकता है। आजकल शहरों में आवास समस्या बड़ी जटिल हो गई है। मध्यम स्तर के परिवार को निम्न स्तर के परिवार की अपेक्षा आवास पर आय का अधिक प्रतिशत व्यय करना पड़ता है। इसी प्रकार प्रकाश पर भी आय में वृद्धि के साथ-साथ व्यय का प्रतिशत भी प्रायः बढ़ जाता है। ऐंजिल ने उपर्युक्त बजट में बचत के लिए कोई प्रावधान नहीं किया है, जबकि आज के युग में बचत प्रत्येक परिवार के लिए अनिवार्य है।

उपर्युक्त समस्त तथ्यों को दृष्टिगत रखकर एक बड़े नगर में रहने वाले विभिन्न आय वाले चार निम्न स्तर या मजदूर वर्ग, निम्न मध्यम वर्ग, मध्यम वर्ग तथा उच्च वर्ग जिनकी कुल मासिक आय क्रमशः १२५ रु०, २५० रु, ५०० रु० तथा १००० रु० है—परिवारों का बजट आगे प्रस्तुत किया जा रहा है। ये बजट अनुमानित हैं। इनमें आवश्यकता तथा परिवार की परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन कर लेना चाहिए। प्रत्येक परिवार में सब मिलाकर ५ सदस्य हैं—गृहस्वामी, स्त्री, दो लड़के जिनकी आयु १५ व १२ वर्ष है तथा एक लड़की जो ९ वर्ष की है। उसका बजट अगले पृष्ठ पर दिया जा रहा है।

अनुमानित बजट १२५ रुपये से १००० रुपये प्रतिमास तक

व्यय के मद	आय १२५ रुपये प्रतिमास		आय २५० रुपये प्रतिमास		आय ५०० रु० प्रतिमास		आय १००० रु० प्रतिमास	
	रुपया व्यय	व्यय प्रतिशत	रुपया व्यय	व्यय प्रतिशत	रुपया व्यय	व्यय प्रतिशत	रुपया व्यय	व्यय प्रतिशत
भोजन	८७·५०	७०%	१२५·००	५०%	२२५·००	४५%	३५०·००	३५%
वस्त्र व सिलाई	६·२५	५%	१७·५०	७%	३५·००	७%	७०·००	७%
आवास (गृह)	१०·००	८%	२५·००	१०%	५०·००	१०%	१२०·००	१२%
प्रकाश, पानी, ईंधन	२·५०	२%	२०·००	८%	४०·००	८%	१००·००	१०%
शिक्षा व स्वास्थ्य	६·२५	५%	२०·००	८%	५०·००	१०%	१२०·००	१२%
नौकर, धोबी आदि			१०·००	४%	४०·००	८%	८०·००	८%
मनोरंजन	२·५०	२%	७·५०	३%	१५·००	३%	४०·००	४%
बचत	५·००	४%	१५·००	६%	३०·००	६%	८०·००	८%
अन्य व्यय	५·००	४%	१०·००	४%	१५·००	३%	४०·००	४%
कुल योग	१२५·००	१००%	२५०·००	१००%	५००·००	१००%	१०००·००	१००%

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, प्राय: गृह का बजट एक मास के लिए बनाया जाना ठीक रहता है। एक या एक से अधिक जितने भी आय के साधन हों उन्हें प्रति मास की प्राप्त आय में जोड़ना चाहिए। गृह की आवश्यकताओं में भोजन, कपड़ा, मकान तथा शिक्षा के अतिरिक्त बिजली व ईंधन, मरम्मत व वस्त्र-धुलाई, नौकर-नौकरानी, बीमारी, मनोरंजन व यात्रा आदि को भी सम्मिलित करना चाहिए। इसके साथ ही छोटे-मोटे फुटकर खर्चों में बचत की गुंजाइश रखनी चाहिए। इन भिन्न-भिन्न आवश्यकताओं पर आमदनी का कितना-कितना भाग व्यय किया जाय, इसका अनुमान लगाना विभिन्न परिस्थितियों पर निर्भर है। किन्तु इसका एक मुख्य सिद्धान्त यह है कि आमदनी जितनी कम होगी, जीवन की मूल आवश्यकताओं अर्थात् भोजन, वस्त्र, मकान पर आमदनी का उतना ही अधिक प्रतिशत खर्च करना पड़ेगा। जीवन-स्तर के आधार पर भिन्न-भिन्न आवश्यकताओं के लिए आय का विभाजन भी भिन्न होगा। इसी प्रकार परिवार के सदस्यों की संख्या भी आय-विभाजन में अन्तर लायेगी। वातावरण व स्थानीय परिस्थितियों पर भी आय-विभाजन निर्भर रहता है।

हिसाब रखना--हिसाब रखने के लिए गृहिणी को दैनिक से लेकर वार्षिक खर्च तक का पूर्ण विवरण रखना चाहिए। बजट के हिसाब से विभिन्न चीजों पर प्रतिदिन जितना धन व्यय करने की सामर्थ्य हो उसके भीतर ही खर्च किया जाय तथा जितना खर्च किया जाय उसे लिख लिया जाय। माह खत्म होने पर माह भर के खर्च का कुल जोड़ निकालना चाहिए। यदि कभी पूर्ण ध्यान रखने पर भी माह के अन्त में ज्ञात हो कि योजना से कुछ अधिक धन व्यय हो गया है तो अगले माह में सावधानी से कम खर्च किया जाय। पूर्ण हिसाब रखने से यह पता चल जाता है कि कहाँ तक खर्च बजट के भीतर हो रहा है तथा सावधानी से काम लेने पर विभिन्न वस्तुओं पर धन की कम-से-कम मात्रा में खर्च करने की आदत पड़ जाती है। इसे ही मितव्ययिता कहते हैं।

गृह के व्यय का एक अनुमानित हिसाब निम्न प्रकार है :

मासिक हिसाब

माह—जनवरी १९५५

आय—

पिछला बचा हुआ	१५·०० रुपये
जनवरी की आमदनी	२५०·०० रुपये
कुल आय	२६५·०० रुपये

व्यय—

विषय	व्यय	कुल
भोजन		
अनाज, दालें, मसाले	२९·००	
सब्जी, फल	१६·००	
दूध, मक्खन, घी, दही	३२·००	
डबलरोटी, मिठाई आदि	६·००	८३·००
बिजली-पानी	११·२५	११·२५
घर का किराया	२७·००	२७·००
कपड़ा व सिलाई	२३·००	
धुलाई	४·७५	२७·७५
ईंधन	५·००	
कोयला या लकड़ी	३·००	८·००
फीस	१५·००	
किताबें, आदि	५·५०	२०·५०
मनोरंजन	६·५०	६·५०
नौकर	१०·००	१०·००
बीमा	२०·००	२०·००
अन्य फुटकर	२५·००	२५·००
कुल व्यय	२३९·००	२३९·००
बचत	२६·००	२६·००
योग	२६५·००	२६५·००

जिस प्रकार प्रत्येक विषय पर मासिक खर्च का हिसाब रखा जा सकता है, उसी प्रकार प्रत्येक माह का प्रत्येक विषय पर जितना व्यय हो उसे जोड़कर वर्ष भर का उसी विषय पर व्यय निकलना चाहिए। प्रत्येक विषय पर वार्षिक खर्च जोड़ने से कुल वार्षिक व्यय पता लग जायगा। यह सदैव वार्षिक आय से कम तथा वार्षिक अनुमान-पत्र के लगभग होना चाहिए, अन्यथा योजना व हिसाब सब व्यर्थ ही साबित होंगे। इस प्रकार का विस्तृत हिसाब रखने से अगले मासिक व वार्षिक बजट बनाने में बहुत सहायता मिलती है।

पारिवारिक आय की संपूर्ति के ढंग
(Ways of Supplementing Family Income)

आज का युग अतीव भौतिकवादी युग है। वैज्ञानिक प्रगति को इस भौतिकवादी विचारधारा के विकास और वृद्धि का श्रेय है। प्रत्येक राष्ट्र तथा राष्ट्र का प्रत्येक देश अपनी भौतिक सम्पन्नता के लिए जी-जान से प्रयास कर रहा है। मानव

ने आधिभौतिक प्रसाधनों को अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त करने के लिए मानवीय सम्बन्धों एवं गुणों को भुला दिया है। इसके स्पष्ट परिणाम हमें वर्गवाद, जातिवाद, सम्प्रदाय-वाद, अनुशासनहीनता, अराजकता के रूप में विश्व के प्रत्येक कोने में स्पष्ट रूप से देखने को मिल रहे हैं। व्यक्ति जितना भौतिकता की ओर बढ़ रहा है, उतना ही वह अपने को आर्थिक दृष्टि से असुरक्षित-सा अनुभव कर रहा है। बेकारी, अर्ध-बेकारी, भुखमरी आदि गम्भीर आर्थिक समस्याएँ विकराल रूप धारण करती जा रही हैं। पारिवारिक जीवन का प्रमुख आधार अब आर्थिक सम्पन्नता ही रह गया है। प्रत्येक परिवार यह चाहता है कि उसमें आज की अधिकाधिक बढ़ती हुई भौतिक आवश्यकताओं की पूर्तिहेतु आर्थिक क्षमता आधिकाधिक बढ़े। उसके पास सुन्दर मकान हो, उसे सजाने के आधुनिकतम सज्जा हो, मोटर हो, पहनने के लिए उत्तम वस्त्र तथा उत्तम भोजन खाने के लिए मिले। परन्तु उसकी आर्थिक क्षमता अपेक्षाकृत सीमित है। अपनी आर्थिक क्षमता को बढ़ाने के लिए कहीं-कहीं पति-पत्नी दोनों ही धन उपार्जन के प्रयत्नों में संलग्न रहते हैं। फिर भी चारों ओर से यही शिकायत सुनने को मिलती है कि क्या करें घर के खर्चे पूरे नहीं होते। हमारे देश में पर्याप्त संख्या में ऐसे परिवार हैं जो अपने सदस्यों को उचित मात्रा में दोनों समय भोजन ही उप-लब्ध कराने में सफल नहीं हो पाते। परिणामतः परिवार के सदस्यों को अपने विकास के पर्याप्त अवसर नहीं मिलते। उनमें आपसी लड़ाई-झगड़े होने लगते हैं। आर्थिक स्तर अच्छा व सन्तोषप्रद न होने के कारण उनका जीवन-स्तर ऊँचा नहीं रह पाता। अतः जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने के लिए उनके आर्थिक स्तर में सुधार होना नितान्त आवश्यक है।

आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाने के दो उपाय हैं—(१) परिवार की आय में वृद्धि। (२) उपलब्ध आय का विवेकपूर्ण व्यय। गृह-निर्माताओं को प्रमुख धन्धे के अतिरिक्त अन्य कोई अर्धकालिक गृह-उद्योग धन्धा या अन्य कोई व्यवसाय करके आय को बढ़ाना चाहिए। आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए जितना महत्त्व आय में वृद्धि है उससे भी कहीं अधिक महत्त्व आय को मितव्ययितापूर्वक व्यय करने का ढंग है। ऐसे अनेक परिवार देखने को मिलते हैं जो अधिक आय होते हुए भी अपना जीवन स्तर ऊँचा नहीं उठा पाते। इसके विपरीत कुछ ऐसे भी देखने को मिलते हैं जो आय को इस प्रकार व्यय करते हैं कि उनका जीवन-स्तर आय के स्तर की अपेक्षा उच्च प्रतीत होता है। यहाँ आय की कमी की पूर्ति हेतु कुछ ढंग प्रस्तुत किए जा रहे हैं—

(१) गृह व लघु उद्योगों द्वारा—गृह व लघु उद्योगों द्वारा घर की आय में वृद्धि की जा सकती है। ग्रामीण क्षेत्रों में तो इनका अत्यधिक महत्त्व है। किसान वर्ष में केवल लगभग ६ माह खेती का काम करते हैं, शेष समय में बेकार बैठे रहते हैं। इस अवधि में गृह-उद्योग-धन्धों के द्वारा वे अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं। इसी

प्रकार शहर के लोग अपने मुख्य धन्धे से समय मिलने पर शेष समय इन धन्धों को अपना सकते हैं। गृह व लघु उद्योगों के द्वारा गृहिणियाँ भी धनोपार्जन कर सकती हैं। घर का काम करने के बाद बचे समय को इन्ही धन्धो मे प्रयुक्त कर सकती है। गृह व लघु उद्योग-धन्धे अनेक हैं जैसे पत्तल बनाना, बीड़ी बनाना, मिट्टी के खिलौने बनाना, चटाई व टोकरी बनाना, कताई व बुनाई करना, कम्बल दरी आदि बुनना, सिलाई का काम करना, पापड, बडी व मूँग की मंगोडी बनाना, फल व तरकारियों का सरक्षण करना, पुस्तकों की जिल्द बाँधना, कागज के फूल-पत्ती बनाना, लिफाफे बनाना, चित्रकारी करना, नक्काशी करना, पशु पालना आदि। अपनी सुविधा व रुचि के अनुकूल जो धन्धा उपयुक्त हो उसे अपनाना चाहिए। इनमे परिवार के बूढ़े-बच्चे स्त्री-पुरुष सभी योग दे सकते है।

(२) समय का मितव्ययितापूर्वक उपयोग—समय का जीवन में अत्यधिक महत्त्व है। स्त्रियों पर गृह-व्यवस्था व सचालन का पूरा भार होता है। अधिकाश स्त्रियाँ घर पर ही रहती हैं। उनका सारा समय गृहस्थी के कार्यों मे ही व्यय होता है। उन्हे अपने समय का सदुपयोग केवल गृहस्थी के कार्यों मे ही नहीं करना चाहिए, वरन् कुछ समय बचाकर लघु उद्योग व गृह-उद्योग-धन्धों मे लगाकर धन उपार्जन करना चाहिए। उन्हे गृहस्थी के दैनिक कार्यों को सम्पन्न करने के लिए समय का सोच समझ कर विभाजन कर लेना चाहिए, ताकि उन्हे उद्योग-धन्धों के लिए समय मिल सके। यदि आवश्यक समझे तो गृहस्थी के कामो मे अपने पति तथा परिवार के अन्य सदस्यों का भी सहयोग प्राप्त कर लें।

पुरुषो को भी चाहिए कि वे अवकाश काल को इधर-उधर घूमने व गप्पो में नष्ट न करें। उन्हे खाली समय मे कोई-न-कोई उद्योग-धन्धा अपनाना चाहिए।

(३) मौसम के अनुसार खाद्य सामग्री का सरक्षण तथा खाद्य पदार्थों का सदुपयोग—अधिकाशतः प्रत्येक खाद्य पदार्थ अपनी फसल के समय वर्ष के अन्य दिनों की अपेक्षा सस्ता रहता है। चतुर गृहिणी को चाहिए कि फसल के समय वर्ष भर के लिए खाद्यान्न खरीद कर रख ले। ऐसा करने से समय व धन की बचत होती है। इतना अवश्य है कि उसे खाद्यान्नो को सरक्षित रखने की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए, अन्यथा अन्न को कीड़े आदि हानिकारक कीटाणु हानि पहुँचा सकते हैं। इसी प्रकार कुछ सब्जियाँ जैसे प्याज, आलू, अरवी, लहसुन कुछ समय के लिए इकट्ठी खरीदकर धन की बचत की जा सकती है। गोभी, मटर, शलगम, आँवला, भिण्डी आदि को सुखाकर रखा जा सकता है। कुछ फल व तरकारियों के बीज व छिलके भी उपयोगी होते हैं। खरबूजे, कद्दू व तरबूज के बीजो को और आम व केले के छिलकों को सुखाकर काम में लाया जा सकता है। मटर, सेम, लौकी के छिलकों की सब्जी बनाई जा सकती है।

(४) घर पर खाली स्थान में फल व सब्जी उगाना—अधिकाश घरो के बाहर या घर के अन्दर आँगन मे खाली जगह पड़ी रहती है। इस स्थान का उप

सब्जी व फल उगाने में भली प्रकार किया जा सकता है। आलू, बैंगन, भिण्डी, सेम, गोभी, पालक, मूली, मिर्च आदि सब्जियाँ भली प्रकार उगाई जा सकती हैं। नीबू, पपीता, अमरूद, अंगूर के स्थायी पौधे लगाकर फल प्राप्त किए जा सकते हैं। घर के कूड़े-कर्कट को खाद के रूप में व नहाने-धोने के पानी को सिंचाई के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। यदि फल व सब्जी घर पर उगा ली जाती हैं तो इधर व्यय होने वाले धन को बचाया जा सकता है।

(५) विवेकपूर्ण व्यय—सोच-समझ कर मितव्ययितापूर्वक व्यय करने वाली गृहिणी थोड़े ही धन से परिवार के स्तर को ऊँचा बना सकती है। व्यय करते समय समसीमान्त उपयोगिता तथा प्रतिस्थापन के नियम का पालन करना चाहिए। इनके सम्बन्ध में आगामी अध्याय में विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। व्यय करते समय गृहिणी के समक्ष यह उद्देश्य रहना चाहिए कि सरोचित धन से परिवार के सभी सदस्यों को अधिकाधिक सुविधाएँ प्रदान की जा सकें।

(६) बचत की धनराशि का उचित विनियोग—एक बुद्धिमान गृहिणी अपनी आय का कुछ अंश भावी आकस्मिक आवश्यकताओं, दुर्घटनाओं तथा विवाह आदि कार्यों के लिए बचत के रूप में संगृहीत करती है। इस संग्रह की गई धनराशि का विनियोग कर देना चाहिए। इससे ब्याज या लाभांश के रूप में अतिरिक्त धन प्राप्त हो जाता है। धन का विनियोग किन-किन संस्थाओं में किया जा सकता है, इसके सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी 'बचत' नामक अध्याय में प्रदान की गई है।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. पारिवारिक आय के कौन-कौन-से साधन हैं? स्पष्ट कीजिए।
२. पारिवारिक व्यय के विभिन्न रूपों का वर्णन कीजिए।
३. व्यय के प्रभावित करने वाले तत्त्व कौन-कौन-से है? स्पष्ट रूप से वर्णन कीजिए।
४. पारिवारिक बजट बनाने के क्या लाभ हैं?
५. बजट में व्यय के प्रमुख मद कौन-कौन-से हैं? प्रत्येक के महत्त्व का वर्णन कीजिए।
६. एंजिल के बजट सम्बन्धी सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
७. एक मध्यम श्रेणी परिवार जिसकी मासिक आय ४०० रुपए है तथा परिवार में पति-पत्नी के अतिरिक्त १८ व ८ वर्ष की आयु के दो बालक हैं, का मासिक बजट बनाइए।
८. घर के व्यय का हिसाब रखने का महत्त्व क्या है? एक माह के व्यय का उदाहरण प्रस्तुत कीजिए।

अध्याय १०

बचत

व्यक्ति अपनी आय का अधिकांश भाग वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति पर व्यय कर देता है परन्तु वह भावी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु तथा आकस्मिक आर्थिक संकट से सुरक्षा के लिए आय का कुछ भाग बचा कर रखता है। इसी बचाई गई धनराशि को साधारण बोलचाल में बचत कहते हैं। चाहे यह धनराशि बक्स में बन्द करके रखी जाए अथवा किसी बैंक में जमा की जाए, परन्तु अर्थशास्त्र की दृष्टि में बचत वही धनराशि कहलाती है जो भावी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु बचाकर रखी जाय तथा उसका विनियोग उत्पादक कार्यों में किया जाए। यदि उस धनराशि का विनियोग नहीं किया जाता तो उसे संचय कहते हैं। अतः आय का वह भाग जो भावी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उत्पादक कार्यों में नियोजित किया जाता है, उसे बचत कहते हैं। बचत के प्रमुख लक्ष्य निम्नलिखित हैं—

(१) नौकरी छूटने आदि पर आय का बन्द हो जाना— बचत का एक प्रमुख उद्देश्य भविष्य में नौकरी छूटने, व्यापार बन्द होने, व्यापार में घाटा होने आदि के कारण आय बन्द हो सकती है। ऐसे संकट के समय बचत की धनराशि बड़े महत्त्व की होती है। ऐसे उदाहरण बहुधा देखने को मिलते हैं कि भविष्य के लिए बचत न करने वाले व्यक्तियों को उक्त संकट के समय भूखों मरना पड़ता है अथवा कर्ज लेकर गुजारा करते हैं। यदि व्यक्ति यह चाहता है कि अस्थायी रूप से आय के साधन बन्द हो जाने पर भी सम्मानपूर्वक अपना तथा अपने परिवार के सदस्यों का पालन-पोषण करता रहे तो उसे नियमित रूप से आय का कुछ भाग अवश्य ही बचा[illegible] चाहिए।

(२) शारीरिक असमर्थता के समय आर्थिक संरक्षण प्रदान करना—बचत का दूसरा महत्त्वपूर्ण लक्ष्य आकस्मिक दुर्घटना के फलस्वरूप शारीरिक असमर्थता से आर्थिक सुरक्षा है। गम्भीर रोग के कारण अथवा अन्य दुर्घटना के कारण कभी-कभी कोई व्यक्ति शारीरिक दृष्टि से कार्य करने में असमर्थ हो जाता है। कभी-कभी तो यह असमर्थता स्थायी रूप ग्रहण कर लेती है। ऐसे समय में बचत का विनियोग आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने में अत्यधिक सहायक होता है।

(३) वृद्धावस्था में आर्थिक संरक्षण—वृद्धावस्था एक स्वाभाविक एवं अनिवार्य अवस्था है। इस अवस्था में अधिकांशतः व्यक्ति शारीरिक दृष्टि से जीविकोपार्जन करने में प्रायः असमर्थ हो जाता है। इस समय उसे व्यय हेतु पर्याप्त धन की आवश्यकता होती है। इस अवस्था में बचत के विनियोग के माध्यम से प्राप्त आय से व्यक्ति आराम से जीवन व्यतीत कर सकता है।

(४) धनोपार्जन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु हो जाने पर परिवार का आर्थिक संरक्षण—जीवन बड़ा अनिश्चित होता है। कब किसको मृत्यु आ घेरे, कहा नहीं जा सकता। यदि परिवार में दुर्भाग्यवश धनोपार्जन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो परिवार को गम्भीर संकट का सामना करना पड़ता है। यदि व्यक्ति पहले से ही धन बचाकर उसका विनियोग करता रहा है तो इस संकट के समय में वह धन परिवार को आर्थिक संकट से संरक्षण करने में सहायक हो सकता है।

(५) भावी आवश्यकताओं की पूर्ति—परिवार में जब बच्चे छोटे-छोटे होते हैं तो उनकी आवश्यकताएं कम होती हैं परन्तु जैसे-जैसे वे बड़े होते जाते हैं वैसे ही वैसे उनकी शिक्षा-दीक्षा पर अधिक व्यय होता है। प्रारम्भ से ही माता-पिता नियमित रूप से बचत न करते गए तो बच्चों को उचित शिक्षा-दीक्षा देने में कठिनाई होती है। इसके अतिरिक्त उनकी शादी पर भी व्यय एकदम करना पड़ता है। इन सभी आवश्यकताओं के समय बचत की धनराशि काम आती है। यदि कोई व्यक्ति अपने सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए मकान बनवाना चाहता है, मोटर आदि वस्तुएँ खरीदना चाहता है तो उसे बचत करना अनिवार्य है।

अतः स्पष्ट है कि बचत व्यक्ति के संकटकालीन आर्थिक संरक्षण, भावी आवश्यकताओं की पूर्ति तथा सामाजिक स्तर को सुधारने की दृष्टि से बड़ी महत्त्वपूर्ण है। इस बचत को उत्पादक कार्यों में नियोजित किया जाना चाहिए। धन नियोजित करने के साधन अनेक हैं। इनमें से बैंक, डाकखाना बचत बैंक, सहकारी संस्थाएँ, बीमा, नैशनल सेविंग सर्टीफिकेट, लाटरी चिट व्यवस्था, इनामी बॉण्ड आदि महत्त्वपूर्ण साधन हैं।

जीवन-बीमा

जीवन-बीमा का अर्थ

जीवन-बीमा एक ऐसा करार है जिसमें स्वयं बीमेदार को अथवा विशेष

घटना घटने पर उसके उत्तराधिकारी को एक निश्चित धनराशि प्रदान की जाती है। जीवन-बीमा व्यक्ति अथवा उसके परिवार की आर्थिक सुरक्षा का सर्वोत्तम साधन है। इसे एक ऐसी संस्था बताया जाता है जो जोखिम को समाप्त करती है तथा अनिश्चितता को निश्चितता में परिवर्तित कर देती है। मानव-जीवन बड़ा अनिश्चित है, कहा नहीं जा सकता कब मृत्यु उसके अस्तित्व को समाप्त कर दे। मानव-जीवन मे इसी अनिश्चितता अथवा मृत्यु के कारण होने वाली हानि से सुरक्षा प्राप्त करने की अत्यधिक आवश्यकता है। प्रायः एक परिवार भोजन, वस्त्र तथा आवास सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नियमित रूप से जीविकोपार्जन करने वाले सदस्य पर निर्भर करता है। जब तक वह सदस्य जीवित रहता है तथा नियमित रूप से धन अर्जित करता रहता है परिवार की आवश्यकताएँ पूर्ण होती रहती हैं तथा वह सुरक्षा का अनुभव करता है परन्तु यदि दुर्भाग्य से सरक्षक की मृत्यु हो जाए तो परिवार को बड़ी विषम परिस्थिति व कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। इन परिस्थितियों में जीवन-बीमा बड़ा सहायक सिद्ध होता है।

जीवन-बीमा के प्रमुख लाभ

जीवन-बीमा के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं—

(१) अन्य बचत योजनाओं की तुलना में अधिक अच्छा—अन्य बचत योजनाओ के विपरीत इस योजना मे मृत्यु जोखिम से पूर्ण आर्थिक सुरक्षा प्रदान की जाती है। अन्य बचत योजनाओं मे व्यक्ति को जो धनराशि जमा की जाती है वही मामूली ब्याज सहित प्राप्त होती है परन्तु जीवन-बीमा मे वह निधि मिलती है जिसका बीमा कराया गया है परन्तु यदि बीमेदार की मृत्यु पॉलिसी के परिपक्व होने से पूर्व ही हो जाती है तो उसे बीमा की गई पूर्ण निधि प्राप्त होती है चाहे उसने बीमे की पूरी धनराशि जमा नही की हो। इस प्रकार परिवार को पर्याप्त धनराशि इकट्ठी ही मिल जाती है।

(२) जीवन-बीमा बचत के लिए प्रोत्साहित ही नहीं करता वरन् विवश करता है—अधिकाश व्यक्तियो मे इतनी दृढ इच्छा-शक्ति नही होती कि वे लम्बी बचत योजना मे नियमित रूप से धन जमा करते रहें, क्योंकि अपनी सीमित आय को वे विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति पर व्यय कर सकते है। यदि वे किसी बचत योजना के अन्तर्गत कुछ धन एकत्रित कर भी लें तो साधारण-सी आवश्यकता उत्पन्न होने पर भी उसे निकालकर किसी कम महत्त्वपूर्ण आवश्यकता की पूर्ति पर व्यय कर सकते हैं।

इसके विपरीत जीवन-बीमा की कुछ किस्तें चुकाने के पश्चात् [illegible] के लिए आदत मे परिणत हो जाता है तथा वह इन किस्तों [illegible] इतना ध्यान देने लगता है जैसे किसी गिरवी रखी वस्तु पर [illegible]

(३) **सुगम भुगतान तथा लेनदारों से सुरक्षा**—बीमेदार अपनी मृत्यु के पश्चात् धन दिये जाने के सम्बन्ध में उत्तराधिकारी के नामों की घोषणा कर सकता है। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों को ही बीमे की धनराशि दी जाती है। विवाहित स्त्री सम्पत्ति अधिनियम (Married Women's Property Act) के अधीन पत्नी तथा अन्य बच्चों के कल्याण हेतु ली गई पॉलिसी का धन लेनदारों से पूर्णतः सुरक्षित होता है। इसमें पॉलिसी का स्थानान्तर (Assignment) आवश्यक नहीं है।

(४) **माफीदारों के लिए धन उत्तरदान की व्यवस्था करना**—भुगतान के विकल्पों द्वारा जीवन बीमा निगम बीमेदार को माफीदार के हित में पॉलिसी की धनराशि को सुरक्षित रखने की सुविधा प्रदान करता है। बहुधा देखा जाता है कि पति अथवा पिता ने अपनी पत्नी अथवा पुत्र के लिए जो निधि बीमे द्वारा एकत्रित की है. उसे सट्टेबाजी अथवा अनुचित विनियोगों में या भोग-विलासपूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति में शीघ्र ही व्यय कर दिया जाता है। इनसे बचने के लिए यदि बीमादार चाहे तो वह व्यवस्था कर सकता है कि उसकी मृत्यु पर निगम उसके उत्तराधिकारी को पूरा धन इकट्ठा देने के स्थान पर कई किस्तों में दिया जाए।

(५) **पॉलिसी की तुरन्त क्रियाशीलता तथा शीघ्र ऋण लेने की उपयुक्तता**—कुछ निश्चित प्रारम्भिक अवधि के पश्चात् यदि बीमेदार पॉलिसी को आगे चलाने में असमर्थ हो तो वह उसे नकद वापिसी के लिए चुकता कर सकता है। वह स्थायी आर्थिक कठिनाइयों से छुटकारा पाने के लिए अपनी पॉलिसी की जमानत पर ऋण ले सकता है। व्यापारिक कार्यों के लिए भी पॉलिसी की जमानत पर ऋण लिया जा सकता है।

(६) **आय कर से मुक्ति**—व्यक्ति अपनी आय का जो अंश बीमे की किस्तों के रूप में जमा करता है उस पर आय कर में छूट मिलती है।

(७) **सम्पत्ति कर**—किसी धनी व्यक्ति की मृत्यु होने पर सम्पत्ति कर चुकाने के लिए बीमा सर्वोत्तम साधन है, क्योंकि बीमा कर लेने पर कर चुकाने के लिए पर्याप्त धन मिल जाता है। कम मूल्य में सम्पत्ति बेचने की आवश्यकता नहीं होती।

जीवन-बीमा कराने के लिए आवश्यक ग्राह्यता

बीमा कराने वाले व्यक्ति को उन ग्राह्यताओं से परिचित होना चाहिए जिनके आधार पर ही जीवन-बीमा निगम किसी व्यक्ति का बीमा स्वीकार करता है। ये ग्राह्यताएँ निम्नलिखित हैं—

१. बीमेदार की वर्तमान स्वास्थ्य एवं शारीरिक रचना को दृष्टिगत रखा जाता है। जो व्यक्ति सदा बीमार रहते हैं, जिनका स्वास्थ्य ठीक नहीं है अथवा जिनमें गन्दी आदतें हैं अथवा जिनका स्वभाव ठीक नहीं है, उनका जीवन-बीमा नहीं किया जाता।

२. बीमेदार के जीवन का इतिहास अर्थात् अतीत में उसे कोई गम्भीर रोग तो नही था तथा उसमें कोई बुरी आदतें तो नही थी।

३ कुछ व्यवसाय इस प्रकार के होते हैं जिनमें जीवन शकायुक्त रहता है। ऐसे व्यवसाय वालों का बीमा करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक प्रीमियम अदा करना पड़ता है।

४. बीमेदार के परिवार के इतिहास को दृष्टिगत रखा जाता है। यह देखा जाता है कि परिवार के सदस्यो का स्वास्थ्य तथा जीवन अवधि किस प्रकार की रही है। वश-परम्परा मे कोई रोग तो परिवार के सदस्यो मे संक्रमित नही होता रहा है।

५. बीमेदार जल्दी-जल्दी व्यवसाय तो परिवर्तित नही करता। व्यवसाय मे बार-बार परिवर्तन करने मे जीवन का जोखिम बढ़ जाता है।

६. पर्दा करने वाली स्त्रियों का बीमा नही किया जाता।

७. गर्भावस्था मे स्त्री का बीमा नही किया जाता।

८. जिन स्त्रियो को बार-बार गर्भपात होते रहते हैं, उनका बीमा सामान्यतः नही किया जाता।

९. स्त्रियों का बीमा उनकी आयु, व्यवसाय शैक्षिक स्तर, सामाजिक व आर्थिक दशा तथा वैवाहिक स्तर के आधार पर किया जाता है। साधारणत. उन स्त्रियों का बीमा नही किया जाता जो धन नही कमाती हैं।

१०. लैंगिक भेद के कारण स्त्रियों मे निर्धारित प्रीमियम से अधिक धनराशि ली जाती है।

११. बीमेदार की आर्थिक स्थिति को भी दृष्टिगत रखा जाता है। उसकी आर्थिक क्षमता पॉलिसी का प्रीमियम नियमित रूप से देने की होनी चाहिए। १००० रुपए का बीमा कराने वाले की आय कम-से-कम ५० रुपए प्रतिमास होनी चाहिए। यदि अधिक धनराशि का बीमा कराना है तो उसी के अनुसार आय भी अधिक होनी चाहिए।

जीवन-बीमा के उद्देश्य

जीवन-बीमा निगम ने निम्नलिखित तीन प्रमुख उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ही बीमा का कार्य स्वीकार किया है—

(१) परिवार का संरक्षण—बीमा द्वारा बीमेदार के परिवार को आर्थिक संरक्षण प्रदान करना जीवन-बीमा का सर्वप्रथम उद्देश्य है। जीविकोपार्जन करने वाले सदस्य की मृत्यु हो जाने पर भी परिवार को आर्थिक सकट का सामना नही करना पड़ता है।

(२) वृद्धावस्था के लिए प्रावधान—वृद्धावस्था में सामान्यतः प्रत्येक व्यक्ति की

धनोपार्जन क्षमता कम या प्रायः समाप्त हो जाती है। इस अवस्था में व्यक्ति को आर्थिक संकट का सामना न करना पड़े, इस उद्देश्य से जीवन-बीमा आवश्यक है।

(३) **सम्पत्ति कर चुकाने के लिए प्रावधान**—धनी व्यक्ति की मृत्यु पर उसके उत्तराधिकारियों को सम्पत्ति कर देने के लिए सम्पत्ति का कुछ भाग सस्ते मूल्य पर बेचना पड़ता है। इससे उन्हें हानि होती है। जीवन-बीमा का उद्देश्य इस अवसर पर धन की व्यवस्था करने में योग देना है।

उक्त सामान्य उद्देश्यों के अतिरिक्त विशेष परिस्थितियों में उनके निम्न दो उद्देश्य हैं—

१. शैक्षिक कार्यों के हेतु दिए गए ऋण के लिए जमानत के रूप में कार्य करना इसका उद्देश्य है।
२. चिकित्सालय, विद्यालय आदि परोपकारी संस्थाओं के लिए दान की व्यवस्था करना।

जीवन-बीमा के प्रकार

आर्थिक सुरक्षा सम्बन्धी विभिन्न आवश्यकताओं के अनुसार जीवन-बीमा कई प्रकार के होते हैं। जीवन-बीमा के प्रमुख प्रकार संक्षेप में निम्नलिखित हैं—

१. आजीवन बीमा (Whole Life Insurance)—इस योजना का प्रमुख उद्देश्य बीमेदार की मृत्यु के पश्चात् उसके परिवार के लोगों को आर्थिक संरक्षण प्रदान करना है। इसका धन बीमेदार की मृत्यु पर ही मिलता है। बीमेदार को जीवन भर किस्तें देनी पड़ती हैं। यह सबसे सस्ती बीमा योजना है। जो व्यक्ति सम्पत्ति कर के रूप में धन छोड़ना चाहते हैं, उनके लिए योजना सर्वोत्तम है। इस योजना में १००० रुपये से कम की पॉलिसी नहीं दी जाती। इस योजना का सबसे बड़ा दोष यह है कि इससे बीमेदार को स्वयं को लाभ नहीं हो पाता।

२. सीमित-भुगतान आजीवन बीमा (The Limited Payment Life Policy)—इस योजना द्वारा भी परिवार की आर्थिक सुरक्षा होती है परन्तु इसमें प्रीमियम का भुगतान बीमेदार को जीवन भर नहीं करना पड़ता। समय की सीमा निर्धारित कर दी जाती है। पूरी किस्तें चुकाने के बाद धन बीमेदार की मृत्यु पर ही परिवार को मिलता है। यदि पूरी किस्तें चुकाने से पूर्व ही बीमेदार की मृत्यु हो जाती है तब भी पूरा धन मृत्यु के समय परिवार को मिलेगा। इस योजना के अन्तर्गत कम-से-कम ५००) की पॉलिसी होती है। ये लाभ सहित तथा लाभ रहित दोनों ही प्रकार की होती है।

३. बन्दोबस्ती (Endowment Insurance)—यह बीमे की अत्यधिक लोकप्रिय योजना है, क्योंकि इसमें केवल बीमेदार की मृत्यु पर ही धन नहीं मिलता, बल्कि बीमे की अवधि पूर्ण हो जाने पर इन दोनों में से जो पहले हो, पूरा धन बीमेदारको अथवा उसके परिवार को मिल जाता है परन्तु आजीवन बीमे में बीमेदार की

मृत्यु हो जाने पर ही धन मिलता है। इसलिए इस योजना के अन्तर्गत आजीवन बीमे की अपेक्षा प्रत्येक किस्त अधिक रुपए की चुकानी पड़ती है। बच्चों के जीवन पर दी गई पॉलिसियों पर ऋण नहीं दिया जाता। बन्दोबस्ती बीमा भी लाभ सहित एवं लाभ रहित दो प्रकार का होता है।

४. मिश्रित जीवन बन्दोबस्ती बीमा (The Joint Life Endowment Assurance on Two Lives)—इस योजना के अन्तर्गत बीमा की गई धनराशि निर्धारित समयावधि पूर्ण होने पर अथवा दो बीमेदारों में से किसी एक की मृत्यु हो जाने पर, जो घटना पहले हो, उस समय मिल जाती है। मिश्रित जीवन-बीमा की पॉलिसियाँ कुछ निश्चित चुने हुए वर्गों के जीवन के लिए ही दी जाती हैं। इस योजना की बीमा की जाने वाली न्यूनतम धनराशि २००० रुपये है। ये पॉलिसियाँ भी लाभ सहित व लाभ रहित दोनों ही प्रकार की होती हैं।

५. द्वि-बन्दोबस्ती पॉलिसी (Double Endowment Policy)—इसमें यदि बीमेदार की मृत्यु जल्दी हो जाती है तो परिवार को बीमा की गई धनराशि मिल जाती है। इसके अतिरिक्त इसका महत्त्वपूर्ण लाभ यह है कि यदि बीमेदार चुनी गई समय की अवधि तक जीवित रहता है तो उसे बीमा की गई मूल धनराशि का दुगुना धन मिलता है।

बीमे का यह प्रकार उन लोगों के लिए विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है जो कि शारीरिक असमर्थता के कारण बीमे से अन्य किसी प्रकार का लाभ नहीं उठा सकते। ६५ वर्ष की आयु के पश्चात् परिपक्व होने वाली पॉलिसी इस योजना के अन्तर्गत नहीं दी जाती तथा इसमें लाभ नहीं मिलता। एक हजार रुपए से कम धनराशि की पॉलिसी इसमें नहीं दी जाती।

६. निश्चित अवधि (विवाह) बन्दोबस्ती पॉलिसी तथा शिक्षा-वृत्ति पॉलिसी (The Fixed-term (Marriage) Endowment Policy and the Educational Annuity Policy)—माता-पिता तथा संरक्षकों को अपने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा तथा विवाह की विशेष चिन्ता रहती है। विवाह अथवा शिक्षा के उद्देश्य से यह सर्वोत्तम बीमा योजना है। इसमें यदि बीमेदार की मृत्यु समयावधि पूर्ण हो जाने से पूर्व ही हो जाती है तो मृत्यु होने के पश्चात् किस्तें नहीं चुकानी पड़ती तथा समयावधि के अन्त में पूरा धन निश्चित कार्य विवाह अथवा शिक्षा के लिए मिलता है। यदि बीमेदार जीवित रहता है तो नियमित रूप से किस्तें देते रहने पर अवधि पूर्ण होने पर धन मिल जाता है।

निश्चित अवधि (विवाह) बन्दोबस्ती बीमे में धन इकट्ठा मिलता है परन्तु शिक्षा वृत्ति पॉलिसी में धन वार्षिक वृत्ति में मिलता है। ये वार्षिक वृत्ति ५ वर्ष तक अर्द्ध-वार्षिक किस्तों के रूप में दी जाती हैं। दोनों ही प्रकार की पॉलिसियों की न्यूनतम बीमा की जाने वाली धनराशि एक हजार रुपए होती है। ये लाभ-रहित पॉलि-

सियाँ होती हैं। शिक्षा-वृत्ति की बीमा किस्त विवाह बन्दोबस्ती योजना की किस्त से कुछ कम होती है।

७. बच्चों अथवा प्रौढ़ों के लिए विशुद्ध बन्दोबस्ती पॉलिसी (The Pure Endowment Policy for Adults of Children)—यह योजना ऐसे व्यक्तियों के लिए है जो स्वास्थ्य-परीक्षा नहीं कराना चाहते अथवा जिन्हें स्वास्थ्य के कारण अन्य बीमा योजनाओं का लाभ नहीं मिल सकता। अपने लिए अथवा अपने परिवार के आर्थिक संरक्षण के लिए अनिवार्य बचत के रूप में ही इस योजना के अन्तर्गत लोग बीमा कराते हैं। बीमा की गई धनराशि समयावधि पूर्ण होने पर बीमेदार यदि जीवित नहीं रहता तो उसे स्वयं मिल जाती है। यदि बीच में ही उसकी मृत्यु हो जाती है तो प्रीमियम के रूप में जमा की गई समस्त धनराशि, बिना किसी प्रकार का कटोतरा किए, उत्तराधिकारी को वापस कर दी जाती है।

इस योजना के अन्तर्गत अधिक-से-अधिक २५ वर्ष की अवधि तथा कम-से-कम १००० रुपए की धनराशि के लिए ही बीमा किया जा सकता है। यह पॉलिसी लाभ रहित होती है।

८. तीन लाभ बीमा—यह स्वयं बीमेदार की वृद्धावस्थामें तथा उसकी मृत्यु पर उसके आश्रितों की आर्थिक सुरक्षा का निश्चित प्रबन्ध करने वाले साधारण व्यक्तियों के लिए बड़ी आकर्षक व अद्भुत बीमा योजना है। इसके निम्नलिखित तीन लाभ हैं—

(अ) बीमा की गई धनराशि जो कि २½ प्रतिशत वार्षिक के हिसाब से बढ़ती रहती है तथा यदि निश्चित समयावधि से पूर्व ही बीमेदार की मृत्यु हो जाती है तो इसका भुगतान किया जाता है।

(ब) समयावधि पूर्ण होने तक बीमेदार जीवित रहता है तो उसे बीमा की गई मूल धनराशि के बराबर नकद भुगतान कर दिया जाता है।

(स) निश्चित समयावधि पूर्ण हो जाने के बाद यदि बीमेदार की मृत्यु होती है तो बीमा की गई मूल धनराशि के बराबर धन (Free Paid-up Assurance) के रूप में मिल जाता है।

निश्चित समयावधि समाप्त हो जाने पर लाभ क्रमांक 'ब' तथा 'स' के स्थान पर निम्नलिखित में से कोई एक विकल्प बीमेदार चुन सकता है—

(क) बढ़ा हुआ (Paid-up Assurance)।

(ख) बढ़ा हुआ नकद धन।

इस योजना के अन्तर्गत १५, २० तथा २५ वर्ष की अवधि के लिए कम-से-कम १००० रुपये की निधि का बीमा किया जा सकता है।

९. प्रत्याशित बन्दोबस्ती बीमा (The Anticipated Endowment Assurance Policy)—यह योजना उन लोगों के लिए विशेष हितकारी है, जिन्हें अपनी

वृद्धावस्था तथा परिवार के आर्थिक संरक्षण के अतिरिक्त समय-समय पर इकट्ठी धनराशि की आवश्यकता अनुभव होती है। इस योजना मे बीमा की गई धनराशि का भुगतान निम्नानुसार होता है—

(अ) बीमा की गई धनराशि का १/५ बीमेदार के जीवित रहने की स्थिति मे ५, १० या १५ वर्ष बाद क्रमानुसार १५, २० अथवा २५ वर्ष के लिए किए गए बीमा मे।

(ब) बीमेदार के जीवित रहने की स्थिति मे बीमा की धनराशि का अगला १/५ भाग १०, १५, अथवा २० वर्ष के बाद क्रमशः १५, २० अथवा २५ वर्ष की अवधि के बीमा के लिए।

(स) बीमेदार की जीवित रहने की स्थिति में बीमा की गई धनराशि का शेष ३/५ भाग निश्चित समयावधि समाप्त होने पर।

यदि समयावधि पूर्ण होने से पूर्व ही बीमेदार की मृत्यु हो जाती है तो बीमा किया गया पूरा धन बिना किसी प्रकार का कटौतरा किए अदा किया जाता है। इस *योजना के अन्तर्गत १५, २० तथा २५ वर्ष के लिए कम-से-कम १००० रुपए की* पॉलिसी प्रदान की जाती है।

१०. बहु-उद्देशीय बीमा योजना (Multi purpore Policy)—जैसा कि इसके नाम से ही विदित होता है, यह योजना बीमेदार के विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति करने के उद्देश्य से प्रारम्भ की गई है। निश्चित समयावधि पूर्ण होने से पूर्व ही यदि बीमेदार की मृत्यु हो जाती है तो इसमे निम्नलिखित व्यवस्थाओ का प्रावधान है—

(अ) निर्वाचित की गई समयावधि के शेष समय के लिए परिवार के पालन-पोषण के लिए नियमित आय की व्यवस्था।

(ब) बीमेदार की बीमारी तथा मृत्यु के समय किए किए अतिरिक्त व्यय, जैसे—दवाइयाँ, धार्मिक कार्य, कानूनी कार्य आदि के लिए तुरन्त ही इकट्ठी धनराशि देना।

(स) बीमेदार की मृत्यु के पश्चात् दो वर्ष की अल्पावधि तक परिवार की सुव्यवस्था हेतु आय के पूरक के रूप मे धनराशि का प्रबन्ध।

(द) निर्वाचित की गई समयावधि पूर्ण हो जाने पर बीमा की गई धनराशि *के शेष भाग का भुगतान।*

यह पॉलिसी अधिकतम ३० वर्ष की अवधि अथवा अधिकतम ६० वर्ष की आयु तक लाभ सहित अथवा लाभ रहित दी जाती है।

बैंक

बैंक वह संस्था है जो उधार देने अथवा विनियोग करने हेतु जनता से धन प्राप्त करती है तथा उनके माँगने पर चैक, ड्राफ्ट, आर्डर अथवा अन्य किसी पत्र द्वारा जमा हुई धनराशि का भुगतान करती है। इस प्रकार बैंक के प्रमुख दो कार्य हैं—

१. जनता का धन जमा करना।
२. माँग होने पर जमा धनराशि का चैक, ड्राफ्ट आदि पत्रों के माध्यम से वापस करना।

रुपया जमा करने का कार्य प्रत्येक बैंक का महत्त्वपूर्ण कार्य है। समाज में अधिकांश लोग अपनी आय में से अधिक-से-अधिक मात्रा में धन बचाने का प्रयत्न करते हैं। इस संचित धनराशि को बैंक में जमा किया जाता है। ऐसा करने से उन्हें ब्याज के रूप में बचत से आय होने लगती है तथा यदि आवश्यकता पड़े तो कभी भी बचत के धन को निकाल कर व्यय किया जा सकता है।

जमा करने के बैंक में तीन प्रमुख खाते होते हैं—

(१) मियादी या निश्चित अवधि का जमा खाता (Fixed Deposit Account)।
(२) बचत खाता (Savings Account)
(३) चालू खाता (Current Account)

(१) मियादी या निश्चित अवधि का जमा खाता—यह एक ऐसा खाता है जिसमें धन एक निश्चित अवधि के लिए जमा किया जाता है। यह अवधि प्रायः तीन माह से पाँच वर्ष तक होती है। सामान्यतः जमाकर्ता अवधि समाप्त होने के पश्चात् ही धन निकालते हैं। इसलिए ब्याज की दर अन्य खातों की अपेक्षा ऊँची होती है। जमा की अवधि जितनी अधिक होगी, उसी के अनुसार ब्याज भी कुछ अधिक होता जाता है। ग्राहकों की सुविधा के लिए इस प्रकार के खातों में से अवधि समाप्त होने से पूर्व भी धनराशि निकाली जा सकती है परन्तु इस पर कुछ कटौती (Discount) काटी जाती है।

धन जमा करते समय बैंक जमाकर्ता को धन-प्राप्ति की रसीद दे देती है। इस रसीद का हस्तान्तरण नहीं हो सकता, न इसका उपयोग चैक की तरह किया जा सकता है। इसलिए धन वापस लेते समय इस रसीद को बैंक वापस ले लेती है।

इस खाते में ब्याज के दर समय-समय पर परिवर्तित होते रहते हैं, इस समय ब्याज के दर निम्नानुसार हैं—

एक वर्ष के लिए जमा निधि पर ५½ रु० प्रति सैकड़ा
दो वर्ष ,, ,, ,, ५¾ रु० ,, ,,
तीन वर्ष ,, ,, ,, ६ रु० ,, ,,
पाँच वर्ष ,, ,, ,, ६¼ रु० ,, ,,

(२) बचत खाता (Savings Account)—यह खाता उन लोगों के लिए अधिक उपयुक्त होता है जो कभी-कभी बहुत छोटी मात्रा में रुपया जमा करते हैं। अधिकांश बैंकों में कम-से-कम ५० रुपये की प्रारम्भिक राशि से बचत खाता खोला जा सकता है। खाता बनाए रखने के लिए जमाकर्ता से कुछ नहीं लिया जाता।

जिन खातों में लगातार ६ महीने तक २५ रुपए से कम धनराशि रहेगी तो बैंक १ रुपया प्रति छमाही के हिसाब से खाता रखने का व्यय वसूल करेगा।

बैंक में वे लोग भी खाते खोल सकते हैं जो अंग्रेजी तथा देवनागरी के अतिरिक्त किसी भी अन्य लिपि में हस्ताक्षर करते हों। ऐसे खातेदारों को एक ऐसा बॉण्ड लिखकर देना होता है जिसमें बैंक हानि से सुरक्षित रहे। जो खातेदार ऐसा बॉण्ड नहीं देंगे तो उनके चैक का भुगतान तभी हो सकेगा जबकि वे चैक पर हस्ताक्षर ऐसे अधिकारी के सामने करेंगे या हस्ताक्षर प्रमाणित करायेंगे जिसका पद एकाउन्टेन्ट से निम्न न हो, अन्यथा उनके चैकों का भुगतान रोकने का अधिकार बैंक को होगा।

निम्नलिखित व्यक्ति खाता खोल सकते हैं—

१. स्वयं अपने नाम,
२. संरक्षक के रूप में नाबालिग के नाम,
३. दो या अधिक व्यक्तियों के नाम संयुक्त खाते जिसमें किसी को भी अथवा सभी को संयुक्त रूप से धन निकालने का अधिकार हो।

धन जमा करना—इस खाते में व्यक्ति सप्ताह में चाहे जितनी बार रुपया जमा करा सकता है परन्तु खाते में धनराशि की न्यूनतम सीमा ५ रुपया तथा अधिकतम सीमा पचास हजार रुपए होगी। धन नकदी, चैक अथवा ड्राफ्ट के रूप में जमा कराया जा सकता है।

धन निकालना—धन निकालने सम्बन्धी बैंक के नियम निम्नलिखित हैं—

(१) सप्ताह में केवल दो बार ही धन निकाला जा सकता है।

(२) सामान्यतः एक बार में धन निकालने की न्यूनतम सीमा ५ रु० तथा अधिकतम सीमा ५०० रुपए होगी। यदि ५०० रुपए से अधिक धन निकालना हो तो उसकी लिखित सूचना ग्राहक को एक सप्ताह पूर्व बैंक को देनी होगी। यदि खाता समाप्त किया जा रहा हो तो यह सीमा कार्यशील नहीं होती।

(३) चैक द्वारा धन निकालने की अनुमति उन्हीं खातेदारों को दी जाती है जिनका बैलेंस कम-से-कम ३०० रुपए रहता हो।

(४) नाबालिग के खाते से धन निकालते समय संरक्षक को यह प्रमाणपत्र प्रस्तुत करना पड़ेगा कि धन नाबालिग के उपयोग के लिए है।

(५) अशिक्षित खातेदारों को चैक द्वारा धन निकालने की अनुमति नहीं दी जाती है। अशिक्षित व्यक्ति यदि धन निकालना चाहता है तो उसे बैंक के मैनेजर के समक्ष रुपए निकालने वाले फार्म पर निशानी अँगूठा करना होगा अथवा वह ऐसे दो व्यक्तियों से साक्षी के रूप में हस्ताक्षर कराए जिन्हें बैंक जानता हो।

पास-बुक—प्रत्येक खातेदार को पास-बुक दी जाती है जिसमें उसका नाम, पता, खाते की संख्या तथा बैंक के व्यवहार का विवरण अंकित होता है। प्रत्येक

धन निकालते समय अथवा जमा करते समय भेजे गए चैक अथवा जमा कराने के फार्म पर खाते की संख्या अवश्य अङ्कित की जानी चाहिए ।

खाता वन्द करना—खातेदार अपनी इच्छानुसार कभी भी खाता वन्द कर सकता है। इसके लिए उसे एक प्रार्थनापत्र देना होता है। जिसके साथ पास-बुक भी भेजी जाती है। वैंक में जितना वैलेंस होता है, वह खाता वन्द करते समय पूरा-का-पूरा वापस मिल जाता है।

व्याज—व्याज की दर समय-समय पर वदलती रहती है। व्याज की धनराशि कर मुक्त नहीं है।

(३) चालू खाता—यह खाता व्यापारियों के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है। इस खाते में सप्ताह में चाहे जितनी वार धन निकाला या जमा किया जा सकता है। इस खाते में जमा धनराशि पर वहुत कम व्याज मिलता है।

डाकखाना वचत वैंक
(Post Office Savings Bank)

डाकखाने अधिकोषण कार्य भी करते हैं। प्रायः प्रत्येक डाकखाना वचत वैंक का कार्य करता है। भारत शासन ने डाकखाने की वचत वैंक की स्थापना इस उद्देश्य से की है कि व्यक्ति सरलता से अपनी वचत को जमा कर सकें तथा उनमें मितव्ययिता की आदत को प्रोत्साहन मिले। इसीलिए इसमें चालू खाते का कार्य नहीं किया जाता। यदि डाकखाने के अधिकारियों को यह विश्वास हो जाय कि वचत तथा मितव्ययिता के उद्देश्य से धन नहीं जमा किया जा रहा है तो उस हिसाव को तुरन्त ही वन्द किया जा सकता है।

अपने विभागीय अधिकारियों तथा आय कर के अधिकारियों के अतिरिक्त डाकखाने के वैंक का कार्य करने वाले अधिकारी किसी भी अन्य व्यक्ति को जमा-कर्ता का नाम, जमा अथवा निकाली गई धनराशि के सम्वन्ध में किसी को नहीं वताते। ये सभी वातें पूर्णतः गुप्त रखी जाती हैं।

डाकखाने में कोई भी व्यक्ति अपने नाम पर, उस नावालिग व्यक्ति के नाम पर जिसका वह संरक्षक है अथवा उस पागल व्यक्ति के नाम पर जिसका वह न्यायालय द्वारा संरक्षक नियुक्त कर दिया गया है, वचत वैंक में खाता खोल सकता है। दो वालिग व्यक्तियों के नाम संयुक्त खाता भी खोला जा सकता है, जिसकी धनराशि दो जमाकर्ताओं को संयुक्त रूप से अथवा किसी एक को निकालने का अधिकार होता है।

डाकखाना वचत वैंक में खाता खोलने सम्वन्धी सीमाएँ निम्नलिखित हैं—

(१) एक व्यक्ति अपने नाम पर अथवा किसी दूसरे के साथ संयुक्त रूप से एक ही खाता खोल सकता है।

(२) उक्त खाते के अतिरिक्त वह किसी नाबालिग अथवा पागल व्यक्ति के नाम पर भी पृथक् से कई खाते खोल सकता है।

(३) नाबालिग को, चाहे उसके नाम पर उसके सरक्षक ने खाता खोल दिया हो, उसे अपने नाम से खाता खोलने का अधिकार है।

(४) तीन या इससे अधिक व्यक्तियों के नाम से सयुक्त खाते नही खोले जा सकते।

(५) ५ रुपये से कम धनराशि से खाता नही खोला जा सकता है। खाता खोलने के बाद १ रुपए से कम धनराशि जमा नही की जाती।

(६) बचत बैंक मे एक व्यक्ति अधिक-से-अधिक २५००० रुपए की धनराशि अपने नाम पर जमा नही करा सकता। सयुक्त खाते मे यह सीमा ५०००० रुपए तक है।

बचत बैंक में खाता खोलना

यदि कोई व्यक्ति डाकखाने की बचत बैंक मे खाता खोलना चाहता है तो उसे समीप के किसी भी डाकखाने से निर्धारित फार्म प्राप्त कर उसकी पूर्ति करके जमा की जाने वाली धनराशि सहित बचत बैंक का कार्य करने वाले अधिकारी को दे देना चाहिए। कोई भी स्त्री अपने नाम से अपने एजेण्ट के माध्यम से, यदि वह विवाहित है तो अपने पति अथवा एजेण्ट के माध्यम से खाता खोल सकती है। उसके एजेण्ट अथवा पति को यह घोषण-पत्र हस्ताक्षरित करना पडता है कि वह बैंक के नियमो को समझाती व स्वीकार करती है। बचत बैंक का अधिकारी भरे हुए फार्म के साथ रुपए प्राप्त कर जमाकर्ता के नाम मे पास-बुक बनाएगा। उसमे जमा धनराशि को अकित करके तथा पासबुक पर डाकखाने की मुहर लगाकर जमाकर्ता को दे देगा। यदि उप-डाकखाने में खाता खोला जाता है तो पास-बुक मुख्य डाकखाने मे बनकर आती है। उप-डाकखाने से जमाकर्ता को पास-बुक मिलने तक के लिए रुपए प्राप्ति की रसीद दे दी जाती है।

इसके उपरान्त जमाकर्ता पास-बुक ले जाकर कार्य के दिनों मे कभी भी धन जमा कर सकता है अथवा नियमानुसार धन निकाल सकता है।

डाकखाना पास-बुक का कोई मूल्य नही लेता। एक पासबुक भर जाती है तो उसको डाकखाना अपने पास रख लेता है तथा उसके स्थान पर दूसरी पास-बुक दे दी जाती है। परन्तु यदि पासबुक खो जाती है तो दूसरी पास-बुक प्राप्त करने के लिए जमाकर्ता को एक रुपया जमा कर नई पासबुक दी जाती है।

धन जमा करना—यदि किसी व्यक्ति का खाता मुख्य डाकघर मे है तो वह उस डाकघर के अधीन किसी भी डाकखाने को बैंक मे धन जमा कर सकता है। यदि किसी उप-डाकघर मे खाता है, तो उस उप-डाकघर के मुख्य कार्यालय तथा उसके अधीन किसी भी उप-डाकघर में धन जमा किया जा सकता है। इसी प्रकार

डाकघर में खोले गए खाते में धन जमा करने के लिए उस ब्रांच डाकघर के मुख्य डाकघर तथा उसके अधीन किसी भी उप-डाकघर अथवा ब्रांच डाकघर में धन जमा किया जा सकता है। जमाकर्ता चैक द्वारा भी डाकखाने की बैंक में धन जमा कर सकता है।

धन निकालना—यदि जमाकर्ता अपने खाते से धन निकालना चाहता है तो उसे निर्धारित फार्म भरकर पास-बुक के साथ डाकखाने में स्वयं या अभिकर्ता (Agent) के द्वारा प्रस्तुत करना चाहिए। बैंक अधिकारी द्वारा जमाकर्ता के हस्ताक्षरों का उसके नमूने के हस्ताक्षरों से मिलान कर निकाली जाने वाली धनराशि जमाकर्ता या उसके अभिकर्ता को दे दी जाती है। यदि जमाकर्ता के हस्ताक्षरों में अन्तर है तो किसी ऐसे व्यक्ति के प्रमाणीकृत की आवश्यकता होती है जो बैंक अधिकारी तथा जमाकर्ता दोनों को ही जानता हो।

धन निकालने के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं—

१. जमाकर्ता सप्ताह में अधिक से-अधिक दो बार धन निकाल सकता है।
२. बिना पूर्व सूचना के सप्ताह में कुल १००० रुपये से अधिक धन नहीं निकाला जा सकता। यदि एक हजार से अधिक धन निकालना है तो एक सप्ताह पूर्व डाकघर को लिखित सूचना देनी होती है।
३. नाबालिग जमाकर्ता उसके द्वारा, अपने द्वारा जमा की गई धनराशि ही निकाल सकता है। उसके संरक्षक द्वारा जमा की गई धनराशि को वह नहीं निकाल सकता।
४. एक रुपए से कम की धनराशि अथवा वह धनराशि जिसमें एक रुपए से कम की धनराश भी सम्मिलित हो, साधारणतः नहीं निकाली जा सकती। खाता समाप्त करते समय रुपया निकालने सम्बन्धी नियम लागू नहीं होता।
५. धन निकालते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि खाते में कम-से-कम दो रुपए की निधि अवश्य शेष रहनी चाहिए।

अब डाकखाने की बैंक में भी धन निकालने के लिए जमाकर्ता को चैकबुक दी जाने लगी हैं। चैक-बुक उसी व्यक्ति को दी जा सकती है जिसके खाते में हर समय कम-से-कम २५० रुपए की निधि अवश्य ही जमा रहे। चैक द्वारा ५ रुपए से कम की निधि नहीं निकाली जा सकती है। चैक की सुविधा केवल शिक्षित खातेदारों को ही दी जाती है।

डाकखाने की बैंक में जमा धनराशि पर ब्याज भी दिया जाता है। ब्याज की दर में समय-समय पर परिवर्तन होता रहता है। इस समय ब्याज की दर ४½ रुपए प्रति सैकड़ा है। ब्याज के रूप में जमाकर्ता को जो आय प्राप्त होती है, वह आय-कर से मुक्त होती है। यदि खाते में २५ रुपए से कम की निधि रहती है तो ब्याज नहीं मिलता।

खाते का स्थानान्तरण—कोई भी ऐसा खातेदार जिसका खाता डाकखाने में कम-से-कम ३ माह तक रहा हो तो वह वहाँ से अपने खाते का स्थानान्तरित करा सकता है।

बैंक खाता कभी भी बन्द किया जा सकता है। इसके लिए निर्धारित फार्म भरकर पास-बुक के साथ डाकखाने में जमा किया जाता है। खाते में जो धन शेष है, वह जमाकर्ता को दे दिया जाता है।

यदि किसी खाते मे लगातार पूरे ६ वर्ष तक कोई लेन-देन नही हो तो 'समाप्त खाता' (Dead Account) समझा जाता है। इसके बाद उसमे धन न जमा किया जा सकता है और न निकाला जा सकता है।

नेशनल सेविंग्स सर्टीफिकेट
(National Savings Certificate)

भारत शासन द्वारा चलाई गई बचत योजनाओ मे से यह एक महत्त्वपूर्ण बचत योजना है। इसका प्रारम्भ गत कुछ वर्षों से ही हुआ है। कोई भी व्यक्ति स्वेच्छा से अपनी सामर्थ्य के अनुकूल सर्टीफिकेट खरीद सकता है। ये सर्टीफिकेट एक निश्चित अवधि तथा निश्चित निधि के होते है। निश्चित अवधि समाप्त हो जाने पर क्रय करने हेतु व्यय की गई धनराशि ब्याज सहित क्रेता को अथवा उसके उत्तराधिकारी को मिल जाती है। यदि व्यक्ति निश्चित समयावधि से पूर्व भी धन वापस लेना चाहता है तो निर्धारित नियमानुसार ले सकता है। सर्टीफिकेट क्रय करने के एक वर्ष पश्चात् धन कभी भी वापस लिया जा सकता है।

सर्टीफिकेट क्रय करने की सीमाएँ—एक विनियोग कर्ता की अधिकतम क्रय सीमा निम्नानुसार है—

१. एक वयस्क, बैंकिंग कम्पनी, सहकारी बैंक जो सहकारी भूमि बन्धक बैंक न हो, एक कम्पनी, एक निगम, एक ऐसी फर्म जो इण्डियन पार्टनरशिप अधिनियम, १९३२ के अधीन पंजीकृत हो तथा एक पंजीकृत समिति की अधिकतम क्रय सीमा २५०० रुपए है।

२ दो वयस्क सयुक्त रूप मे अधिक-से-अधिक ५००० रुपए के सर्टीफिकेट क्रय कर सकते हैं।

३. एक नाबालिग अधिक-से-अधिक २५००० रुपए के सर्टीफिकेट क्रय कर सकेगा।

४. एक सहकारी समिति जिसमे सहकारी बैंक सम्मिलित न हो परन्तु सहकारी भूमि-बन्धक बैंक सम्मिलित हो, स्थानीय अधिकारी (Local Authority) एक ऐसी पंजीकृत समिति अथवा संस्था जिसे दान रूप में १०,००,००० रुपये प्राप्त हुए हो, आय कर से छूट होती है।

५. प्रोवीडेन्ट फण्ड से सर्टीफिकेट क्रय करने की कोई सीमा निर्धारित नहीं है।

नेशनल सेविंग्स सर्टीफिकेट के प्रकार

सर्टीफिकेट निम्न प्रकार के होते हैं—

१. व्यक्तिगत सर्टीफिकेट (Single Holder Type Certificate)—इस सर्टीफिकेट को निम्नलिखित व्यक्ति अथवा संस्था क्रय कर सकते हैं—

(अ) एक वयस्क या नाबालिग व्यक्ति।
(ब) बैंकिंग कम्पनी तथा एक सहकारी भूमि-बन्धक बैंक।
(स) एक कम्पनी।
(द) एक निगम।
(य) सहकारी बैंक सहित सहकारी समिति।
(र) पंजीकृत वह समिति अथवा संस्था जो आयकर से मुक्त है।
(ल) इण्डियन पार्टनरशिप अधिनियम १९३२ के अन्तर्गत पंजीकृत फर्म।
(व) स्थानीय अधिकारी।
(श) प्रोवीडेन्ट फण्ड।

२. संयुक्त 'अ' प्रकार के सर्टीफिकेट (Joint 'A' Type Certificate)—ये दो वयस्क व्यक्तियों द्वारा क्रय किए जा सकते हैं। इसकी धनराशि का भुगतान दोनों को ही अथवा एक की मृत्यु हो जाने पर दूसरे को किया जा सकता है।

३. संयुक्त 'ब' प्रकार के सर्टीफिकेट (Joint 'B' Type Certificate)—ये भी दो वयस्कों द्वारा संयुक्त रूप से क्रय किए जा सकते हैं तथा इनकी धनराशि का भुगतान किसी भी हिस्सेदार को अथवा एक की मृत्यु पर दूसरे जीवित हिस्सेदार को किया जा सकता है।

सर्टीफिकेट क्रय करने की प्रक्रिया—सर्टीफिकेट क्रय करने वाले व्यक्ति को डाकखाने से क्रय करने हेतु निर्धारित फार्म 'ए' प्राप्त कर उसे भरकर निर्धारित धनराशि के साथ डाकखाने में जमा करना पड़ता है। डाकखाने से तुरन्त ही सर्टीफिकेट दे दिया जाता है।

गिफ्ट कूपन्स (Gift Coupons)

यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य वयस्क व्यक्ति अथवा नाबालिग को भेंट देना चाहता है तो वह ५०० रु०, १००० रु०, ५००० रु०, १०००० रु० अथवा १००००० रु० के गिफ्ट कूपन क्रय कर सकता है। कूपन क्रय करने के लिए डाक और तार विभाग के डाइरेक्टर जनरल के नाम कूपन के मूल्य सहित प्रार्थना-पत्र देना पड़ता है। मूल्य के अनुसार ही क्रेता को कूपन दे दिया जाता है।

आइडेन्टिटी स्लिप (Identity Slip)

यदि नेशनल सेविंग सर्टीफिकेट क्रेता पोस्टमास्टर से आइडेन्टिटी स्लिप प्राप्त करने के लिए प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत करें तो वह स्लिप देता है। सर्टीफिकेट की अवधि समाप्त हो जाने के बाद धन वापस लेते समय आइडेन्टिटी स्लिप डाकघर को वापस दी जाती है। यदि इससे पूर्व ही वह खो जाती है तो निर्धारित फार्म पर इसके खोजने की घोषणा कर डाकघर में देनी होती है।

सर्टीफिकेट का एक डाकघर से दूसरे डाकघर में स्थानान्तरण

सर्टीफिकेट को एक डाकघर से दूसरे डाकघर मे स्थानान्तरित कराया जा सकता है। इसके लिए निर्धारित फार्म डाकखाने से प्राप्त करके उसे भरकर दोनों में से किसी एक डाकखाने मे जहाँ से स्थानान्तर कराया जाता है अथवा जहाँ स्थानान्तर कराना है—प्रस्तुत किया जाता है। फार्म पर क्रेता अथवा क्रेताओं के हस्ताक्षर होना आवश्यक है।

यदि सर्टीफिकेट खो जाए, फट जाए, चोरी हो जाए अथवा नष्ट हो जाए तो किसी डाकखाने मे नया सर्टीफिकेट प्राप्त करने के लिए प्रार्थना-पत्र दिया जा सकता है। प्रार्थना-पत्र मे सर्टीफिकेट का नम्बर, उसका मूल्य प्राप्त करने की तिथि तथा फटने, खोने, नष्ट होने आदि के सम्बन्ध मे विस्तृत विवरण देना पड़ता है। यदि आइडेन्टिटी स्लिप है तो वह भी प्रार्थना-पत्र के साथ सलग्न करनी पड़ती है। यह प्रार्थना-पत्र डिप्टी एकाउन्टेन्ट जनरल के पास भेजा जाता है। वह डाइरेक्टर जनरल द्वारा निर्धारित फार्म पर डिक्लेरेशन इन ल्यू (Declaration in lieu) देता है जो मूल सर्टीफिकेट की तरह ही मान्य किया जाता है।

सर्टीफिकेट की धनराशि का भुगतान

निम्न तालिका मे अंकित किए गए सर्टीफिकेट उनके सामने कॉलम न० ३ की तालिका मे अंकित की गई अभुगतान की समयावधि के पश्चात् कभी भी भुगतान प्राप्त किया जा सकता है।

सर्टीफिकेट की श्रेणी (Category of Certificate)	मूल्य (Denomination)	अभुगतान की अवधि (Period of Non-encashability)
१	२	३
बारह वर्षीय नेशनल सेविंग सर्टीफिकेट जो १६ जून १९४७ या इसके बाद लिये गए हो।	५, १० ५०, १०० ५०००, १००० ५००० रुपए।	केवल ५ रु० वाले सर्टीफिकेट का एक वर्ष में पूर्व भुगतान नही किया जा सकता, शेष मूल्य के सर्टीफिकेट का भुगतान १८

		माह से पूर्व नहीं किया जा सकता ।
दसवर्षीय नेशनल प्लान सर्टीफिकेट ।	प्रत्येक मूल्य के ।	एक वर्ष से पूर्व भुगतान नहीं किया जा सकता ।
१२ वर्षीय नेशनल प्लान सेविंग सर्टीफिकेट ।	प्रत्येक मूल्य के ।	एक वर्ष से पूर्व भुगतान नहीं किया जा सकता ।

उक्त अभुगतान की समयावधि सर्टीफिकेट के निर्गम होने की तिथि (Date of Issue) से गिनी जाती है। निम्न विशेष परिस्थितियों में अभुगतान की अवधि समाप्त होने से पूर्व भी सर्टीफिकेट के धन का भुगतान हो सकता है। ये विशेष परिस्थितियाँ निम्नलिखित हैं—

१. क्रेता अथवा संयुक्त क्रेताओं की मृत्यु हो जाने पर।
२. यदि एक विज्ञप्त शासकीय कर्मचारी अपनी अमानत का भुगतान नहीं कर पाता तो सर्टीफिकेट उसके बदले में दिया जा सकता है।
३. प्रचलित अथवा पुराने नियमों के अन्तर्गत यदि नेशनल सर्टीफिकेट निर्धारित सीमा से अधिक प्राप्त कर लिये जाएँ।
४. जबकि सर्टीफिकेट इन नियमों के विपरीत निर्गमित (issue) किया जाए।
५. जब न्यायालय द्वारा आदेश दिया जाए।

भुगतान का स्थान—जिस डाकघर से सर्टीफिकेट क्रय किया जाता है, वहीं उसकी धनराशि का भुगतान होता है। देश के अन्य किसी डाकघर से भी सर्टीफिकेट की निधि का भुगतान तभी हो सकता है, जबकि सम्बन्धित डाकघर के पोस्ट मास्टर के समक्ष आइडेन्टिटी स्लिप प्रस्तुत की जाए तथा उसे यह विश्वास हो जाए कि यह स्लिप उसी व्यक्ति की है अथवा वह क्रय किए गए कार्यालय से सर्टीफिकेट प्रस्तुत कर्त्ता की भुगतान प्राप्त करने की पात्रता के सम्बन्ध में सत्यापन प्राप्त करके भुगतान कर सकता है।

उत्तराधिकारी को भुगतान—यदि सर्टीफिकेट क्रय करने वाले की मृत्यु भुगतान प्राप्त करने से पूर्व हो जाती है तो सामान्यतः धन का भुगतान वैज्ञानिक उत्तराधिकारी को मिलता है। ५,००० रु० तक के सर्टीफिकेट के लिए उत्तराधिकार का निर्णय डाक विभाग के विभिन्न अधिकारियों के अधिकार में होता है।

शुल्क—१०० रुपए मूल्य तक के सर्टीफिकेट के लिए २५ पैसे प्रति सर्टीफिकेट तथा १०० रुपए से अधिक मूल्य के सर्टीफिकेट के लिए १ रुपया स्थानान्तर, नया सर्टीफिकेट प्राप्त करने, अन्य मूल्य के सर्टीफिकेट में परिवर्तित करने आदि के शुल्क के रूप में प्राप्त किया जाता है। उत्तराधिकारी मनोनीत करने का शुल्क ५० पैसे तभी प्राप्त किया जाता है जबकि प्रथम उत्तराधिकारी के मनोनीत करने के पश्चात् कोई अन्य उत्तराधिकारी मनोनीत किया जाता है।

क्यूम्यूलेटिव टाइम डिपोजिट स्कीम
(Cumulative Time Deposit Scheme)

जन-साधारण में बचत को प्रोत्साहित करने वाली यह एक महत्त्वपूर्ण योजना है। इस योजना का प्रमुख लक्ष्य जमाकर्ताओं को विभिन्न कार्यों के लिए थोड़ा-थोड़ा धन नियमित रूप से जमा करके निश्चित अवधि के बाद धन की इकट्ठी राशि प्राप्त कर सकने में सहायता प्रदान करना है। यह योजना डाकखाने के १८८१ के तथा १९५९ के बचत के नियमों से नियन्त्रित होती है।

खाता खोलना—निम्नलिखित व्यक्ति खाता खोल सकते हैं—

१. एक वयस्क; अथवा
२. दो सदस्य संयुक्त रूप से, जिसमें धन का भुगतान संयुक्त रूप में दोनों को अथवा किसी एक को हो सकता हो, अथवा
३. नाबालिग अथवा पागल के नाम पर एक संरक्षक; अथवा
४. एक नाबालिग स्वयं अपने नाम से।

एक व्यक्ति नियमानुसार धन जमा करने सम्बन्धी निर्धारित अधिकतम सीमा के अन्तर्गत एक से अधिक खाते भी खोल सकता है।

इसके अतिरिक्त इस खाते सम्बन्धी अन्य नियम नियमानुसार हैं—

१. ये खाते तीन प्रकार के होते हैं—५ वर्षीय, १० वर्षीय व १५ वर्षीय। प्रथम बार धन जमा करने की तिथि से खाते का प्रारम्भ माना जाता है।
२. इस योजना के अन्तर्गत ५ रु०, १० रु० २० रु०, ५० रु०, १०० रु० तथा २०० रु० प्रति माह जमा किए जाने वाले खाते खोले जा सकते हैं। जितनी धन-राशि वाला खाता प्रारम्भ किया जाएगा, वही धनराशि समयावधि समाप्त होने तक प्रति माह जमा करनी पड़ेगी। इसमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया जा सकता।
३. निर्धारित धनराशि नियमित रूप से प्रतिमाह जमा करनी पड़ेगी।

दसवर्षीय रक्षा जमा-पत्र
(Ten Years Defence Deposit Bonds)

राष्ट्रीय रक्षा की दृष्टि से प्रारम्भ की गई विनियोग योजनाओं में से है। इन जमा-पत्रों की क्रय-सीमा निम्नलिखित हैं—

१. एक वयस्क अधिक-से-अधिक ३५,००० रु० तक के जमा-पत्र क्रय कर सकता है।

२. दो वयस्क संयुक्त रूप से ७०,००० रु० तक की धनराशि का विनियोग इन पत्रों में कर सकते हैं।

३. वे संघ और संस्थाएँ जिन्हें दान मिला हो तथा दान की धनराशि आय कर से मुक्त हो उन्हें १,००,००० रु० तक के जमा-पत्र क्रय करने का अधिकार है। आय कर देने वाले संघ या संस्थाएँ २५,००० रु० तक की धनराशि विनियोग कर सकती हैं।

इस योजना में विनियोजित धन पर ४३% वार्षिक व्याज मिलता है। जमा-पत्र क्रय करने की तिथि से एक वर्ष तक ये अभुगतानशील रहते हैं। इस अवधि के पश्चात् यदि क्रेता धन वापिस लेना चाहे तो नियमानुसार कटौती (Discount) काटकर धन दे दिया जाता है। ये जमा-पत्र रिज़र्व बैंक ऑफ इण्डिया के बंगलौर, बम्बई, मद्रास, कलकत्ता, नई दिल्ली, नागपुर-स्थित कार्यालयों तथा स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया और उसकी सहायक शाखाओं के भारत-स्थित कार्यालयों से प्राप्त किए जा सकते हैं। शासकीय कोषालय भी इनकी बिक्री का कार्य करते हैं।

बारहवर्षीय राष्ट्रीय रक्षा-पत्र
(Twelve Years National Defence Bonds)

ये रक्षा-पत्र १९६२ के भारतीय सीमा पर किये गए चीन के आक्रमण के परिणामस्वरूप उत्पन्न संकटकालीन स्थिति का सामना करने के उद्देश्य से जारी किये गए थे। ये ५, १०, ५०, १००, ५००, १०००, २५००० रु० मूल्य के उपलब्ध हो सकते हैं। क्रय करने की तिथि से एक वर्ष की अवधि तक इन पत्रों में विनियोग की गई धनराशि वापिस प्राप्त नहीं की जा सकती। एक वर्ष बाद इनका भुगतान कभी भी किया जा सकता है। समय की वृद्धि के साथ-साथ व्याज की दर भी बढ़ती जाती है। दो वर्ष बाद ६३% व्याज प्राप्त होता है। एक वयस्क अधिक-से-अधिक ३५,००० रु० तक के मूल्य के तथा दो वयस्क संयुक्त रूप से ७०,००० रु० मूल्य तक के रक्षा-पत्र क्रय कर सकते हैं।

सहकारी समितियाँ, स्थानीय संस्था, स्थानीय अधिकारी एवं विभिन्न संघ व संस्थाएँ इन रक्षा-पत्रों में एक लाख रुपए तक की अधिकतम धनराशि विनियोजित कर सकते हैं।

बैंक, कम्पनियाँ, निगम तथा पंजीकृत फर्म अधिक-से-अधिक ३५,००० रु० तक में रक्षा-पत्र क्रय कर सकते हैं।

प्रीमियम इनामी बॉण्ड, १९६३
(Premium Prize Bond, 1963)

भारत शासन द्वारा प्रारम्भ की गई बचत योजनाओं में से एक है। इस योजना के अन्तर्गत ५ तथा १०० रु० के मूल्य के इनामी बॉण्ड क्रय किए जा सकते

हैं। इनमें विनियोग किया गया धन ५ वर्ष की अवधि से पूर्व वापिस नही लिया जा सकता। अवधि पूर्ण होने पर १० प्रतिशत प्रीमियम भी इन पर मिलता है। इसके अतिरिक्त, एक करोड़ रुपये मूल्य के प्रत्येक प्रकार के बॉण्ड (५ रु० अथवा १०० रु०) पर निकासी में ५ लाख रु० के इनाम दिये जाने की व्यवस्था है। ५ रु० वाले बॉण्ड पर ५६८ तथा १०० रु० वाले बॉण्ड पर २४३ इनाम बांटे जाते है। इनाम बिके हुए बॉण्डों पर ही दिया जाता है। इन बॉण्डो से जो लाभ प्राप्त होता है वह आयकर से मुक्त होता है।

ये बॉण्ड रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया के समस्त कार्यालयों, स्टेट बैंक एवं उसकी सहायक बैंको के कार्यालयों, शासकीय कोषालयो तथा डाकखानों से क्रय किए जा सकते हैं।

लाटरी चिट व्यवस्था
(Lottery Chit)

यह पूर्णतः ऐच्छिक एवं निजी बचत व्यवस्था है। इस व्यवस्था का प्रारम्भ कुछ आपसी जान-पहचान वाले व्यक्ति ही करते हैं। वे आपस में विचार-विमर्श कर अपनी सामर्थ्यानुसार अंशदान की मात्रा एवं सीमा निर्धारित कर देते हैं। प्रत्येक व्यक्ति निर्धारित अंशदान नियमित रूप से देता है। इस व्यवस्था में समयावधि एवं सदस्य संख्या को अधिक महत्त्व दिया जाता है। उदाहरणस्वरूप माना इस योजना में भाग लेने वाले २० व्यक्ति हैं तथा प्रत्येक सदस्य १० रु० प्रति माह जमा करता है। समय की अवधि भी २० माह होनी चाहिए ताकि प्रत्येक सदस्य को इस अवधि में एक बार २०० रु० मिल सके। इस योजना में प्रति मास चिट डालकर यह निश्चय किया जाता है कि उस माह विशेष में किस सदस्य को २०० रु० दिए जाएँ। यदि किसी व्यक्ति को आकस्मिक दुर्घटना अथवा अन्य किसी अपरिहार्य स्थिति में अतिरिक्त व्यय करना पड़े तो सभी सदस्य सामूहिक निर्णयानुसार उस जरूरतमन्द व्यक्ति को बिना चिट प्रणाली का प्रयोग किए धन दे सकते हैं।

इस व्यवस्था के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं—

१. कम आय वाले व्यक्ति प्रतिमाह थोड़ा-थोड़ा बचाकर अपनी आवश्यकता की पूर्ति हेतु बड़ी धनराशि आसानी से प्राप्त कर लेते हैं।

२. अशिक्षित व्यक्तियों, विशेषकर स्त्रियों के लिए यह बड़ी उपयोगी योजना है। उन्हें बैंकों की लिखा-पढ़ी के चक्कर में पड़ने की आवश्यकता नही पड़ती। मुहल्ले की स्त्रियाँ मिलकर इस प्रकार की योजना बनाकर इसका लाभ उठा सकती हैं।

३. विशेष आवश्यकता के समय प्रत्येक व्यक्ति को आर्थिक सहयोग मिल जाता है, जिसके लिए उसे किसी प्रकार का ब्याज नही देना पड़ता।

आगामी महीनों में धीरे-धीरे शेष धन-राशि को वह जमा कर देता है।

यूनिट्स
Units

यूनिट विक्रय की योजना संसद के १९६४ के अधिनियम द्वारा स्थापित यूनिट ट्रस्ट ऑफ़ इण्डिया द्वारा प्रारम्भ की गई है। यह ट्रस्ट देश के प्रत्येक वर्ग की बचत एकत्रित कर विभिन्न उद्योगों में नियोजित करता है।

यूनिट का मूल्य—एक यूनिट का मूल्य १० रुपए होता है। कम-से-कम १० यूनिट एक व्यक्ति को क्रय करने पड़ते हैं। इसमें धन विनियोजन की अधिकतम सीमा निर्धारित नहीं है। एक व्यक्ति चाहे जितना विनियोजित कर सकता है। यूनिट का विक्रय मूल्य दिन-प्रति-दिन ट्रस्ट द्वारा निर्धारित होकर समाचार-पत्रों में प्रकाशित होता है। यूनिट एक व्यक्ति अपने नाम से क्रय कर सकता है अथवा २, ३ या ४ युक्त रूप से भी क्रय कर सकते हैं, परन्तु उनमें नाबालिग कोई नहीं होना चाहिए।

यूनिट का क्रय—देश के प्रमुख बैंकों के शाखा कार्यालय से, देश के समस्त डाकखानों से अथवा किसी भी मान्य दलाल और अभिकर्ता से यूनिट्स क्रय किए जा सकते हैं। क्रय करने के लिए एक आवेदन पत्र भरना होता है जो उक्त कार्यालयों अथवा व्यक्तियों से निश्शुल्क मिलता है। नाबालिग सीधे अपने नाम से यूनिट्स क्रय नहीं कर सकते। उन्हें अपने माता-पिता अथवा वैध संरक्षक के माध्यम से क्रय करना होता है।

लाभांश—यूनिट ट्रस्ट को वर्ष में जितना लाभ होता है, उसका लगभग ९० प्रतिशत यूनिट क्रेताओं में विभाजित किया जाता है। १९६६-६७ में ७ प्रतिशत लाभांश यूनिट क्रेताओं को मिला था। १९६७-६८ में ८·१५ प्रतिशत के हिसाब से लाभांश मिला है। प्रतिवर्ष ३० जून को वार्षिक हिसाब बन्द होते ही लाभांश वितरण कर दिया जाता है। छोटे विनियोग कर्ताओं को आयकर से छूट भी मिलती है। यूनिट ट्रस्ट से एक हजार रुपए तक की वार्षिक आय, उस पर लगने वाले आयकर से मुक्त होती है। १९६६ के वित्त अधिनियम के अनुसार यदि यूनिट ट्रस्ट से एक हजार से अधिक वार्षिक आय होती है तो एक हजार रुपए की कर से छूट देकर शेष पर आयकर देना पड़ता है।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. बचत किसे कहते हैं? बचत के प्रमुख लक्ष्य कौन-कौन-से हैं?
२. धन नियोजित करने के साधन कौन-कौन-से हैं?
३. जीवन-बीमा का क्या अर्थ है? इसके प्रमुख लाभ बताइए?
४. जीवन-बीमा कराने के लिए आवश्यक ग्राह्यताएँ कौन-कौन-सी हैं। वर्णन कीजिए।

५. जीवन-बीमा कौन-कौन-से प्रकार के होते हैं ? प्रत्येक का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत कीजिए ।

६. बचत की गई धनराशि को बैंक के कौन-कौन-से खातों में जमा किया जा सकता है ? धन जमा करने व निकालने के क्या नियम हैं ?

७. डाकखाना के बचत बैंक में धन जमा करने व निकालने के क्या नियम हैं ?

८. नेशनल सेविंग सर्टीफिकेट कितने प्रकार के होते हैं ? प्रत्येक का वर्णन कीजिए ।

९. निम्नलिखित पर टिप्पणियाँ लिखिए—

(अ) क्यूम्यूलेटिव टाइम डिपोजिट स्कीम

(ब) दस-वर्षीय रक्षा-जन्म पत्र

(स) बारह वर्षीय राष्ट्रीय रक्षा पत्र

(द) प्रीमियम इनामी बॉड

(य) लॉटरी चिट

(र) यूनिट

अध्याय ११

समय का व्यवस्थापन

'समय' मानव-जीवन की अमूल्य निधि है। जीवन में इसका अत्यधिक महत्त्व है। एक विद्वान् का कथन है—"क्या तुम जीवन से प्रेम करते हो ? तो समय को व्यर्थ ही नष्ट मत करो; क्योंकि समय ही तो वह वस्तु है जिससे जीवन का निर्माण हुआ है।"

प्रत्येक व्यक्ति को सीमित समय में अनेक कार्य करने होते हैं। परन्तु यह व्यक्ति विशेष पर निर्भर करता है कि वह समय का उचित उपयोग इन कार्यों को करने में करता है या नहीं। समय-व्यवस्थापन का वास्तविक उद्देश्य—समय का इस प्रकार उपयोग करना है जिससे व्यक्तिगत एवं पारिवारिक लक्ष्यों की अधिकाधिक उपलब्धि हो सके।

समय और शक्ति का पारस्परिक सम्बन्ध बड़ा घनिष्ठ है। किसी एक की व्यवस्था एवं उपयोग दूसरे को प्रभावित करती है। समय उस ढांचे का निर्माण करता है, जिसमें अनेकानेक क्रिया-कलाप स्थान ग्रहण करते हैं। घड़ी द्वारा बताया गया समय दिन में सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों में, कार्य-भार का वितरण करने में, तथा दिन की प्रगति का मूल्यांकन करने में सतत मार्ग-निर्देशक का कार्य करता है। अनुभव के साथ-साथ हम समय का कार्य, खेल तथा विश्राम के लिए उपयोग करने के विषय में सीखते हैं।

प्रभावपूर्ण समय-व्यवस्थापन का आयोजन करना तभी अधिक सरल होता है, जबकि इस कार्य में योग देने की क्षमता रखने वाले परिवार के सभी सदस्य समस्याओं को भली प्रकार समझें। समय-व्यवस्थापन की कुछ समस्याएँ परिवार के जीवन-चक्र की समस्त स्थितियों में प्रायः समान ही रहती हैं। इनमें कुछ हैं—(१) कार्य, विश्राम एवं मनोरंजन के समय में उपयुक्त सन्तुलन के महत्त्व को समझना; (२) समय एवं

क्रियाओं के आयोजन में परिवार के समस्त सदस्यों का ध्यान रखना; (३) वस्तुओं तथा क्रियाओं के आयोजन के विकल्पों का चयन करते समय, समय के मूल्य को दृष्टिगत रखना; तथा (४) गृह-निर्माण सम्बन्धी क्रियाओं मे समय के व्यय कम-से-कम करने का प्रयास करना।

गृहिणी को परिवार के जीवन-चक्र की विभिन्न स्थितियों में क्या करना होता है इसे समझने से परिवार के लिये भावी योजनाएँ बनाने तथा आगामी नवीन एव परिवर्तित माँगों की पूर्ति हेतु तैयार होने में सहायता मिलती है।

पारिवारिक जीवन-चक्र को विभिन्न स्थितियों में समय की मांग

परिवार का निर्माण दो सदस्यों—पति-पत्नी से होता है। बच्चों की उत्पत्ति के साथ-साथ इसके आकार में वृद्धि होती जाती है, तथा जैसे-जैसे बच्चे बड़े होकर घर छोडते जाते हैं तथा अन्त में दो ही व्यक्ति (माता-पिता) रह जाते हैं, इसका आकार क्रमानुसार कम होता जाता है। परिवार के जीवन-चक्र के निम्न सोपान हैं—

सोपान १—परिवार के जीवन-चक्र का प्रथम सोपान नव-दम्पती के सीखने एवं समायोजन स्थापित करने का होता है। यही वह समय है, जबकि परिवार के लक्ष्य, समय एव कार्य के प्रारूप, कार्य की आदतें तथा पति-पत्नी के मध्य उत्तरदायित्वों के विभाजन का निर्णय किया जाता है। इस अवधि में यदि गृहिणी कही नौकरी नही करती है तो उसका कार्यभार कुछ हल्का रहता है।

सोपान २—पारिवारिक जीवन-चक्र के दूसरे सोपान में माता-पिता पर नवीन एवं गुरुतर उत्तरदायित्व आ पड़ते हैं। बच्चों के आगमन से गृहिणी के समय के ढाँचे में सर्वाधिक समायोजन की आवश्यकता होती है। गृहिणी के समय के उपयोग के सम्बन्ध में विदेशों में किये गए अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण एव शहरी गृहिणियाँ जिनके कि घर में एक वर्ष से कम आयु के बच्चे है, वे सप्ताह में २१ से २५ घण्टे तक इनके पालन-पोषण में व्यय करती हैं। यदि बच्चे १ वर्ष से २ वर्ष तक की आयु के हैं तो लगभग १३ घण्टे व्यय होते हैं। बच्चे की आयु ६ वर्ष की होने तक समय की माँग कम होती रहती है। अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ कि घर में एक बच्चे की देखभाल पर उतना ही समय व्यय होता है, जितना एक ही आयु के दो बच्चों की देखभाल पर।

सोपान ३ व ४—जब बच्चे प्राथमिक एव माध्यमिक कक्षाओं में तथा हाई स्कूल कक्षा में हों तो थोड़ी-सी भिन्नता होते हुए भी, समय की माँगें अधिक होती हैं। इन सोपानों की माँगें प्रमुख रूप से बच्चों को परिवार के उत्तरदायी सदस्य के रूप में अपना समय ग्रहण करना, मिल-जुल कर समय-योजना का निर्माण करना, तथा प्रत्येक को समय के उपयोग के मूल्यांकन में सहायता देने सम्बन्धी पथ-प्रदर्शन एवं निर्देशन से सम्बन्धित समस्याओं पर केन्द्रित होती हैं। कुछ घरों में माता को सामाजिक तथा व्यक्तिगत कार्यों अथवा लाभपूर्ण सेवाओं को करने के लिये समय मिल जाता है

सोपान ५—पारिवारिक जीवन-चक्र के पाँचवें सोपान के समय की माँगें इस बात पर निर्भर करती हैं कि बच्चे अध्ययन हेतु महाविद्यालय में जाते हैं अथवा शादी करके घर छोड़ते हैं, अथवा नौकरी करते हैं तथा घर पर ही रहते हैं।

सोपान ६—इसके अन्तर्गत वह समयावधि सम्मिलित है, जिसमें कि बच्चे आत्म-निर्भर हो जाते हैं। परिणामतः माता अपनी इच्छानुसार समय का सदुपयोग कर सकती है।

गृह-निर्माण सम्बन्धी क्रियाओं का समय-मूल्य

व्यक्तिगत एवं पारिवारिक समय के ढाँचे में दिन-प्रति-दिन एवं सप्ताह-प्रति-सप्ताह नवीनता उत्पन्न होती रहती है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति के लिये दिन-रात के २४ घण्टों का विभाजन होना चाहिये तथा समय का सन्तुलन—कार्य, विश्राम, शयन तथा अन्य क्रियाओं में स्थापित होना चाहिए। इसके लिए व्यक्तिगत एवं पारिवारिक आवश्यकताओं एवं इच्छाओं तथा विभिन्न क्रियाओं के समय और शक्ति मूल्य पर आधारित महत्त्व का मूल्यांकन एवं विकल्पों के चयन की आवश्यकता होती है।

गृहिणी अपने समय के आयोजन एवं मूल्यांकन में किन पथ-प्रदर्शनों का उपयोग करे ? अन्य गृहिणियाँ अपने समय का सदुपयोग किस प्रकार करती हैं ? कौन-सी गृह-निर्माण सम्बन्धी क्रियाएँ अधिक समय-साध्य हैं ? अन्य गृहिणियाँ कितनी तथा किस प्रकार की सहायता प्राप्त करती हैं ? किस प्रकार अन्य गृहिणियाँ अवकाश काल का उपयोग करती हैं ? घर से बाहर कार्य करने वाली गृहिणियाँ किस प्रकार गृह-निर्माण सम्बन्धी उत्तरदायित्वों का निर्वाह करती हैं ?—ये प्रश्न उन गृहिणियों द्वारा पूछे जाते हैं, जो अपने समय का सर्वाधिक प्रभावपूर्ण उपयोग करने का प्रयास करती हैं।

समय के सदुपयोग के लिए आयोजन

समय-व्यवस्थापन के अन्तर्गत समय का आयोजन एवं उसका कार्यान्वयन—दोनों ही सम्मिलित हैं। समय-आयोजन से यह प्रदर्शित होता है कि कोई व्यक्ति एक विशिष्ट समयावधि में क्या करना चाहता है; जैसे—प्रातः; सायं अथवा सम्भवतः पूरे दिन में अथवा सप्ताह में। इससे विभिन्न क्रियाओं के क्रम तथा उनके सम्पादन के लिए निर्धारित समय का भी संकेत मिलता है।

गृहिणी की सफलता अथवा असफलता अधिकांशतः इस तथ्य पर निर्भर करती है कि गृह-निर्माण सम्बन्धी उत्तरदायित्वों के लिए उनकी उपगमन (Approach) विधि क्या है। यदि व्यक्ति में रुचि है तथा कार्य करने की प्रबल इच्छा है तो गृह-निर्माण तथा गृह-व्यवस्था सम्बन्धी कुशलताएँ सीखी जा सकती हैं। ध्यानपूर्वक, सुविचारित समय और क्रियाओं की योजनाएँ समय और शक्ति की बचत करने तथा अनिश्चितता एवं अनिर्णय जन्य मानसिक तनावों से मुक्त करने के लिए उपयोगी उपकरण हैं।

समय और क्रियाओं का आयोजन

समय-आयोजन की आर्थिक उपयोगिता इस तथ्य पर आधारित है कि इसके द्वारा व्यक्ति को अनेक व्यावहारिक समस्याओं के सम्बन्ध मे पूर्व में विचार करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। इससे अनिर्णयता की स्थिति समाप्त हो जाती है। परिणामतः मस्तिष्क अन्य समस्याओं को हल करने तथा निरन्तर उपस्थित होने वाली नवीन परिस्थितियों का सामना करने के लिए मुक्त रहता है। दैनिक समय-आयोजन का निर्माण करना सीखने मे धीरे-धीरे विचारो का ढांचा बन जाता है जो आगे चलकर स्वतः ही कार्य करने लगता है। प्रातःकाल शीघ्र ही नाश्ता करने का दैनिक कार्य बन जाता है। इसी अवधि मे दिन के प्रारम्भ मे ही किए जाने वाले अनेक निर्णय कर लिये जाते हैं। कार्य करने की इन स्वाभाविक विधियों मे कार्य की गति एव कुशलता मे तथा अन्य क्रिया-कलापों के लिए समय मे अभिवृद्धि होती है।

पारिवारिक समय आयोजन के प्रमुख आधार

प्रभावपूर्ण एव व्यावहारिक योजना-निर्माण की दृष्टि से प्रत्येक गृहिणी को अपने परिवार के सदस्यों की सहायता मे यह निर्धारित करने की परमावश्यकता होती है कि किन-किन क्रियाओ को दैनिक अथवा साप्ताहिक रूप से सम्पन्न किया जाना है। यदि समस्त क्रियाओ का किया जाना सम्भव नही है तो कौन-सी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं, तथा कौन-कौन-से विशेष तथा मौसमी कार्यों को दैनिक व साप्ताहिक समय-योजना मे स्थान दिया जाना है। उसे यह भी सोचने की आवश्यकता है कि प्रत्येक कार्य को सर्वोत्तम विधि से पूर्ण करने के लिए कौन-सा समय उपयुक्त होगा। यद्यपि घर के अधिकाश दैनिक और साप्ताहिक कार्य वर्ष भर प्रायः एक से ही रहते हैं परन्तु विशेष एवं मौसमी कार्य तथा मनोरंजनात्मक क्रियाओं मे निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। इनमे से प्रत्येक के लिए समय और शक्ति की आवश्यकता भिन्न-भिन्न होती है, जिसके फलस्वरूप योजनाओं में अन्य परिवर्तन करने की सम्भावना उत्पन्न हो जाती है।

अधिकाश घरो में कतिपय कार्यों को करने के लिए समय का निर्धारण घर से बाहर की कुछ परिस्थितियाँ अथवा घर की ही कुछ विशिष्ट माँगें करती हैं। पति अथवा बच्चों के कार्य के घण्टे, यदि पत्नी नौकरी करती है तो उसके कार्य का समय तथा बच्चो के विद्यालय जाने के घण्टे सामान्यतः नाश्ता व दोपहर का भोजन करने अथवा घर के सदस्यों को विद्यालय अथवा कार्य पर जाने के समय का निर्धारण करते हैं। यद्यपि कुछ कार्यों के लिए समय निश्चित होता है, परन्तु कुछ कार्य ऐसे होते है, जिनके लिए निर्धारित समय-सारणी का कठोरता से पालन करना सदैव सम्भव नही हो पाता।

घर के प्रत्येक सदस्य की व्यक्तिगत निश्चित समय सम्बन्धी क्रियाएँ हो सकती है, जिनमे से कुछ थोड़े समय तक ही रहती है तथा कुछ लम्बे समय तक बनी रहती हैं। सगीत के पाठ, स्काउट का कार्य, विद्यालय तथा बाहर की अन्य क्रियाओ के

लिए समय की व्यवस्था होनी चाहिए। समय-आयोजन के समय इन समस्त क्रिया-कलापों का ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि इनसे गृहिणी के समय के उपयोग पर ही प्रभाव नहीं पड़ता, वरन् परिवार के अन्य सदस्यों से गृह-निर्माण के लिए जो सहायता प्राप्त करनी है, उस पर भी इसका प्रभाव पड़ता है।

गृह-निर्माण की अन्य क्रियाओं का वितरण एवं क्रम इस तथ्य पर भी निर्भर करता है कि इन्हें सम्पन्न करने के लिए दिन का कौन-सा तथा कितना समय निश्चित किया गया है। प्रत्येक घर में निश्चित समय पर किए जाने वाले कार्य ही दैनिक एवं साप्ताहिक समय एवं कार्य के प्रारूप को निर्धारित करते हैं।

जिस समय कार्य को करने के लिए सहायता मिल सकती हो, वही समय उस कार्य के करने के लिए सर्वोत्तम होता है। जिन कार्यों को करने में कई व्यक्तियों की सहायता की आवश्यकता होती है, तो ऐसे कार्य उस समय किए जाने चाहिए जबकि परिवार के अधिकांश सदस्य खाली हों। यदि बाहर के व्यक्तियों की सहायता प्राप्त करनी है तो कार्य के समय का निर्धारण इस बात पर निर्भर करेगा कि वे किस समय उपलब्ध हो सकते हैं।

समय और क्रियाओं के प्रारूप

प्रत्येक परिवार की रुचियाँ, कार्य करने की आदतें, गृहिणी की व्यक्तिगत तथा उसके परिवार की आवश्यकताएँ आदि दैनिक एवं साप्ताहिक क्रियाओं के प्रारूप में प्रतिबिम्बित होती हैं। उदाहरण स्वरूप जिन गृहिणियों को सप्ताह के अन्त में अधिक कार्य होने के कारण अधिक समय और शक्ति व्यय करनी पड़ती है, उनके लिए अन्य साधारण घरेलू कार्यों को करने के लिए सोमवार से बुधवार तक करना अधिक सुविधाजनक होता है। वे गृहिणियाँ जिन्हें घर से बाहर के क्रिया-कलापों में रुचि है, इन कार्यों को सोमवार व मंगलवार को समाप्त करना अधिक उचित समझती हैं, ताकि उन्हें आगामी दो दिन पर्याप्त खाली समय मिल सके। जो गृहिणियाँ गृहस्थी के समस्त कार्य को करने में समर्थ नहीं होती हैं, वे कार्य के भार को कम करने की दृष्टि से कपड़े धोबी से धुलवा लेती हैं तथा पका हुआ भोजन भी बाजार से मँगवा लेती हैं।

मनोरंजन के लिए समय का विभाजन प्रति सप्ताह परिवर्तित होता रहता है। ऐसा भी सम्भव हो सकता है कि मनोरंजन के लिए कुछ समय प्रतिदिन निर्धारित किया जाए। कभी-कभी लम्बे समय तक मनोरंजनात्मक क्रियाओं के आयोजन के लिए सप्ताह के कई दिनों तक दैनिक कार्यक्रम में मनोरंजन के लिए समय की व्यवस्था नहीं की जाती।

गृहिणी के कार्य करने की आदत तथा किए जाने वाले कार्य के प्रकार इस बात को प्रभावित करते हैं कि दिन में कितना आराम किया जाये। कुछ गृहिणियों को दिन में कई बार विश्राम करने की आवश्यकता होती है, जबकि कुछ गृहिणियों को कार्य में परिवर्तन करने से पर्याप्त विश्राम मिल जाता है।

अत्यधिक कार्य का समय

अधिकांश घरो में ऐसी समयावधि भी होती है, जबकि कार्य अधिक मात्रा में एकत्रित हो जाते हैं। अत्यधिक कार्य का समय—दिन, सप्ताह, माह अथवा मौसम की निश्चित समयावधि में हो सकता है। कुछ गृहिणियो के लिए शाम का भोजन तैयार करना एवं बच्चों को सुलाना—दिन मे अत्यधिक कार्य का समय होता है। सप्ताह मे वस्त्र धोने व इस्त्री करने का, माह मे खिडकी-दरवाजे आदि साफ करने का तथा मौसम में खाद्य-सामग्री सुरक्षित रखने का समय—अत्यधिक कार्य का समय होता है।

यदि गृहिणी सुविचारित ढग से कार्यो का विभाजन सप्ताह मे इस प्रकार करे कि समय और शक्ति की दैनिक माँग प्रायः प्रतिदिन समान रहे तो एक निश्चित समय पर ही कार्य का भार अधिक एकत्रित हो जाने से सकट उपस्थित होने की सम्भावना कम रहती है। भारी व अधिक थका देने वाले कार्य के बाद हल्के व कम थकान उत्पन्न करने वाले कार्यों की व्यवस्था करने तथा भारी कार्य की सुविधाजनक समयावधि एक ही समय पर आयोजित करने मे दिन मे समय व शक्ति मूल्य का विभाजन करने में सहायता मिलती है।

समस्त विशिष्ट तथा मौसमी कार्य तथा उपलब्ध अवकाश एवं छुट्टियो का वार्षिक विवरण—कार्यों को भली प्रकार पूर्ण करने मे बडा सहायक होता है। इससे व्यक्ति को पूर्व से ही यह ज्ञात रहता है कि इन कार्यों में से कौन-से कार्य को दैनिक योजनाओ में कब और कहाँ स्थान दिया जाए। समय का इस प्रकार दीर्घ कालीन आयोजन करने से कार्य एक समय के लिए इकट्ठा नही होता तथा एक समय पर एक साथ अत्यधिक कार्य आ जाने के परिणामस्वरूप जो स्नायुविक तनाव एवं थकान उत्पन्न हो जाती है उससे छुटकारा मिल जाता है।

क्रियाओं का क्रम

दैनिक समय-सारणी में क्रियाओ का क्रम क्या हो? इसका आंशिक निर्धारण निश्चित समय के कार्यों द्वारा होता है। इसके अतिरिक्त कार्यो का पारस्परिक सम्बन्ध तथा कार्यरत व्यक्तियो के द्वारा भी यह क्रम आंशिक रूप मे निश्चित होता है। समस्त क्रियाओ की व्यवस्था इस प्रकार करनी चाहिए कि वे कम-से-कम प्रयास एव मानसिक तनाव के साथ सम्पन्न हो सकें। जो कार्य साथ-साथ किए जा सकते हो अथवा जो घर के किसी क्षेत्र विशेष में सम्पन्न किए जा सकते हो उन्हे एक ही क्रम में समाप्त किए जाने से समय व शक्ति की बचत होती है। उन समस्त कार्यों को एक ही क्रम मे करने से समय और शक्ति की बचत होती है, जिन्हे करने के लिए एक ही प्रकार के उपकरणो की आवश्यकता होती है। प्रत्येक गृहिणी को अपनी व्यक्तिगत परिस्थिति में अनुकूल कार्यों का सर्वोत्तम क्रम निर्धारित कर लेना चाहिए।

समय व्यय करने के नमूने व समय का मूल्य
(Time Patterns and costs)

गृहस्थी में समय व्यय करने के प्रारूपों के सम्बन्ध में अमेरिका में सन् १९२० से ही अध्ययन किये जा रहे हैं। जो महिलाएँ प्रयुक्त किये जाने वाले समय का नियमित रूप से दैनिक आलेख रखती थीं उनके सहयोग से ही ये अध्ययन सम्भव हो सके थे। ये अध्ययन गृहस्थी की क्रियाओं के समूह पर क्रमानुसार होने वाले समय के व्यय तथा प्रत्येक समूह पर किये जाने वाले अनुमानित समय के व्यय के सम्बन्ध में सामान्यतः एकमत हैं। इनके अनुसार सप्ताह भर का कुल कार्य करने का समय ४७ से ५२ घन्टे तक है। बीसवीं शताब्दी के छठे दशक में सावधानीपूर्वक दो अध्ययन न्यूयार्क राज्य में वीगेन्ड[1] द्वारा तथा विसकोन्सिन में कॉलिन्स[2] द्वारा प्रकाशित किये गए।

दोनों ही अध्ययनों ने पूर्व में किये गए अध्ययनों के परिणाम को स्थापित किया तथा समय के व्यय करने के प्रारूपों सम्बन्धी ज्ञान में कुछ विस्तृत ज्ञान की वृद्धि की।

उक्त खोजों में सामान्य खोजें निम्नलिखित हैं—

१. भोजन सम्बन्धी क्रियाओं पर गृहस्थी की क्रियाओं के अन्य किसी भी समूह की अपेक्षा लगभग दुगुना समय व्यय होता है।
२. भोज्य सम्बन्धी क्रियाओं में केवल सफाई पर, भोजन पर व्यय होने वाले कुल समय का $\frac{1}{3}$ तथा भोजन तैयार करने में शेष $\frac{2}{3}$ समय व्यय होता है।
३. महत्त्व की दृष्टि से दूसरे नम्बर की क्रियाएँ घर की सुरक्षा और वस्त्रादि की देखभाल और सफाई सम्बन्धी क्रियाएँ हैं। इन दोनों ही क्रियाओं में लगभग बराबर समय व्यय होता है।
४. परिवार की देखभाल तथा घर के लिए सामग्रियों को करना एवं गृह-व्यवस्था ये महत्त्व की दृष्टि से तीसरे नम्बर की क्रियाएँ हैं।

गृहस्थी के कार्यों के मानक (Norms)

कुछ गृहस्थी के विशिष्ट कार्यों जैसे बिस्तर करना, खिड़कियों को धोना, इस्त्री करना आदि पर व्यय होने वाले औसत समय के मानक अमेरिका में स्थापित करने के

---

1. Elizabeth Wiegand, Use of Time by Full-time and Part-time Home-makers in Relation to home management, Cornell Agr. Exp. etc. *Memoir* 330, July, 1954, Table 12 p. 13.
2. May L. Cowles and Ruth D. Dielz "Time spent in Home Making Actvities by a selected group of Wisconsin farm makers," *Journal of home Economics*, Vol 48. No 1 (January 1956), pp. 29-35.

प्रयास किये गए। उनमे से कुछ का जिक्र यहाँ किया जा रहा है। एक आदमी की कमीज पर सर्वोत्तम विधि से इस्त्री करने में लगभग ६ मिनट व्यय होते हैं। एक विस्तर करने में ७-८ मिनट लगते है। गृहस्थी के कार्यों पर व्यय होने वाले समय के मानक स्थापित किये गए हों या नहीं तथा गृहिणी को उनका ज्ञान हो या नहीं परन्तु उसे अपने गृहस्थी के कार्यों पर व्यय किये गए समय का मूल्य ज्ञात होना नितान्त आवश्यक है। कई वर्षों के अनुभव के पश्चात् ही गृहिणी को यह ज्ञात हो पाता है कि उसकी अधिकाश आवृत्यात्मक क्रियाओं को सम्पन्न करने में कितना समय लगता है। एक अनुभवी गृहिणी कुछ दिनो तक प्रत्येक कार्य पर व्यय होने वाले समय का उल्लेख रखकर शीघ्र ही अपने मानक निकाल लेती है। इन वैयक्तिक आलेखों के औसत उसके व्यक्तिगत मानक बन जाते हैं।

अवकाश काल के मानक

गृहिणी के अवकाश काल की क्रियाओं के कुछ मानक उपलब्ध है। अवकाश काल की क्रियाएँ सामान्यतः वे होती हैं जिन्हे न हम काम की श्रेणी मे सम्मिलित कर सकते हैं और न ही विश्राम की श्रेणी मे। अवकाश का उपयोग इस व्याख्या के अनुसार खाने व वस्त्र पहनने आदि में व्यय किया जाता है। इतना निश्चित है कि गृहिणी के दैनिक जीवन मे अवकाश काल का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

भारतवर्ष में शहरी व ग्रामीण जीवन मे पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। इसलिए ग्रामीण व शहरी गृहिणियों के अवकाश काल तथा अवकाश काल की क्रियाओं मे पर्याप्त अन्तर होता है।

शहरो मे उच्च वर्ग की गृहिणियाँ घर सम्बन्धी कार्य अधिकाशत. नौकरो से कराती हैं। उनके पास अवकाश काल पर्याप्त मात्रा मे होता है। वे इस समय को स्वय की साज-सज्जा तथा घर की सजावट मे, बाजार से वस्तुएँ क्रय करने मे, सिनेमा देखने में, मित्रो व रिश्तेदारो के घर जाने मे, सामाजिक व सास्कृतिक उत्सवों मे, मनोरजक साहित्य पढ़ने, चित्रकारी व अन्य ललित कलाओ के सीखने मे व्यय करती हैं। यही कारण है कि उनकी रुचियाँ अधिक परिष्कृत व उच्चस्तर की होती हैं। इसके विपरीत शहर की निम्न मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग की गृहिणियाँ घर का प्रत्येक कार्य अपने हाथ मे तथा परिवार के अन्य सदस्यो के सहयोग से सम्पन्न करती है। उनका अधिकांश समय खाना बनाने, बर्तन साफ करने, खाद्य सामग्री की सफाई करने, बच्चो के कपड़े धोने आदि आवश्यक कार्यों में व्यय होता है। उन्हे अवकाश काल बहुत ही कम मात्रा में मिल पाता है। जो कुछ समय मिलता है उनमे वे बुनाई व सिलाई का कार्य करती हैं, पडोसियो से व अपने रिश्तेदारो से मिलने-जुलने मे व्यय करती हैं। कुछ गृहिणियाँ नौकरी भी करती हैं। वे या तो घर का काम नौकरो से कराती हैं या स्वयं ही करती हैं। जो स्त्रियो नौकरो से खाना बनाने आदि का कार्य कराती हैं उन्हें अवकाश के लिए समय मिल जाता है परन्तु नौकरी वाली जिन स्त्रियों को

गृहस्थी का काम स्वयं ही करना पड़ता है, उन्हें अवकाश शायद ही मिल पाता हो। उन्हें अवकाश उसी स्थिति में मिलता है जबकि वे गृहस्थी का कार्य कराने में परिवार के अन्य सदस्यों की सहायता लें तथा दोनों समय का भोजन इकट्ठा एक ही समय बनावें।

ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली उच्च परिवार की गृहिणियाँ अपना अधिकांश समय चूल्हे-चक्की के कार्यों में व्यतीत करती हैं। अनाज उन्हें स्वयं पीसना पड़ता है। गाँवों में घर सामान्यत: कच्चे होते हैं अत: उनका अवकाश काल घर की लिपाई-पुताई तथा सजावट में व्यतीत होता है। अवकाश काल में वे सिलाई-बुनाई, पंखे, आसन बनाना, सूत कातना आदि उपयोगी व कलात्मक कार्य करती हैं।

परन्तु निम्न श्रेणी व निर्धन परिवारों की गृहिणियों को अनाज पीसने, भोजन बनाने, घर की सफाई करने के अतिरिक्त खेतों पर भी अपने पति के साथ कार्य करने जाना पड़ता है। वे प्रात:काल से रात्रि तक कार्यों में व्यस्त रहती हैं। खेतों पर ही दुपहरी में यदि समय मिल जाता है तो एकत्रित होकर बातचीत करती रहती हैं।

विश्राम काल
(Rest Periods)

विश्राम काल का गृहिणी की कार्य-कुशलता और उसके स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। विश्रामकाल का तात्पर्य यह नहीं होता कि कार्य से पूर्णतया मुक्ति पा ली जाए यद्यपि अत्यधिक शारीरिक कार्य करने के पश्चात् पूर्ण विश्राम की आवश्यकता होती है। यदि श्रमकर्ता लेटकर पूर्णत: विश्राम करे तो सर्वाधिक अच्छे परिणामों की आशा की जा सकती है, क्योंकि विश्राम की अन्य स्थितियों की अपेक्षा लेटने की स्थिति में सबसे कम शक्ति व्यय होती है। गृहिणी को अन्य कार्यकर्ताओं की अपेक्षा विश्राम के लिए अच्छी दशाएँ उपलब्ध हो सकती हैं। यदि किसी कारण लेटने के लिए सुविधाएँ न मिल पाएँ तो बैठकर पूर्णत: आराम करने से भी थकान दूर हो जाती है। सम्भवत: विश्राम काल की सफलता उस काल में पूर्णत: विश्राम की मात्रा पर निर्भर करती है। विश्राम कैसे किया जाय व्यक्तियों को यह भी सिखाया जा सकता है। परीक्षणों के आधार पर यह ज्ञात किया गया है कि विश्राम करने की कला में प्रशिक्षित व्यक्ति ५ सैकिन्ड में ही तनाव पूर्ण मानसिक स्थिति से छुटकारा पाकर पूर्ण विश्राम की स्थिति में पहुँच जाता है। कार्य-परिवर्तन भी एक प्रकार का विश्राम ही होता है। चल-फिर कर काम करने के बाद, बैठकर काम करने पर, अथवा शारीरिक कार्य करने के पश्चात् मानसिक कार्य करने से विश्राम मिलता है।

विश्राम काल की अवधि एवं बारम्बारिता
(Length and Frequency of Rest Periods)

विश्राम की अवधि और बारम्बारिता दोनों ही आपस में घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। औद्योगिक संस्थानों में विश्राम काल प्रात:काल के मध्य में तथा अपराह्न

काल के मध्य मे ५ मिनट से लेकर १५ मिनट तक की अवधि का दिया जाता है। मनुष्य की कार्य-उत्पादन-क्षमता जब उच्चतम बिन्दु पर पहुंच जाए तो इस क्षमता का ह्रास होने से पूर्व ही विश्राम दे देना चाहिए। विश्राम काल की अवधि और बारम्बारिता कार्य के प्रकार पर निर्भर करनी है। मानसिक कार्य करने वाले व्यक्ति की दृष्टि से ४० मिनट मे २ मिनट का विश्राम सर्वोत्तम होता है। हल्का शारीरिक श्रम करने वाले को कार्य के कुल समय का १६% समय विश्राम के लिए मिलना चाहिए। अत्यधिक भारी शारीरिक परिश्रम करने को कार्य के कुल समय का ५७% तक विश्राम किया जाना चाहिए।

विश्राम का काल अनावश्यक रूप से अत्यधिक विलम्ब से नही दिया जाना चाहिए। गृहिणी को किस समय, कितनी देर, कितनी बार तथा किस प्रकार के विश्राम की आवश्यकता है, इन सभी तथ्यो का निर्धारण उसे स्वय ही करना चाहिए। उसे इस बात को पहचानना चाहिए कि यदि वह जिस कार्य को कर रही है, उससे उसे नीरसता का अनुभव हो रहा है तो उसके स्थान पर दूसरा अच्छा लगने वाला कार्य करने लगे, ताकि उसे विश्राम मिल जाए। शारीरिक थकान के सम्बन्ध मे उसे इस बात को दृष्टिगत रखना चाहिए कि विश्राम का काल जितना अधिक लम्बे समय तक स्थगित किया जायेगा ताजगी प्राप्त करने में उतना ही अधिक समय लगेगा। गृहिणी के कार्य और उसके व्यक्तिगत जीवन मे अलगाव नही किया जा सकता। परिणामतः उसे कार्य से पूर्णतः मुक्ति कभी नही मिल सकती। इसलिए उसे विश्राम काल मे पूर्णतः विश्राम करना सीख लेना चाहिए। अनेक गृहिणियो के लिए पूर्ण विश्राम करने की दृष्टि से ठण्डा, शात, अन्धकार युक्त स्थान उचित होता है।

विभिन्न कार्यों के लिए समय की आवश्यकता

व्यावहारिक समय-योजना बनाने के लिए गृहिणी को इस बात की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए कि प्रत्येक कार्य तथा कार्यो के समूह को सम्पन्न करने में कितना अनुमानित समय लगेगा। इस जानकारी के अभाव मे यह निश्चित करना कठिन होगा कि प्रतिदिन कितना कार्य किया जाए।

विशेष आकस्मिक परिस्थितियों के लिए समय

कभी-कभी सप्ताह मे अप्रत्याशित अवरोध उत्पन्न हो जाते है, जिनके कारण साप्ताहिक समय-योजना का पालन करने मे गृहिणी को बडी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। ये अवरोध अतिथियो के एकाएक आ जाने मे परिवार के किसी सदस्य के अस्वस्थ हो जाने के कारण, किसी विशेष उत्सव मे पति-पत्नी को भाग लेने आदि से उत्पन्न हो जाते है। इस प्रकार की आकस्मिक परिस्थितियो का सामना करने के लिए दैनिक समय-योजना मे कुछ समय खाली रखने की व्यवस्था करनी चाहिए।

कार्य का वितरण

यदि परिवार के समस्त सदस्य समय आयोजन में भाग लेते है तो कार्य का

व्यवहारशील हो। किसी भी प्रकार की स्थिति क्यों न उपस्थित हो जाय, एक अच्छी योजना सदैव पथ-प्रदर्शक का कार्य करती है। अवरोधों की उपस्थिति में भी अपने समय आयोजनों को समायोजित करने की गृहिणी की कुशलता अनेक परिस्थितियों पर नियन्त्रण रखने में सहायता प्रदान करती है। वीमारी के कारण, वाहरी कार्य के कारण अथवा वस्तुएँ क्रय करने वाजार जाने के कारण घर से वाहर जाना पड़े तो दिन के आयोजन के अति आवश्यक कार्यों को छोड़, कुछ कार्यों को स्थगित करना पड़ता है। यदि ऐसा करना उचित प्रतीत न हो तो कार्य की गति में अधिक तीव्रता लाकर एक दिन के लिए स्तर में परिवर्तन करके, सायंकाल अतिरिक्त कार्य करके अथवा परिवार के अन्य सदस्यों से सहायता लेकर कार्य की पूर्ति की जा सकती है। उत्तम व्यवस्था करने वाले आपात स्थिति से मुख नहीं मोड़ते, वरन् वे मानसिक स्थिरता के साथ उनका सामना करना सीख लेते हैं।

समय-आयोजनों का मूल्याङ्कन

मूल्याङ्कन योजना-निर्माण एवं उनके क्रियान्वयन में तथा परिणामों के सिंहाव-लोकन के लिए आवश्यक होता है। समय-व्यवस्थापन में लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु सम्भावित विधियों का आयोजन करने में, जैसे दैनिक जीवन की समय व कार्य सम्वन्धी माँगों की पूर्ति हेतु, अवकाश की क्रियाओं एवं मानसिक वृद्धि की सन्तुष्टि हेतु, एक कार्य में समय वचाकर दूसरे कार्य करने हेतु, सर्वोत्तम विधि की खोज करने के लिये एक व्यक्ति कार्य करने की अनेक विधियों का सतत मूल्याङ्कन करता रहता है।

जैसे ही समय एवं कार्य की योजनाएँ क्रियान्वित की जाती हैं तभी से यह देखने के लिए कि योजना के अनुसार ही कार्य हो रहे हैं निरन्तर रूप से कार्य सम्पादन की जाँच एवं मूल्याङ्कन किया जाता है। यदि समयाभाव होता है, अथवा दिन के कार्य में कुछ परिवर्तन करना होता है तो किए जाने वाले निर्णयों को अनेक तत्त्व प्रभावित करते हैं। एक व्यक्ति के समय व सम्पादन के उपयोग का मूल्याङ्कन ज्ञात अथवा अज्ञात रूप में नवीन योजनाओं में सुधार लाता है। समय व्यवस्थापन में मूल्यांकन एक लचीला मानसिक उपकरण है।

पूरे दिन का कार्य समाप्त करके अथवा सप्ताह के अन्त में जव व्यक्ति योजना पर पुनः दृष्टिपात करता अथवा उसका विश्लेपण करता है तो यह पूछना उचित है—

(i) क्या योजना व्यवहारशील थी ?

(ii) जो कुछ किया जाता था, क्या उसे करने में यह सहायक थी, क्या इसने परिवार की आवश्यकताओं को सन्तुष्ट एवं पूर्ण किया ?

(iii) यदि नहीं, तो इसकी असफलता का क्या कारण था ? क्या योजना दोपपूर्ण थी ? योजना के क्रियान्वयन के समय नियन्त्रण में कमी थी ? अथवा सन्तोप-जनक मूल्याङ्कन करने में असफल रही ?

एक सफल योजना वही कही जा सकती है जो कि उपलब्ध साधनों का अपव्यय किए बिना अथवा अनावश्यक मानसिक तनावों के बिना व्यक्तिगत तथा पारिवारिक लक्ष्यों की प्राप्ति सन्तोषजनक ढंग से कर सके।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. समय और गृहस्थी के कार्यों के आयोजन का पारिवारिक जीवन में क्या महत्त्व है ? स्पष्ट कीजिये।
२. आयोजन के प्रमुख आधारों का वर्णन कीजिये।
३. गृहिणी को अवकाश काल किस प्रकार व्यय करना चाहिये ? ग्रामीण व शहरी क्षेत्र की गृहिणियों के अवकाश काल के उपयोग करने के ढंग में क्या अन्तर है ? स्पष्ट कीजिये।
४. अवकाश काल और विश्रामकाल में क्या अन्तर है; विश्राम की अवधि, बारम्बारिता को प्रभावित करने वाले तत्त्वों का वर्णन कीजिए।
५. समय-योजना बनाते समय किन निर्देशों का पालन करना चाहिए ?
६. दैनिक तथा साप्ताहिक समय एवं क्रिया-आयोजन के विभिन्न सोपानों की व्याख्या कीजिये।
७. समय-आयोजन के क्रियान्वयन के नियन्त्रण से आप क्या समझते हैं ?
८. समय-आयोजन के मूल्यांकन से क्या अभिप्राय है ? इसका गृह-व्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

अध्याय १२

शक्ति का व्यवस्थापन

शक्ति-व्यवस्थापन समय के व्यवस्थापन की अपेक्षा अधिक कठिन एवं टल होता है। कोई भी व्यक्ति दिन के २४ घण्टों का हिसाब समय और कार्य की जनाएँ बनाने में लगा सकता है परन्तु वह यह कभी नहीं जानता कि उन योजनाओं कार्यान्वित करने के लिए कितनी शक्ति चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को विभिन्न कार्यों कितनी शक्ति व्यय करनी है, यह उसके शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य एवं रीर-रचना पर निर्भर करता है। प्रत्येक परिवार में कुछ दिन ऐसे होते हैं जब कि हृणी को अत्यधिक कार्य करने पड़ते हैं तथा कुछ दिन ऐसे भी होते हैं जबकि उस कार्य-भार कम रहता है।

थकान जो कि व्यक्ति की कार्य करने की क्षमता को कम कर देती है, गृहिणी शक्ति का उपयोग करने के ढंग तथा उनके गृह निर्माण के उत्तरदायित्वों के प्रति नसिक अभिवृति से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होती है। यदि गृहिणी अपनी याओं की योजना इस प्रकार बना ले कि कार्यों में प्रयुक्त की जाने वाली शक्ति त्यधिक मात्रा में व्यय न हो तो उसके पास अन्य क्रिया-कलापों में भाग लेने व नन्द लेने के लिए पर्याप्त शक्ति बच रहेगी। इस प्रकार वह शक्ति व्यवस्थापन के मुख-लक्ष्यों की प्राप्ति कर लेती है।

यदि कोई ग्रहिणी इन लक्ष्यों को प्राप्त करना चाहती है तो उसे निम्न बातों भली प्रकार समझ लेना चाहिए—

१. परिवार जीवन-चक्र के स्तरों से शक्ति का सम्बन्ध;
२. गृह-निर्माण की विभिन्न क्रियाओं की शक्ति का मूल्य;
३. कौन-सी क्रियाएँ अत्यधिक थकाने वाली हैं;
४. थकान के प्रकार एवं उसके प्रभाव;
५. शारीरिक थकान को दूर करने के लिए अवकाश काल का उपयोग;
६. समय-व्यवस्थापन में आयोजन, नियंत्रण एवं मूल्यांकन का महत्त्व।

परिवार-जीवन-चक्र के विभिन्न स्तरों में शक्ति की आवश्यकता

परिवार-जीवन-चक्र के ६ स्तरो के सम्बन्ध में गत अध्याय में विवेचन किया जा चुका है। उनसे यह स्पष्ट है कि किस स्तर पर गृहिणी को अधिक कार्य करना पड़ता है।

प्रथम स्तर पर सामान्यतः शक्ति की कम आवश्यकता होती है। परन्तु यदि गृहिणी कार्य करती है तो उसे घर और बाहर के कार्यों के मध्य शक्ति का विभाजन करना भली प्रकार सीख लेना चाहिए। दूसरे स्तर पर जबकि बच्चे छोटे होते हैं एव उन्हे अधिक देखभाल की आवश्यकता होती है तथा वस्त्र धोने, इस्त्री करने व भोजन बनाने में अधिक समय लगता है तो शक्ति की आवश्यकता तीव्र गति से बढ़ जाती है। तीसरे व चौथे स्तर पर जबकि बच्चे विद्यालय में जाते हैं तो घर के अन्दर की तथा घर से बाहर की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है। यह समय परिवार तथा बालकों के लिए अत्यधिक क्रियाएँ करने का समय होता है। पाँचवें स्तर में बच्चे कॉलेज जाने लगते हैं, तो घर के अन्दर कार्य का भार कम हो जाता है परन्तु इस समय अधिकांश गृहिणियाँ बाहर के कार्यों में अधिक भाग लेने लगती हैं। अन्तिम स्तर पर शक्ति क्षीण होने लगती है, इसलिए प्रमुख समस्या शक्ति को सुरक्षित रखना है।

गृह-निर्माण की क्रियाओं की शक्ति का मूल्य

सन्तुलित शक्ति-व्यय करने के लिए गृहिणी को यह जानना नितान्त आवश्यक है कि गृह-निर्माण की विभिन्न क्रियाओं का शक्ति-मूल्य क्या है तथा कौन-सी क्रियाएँ अत्यधिक थकान उत्पन्न करने वाली हैं।

किसी कार्य को सम्पन्न करने के लिए जिस मानव-शक्ति की आवश्यकता होती है वह कई विभिन्न अगो से निर्मित होती है। शक्ति की कुछ मात्रा मासपेशीय तनाव को बनाए रखने तथा शरीर की स्वाभाविक क्रियाओ के सचालन के लिए आवश्यक होती है। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित शारीरिक एव मानसिक कार्यों मे भी शक्ति व्यय होती है—

गृह-निर्माण की क्रियाओं में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के प्रयास

मानसिक प्रयास	शारीरिक प्रयास
विचारणा	पहुँचना
तर्क	उठना
आयोजना	पकड़ना
निर्णय करना	ले जाना
चिन्ता करना	फैलाना
निर्देशन	खीचना
वार्त्तालाप करना	दबाना

चक्षु प्रयास	मोरन प्रयास	पद प्रयास
नेत्र-संचालन	झुकना	चलना
देखना	उठना	हिलना
खोजना	मुड़ना	खड़ा होना
निरीक्षण करना	बैठना	
दूरी तथा प्रकाश की स्थितियों से समायोजन	घुटनों पर बैठना	

अमेरिका में कुछ अध्ययन इस प्रकार के किए गए हैं जिनमें खड़े होने, बैठने, चलने अथवा कार्य करने में व्यय की गई शक्ति का मापन यह निर्धारण करके किया गया है कि प्रति मिनट कितनी ऑक्सीजन व्यय होती है। शरीर के प्रत्येक पौंड-भार के लिए प्रति घण्टा प्रयुक्त की जाने वाली ऊर्जा के रूप में परिणामों को प्रदर्शित किया गया है।

शर्मन एवं लैनफॉर्ड महोदय ने निम्नांकित तालिका में बैठने, खड़े होने एवं चलने में व्यय होने वाली शक्ति को प्रदर्शित किया है—

मांसपेशीय क्रियाओं की विभिन्न दशाओं में प्रति घण्टा शक्ति-व्यय

कार्य का स्वरूप	प्रत्येक पौंड भार के लिए प्रति घण्टा केलोरी	शांत पड़े रहने की अपेक्षा वृद्धि का प्रतिशत
जाग्रत, शांत पड़ा हुआ	०·५०	—
आराम से बैठा हुआ	०·६५	३०
विश्रामावस्था में खड़ा हुआ	०·६९	३८
२·७ मील प्रतिघण्टा चलने पर	१·३०	१६०
३·६ ,, ,, ,, ,,	१·९५	२९०
सीढ़ियों से नीचे उतरना	२·३६	३७२
सीढ़ियों से ऊपर चढ़ना	७·१८	१,३३६

लैगवर्दी तथा बैरट नामक दो शोध-कर्ताओं ने कुछ गृह-कार्यों के सम्बन्ध में अध्ययन किया। उन्होंने घर के कुछ कार्यों को मोटे तौर पर ३ भागों में बाँटा—(१) हल्के-कार्य, जैसे—हाथ तथा मशीन के द्वारा बुनाई करना, रफू करना, सिलाई करना, जिनसे कुर्सी पर आराम से बैठने की अपेक्षा १५% अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है; (२) साधारण कार्य जैसे—तौलिया पर इस्त्री करना, शिशु को वस्त्र पहनाना, प्लेट धोना तथा पैर की मशीन से सिलाई करना, जिनके द्वारा मेटाबेलिज्मि (Metabolism) में लगभग प्रतिघण्टा २४ कैलोरी शक्ति व्यय में वृद्धि हो जाती है (३) श्रमशील कार्य, जैसे— तौलिया धोना तथा फर्श झाड़ना, जिनके कारण शक्ति व्यय प्रति घण्टा ५० कैलोरी बढ़ जाता है। ३६·४ इन्च ऊँची मेज की अपेक्षा २५·६ इंच ऊँची मेज पर बर्तन धोने में अधिक शक्ति व्यय होती है। ३३·५ इंच ऊँची मेज पर कार्य करने में कम-से-कम शक्ति व्यय होती है।

ग्रेन तथा ओ'ब्रीयन ने आठ व्यक्तियों के चपाती बनाने तथा फर्श को हाथ से पालिश करने में शक्ति व्यय होने सम्बन्धी अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि इन कार्यों में साधारण शक्ति व्यय होती है। शक्ति का औसत मूल्य ३३·५३ कैलोरी प्रति घण्टा था।

स्वार्ट्ज महोदय द्वारा किए गए एक अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि आलुओं को छीलने में औसतन आराम की स्थिति की अपेक्षा ५० प्रतिशत अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है। कुर्सी पर बैठकर कार्य करने से शक्ति की बचत होती है, परन्तु स्टूल पर कष्टसाध्य ढंग से बैठकर कार्य करने से अधिक शक्ति व्यय होती है। वस्त्रों को विद्युत मशीन द्वारा निचोड़ने पर हाथ अथवा हाथ की मशीन से निचोड़ने की अपेक्षा आधी शक्ति व्यय होती है। नैपकिन्स पर इस्त्री करने में आराम करने की अपेक्षा ८२ प्रतिशत अधिक शक्ति व्यय होती है। बैठकर कार्य करने पर इस मूल्य में २०% की कमी हो जाती है। इस अध्ययन से यह भी प्रकट हुआ कि मेज पर रखी टोकरी से कपड़ा उठाने में, जमीन पर रखी टोकरी से कपड़ा उठाने की अपेक्षा कम शक्ति व्यय होती है।

इस्त्री करने की मेज की ऊँचाई के प्रभावों को जानने के लिए नोवल्स ने सन् १९४६ में एक अध्ययन किया। अध्ययन में यह पाया गया कि धरातल की जिस ऊँचाई पर महिलाओं ने कार्य किया, इस्त्री करने में जितनी शक्ति की आवश्यकता होती है उस पर अधिक प्रभाव पड़ा। ३१ अथवा ३४ इंच ऊँची मेज पर इस्त्री करने का कार्य हल्का या साधारण कार्य समझा गया।

स्वार्ट्ज ने घरेलू कार्यों में व्यय होने वाली शक्ति के आधार पर अग्रांकित वर्गीकरण किया है।

कार्य-विवतण	विश्राम की अवस्था से अधिक व्यय होने वाली शक्ति का प्रतिशत
१. हल्के कार्य	१०० से कम
२. साधारणतः भारी कार्य	१०० से १५०
३. भारी कार्य	१५० से २००
४. अधिक भारी कार्य	२०० से ३००
५. अत्यधिक भारी कार्य	३०० से अधिक

विश्रामावस्था की तुलना में घरेलू कार्यों का शक्ति-मूल्य

क्रिया	औसत प्रतिशत विश्रामावस्था के अतिरिक्त
आलू छीलना—	
खड़े होकर	५०·२
कुर्सी पर बैठकर	४२·८
स्टूल पर बैठकर	५४·१
धुलाई का कार्य—	
हाथ से वस्त्र निचोड़ना	१६१·०
हाथ की मशीन से निचोड़ना	१६७·०
विद्युत मशीन से निचोड़ना	६६·०
वस्त्र टाँगने की रस्सी बाँधना तथा उतारना	१३५·०
वस्त्र टाँगना—	
फर्श पर रखी बाल्टी से	१८४·०
मेज पर से	११८·०
इस्त्री करना—	
खड़े होकर सामान्य मेज पर	८२·२
कुर्सी पर बैठकर	६२·०
स्टूल पर बैठकर	६४·०

भोजन बनाना—

आटा गूँधने की परात नीची मेज पर	११३·०
आटा गूँधने की परात साधारण मेज पर	११६·०
वेसन घोलना—साधारण नीची मेज पर	५४·८
वेसन घोलना—साधारण ऊँचाई की मेज पर	५२·२

ब्रैंटन महोदय ने हाल ही के एक अध्ययन में कार्य करने वाले पर विभिन्न आसनों की स्थिति में खड़े होकर अथवा वैठकर कार्य करने के सापेक्ष प्रभावों का पता लगाया।

खड़े होकर कार्य करने पर शक्ति का औसत व्यय १·४५ कैलोरी प्रति मिनट था। एक साधारण ऊँचाई के स्टूल पर वैठकर जिसमें घुटने ३६ इन्च ऊँचे काउन्टर से नीचे थे तथा पैर स्टूल के नीचे की लकड़ी पर थे शक्ति का औसत व्यय १·४२ कैलोरी प्रति मिनट था। साधारण ऊँचाई के स्टूल पर वैठकर ३६ इन्च ऊँचे काउन्टर पर कार्य करने पर औसत शक्ति-व्यय १·५३ कैलोरी प्रति मिनट था। साधारण ऊँचाई के स्टूल पर वैठकर ३६ इन्च ऊँचे काउन्टर पर कार्य करने पर औसत बाँह उठाकर खड़े होकर कार्य करने की अपेक्षा दुगुना था। ३६ इन्च ऊँचे काउन्टर पर एक ही तरफ घुटने टेक वैठकर कार्य करने में भुजाएँ सबसे अधिक उठानी पड़ती थी। *भुजाओं की गति वाले कार्यों को करने का सर्वोत्तम आसन खड़े होना है। कार्य करने* की अन्य स्थितियों की अपेक्षा कार्य की औसत दर खड़े होने में अधिक थी। इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वैठकर कार्य करने से शक्ति की बचत होती है, यह मान्यता स्पष्टतः सत्य नहीं है।

शक्ति-व्यवस्थापन करते समय विचारणीय दूसरा तत्त्व थकान है। घरेलू कार्यों में व्यय होने वाली शक्ति का मापन करने से कार्य करने वाले को जो थकान का अनुभव हुआ है उसका ठीक संकेत नहीं मिल पाता। विभिन्न कार्यों का थकान सम्बन्धी प्रभाव भिन्न-भिन्न होता है। कुछ हल्के कार्य ऐसे होते हैं जिनको करने मे शक्ति का व्यय तो कम होता है, परन्तु उनमें मानसिक पहुँच, आसन सम्बन्धी प्रभाव, मासपेशीय तनाव अथवा एकाग्रता एवं कौशल के कारण अधिक थकान का अनुभव हो सकता है। इसके विपरीत, कुछ भारी कार्य जिनमें अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है, अपेक्षाकृत कम थकान उत्पन्न करने वाले हो सकते हैं।

अत्यधिक थकान पैदा करने वाले कार्य

कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिन्हें करने मे व्यक्ति को आनन्द आता है। ऐसे कार्यों को करने में कम थकान का अनुभव होता है, अपेक्षाकृत उन कामों के जिनको करना व्यक्ति पसन्द नहीं करता। कई अध्ययनों में गृहिणी के ऐसे कार्यों का पता लगाया गया है, जिन्हे अत्यधिक थकान उत्पन्न करने वाले माना गया है। पर की

एवं सुरक्षा, तथा वस्त्रों का धोना और इस्त्री करना ऐसे कार्य बताये गए थे, जिनको कई गृहिणियों ने अत्यधिक थका देने वाले एवं नापसन्दगी के कार्य बताया।

पर्किन्स, वेयर तथा वेन ने अपने अध्ययन में ज्ञात किया कि वस्त्र धोना अत्यधिक थकान उत्पन्न करने वाला कार्य है, क्योंकि इसे करने में कई शारीरिक गतियाँ करनी पड़ती हैं। समस्त गतियों में खड़ा होना, चलना, उठाना, ले जाना, फैलाना एवं झुकना—अत्यधिक थका देने वाली समझी गई हैं। एक अध्ययन में इलीनोइज की ४११ गृहिणियाँ सम्मिलित की गई थीं। उनमें ३३७ ने बताया कि वे धोने के कार्य को पसन्द करती हैं जबकि केवल ६६ गृहिणियाँ इस कार्य को पसन्द नहीं करतीं। प्रदत्तों से यह प्रकट होता है कि जो गृहिणियाँ वस्त्र धोने के कार्य को पसन्द करतीं थीं उन्हें अत्यधिक सुविधाएँ उपलब्ध थीं तथा ऐसा प्रतीत होता था कि वे इस कार्य में पर्याप्त सन्तोष अनुभव करती थीं। जिन गृहिणियों को धुलाई की आधुनिक सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं वे इस कार्य को कठिन एवं घृणास्पद मानती थीं।

इस्त्री करने में अनुभव की गई थकान के सम्बन्ध में किए गए एक अध्ययन में नोवेल्स ने ज्ञात किया कि जो स्त्रियाँ ३१ इन्च ऊँचे स्टैन्डर्ड मेज पर इस्त्री करती थीं उन्होंने ३ घण्टे इस्त्री करने का कार्य करने के बाद बताया कि यह कार्य बहुत थका देने वाला है। बाद में उन्हें पीठ, पैर तथा टाँगों आदि में पीड़ा का अनुभव हुआ। उपयुक्त ऊँचाई की मेज पर इस्त्री करने के पश्चात् उन्होंने इस कार्य को थोड़ा-सा थका देने वाला बताया। इस सम्बन्ध में केवल दो ही बार शिकायत की बाद में नहीं। इन खोजों से ऐसा प्रतीत होता है कि कार्य-कर्ता की आसन सम्बन्धी आदतें तथा कार्य करने की सतह की ऊँचाई थकान का कारण हो सकती है।

वान वोर्टल और ग्रोस ने दो सामाजिक-आर्थिक समूहों के अध्ययन के आधार पर ज्ञात किया कि दोनों ही समूहों की अधिकांश गृहिणियों ने कुछ घरेलू कार्यों के प्रति नकारात्मक धारणा व्यक्त की। इससे ऐसी प्रवृत्ति प्रतीत होती है कि अनचाहे कार्य में अधिक थकान तथा आनन्ददायक कार्य में कम थकान का साहचर्य था। निम्न स्तर के समूह ने किसी कार्य को थकान उत्पन्न न करने वाला बताने का कारण यह स्पष्ट किया कि वह आनन्दायक एवं नया अनुभव प्रदान करने वाला था। उच्च स्तरीय समूह ने इसके कई कारण बताए जैसे—किसी कार्य को वे बैठकर कर सकते थे, कार्य करने में सरल था, उन्हें उसे करने के लिए अच्छे उपकरण मिल गए थे। दोनों ही समूहों की गृहिणियों ने घर की सफाई एवं सुरक्षा के कार्य को अत्यधिक नापसन्दगी का कार्य बताया।

चूँकि इन कार्यों के सम्बन्ध में अच्छे उपकरण की कमी, तथा कार्य के प्रति घृणा—थकान उत्पन्न कर देने वाले प्रमुख कारण बताए गए, इससे यह स्पष्ट है कि समय की बचत करने वाले उपकरण उपलब्ध कराकर तथा कार्यों को अधिक आनन्द-

दायक एवं वातावरण को अधिक रोचक बनाने की विधियों की खोज करके थकान की मात्रा कम की जा सकती है।

थकान के स्वरूप एवं प्रभाव

शक्ति-व्यवस्थापन मे सम्बन्धित समस्याओं का निराकरण करने की दृष्टि से थकान के विभिन्न प्रकार तथा उनके मानसिक एवं शारीरिक कुशलता पर प्रभाव को समझ लेना नितान्त आवश्यक है।

हाल ही के कुछ वर्षों मे शरीरविज्ञान, मनोविज्ञान, औद्योगिक व्यवस्थापन, तथा गृह-अर्थशास्त्र के क्षेत्र मे हुई शोधों ने थकान सम्बन्धी जानकारी में अत्यधिक वृद्धि की है। प्रारम्भिक अध्ययनो मे शारीरिक थकान पर अधिक बल दिया गया था तो हाल ही के अध्ययनों मे मनोवैज्ञानिक थकान पर बल दिया गया है।

थकान को परिभाषित करना सरल कार्य नही है। यह एक दूसरे से सम्बन्धित कई रूपो में प्रकट होती है। थकान के शारीरिक व मनोवैज्ञानिक स्वरूप निम्न हैं—

१. थकान वह शारीरिक स्थिति है जो कि पूर्व में किए गए कार्य के कारण कार्य करने की क्षमता को कम कर देती है।
२. थकान वह मनोवैज्ञानिक स्थिति है जिसके परिणामस्वरूप किसी कार्य के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है तथा कार्य के उत्पादन मे कमी हो जाती है।

शारीरिक थकान—कई विद्वानो के अनुसार थकान मासपेशीय सस्थान, नाड़ी-सस्थान, अथवा दोनों मे संयुक्त रूप मे उत्पन्न होती है। पेशीय कार्य करते समय शरीर ईंधन का उपभोग करता है तथा शक्ति को निकालता है। पेशियो में शक्ति-उत्पादन करने वाला पदार्थ ग्लाइकोजीन होता है जिसका निर्माण रक्त द्वारा लाई गई शर्करा के पेशीय तन्तुओ से होता है। पेशीय कार्यों मे ग्लाइकोजीन रक्त प्रवाह मे विद्यमान ऑक्सीजन से सयोग करके शक्ति को निष्क्रमित करता है तथा लैक्टिक अम्ल एव कार्बन-डाइ-ऑक्साइड नामक निरर्थक पदार्थों का उत्पादन करत है। ये दोनों पदार्थ निरन्तर पेशीय क्रिया-कलापों मे अवरोध उत्पन्न करते हैं।

किसी भी कार्य को करने के पश्चात् पुनः शक्ति प्राप्त करना अथवा लैक्टिक अम्ल एव कार्बन-डाई-ऑक्साइड को मासपेशियो से निकालना नितान्त आवश्यक है। इस प्रक्रिया मे रक्त-प्रवाह कार्बन-डाइ-ऑक्साइड को फेफड़े में ले जाता है जहाँ इसे निष्कासित किया जाता है। साथ ही साथ रक्त मासपेशियो में ऑक्सीजन ले जाता है, तथा ऑक्सीजन एव ग्लाइकोजीन के पुनः परिवर्तन की प्रक्रिया के द्वारा लैक्टिक अम्ल भी निष्कासित कर दिया जाता है। इस प्रकार ऑक्सीजन लैक्टिक अम्ल को मासपेशियो से हटाने मे योग देकर थकान को रोकने मे सहायता प्रदान करता है।

साधारण मांसपेशीय कार्य करने की अवधि में व्यक्ति सामान्यतः लैक्टिक अम्ल के स्तर को कुछ समय तक साधारण-सी थकान अनुभव करके पेशीय कार्य को अधिक देर तक निरन्तर करते रहने के विन्दु से कम करने के लिए पर्याप्त ऑक्सीजन प्राप्त करता रहता है। यदि कार्य अधिक थका देने वाला है तो कार्य की अवधि में उत्पन्न समस्त लैक्टिक अम्ल को दूर करने के लिए पर्याप्त ऑक्सीजन शीघ्रता से उत्पन्न नहीं की जा सकती। परिणामतः थकान बढ़ती जाती है। कार्य करने के लिए पुनः क्षमता प्राप्त करने के लिए विश्राम की आवश्यकता होती है।

यद्यपि एक मांसपेशी के तन्तु में संकुचन की शक्ति होती है, तथापि प्रत्येक ऐच्छिक पेशीय संकुचन स्नायुओं के माध्यम से केन्द्रीय स्नायु-संस्थान से प्राप्त उत्प्रेरक के द्वारा होता है। मस्तिष्क से स्नायु संवेदना को सुषुम्ना तक पहुँचा देती हैं। स्नायु भुजा, टाँग तथा धड़ तक पहुँचा देती है तथा पेशियों तक सूचना को ले जाती हैं। इस प्रकार प्रत्येक ऐच्छिक मांसपेशीय गति में स्नायु-कोष, स्नायु-तन्तु, पेशियों तथा इन अंगों के केन्द्र-विन्दु साथ-स थ क्रियाशील होते हैं। यदि इन अंगों में से कोई भी एक अपना सामान्य कार्य करना वन्द कर देता है तो मस्तिष्क से पेशियों तक सन्देश पहुँचाना तथा उनकी गतियों को निर्देशित करना दुर्लभ हो जाता है।

स्नायु-संस्थान में उपस्थित किसी भी प्रकार का अवरोध मांसपेशीय कार्य के सन्तुलित समन्वय को अवरुद्ध कर देता है। नाड़ी की गति के निर्देशन पर नियन्त्रण-हीनता मानसिक थकान का प्रथम लक्षण है।

मनोवैज्ञानिक थकान—जीवन के दैनिक कार्यों में उपस्थित होने वाली थकान अधिकांशतः मनोवैज्ञानिक होती है। वार्टले के अनुसार, "थकान अथवा थकावट एक पूर्ण व्यक्ति के रूप में उसके उस परिस्थिति के प्रति अनेक प्रतिक्रियाओं में से एक है, जिसकी वह जाने या अनजाने में व्याख्या एवं मूल्यांकन करता है। व्यक्ति द्वारा स्वीकार की गई आवश्यकता की पूर्ति के लिए एक प्रकार की अनुपयुक्तता ही थकान है।" इसको शारीरिक भावनाओं एवं कार्य के प्रति घृणा—दोनों के ही द्वारा प्रकट किया जाता है।

अनेक वर्षों से औद्योगिक क्षेत्र में 'नीरस थकान' को स्वीकार कर लिया गया है। नीरसता की निकट संगिनी उत्प्रेरण का निम्न स्तर, कार्य के प्रति घृणा, तथा कार्य वन्द करने की इच्छा है। नीरसता कार्य की प्रकृति से उत्पन्न हो सकती है जिसका परिणाम यह होता है कि कोई व्यक्ति किसी एक कार्य में नीरसता का अनुभव करता है परन्तु दूसरे कार्य में नहीं। नीरसता का अनुभव करने के सम्बन्ध में व्यक्तिगत भिन्नताएँ प्रकट होती हैं। रायन महोदय ने सिलाई के कार्य में लगे हुए व्यक्तियों को उनकी व्यक्तिगत आदतों, कार्य के प्रति धारणाओं, गृह का वातावरण आदि से सम्बन्धित एक प्रश्नावली दी। इस प्रश्नावली के परिणामों के

आधार पर यह ज्ञात हुआ कि कार्य के घण्टों के बाद की नियमित आदत के प्रति घृणा से कार्य पर नीरसता की सम्भावना अधिक सम्बन्धित थी। जो व्यक्ति कार्य के प्रति भली प्रकार समजित थे, उन्होंने घर के तथा घर के बाहर के कार्यों के लिए नियमित कार्यचर्या के प्रति वरीयता प्रकट की। नीरसता अनुभव करने वाले व्यक्तियों में अपने परिवार तथा घर के प्रति अपेक्षाकृत हीन समजनशीलता की प्रवृत्ति पाई गई।

कुण्ठा-जन्य थकान (Frustration Fatigue) कई बातो के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है। व्यक्ति की क्रिया के अधिकाश भाग मे सीखी हुई विधियों अथवा आदतों का अनुसरण सम्मिलित होता है। आदतें केवल कार्य करने का ढग ही नही हैं, वरन् सोचने, अनुभव करने तथा उत्पन्न हुई विभिन्न परिस्थितियों और आवश्यकताओं के प्रति प्रतिक्रिया करने के तरीके हैं। जब योजनाओं का क्रियान्वयन नही हो पाता एवं लक्ष्यो की प्राप्ति नही हो पाती, अथवा जब ऐसी द्वन्द्वात्मक परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जिनमे विकल्पों को कसौटी पर कसना पड़ता है, निर्णय करने पडते हैं, तथा नए लक्ष्यो की खोज करनी पडती है तो व्यक्ति को कुण्ठा की भावना का अनुभव हो सकता है तथा तनाव बढ जाता है। ऐसे द्वन्द्वो के परिणामस्वरूप हुई थकान कुण्ठा के सम्पूर्ण चित्र का एक भाग होती है।

उत्प्रेरण का महत्त्व
Role of Motivation

औद्योगिक क्षेत्र मे हुए अध्ययनो से यह प्रकट होता है कि उत्प्रेरण के स्तर का सभी प्रकार की थकान से सम्बन्ध है। जब कोई व्यक्ति किसी कार्य को पसन्द नही करता है अथवा जब उत्प्रेरण का स्तर निम्न होता है, तो थकान तुरन्त ही स्पष्ट दिखाई देने लगती है। परन्तु जब उत्प्रेरण उच्च स्तर का होता है तो पर्याप्त शक्ति का व्यय हो जाने पर भी थकान स्पष्ट रूप मे दृष्टिगोचर नही होती। मेयर के अनुसार, कार्य की स्थिति मे उत्प्रेरक दशा इस तथ्य को निर्धारित करने मे योग देती है कि किसी व्यक्ति को कोई कार्य करने मे कितनी शक्ति व्यय करनी है। उच्च-स्तर का उत्प्रेरण किसी कार्य को सम्पन्न करने के लिए अधिक शक्ति उपलब्ध कराने मे सहायक होता है, जबकि निम्न स्तर के उत्प्रेरण से कम शक्ति मिल पाती है। निष्कर्ष रूप मे यह कहा जा सकता है कि घरेलू कार्य-कलापो के थकान मूल्यो मे उत्प्रेरण अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कार्य करता है।

यदि लक्ष्य स्पष्ट रूप से सामने हो तो कार्य अधिक सरल एव रोचक बन जाते है। उन तात्कालिक लक्ष्यो का आयोजन जिन्हें सरलता से प्राप्त किया जा सकता हो, कार्य को कम नीरस एव उत्प्रेरक बना देता है। प्रत्येक छोटे-छोटे अशों को सफलतापूर्वक पूर्ण करने से सन्तोष का अनुभव होता है तथा व्यक्ति क्रमशः अन्तिम लक्ष्य-प्राप्ति कर लेता है। अवरोधों से बहुधा कार्यों के पूर्ण होने मे बाधा उत्पन्न

दिन का कार्य अव्यवस्थित हो जाता है एवं अधिक थकान का अनुभव होता है। कार्य के अपूर्ण रह जाने के परिणामस्वरूप कार्य करने वाले मस्तिष्क में कुण्ठा अथवा अनुपयुक्तता की भावना उत्पन्न हो जाती है। पूर्ण किये गए कार्य को भूल जाना सरल है परन्तु अपूर्ण कार्य को भूलना कठिन होता है।

कुछ अन्य प्रकार की थकान उत्पन्न होती हैं एवं समाप्त हो जाती हैं। जो थकान बहुत थोड़ी उत्तेजना से ही समाप्त हो जाती हैं; जैसे—पिकनिक, दैनिक क्रियाओं में परिवर्तन, चलचित्र का निमन्त्रण आदि तो ऐसी थकान नीरसता अथवा साधारण तनाव का परिणाम हो सकती हैं।

शारीरिक थकान दूर करने के लिए विश्राम-काल

दिन में कार्य करने की अवधि में विश्राम करने से अत्यधिक थकान तथा अकुशलता को रोकने में सहायता मिलती है। एक व्यक्ति को दिन में कितनी देर तक तथा कितनी बार विश्राम करने की आवश्यकता होती है, इसको कार्य की प्रकृति तथा व्यक्ति की कार्य करने की क्षमता निर्धारित करती हैं।

चूंकि गृहिणी को दिन में अनेक प्रकार के कार्य करने पड़ते हैं तथा उसके द्वारा किए गए कार्यों का कोई सुव्यवस्थित आलेख नहीं रखा जाता, इसलिए दिन के कार्य की अवधि में उसे कितने विश्राम की आवश्यकता होती है, इसकी जानकारी प्राप्त करना कठिन होता है।

कितने समय तक तथा कब तक गृहिणी को विश्राम की आवश्यकता होती है, इसका निर्धारण गृहिणी की थकानशीलता एवं किए जाने वाले कार्य के स्वभाव द्वारा होता है। कुछ गृहिणियों को अल्पकालीन विश्राम की आवश्यकता दिन में कई बार होती है; कुछ गृहिणियाँ कार्य के परिवर्तन में ही पर्याप्त विश्राम ले लेती हैं।

स्वाभाविक है कि थकान का प्रभाव भिन्न-भिन्न व्यक्तियों पर भिन्न-भिन्न पड़ता है। किन्हीं दो कार्यकर्ताओं को समान मात्रा में थकान का अनुभव नहीं होता है, अथवा उन्हें पुनः कार्य करने योग्य शक्ति प्राप्त करने के लिए बराबर समय नहीं लगेगा। कुछ गृहिणियों ने ऐसा अनुभव किया है कि दिन के उस समय जबकि थकान अत्यधिक उत्पन्न हो गई हो अल्पकालीन विश्राम से ही उन्हें थकान की कुछ मात्रा से मुक्ति मिल जाती है। वास्तविकता तो यह है कि विश्राम-काल की अवधि इस बात पर निर्भर करती है कि गृहिणी कितनी थकी हुई है, परन्तु इतना अवश्य है कि प्रत्येक दशा में विश्राम की अवधि इतनी होनी चाहिए कि उसे विश्राम का अनुभव हो सके तथा वह पुनः कार्य पर उत्साह एवं प्रसन्नता के साथ आने के योग्य हो जाए।

शक्ति के उपयोग की योजना

समय-व्यवस्थापन की व्याख्या से यह स्पष्ट हो गया है कि समय और शक्ति व्यवस्थापन अपृथक् हैं। शक्ति-व्यवस्थापन और समय-व्यवस्थापन लगभग एक ही

वस्तु है। इसके अन्तर्गत क्रिया की योजना निर्मित करना और उन्हें कार्यान्वित करना तथा परिणामों का मूल्यांकन सम्मिलित हैं। समय-आयोजन में समय के व्यय का मापन करने के लिए घड़ी होती है, जबकि शक्ति-आयोजन में शक्ति के मापन में विभिन्न क्रियाओं का शक्ति-मूल्य, व्यक्ति की कार्य करने की कुशलता एवं योग्यता तथा थकान के प्रभाव का ज्ञान सहायक होता है। अनुभव के द्वारा ही व्यक्ति यह सीखता है कि दिन-प्रति-दिन के लिए उपलब्ध शक्ति-भण्डार पर आधारित सन्तुलित शक्ति व्यय के प्रारूप को कैसे क्रियान्वित किया जाए।

क्रिया-योजनाओं को कार्यान्वित करने पर नियंत्रण

समस्त क्रिया-योजनाओं को क्रियान्वित करने में उत्प्रेरण महत्वपूर्ण कार्य करता है। पूर्व में यह देखा गया था कि उच्च उत्प्रेरण के परिणामस्वरूप किसी कार्य को करने के लिए अधिक शक्ति उपलब्ध हो जाती है तथा यह कार्य के फलस्वरूप उत्पन्न थकान के मूल्यों को नियन्त्रित करने में भी सहायता प्रदान करता है। गृह-कार्यों के प्रति उचित धारणाओं का निर्माण करके, कार्य तथा कार्य की परिस्थितियों को आकर्षक बनाकर, तथा सम्पूर्ण परिवार में अधिक रुचि एवं लक्ष्यों के प्रति जागरूकता उत्तेजित करके उत्प्रेरण में वृद्धि की जा सकती है।

दैनिक जीवन की क्रियाओं को दिन के घण्टों एवं मिनटों में सुव्यवस्थित रूप से आयोजित करने की कुशलता का विकास करने पर संवेगात्मक एवं शारीरिक शक्ति सुरक्षित बनी रहती है तथा इससे कार्य में अधिक कुशलता उत्पन्न हो जाती है। इससे शक्ति के व्यवस्थापन तथा क्रिया-योजनाओं के कार्यान्वयन हेतु अधिक मानसिक नमनीयता अथवा लचीलापन (Flexibility) उत्पन्न हो जाता है।

कार्य का सरलीकरण, घर के कार्य में शरीर का प्रभावपूर्ण उपयोग, तथा गृह-निर्माण के कार्यों का कुशलतापूर्वक सम्पादन वास्तव में वे उपकरण हैं, जो गृहिणी को समय और शक्ति को सुरक्षित रखने की योग्यता प्रदान करते हैं, ताकि वह इनका उपयोग अन्य रुचियों एवं क्रियाओं में कर सके।

शक्ति-व्यवस्थापन का मूल्यांकन

समय-व्यवस्थापन के मूल्यांकन के सम्बन्ध में की गई चर्चा का अधिकांश भाग शक्ति-व्यवस्थापन के मूल्यांकन से भी सम्बन्धित है। गृह-स्वामिनी स्वयं से निम्नांकित प्रश्न पूछकर अपने शक्ति-भण्डार के उपयोग की सफलता का मूल्यांकन कर सकती है—

१. क्या मैं जिन लक्ष्यों को प्राप्त करना चाहती हूँ, उन्हीं के सन्दर्भ में शक्ति का उपयोग करने के सम्बन्ध में सोचती हूँ ?
२. क्या किसी गृह-निर्माण कार्य में शक्ति का मूल्य अत्यधिक उच्च प्रतीत होता है ?
३. क्या मैं अपनी शक्ति का उपयोग प्रभावोत्पादक ढङ्ग से कर रही हूँ ?

४. क्या मैंने गृह-निर्माण तथा अन्य क्रियाओं के लिए सुसन्तुलित शक्ति-व्यय की योजना को क्रियान्वित किया है ?
५. क्या मैं कुछ-कार्यों को समाप्त करने के लिए दिन में कार्य के घण्टों को बढ़ा देती हूँ ?
६. कौन-से गृह-निर्माण सम्बन्धी कार्य मुझे सर्वाधिक प्रिय हैं ?
७. कौन-से कार्य मुझे पसन्द नहीं हैं ? ये कार्य मुझे क्यों नहीं पसन्द हैं ? इन कार्यों के प्रति मैं अपने दृष्टिकोण को कैसे परिवर्तित कर सकती हूँ ?
८. कौन-से कार्य सर्वाधिक थकान होने वाले हैं और क्यों ?
९. क्या मैं आसानी से थक जाती हूँ ?
१०. क्या मैं जिस प्रकार की थकान का बहुधा अनुभव करती हूँ उसे पहचान लेती हूँ ?

क्या इसके कारण मुझे कार्य बन्द कर देना पड़ता है ? थकान से मुक्ति पाने के लिए मैं क्या कर सकती हूँ ? थकान से छुटकारा पाने के लिए क्या मैं कार्य करने के प्रभावशील तरीकों का उपयोग करती हूँ ? क्या मैंने विश्राम एवं आराम करना सीख लिया है ?

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. पारिवारिक जीवन-चक्र के प्रमुख सोपान कौन-कौन-से हैं ? शक्ति के व्यय की दृष्टि से उनका अन्तर बताइए।
२. गृह-निर्माण की शारीरिक एवं मानसिक क्रियाएँ कौन-कौन-सी हैं ? शारीरिक क्रियाओं की विभिन्न दिशाओं में प्रति घण्टा शक्ति-व्यय का उल्लेख कीजिए।
३. अत्यधिक थकान उत्पन्न करने वाले कौन-कौन-से कार्य हैं ?
४. थकान के विभिन्न स्वरूप कौन-कौन-से हैं ? इनका गृहिणी की कार्य-क्षमता पर क्या प्रभाव पड़ता है ?
५. उत्प्रेरण का थकान से क्या सम्बन्ध है ? स्पष्ट कीजिए।
६. शक्ति-व्यवस्थापन में मूल्याङ्कन का क्या महत्त्व है ?

अध्याय १३

कार्य का सरलीकरण

समय और शक्ति के अन्तर्सम्बन्धित प्रसाधनों की चर्चा गत दो अध्यायों में पृथक्-पृथक् की जा चुकी है। कार्य के सरलीकरण में समय और शक्ति दोनों के व्यवस्थापन को मिश्रित कर दिया जाता है। कार्य के सरलीकरण का अर्थ है निर्धारित समय और शक्ति की मात्रा के अन्तर्गत अधिक कार्य सम्पादित करना, अर्थात् कार्य की निश्चित मात्रा को सम्पन्न करने के लिए समय या शक्ति अथवा दोनो की ही मात्रा को कम करने की प्रक्रिया। यह एक स्वनिहित मान्यता रही है कि किसी कार्य को करने हेतु व्यय किये जाने वाले समय की कमी का स्वाभाविक परिणाम शक्ति के व्यय में भी कमी है, परन्तु शर्त केवल यह है कि कार्य की गति समान ही रहे। गृह में प्रयुक्त शब्द कार्य का सरलीकरण उद्योग की अपेक्षा अधिक दूरगामी प्रभाव डालने वाला है, इनके अन्तर्गत कार्य की पूर्णत: उपेक्षा सम्मिलित है। उदाहरणार्थ सेब की पाई पकाने की विधि में कार्य के सरलीकरण की प्रविधियाँ प्रयुक्त की जा सकती हैं। परन्तु जब तक उनके लिए लाभकारी बाजार प्राप्त होता रहे, तब तक पाई बनाने की लाभप्रद क्रिया चलती रहे। इसी प्रकार एक गृहिणी भी सेब की पाई बनाने की विधि को सरल करती है, परन्तु गृहिणी किसी भी प्रकार की पाई न बनाकर उसके स्थान पर भोजन के अन्त के लिए पकी हुई सेब का प्रयोग कर सकती है। यह अन्तिम अर्थ ही यथार्थ अर्थ है, इसी को कार्य का सरलीकरण है। *कार्य के सरलीकरण के अन्तर्गत जान-बूझकर कार्य* के सबसे अधिक सरल, आसान एवं कार्य करने की विधि को सबसे अधिक शीघ्रता से सम्पन्न करने की विधि को कहते हैं।

रुचि जाग्रत करने की विधियाँ

गृहिणियो मे कार्य के सरलीकरण के प्रति रुचि जाग्रत करने को : विधियाँ हैं—(१) फिल्म के द्वारा, (२) प्रचलित पत्रिकाओ मे उक्त विषय समय पर लेख लिखकर। फिल्मो के द्वारा गृहिणियाँ स्वय देख लेती है । सरलीकरण की विकसित विधियाँ कौन-कौन-सी हैं। इन फिल्मो का उन पर

मार्मिक प्रभाव पड़ता है। लेखों में कार्य के सरलीकरण को इस्तेमाल करने तथा उसके महत्त्व के सम्बन्ध में विवरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

सरलीकृत कार्यों के वास्तविक प्रदर्शन गृहिणियों को समूह में एकत्रित करके किए जा सकते हैं जैसे कुर्सी की सफाई, सिल्वर पर पालिश करना, इसके बाद पूरे समूह से तदनुसार कार्य करने के लिए कहा जा सकता है।

आनुसंधानिक अध्ययन

हाल ही के कुछ वर्षों में अनुसंधानकर्ताओं ने गृह-अर्थशास्त्र तथा अन्य क्षेत्रों में गृह-निर्माण की क्रिया-पद्धतियों में सुधार करने हेतु कार्य-सरलीकरण प्रविधियों का प्रयोग किया गया है। भोजन बनाने, बर्तन साफ करने, वस्त्र धोने व उन पर इस्त्री करने, बिस्तर करने, सफाई करने तथा कई अन्य कार्यों के विषय में गति और समय सम्बन्धी अध्ययन किये गए हैं। कुशल रसोईघर व्यवस्था, उपकरण, साज-सज्जा, संग्रहीकरण की सुविधाओं, कार्य स्थल के धरातल, कुर्सियों तथा तिपाई की सही ऊँचाई के सम्बन्ध में अध्ययन किये गए हैं।

इन अध्ययनों में गृहकार्यों को करने की सरलीकृत विधियाँ बताई गई हैं। इन विधियों का उपयोग गृहिणियाँ अपने घरों में कर सकती हैं। इन अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि किसी गति और समय सम्बन्धी अध्ययन का गृह में कार्य सम्बन्धी समस्या में इनका उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है।

भोजन बनाना (*Food Preparation*)

हेनर[1] ने कुचले आलू बनाने पर अध्ययन किया। इस अध्ययन में प्रयुक्त किये गए उपकरण तथा प्रत्येक प्रकार के उपकरण के सन्दर्भ में, विधि की भिन्नता के सम्बन्ध में खोज की। उसका एक सामान्य निष्कर्ष यह था कि कार्य की दशाएँ समय-मूल्य को चुने गये उपकरण की अपेक्षा अधिक प्रभावित करती हैं। कार्य की स्थितियों के अन्तर्गत कार्य के केन्द्र का सङ्गठन तथा कार्य की विधि का सरलीकरण सम्मिलित थे।

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय मिचीगन स्टेट यूनीवर्सिटी में पालक की सब्जी बनाने पर अध्ययन किया गया। अध्ययन में समय की दृष्टि से २०% सुधार हुआ। (चित्र १०—६)

हरी सेम की फली को घर में डिब्बे में बन्द करने के सम्बन्ध में लिन्डरमन[2] ने ग्रामीण घर में प्रक्रिया चार्ट (Process chart) के द्वारा अध्ययन किया।

---

1. Mary K. Heiner, 'Simplifying Home Preparation of Pototoes.' *Journal of Home Economics.* Vol. 35, (1949) pp. 646-652,
2. Jean Linderman, "A Time and Motion study in Home Economics." *The kitchan Reporter, Published by Velination March*, 1947.

कार्य करने के क्षेत्र तथा उपकरण में परिवर्तन करने तथा जाने-अनजाने व कुछ प्रक्रियाओं के समाप्त करने के फलस्वरूप कुछ बचत हुई जो कि निम्नानुसार है—

	पुरानी पद्धति	संशोधित पद्धति
परिचालक (Operation)	१६६	६०
कदम चले	७१६	१०२
समय	४ घण्टे ३७ मिनट	४ घण्टे ७ मिनट

बर्तन धोना (Dishwashing)

प्रारम्भ में हेनर और वेडर[1] ने बर्तन धोने के सम्बन्ध मे अध्ययन किया। इस अध्ययन में जो पद्धतियाँ प्रयुक्त की गई वे थी प्रशिक्षित निरीक्षणकर्ता द्वारा गतियो की गणना तथा कालनिष्ठ समय (Stop watch timing) अध्ययन में अनेक चर थे तथा विभिन्न चरो के प्रभाव का पृथक्करण नही किया गया था। गति और समय दोनो की कुल कमी निम्नानुसार थी—

पद्धति	गति	समय
वर्तमान पद्धति	१६,६४	२८ मिनट, ८ सैकण्ड
अनुशंसित मिश्रित पद्धति	१,००८	२२ मिनट २८ सैकण्ड

लाभ प्रमुखतः इसलिए हुए कि प्रतिदिन ३ बार बर्तन धोने की अपेक्षा १ बार धोए गए, तौलिए से पोछकर सुखाने की अपेक्षा पानी में डुबाए गए (Draining), तथा जब तक पुनः प्रयुक्त न किए जाएँ तब तक बर्तन (टोकरी) में ही पड़े रहे।

बर्तन धोने सम्बन्धी आगामी अध्ययनों में इस कार्य के लिए अन्य सुझाव दिए गए। गोबले के अध्ययन में बर्तन धोने की पाँच विभिन्न विधियों के विश्लेषण को प्रयुक्त करके यह प्रदर्शित किया कि सिन्क (Sink) पद्धति में ८ प्रतिशत तथा सिन्क रहित पद्धति में २३ प्रतिशत समय की बचत की दृष्टि से प्रगति हुई। उसका विशेष योगदान एक प्याला, एक तश्तरी, एक गिलास धोने के चक्र का विश्लेषण करके प्राप्त हुआ। इन विश्लेषणो के आधार पर उसने सिफारिश की[2]—

१. बर्तन तक कपड़े को भिगोकर जल लाने के श्रम को समाप्त करने की दृष्टि से बर्तनों को जल के तल पर धोइए।

---

1. M, K. Heiner and N. M. Vedder, 'Studies in Dishwashing Methods *Journal of Home Economics*, Vol. 22 (1930) pp. 393-407.
2. Eva. Goble, 'Work simplification in Dishwashing', *Journal of Home Economics*, Vol. 40 (1948), pp. 195-196.

२. सर्वाधिक सरल ढङ्ग से गति करने तथा वर्तन साफ करने की क्रिया में ही वर्तन धोने का वस्त्र पानी में डूब सके इन दृष्टियों से वर्तनों को वृत्ताकार गति से धोना चाहिए ।

३. वस्त्र को दाँए हाथ में ग्रहण करना चाहिए ।

४. एक वर्तन को धोकर, हाथ में वस्त्र लेकर धोए जाने वाले दूसरे वर्तन को हाथ में लीजिए ।

५. जो हाथ वर्तन रखने की टोकरी के सबसे अधिक समीप हो उसी हाथ से धुले वर्तन को टोकरी में रखिए । अन्यथा अधिक समय व गति व्यर्थ ही व्यय होंगी ।

६. धोने की प्रक्रिया के अन्तर्गत वर्तन को घुमाने के लिए वाँए हाथ का उपयोग कीजिए । उसे दोनों हाथों से नहीं घुमाना चाहिए ।

७. वर्तनों को सुखाते समय गति की वचत करने के लिए प्रत्येक हाथ में तौलिया का एक सिरा पकड़ना चाहिए तथा दोनों हाथों को पास-पास रखना चाहिए तथा उन्हें वर्तनों के समीप रखना चाहिए ।

वस्त्रों की धुलाई (Laundering)

इस क्षेत्र में इलेन नोवेल्स वीवर की[1] इस्त्री करने सम्बन्धी अनुसन्धान इस क्षेत्र में सर्वप्रथम था ।

रथ ए आइर्स एवं एलिजावेथ डब्ल्यू० विले[2] ने 'A Motion Study on Laundry Arrangements' पर अध्ययन किया । इस अध्ययन में वस्त्र धोने के उपकरणों के तीन सैटों की तुलना की गई । इसमें धोने की पद्धतियों तथा अन्य तत्त्वों को यथावत् रखा । प्रत्येक व्यवस्था में चार इकाइयाँ ली—छाँटना, धोना, कलफ देना, तथा सुखाना । दो व्यवस्थाओं में कार्य करने वाले ने दाँए, से वाँए की ओर कार्य किया तथा एक में वाँए से दाँए कार्य किया । जाना-आना, क़दम तथा गतियों की तुलना की गई । तीनों व्यवस्थाओं में चलने के क़दम की संख्या में कोई अन्तर नहीं पाया गया परन्तु जाने-आने तथा गति की दृष्टि से प्रथम प्रकार की व्यवस्था उत्तम थी (चित्र १०-७ देखिए) ।

---

1. Elaine Knowles, 'Relation of Posture to Fatigue in Ironing,' *Journal of Home Economics*, Vol. 37 (1945), pp. 584-587.
2. Ruth A. Eyres and Elizabeth W. A Motion study on Laundry Arrangements. Agrn Exp. sta. *Circular*, April, 1951.

व्यवस्था	जाना-आना (Trips) (3 प्रयत्नों का औसत)	गतियाँ (3 प्रयत्नों का औसत)
१. दाएँ से बाएँ—एक रेखीय इकाइयाँ	५४	३७८
२. दाएँ से बाएँ—इकाइयाँ आंशिक रूप से एक रेखीय, आंशिक रूप से समकोण पर	६१	४६४
३. बाएँ से दाएँ—	६२	४४६

धोने की व्यवस्थाओं की तुलना करने के अतिरिक्त इस अध्ययन में धोने की प्रक्रिया के उन अंशों की ओर भी संकेत किया जिनमें सबसे अधिक संख्या में गतियाँ तथा कदम (Steps) प्रयुक्त किए गए। इसलिए इन अंशों पर किए गए अध्ययन सम्भवतः अधिक सुधार प्रस्तुत करेंगे। धोने की एक प्रकार की व्यवस्था में भिगोने, धोने, तथा साफ करने में सर्वाधिक गतियाँ हुईं, खँगारने तथा कलफ लगाने में मध्यम संख्या में गतियाँ हुईं; तथा छाँटने व टाँगने की प्रक्रियाओं में सबसे कम बार गतियाँ की गईं। अन्य व्यवस्थाओं में भी इसी प्रकार थी, परन्तु पूर्णतः समान नहीं, धोने की प्रक्रिया के विभिन्न अंशों में गतियों का क्रम लगभग यही रहा—

वस्त्र धोने में प्रयुक्त गतियाँ (Motions)

क्रिया	गतियाँ	सबसे अधिक से सबसे कम की ओर क्रम
भिगोना	१००	१
धोना	६३	२
स्वच्छ करना	८१	३
खँगारना	४५	४
कलफ देना	३६	५
टाँगना	१४	६
छाँटना	६	७

चलने के कदमों के सम्बन्ध में खोजें, जो कि क्रम की दृष्टि से अन्य व्यवस्था के समान ही थी अग्रिम तालिका में प्रस्तुत की जा रही हैं। कदमों की दृष्टि से धोना व स्वच्छता करना अधिक महत्त्वपूर्ण है, परन्तु खँगारने व भिगोने ने एक दूसरे की स्थिति से विनिमय कर लिया है।

वस्त्र धोने में प्रयुक्त कदम[1]

क्रिया	कदम	सबसे अधिक से सबसे कम की ओर क्रम
खँगारना	४६	१
धोना	३४	२
स्वच्छ करना	२४	३
भिगोना	६	४
छाँटना	४	५
कलफ देना	२	६
टाँगना	१	७

विस्तर करना (Bedmaking)

परम्परागत विधि से विस्तर करने के सम्बन्ध में सर्वाधिक प्रख्यात अध्ययन मैरिएन म्यूज[2] का है। म्यूज का कथन था कि—"विस्तर करने में कितना समय और कितने कदम चलने की आवश्यकता है ये दोनों बातें कई कारकों के संयोजने पर निर्भर करती हैं। इन कारकों के अन्तर्गत विस्तर के प्रकार, विस्तर में प्रयुक्त होने वाले वस्त्रों का प्रकार एवं उनकी संख्या, कार्य कितनी कुशलता के साथ किया गया, कार्य करने की विधि, तथा कार्य कर्त्ता के कार्य करने की गति आदि सम्मिलित हैं।

कैसी भी परिस्थितियाँ हों तथा कैसा भी कार्यकर्त्ता हो विस्तर करने की सम्भवतः कोई एक विधि सर्वोत्तम नहीं है।

अध्ययन में हुई समय और गति में कमियाँ आगे लिखे अनुसार थीं, परन्तु किसी एक प्रगतिशील विधि में समस्त सर्वोत्तम गुण उपस्थित नहीं थे।

---

1. Ruth A. Eyres and Elizabeth W. Wiley, A Motion Study on Laundry Arrangements. Agr. Exp. sta. circular. 142, April 1951.
2. Mariame Muse, *Saving Time and Steps in Bedmaking*, VI. Agr. Exp. Sta. Bull. 551, March, 1949, p. 3.

	अधिकतम	न्यूनतम्
चलने की दूरी	२६२ फीट	२३ फीट
समय	६ मिनट, २८ सैकन्ड	२ मिनट, ४२ सैकन्ड
केवल हस्त प्रक्रिया	२६	२०
हस्त प्रक्रिया और चलने की प्रक्रिया का संयोजन	१२	०
गतियाँ	२१	६

दूसरी ओर जाने से पूर्व एक ही तरफ से या एक कोने से बिस्तर को पूर्णतः बिछाना प्रमुख रूप से सुधारों के अन्तर्गत सम्मिलित हैं।

स्वच्छता (Cleaning)

स्वच्छता के अध्ययनों के अन्तर्गत साधारण कार्य, जटिल कार्य तथा स्वच्छता के लिए प्रयुक्त किये गए विशिष्ट स्वच्छता सम्बन्धी उपकरण सम्मिलित हैं।

जटिल कार्यों में से सोने के कमरे की स्वच्छता के विषय में अध्ययन किया गया[1]। पृथक् चरणों में कोई सुधार नहीं हुआ परन्तु कार्यकर्ता ने परिसंचालन (Operation) की संख्या २६ के स्थान पर कम करके २१ कर दी तथा कार्य के क्रम में परिवर्तन करके तथा अंशों का संयोजन करके घुमाव की दूरी को कम कर दिया।

एवरेट और ग्रौस ने दरवाजों के धोने के सम्बन्ध में अध्ययन किया[2]। इस अध्ययन में प्रयुक्त प्रक्रिया यह थी कि अपने घरों में कार्य करने वाली २५ गृहिणियों का उनके अपने अभ्यस्त विधि से कतिपय कार्य करते हुए निरीक्षण किया गया। इन अवलोकनों के आधार पर प्रत्येक कार्य के लिए एक मिली-जुली औसत विधि का विकास किया गया जिसमें सर्वाधिक बार निरीक्षित कार्य में तत्त्वों को प्रयुक्त किया गया। इस विधि की एक फिल्म बनाई गई तथा उसका विश्लेषण किया गया तथा प्रत्येक कार्य के लिए पुनरीक्षित मिली-जुली पद्धति निरीक्षित किये गए सर्वोत्तम तत्त्वों

1. Silvia Shiras, Take Time to Make Time and How Does She Do It, film strips, Household Finance Corp., Chicago, Ill.
2. Esther Everett and Irma H. Gross, Mind Your Motions as You Work, Mich. Exp. Sta. Folder 5 (October, 1946).

से विकसित की गई। फिर पुनः इसकी फिल्म बनाई गई। चित्र १०-५ में प्रदर्शित ४ संशोधनों के माध्यम से दरवाजे धोने की पुनरीक्षित तथा सामान्य पद्धतियों के मध्य समय में १० प्रतिशत कमी की गई।

कार्य और भंडार-गृह के क्षेत्र

कुछ प्रकार के भोजन बनाने के लिए चाहे गये समय व गतियों के आधार पर निर्णीत रसोईघर पर कुछ अध्ययन किए गए हैं। इस प्रकार के एक अध्ययन में म्यूज[1] ने ६ प्रकार के चर (Variables) रसोई घर में प्रयुक्त किए तथा रसोई घर में ५ व्यक्तियों का उच्च स्तर का भोजन तैयार किया गया। समस्त परिवर्तन उपकरणों से सम्बन्धित थे। इस अध्ययन में ४४·५ प्रतिशत समय की तथा ६१-३ प्रतिशत कदमों की अधिकतम बचत हुई। इस अध्ययन के विस्तृत आंकड़े नीचे की सारणी में प्रस्तुत किए जा रहे हैं। इस सारणी पर दृष्टिपात करने पर यह ज्ञात होता है कि कुछ अतिरिक्त उपकरणों का प्रयोग करने के कारण लगभग आधे समय की तथा आधे से अधिक कदमों की बचत हुई।

रसोईघर के उपकरण में परिवर्तन करने के परिणामस्वरूप समय व कदम में बचत[2]

समूहीकृत कारक	समय की बचत (प्रतिशत में)	कदम की बचत (प्रतिशत में)
१. अतिरिक्त उपकरण		
स्टैक मेज	६·२	९·२
ड्रेन बोर्ड	९·२	१५·३
पहियों की ट्रे	३·२	२५·६
योग	१८·६	५०·१
२. उपकरणों की व्यवस्था		
बर्तन	२·२	११·१
भोजन	२·४	१४·३
सामान्य संगठित व्यवस्था	७·४	१०·२
योग	१२·०	३५·६

1. Marianne Muse, Kitchen Equipment and Arrangement Vt. Agr. Exp. Sta. Bull. 375, May, 1934,
2. Based on Marianne Muse, kitchen Equipment and Arrangement, Vt. Agr. Exp. Sta. Bull. 375 May 1935.

३. उपकरणो मे परिवर्तन		
स्टॉव		
लकड़ी से तेल का	८·१	४·१
तेल से विद्युत का	१·२	०·६
हाथ के बीटर से		
विद्युत बीटर	८·६	०·६
योग	१३·६	५·६
महायोग	४४ ५	६१·३

समय बचत मे हाथ से चलाने वाले तथा मिश्रण करने वाले उपकरणो के स्थान पर विद्युत के मिश्रक का उपयोग करने पर समय की अत्यधिक बचत हुई। समय और कदम बचाने की दृष्टि से उपकरणो की व्यवस्था अतिरिक्त उपकरणो के उपयोग की तुलना मे $\frac{3}{3}$ गुनी प्रभावशाली थी। पहियो वाली ट्रे का उपयोग करने पर ही कदमो मे २५ प्रतिशत बचत हुई।

भोजन बनाने के माध्यम से तीन बुनियादी प्रकार के रसोईघरो की व्यवस्था सम्बन्धी अध्ययन किया गया है।[1] रसोई घर के तीन प्रकार निम्नलिखित थे—

१. दो विपरीत साइडो मे रखे उपकरण सहित अथवा दो-दीवार वाला प्रकार।

२. दो संगत भुजाओं पर उपकरण सहित एल (L) की आकृति का।

३. तीन भुजाओ पर उपकरण सहित यू (U) के आकार का जिसमे यू की बार (bar) के अन्दर सिंक हो।

यू (U) प्रकार का रसोईघर अधिक लाभदायक सिद्ध हुआ।

वर्तमान में उपस्थित सुविधाओ के पुनर्गठन द्वारा सुधार की सम्भावनाओं का अध्ययन विसकॉन्सिन[2] में रसोईघर के कार्य के क्षेत्र में कार्य के सरलीकरण के सम्बन्ध में किया अध्ययन में विद्यमान सगठन के मापन विधि तथा उसकी प्रभाव-

---

1. M. E. Mundel, 'Factors Affecting Ease of Kitchen Work, "Kitchen Reporter, *Published by Kelvinator*, March, 1947.
2. M. L. Cowles, S. M. Steele and H. B. Kisbler, "Savings in Distance walked in Kitchen through Reorgainzation of Storage and work space, "*Journal of Home Economics*, Vol. 50, (March, 1958), pp. 169-174.

शीलता को जाँच करने की विधि सम्मिलित थी। प्रभावशीलता की जाँच के लिए फिल्म विश्लेषण सबसे अधिक सही विधि सिद्ध हुई है। परन्तु निरीक्षक द्वारा सावधानी पूर्वक उसका अभिलेखन किया जाना चाहिए। पुनर्गठन द्वारा सुधार की सम्भावनाओं के सम्बन्ध में यह ज्ञात हुआ कि मानवीकृत भोजन तैयार करने में कुल दूरी के २७.६ प्रतिशत की (फिल्म विश्लेषण द्वारा) तथा १०.५ प्रतिशत समय की बचत हुई।

कॉर्नेल विश्वविद्यालय में एम० के० हीवर तथा एच० ई० मैककूलॉफ[1] ने रसोईघर के भण्डार-गृह के विषय में अध्ययन किया। यह ज्ञात करने के पश्चात् कि कौन-सी खास वस्तुएँ, वर्तन, चीनी मिट्टी और शीशे के वर्तन परिवार में आमतौर पर संगृहीत किए जाते हैं, अनुसंधानकर्ताओं ने विभिन्न ऊँचाई की महिलाओं की वांछित पहुँच के उपलब्ध ज्ञान के आधार पर उक्त वस्तुओं को संगृहीत करने के लिए भण्डार घरों का निर्माण कराया। इस अध्ययन की प्रमुख सिफारिशें ये थीं—

१. अधिक संख्या में पृथक् खाने (Shelves) और अल्मारियाँ वनाई जावें।
२. इनमें से अधिकांश पास-पास हों। परम्परागत अलमारियों के समान दूर-दूर न हों।
३. भण्डार घर की कुछ नाप निम्नानुसार हों।

अधिकतम ऊँचाई—	७२ इंच
एक भुजा से दूसरी भुजा की अधिकतम दूरी	४८ इंच
सामने से पीछे तक की अधिकतम गहराई	१६ इंच
अधिकांशतः प्रयोग में आने वाली सामग्री के खाने (Shelve)	कोहनी से २४ इंच के व्यास के अन्दर
अत्यधिक प्रयोग में आने वाली वस्तुओं के लिए निम्नतम विन्दु	फर्श से २५ इंच।

परिवर्तन के वर्ग

परिवर्तनों के माध्यम से कार्य करने की विधियों का विकास किया जा सकता है। प्रत्येक उच्चतर स्तर निम्नस्तर की गति में परिवर्तन उत्पन्न करता है। परिवर्तन के वर्ग का विचार सर्वप्रथम मण्डेल[2] ने सन् १९४० में प्रारम्भ किया। मण्डेल ने

1. M. K. Heiver and H. E. Mc Cullough, Functional Kitchen Storage, Cornell University, Agr. Exp. Sta. Bull 846. June 1948.
2. M. E. Mundel, Systematic Motion and Time Study (*Englewood Clifls, N. J. Prentice-Hall*, 1950) pp. 23-26.

सरलीकरण के समस्त उदाहरणों को पाँच वर्गों में विभाजित किया था। पर्याप्त समय तक परिवर्तन के ये पाँच वर्ग प्रचलन मे रहे। परन्तु कुछ समय बाद इन पाँचों वर्गों का संक्षिप्तीकरण करके ३ वर्गों मे परिवर्त्तित किया। जिस बिन्दु से परिवर्तन का प्रारम्भ होता है उसी बिन्दु पर प्रत्येक वर्ग आधारित होता है। ये तीन वर्ग निम्न लिखित है—

(१) हाथ और शरीर की गतियो में परिवर्तन

(२) कार्य और सग्रहीकरण के स्थल एवं उपकरण मे परिवर्तन

(३) उत्पादन मे परिवर्तन

वर्ग १ मे परिवर्तन का मूल बिन्दु कार्यकर्ता की क्रिया शीलता है, वर्ग २ मे कार्य करने का स्थान और उपकरण है; वर्ग ३ मे उत्पादित वस्तु है।

वर्ग १—हाथ एवं शरीर की गतियों में परिवर्तन

इस वर्ग के अन्तर्गत केवल हाथ और शरीर की क्रियाओ मे ही परिवर्तन होता है, कार्य का स्थान, उपकरण तथा उत्पादन यथावत् रहते है। कार्य मे सोपानो का क्रम परिवर्तित हो भी सकता है और नही भी। यहाँ गतियो मे परिवर्तन के कुछ उदाहरण हैं—एक हाथ के स्थान पर दोनो हाथों से खाने के बर्तनो को उठाना, विस्तार करने मे अनावश्यक कदमो को समाप्त करना, झाड़ू देने मे सम्पूर्ण क्रियाओ का उपयोग करना। झाड़ू लगाना, वस्तुएँ एक स्थान से उठाकर दूसरे स्थान पर रखना, बच्चे को जमीन या चारपाई मे उठाना आदि शरीर सम्बन्धी कार्य है। विपरीत दिशा में जाने से पूर्व सम्पूर्ण विस्तर सम्बन्धी कार्य करना, बर्तन मे सभी वस्तुओं को एक साथ डालकर, मिलाकर पकाना सोपानो के क्रम में परिवर्तन के उदाहरण हैं।

वर्ग २—कार्य और संग्रह के स्थान और उपकरण में परिवर्तन

खाने के बर्तनो को ले जाने के लिए ट्रे का उपयोग झाड़ने के लिए वैक्यूम क्लीनर का उपयोग, विद्युत मिक्सर, कार्य करने के धरातल की उपयुक्त ऊँचाई।

सिल्वर को साफ करने के लिए इलेक्ट्रोलाइटिक (electrolytic) पद्धति, भण्डार घर का संगठन, रसोई घर के बड़े उपकरणो की पुनर्व्यवस्था आदि कुछ इस वर्ग के परिवर्तनों के उदाहरण हैं।

संग्रह करने के क्षेत्र से सम्बन्धित कुछ सिद्धान्त

कुछ रसोई घरों मे गतियो और चलने के कदमो की सत [illegible]
के परिवर्तन द्वारा की गई है सिंक के ऊपर ही बर्तनो को भोज [illegible]
मे दूसरे स्थान पर जाने की आवश्यकता नही होती। परिश्र [illegible]
मात्रा मे कमी हो जाती है।

वर्ग १ की अपेक्षा वर्ग २ के परिणाम अधिक नाटकीय हैं। म्यूज के रसोई घर के सभी परिवर्तन दूसरे वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। इसके परिणामस्वरूप ४५ प्रतिशत समय तथा ६१ प्रतिशत चलने के कदमों की बचत होती है।

वर्ग दो का सबसे अधिक दोष यह है कि इस वर्ग के अधिकांश परिवर्तन अत्यधिक व्यय-साध्य हैं। यद्यपि उनमें से कुछ बिल्कुल भी व्यय-साध्य नहीं हैं। उदाहरणार्थ कार्य करने के स्थान पर वस्तुओं को प्रभावपूर्ण ढङ्ग से व्यवस्थित करने में आर्थिक दृष्टि से कुछ व्यय नहीं होता। सिंक पर कार्य करते समय ठीक प्रकार खड़े होने में भी कुछ धन व्यय नहीं होता। कार्यकर्ता की ऊँचाई के अनुसार सिंक को ऊँचा करने में धन व्यय होता है।

उपकरण और खाद्य सामग्री एक स्थान पर रखी जावें जहाँ इनका उपयोग होना हो।

व्ययहीन पदार्थों तथा उपकरणों की व्यवस्था एक से अधिक स्थानों पर होनी चाहिए।

विशिष्ट प्रकार की प्रक्रिया में प्रयुक्त होने वाली समस्त सामग्री तथा उपकरण एक ही स्थान पर रखे जाने चाहिए।

वस्तुओं का संग्रह ऐसे स्थान पर किया जाए जहाँ पर वस्तुएँ सरलता से देखी जा सकें तथा जिन्हें सरलता से निकाला जा सके।

वर्ग ३—उत्पादन में परिवर्तन

विभिन्न कच्ची वस्तुओं के प्रयोग अथवा उसी कच्ची वस्तु से विभिन्न वस्तुएँ उत्पादित करने अथवा कच्ची सामग्री और उत्पादित वस्तु दोनों में ही परिवर्तन के परिणामस्वरूप ये परिवर्तन सम्भव होते हैं। विभिन्न कच्ची सामग्री के उपभोग के उदाहरण हैं—सूत के स्थान पर टेबल मैट के लिए प्लास्टिक का उपयोग, वर्गाकार के स्थान पर गोल बिस्कुट बनाना विभिन्न कच्ची सामग्री से विभिन्न वस्तुएँ बनाने का उदाहरण है। वस्त्र के मेज पोश के स्थान पर प्लास्टिक की मैट का उपयोग।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. कार्य के सरलीकरण का क्या अभिप्राय है? गृह-सुव्यवस्था में इसका क्या महत्त्व है?

२. कार्य के सरलीकरण के प्रति रुचि जाग्रत करने की कौन-कौन-सी विधियाँ हैं? प्रत्येक का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।

३. भोजन बनाने व बर्तन धोने की विभिन्न पद्धतियों में सुधार लाने हेतु किए अध्ययनों के आधार पर उचित पद्धति का निर्धारण कीजिए।

४. वस्त्रों की धुलाई पर विदेशों में किए गए अनुसंधानों के आधार पर यह बताइए कि इस कार्य में किस प्रकार समय और शक्ति की बचत की जा सकती है।

५. बिस्तर बिछाना व घर की सफाई की क्रियाओं में समय व शक्ति की बचत की दृष्टि से किन बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

६. रसोई घर व भण्डार-घर की व्यवस्था किस प्रकार की जाए कि शक्ति और समय का अपव्यय न हो।

७. समय और शक्ति की बचत की दृष्टि से गृह-व्यवस्था में परिवर्तन के प्रमुख वर्ग कौन-कौन-से हैं ? उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।

अध्याय १४

समय एवं शक्ति-बचत के कुछ उपकरण

आधुनिक युग में विज्ञान की उन्नति के फलस्वरूप कई प्रकार के यन्त्रों का आविष्कार हुआ है जो कि गृहिणी के समय एवं शक्ति की बचत में अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं। आज की पढ़ी-लिखी गृहिणी जो गृह-कार्य के अतिरिक्त घर के बाहर भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भी कार्य करती है, इन यन्त्रों के प्रयोग से सब कार्य सुचारु रूप से सुविधापूर्वक कर सकती है। इस प्रकार गृहिणी समय व शक्ति के व्यर्थ के खर्च को रोक कर उनका सदुपयोग कर सकती है। मुख्य समय बचत, शक्ति बचत के कुछ उपकरण निम्नलिखित हैं—

रेफ्रिजेरेटर (Refrigerator)

रेफ्रिजेरेटर वह उपकरण है जिसका निर्माण खाद्यपदार्थों के शीत संग्रह (Cold Storage) के लिए किया गया है। यह खाद्य वस्तुओं के संरक्षण के लिए हिमाङ्क (Freezing point) से उच्च एवं निम्न दोनों ही ताप विन्दुओं पर स्वचालित होता है। दूसरे शब्दों में, भोज्य-पदार्थों को आस-पास के वायुमण्डल के ताप से निम्न विन्दु पर ठण्डा करने का कार्य करने वाला उपकरण ही रेफ्रिजेरेटर कहलाता है।

सिद्धान्त

रेफ्रिजेरेटर का सिद्धान्त ऊष्मा के कतिपय मौलिक नियमों पर आधारित है। रेफ्रिजेरेटर के सिद्धान्त के लिए ऊष्मा के स्थानान्तरण तथा सुप्त-ऊष्मा एवं विशिष्ट ऊष्मा के ज्ञान की आवश्यकता होती है। ऊष्मा सदैव गर्म वस्तु से ठण्डी वस्तु की ओर स्थानान्तरित होती है। ऊष्मा का यह स्थानान्तरण विकिरण (Radiation), संचरण (Conduction) अथवा संवहन (Convection) इन तीन विधियों में से किसी एक विधि द्वारा होता है।

लाभ

१. यह समय, शक्ति तथा श्रम सम्बन्धी बचत करने वाली प्रविधि है।
२. रेफ्रिजेरेटर भोज्य सामग्री को नष्ट करने वाले एन्ज़ाईम (Enzymes), फफूंदी (Moulds), खमीर (Yeasts) तथा जीवाणुओं (Bacteria) की वृद्धि को अवरुद्ध करके भोज्य पदार्थों को सुरक्षित रखता है। शीघ्र नष्ट होने वाले भोज्य पदार्थ जैसे मछली, अण्डा, दूध, क्रीम, मक्खन आदि कई दिनों तक ठीक दशा में सगृहीत किये जा सकते हैं।
३. ताजा भोजन के विटामिन को रेफ्रिजेरेटर द्वारा बनाए रखना सम्भव है।
४. गर्मी के दिनों में वर्फ, ठण्डा पानी, मलाई की बर्फ सुविधापूर्वक प्राप्त हो जाती है।

रेफ्रिजेरेटर के भाग

(१) कैबीनेट (Cabinet)—कैबीनेट इस्पात की चद्दर की बनी होती है।

रेफ्रिजेरेटर (Refrigerator)

इस्पात के आन्तरिक व बाह्य खोल इस प्रकार ढाले जाते हैं कि चद्दरों के बीच में रोधन हो सके।

(२) दरवाजा—रेफ्रिजेरेटर की दीवारों के समान दरवाजा भी भली प्रकार से रोधन (Insulated) किया हुआ होना चाहिए। दरवाजे के बाहरी किनारों के चारों तरफ कास्केट लगी होती है जो सील का काम करता है। कास्केट अधिकांश विनाइल से प्रयुक्त किया जाता है। यह रबर से अच्छा होता है, क्योंकि चिकनाई से इसको किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचती।

(३) फ्रीजर (Freezer)—यह कैबीनेट में सबसे ऊपर का भाग होता है तथा इसका पृथक् से ही एक छोटा-सा डिब्बा जैसा होता है। समस्त रेफ्रिजेरेटर में यह सर्वाधिक ठण्डा भाग होता है जिसका ताप 0° फ० रहता है। यह मुख्यतः बर्फ और मलाई की बर्फ जमाने के काम में आता है।

(४) चिल ट्रे (Chill Tray)—यह फ्रीजर के नीचे वाली ट्रे है। इसका ताप 1°F से कुछ अधिक ही बनाए रखा जाता है। इसका उपयोग भोज्य-पदार्थों को ठण्डा रखने तथा रेफ्रिजेरेटर को 'डीफ्रॉस्ट' (Defrosting) करते समय जल एकत्रित करने के लिए किया जाता है।

(५) शैल्फ (Shelves)—शैल्फ एक विशेष प्रकार की धातु की छड़ों की बनी होती है। ये छड़ें इतनी पास-पास लगी होती हैं कि उनमें छोटी-छोटी प्लेटें भी रखी जा सकती हैं परन्तु वायु संचरण के लिए पर्याप्त स्थान रहता है। ये शैल्फ स्थायी रूप से नहीं लगी होती हैं, उन्हें भोज्य-कक्ष (Chamber) को छोटा-बड़ा बनाने की दृष्टि से थोड़ा नीचे-ऊपर खिसका सकते हैं। सबसे नीचे के खाने की अपेक्षा सबसे ऊपर के खाने का ताप पर्याप्त रूप से निम्न रहता है।

(६) क्रिस्पेटर (Crispator)—यह एक ही दराज (drawer) का होता है तथा उसे ढकने के लिए ऊपरी सिरे पर शीशे का ढक्कन लगा रहता है। फ्रीजर के ताप की अपेक्षा यहाँ का ताप सबसे अधिक रहता है।

(७) मक्खन रखने का खाना—यह खाना या डिब्बा ताप पृथक् भी हो सकता है नियन्त्रण दृष्टि से अथवा मक्खन को थोड़ा ढीला रखने के लिए इसे थोड़ा-सा गर्म रखा जा सकता है।

(८) अण्डा संग्रह करने का स्थान—यह स्थान बहुधा दरवाजे में होता है।

(९) अन्य संग्रह-व्यवस्था—बोतल, पनीर, रस तथा शीत भोज्य पदार्थों को रखने के लिए भी व्यवस्था है। ये स्थान साधारणतः दरवाजे में ही होते हैं।

(१०) बल्ब—इसका उपयोग कैबीनेट में पर्याप्त प्रकाश रखने के लिए किया जाता है। इसका बटन रेफ्रिजेरेटर के दरवाजे के खोलने व बन्द करने के साथ-साथ खोला व बन्द किया जाता है।

(११) नियामक (Regulator)—यह रेफ्रिजेरेटर के ताप को नियन्त्रित करता है। सर्वाधिक गर्म व सर्वाधिक ठण्डे ताप का अन्तर शून्य से २५ अंश फैरनहाइट के मध्य रहता है। साधारणतः यह रेफ्रिजेरेटर के पीछे की ओर अथवा एक बगली से 'फ्रीजर' के ठीक नीचे लगा होता है।

(१२) मोटर (Motor)—मोटर कैबीनेट के ठीक नीचे लगी होती है। यह पृथक् से खुली या बन्द मशीन के रूप मे हो सकती है।

उपयोग में सावधानी

१. भोज्य सामग्री सदैव सामान्य ताप पर अथवा कमरे के ताप पर रखी जानी चाहिये।

२. जिन वस्तुओ को प्रशीतन की आवश्यकता नही हो, उन्हें रेफ्रिजेरेटर में संग्रह नही करना चाहिए।

३. रेफ्रिजेरेटर मे रखी जाने वाली भोज्य सामग्री को ढककर रखिए, अन्यथा इनका स्वाद बिगड जायगा तथा ये शुष्क हो जाएँगी। सामग्री रखने का बर्तन हल्का व ढका हुआ होना चाहिये। पानी, दूध की बोतलें सदा ढक्कन लगी हो, क्योकि खुले रहने से अन्य फलो की सुगन्ध आने लगती है।

४. भोज्य सामग्री के बर्तन को रेफ्रिजेरेटर मे रखते समय यह ध्यान मे रखना चाहिये कि कौन-सी वस्तु कहाँ रखी जाय। उदाहरणार्थ—अण्डे तथा फल सर्वाधिक ठण्डे भाग मे रखे जाने चाहिये। तीव्र गन्ध वाली सब्जियाँ फल साधारण फलो की अपेक्षा कम ठण्डे स्थान पर रखने चाहिये।

५. रेफ्रिजेरेटर खाली नही रहे। उसमे कुछ वस्तुएँ अवश्य रहे।

६. जब विद्युत धारा बार-बार विचलित हो रही हो तो रेफ्रिजेरेटर को प्रयुक्त नहीं करना चाहिये।

रेफ्रिजेरेटर की स्वच्छता

१. रेफ्रिजेरेटर को शुष्क एव पूर्णतः स्वच्छ रखना चाहिये। यदि इसमें भोज्य सामग्री फैल गई है तो उसे तुरन्त साफ एवं शुष्क कर देना चाहिये। खानों में व रेफ्रिजेरेटर की दीवारो में नमी बिल्कुल नही रहनी चाहिये।

२. उपलब्ध विशिष्ट पालिश से कैबीनेट को पालिश कर देना चाहिये।

३. फ्रीजर एव दीवारो के अन्दर के भाग को साफ करके सोडा के जल मे

धोकर शुष्क कर देना चाहिये। धोने के लिए दो बड़ी चम्मच खाने का सोडा एक क्वार्ट जल में मिलाना चाहिए।

४. नई बर्फ जमने के लिए रखने से पूर्व बर्फ की तश्तरी को खाली करके साबुन के पानी से धोकर सुखा देना चाहिये।

५. रेफ्रिजेरेटर को सदैव मुलायम कपड़े से पोंछना चाहिए। खुरदरे कपड़े, या सख्त ब्रुश से इसके पेन्ट के खराब होने की सम्भावना है।

६. कास्केट (qasket) को साबुन के गर्म पानी से धोकर सुखा देना चाहिए। कास्केट में लगे भोज्य पदार्थ एवं चिकनाई को साफ कर देना चाहिये। ऐसा करने से कास्केट सटने वाला एवं कोमल हो जाता है।

७. रेफ्रिजेरेटर को बार-बार नहीं खोलना चाहिए, क्योंकि बाहर की गर्मी भीतर प्रवेश कर जाती है, तथा चीजें जल्दी ठण्डी न होंगी।

८. वायु के संचालन को रोकने के लिए शैल्फों (shelves) को कागज अथवा प्लास्टिक से नहीं ढकना चाहिए।

सुरक्षा एवं स्वच्छता

१. समय-समय पर रेफ्रिजेरेटर की सफाई होती रहनी चाहिए। जब फ्रीजर में अत्यधिक बर्फ जम जाती है, विद्युत धारा को बन्द करके रेफ्रिजेरेटर को 'डी फ्रोस्ट' (Defrost) करके इसकी सफाई करनी चाहिए।

२. रेफ्रिजेरेटर से भोज्य पदार्थों को हटा दीजिए।

३. चिल ट्रे (chill tray) में से पानी फेंक दीजिए।

४. फ्रीजर तथा ट्रे को गर्म सोड़े के पानी से धोकर मुलायम कपड़े से सुखा दीजिए।

५. खाने (shelves), दराज आदि को हटा दीजिए तथा गर्म साबुन के पानी से धो दीजिए।

६. जल व सोड़ा के घोल से कैबीनेट को अन्दर से धो दीजिए तथा इसे पूरी तरह से सुखा दीजिए।

७. कास्केट को धोकर साफ कर दीजिए।

८. कैबीनेट के समान दरवाजे तथा मक्खन और अण्डे रखने के स्थानों को भी स्वच्छ करके धो देना चाहिये।

९. अन्त में रेफ्रिजेरेटर को बाहर से साफ करके पौलिश कर देना चाहिए।

प्रैशर कुकर (Pressure Cooker)

पाकशाला मे प्रयुक्त होने वाले अति आवश्यक बर्तनों में एक प्रैशरकुकर है। यह कई प्रकार के बाजार मे मिलते हैं। मुख्य हैं, प्रेसटीज (Prestige) हॉकिन्स (Hawkins), टैम्पो (Tempo), दयालबाग (Dayalbagh) प्रैशर कुकर, आनन्द (Anand)। इन सब प्रकार के प्रेशर कुकर की क्रिया का सिद्धान्त एक ही है। यह सब बिजली, गैस, तेल तथा कोयले की अंगीठी पर रखे जा सकते हैं।
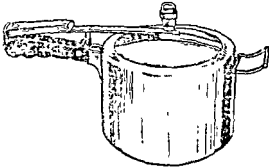
हॉकिन्स प्रैशर कुकर

सिद्धान्त

प्रैशर कुकर का क्रियात्मक सिद्धान्त सरल है। भोजन भाप के दबाव में पकाया जाता है। जब भाप उत्पन्न की जाती है तो यह कुकर के अन्दर भली प्रकार
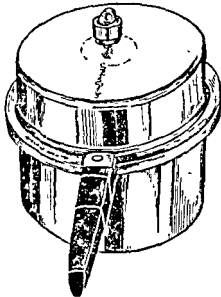
प्रेस्टीज प्रेशर कुकर

कसकर वन्द कर ली जाती है, इसलिए अन्दर का दवाव वायुमंडलीय दवाव की अपेक्षा अधिक हो जाता है। जैसे-जैसे दवाव वढ़ता जाता है, वैसे-ही-वैसे पकाने का ताप भी वढ़ता जाता है, क्योंकि क्वथनांक (boiling point) अधिक उच्च हो जाता है। उच्च ताप एवं नमी से पाक क्रिया अधिक तीव्र गति से होने लगती है। परिणामतः वस्तु शीघ्र ही गल जाती है।

लाभ

१. भोजन पकाने की अन्य विधियों की अपेक्षा प्रैशर कुकर से लगभग $\frac{1}{3}$ समय में भोजन पकाया जा सकता है।
२. यह ऊँचाई वाले स्थानों पर, जहाँ पानी का क्वथनांक निम्न होता है, विशेष रूप से उपयोगी है।
३. वाष्पन की अवधि सूक्ष्म होने के कारण रंग, यहाँ तक कि हरा भी, नष्ट नहीं हो पाते।
४. लवण, जीवतत्त्व आदि पोषक तत्त्व इस विधि द्वारा भोजन पकाने से सुरक्षित रहते हैं।
५. इस विधि में स्वाद वना रहता है, इसलिये पकाई गई वस्तु स्वादिष्ट एवं जायकेदार वनती है।
६. एक ही समय में दो या दो से अधिक वस्तुएँ पकाई जा सकती हैं क्योंकि पकाने के इसमें कई कक्ष होते हैं।
७. भोजन पकाने में कम समय लगता है, इसलिये ईंधन भी कम व्यय होता है।
८. इसका प्रयोग करने से अपव्यय कम होता है।
९. यह विधि स्वच्छ, साफ तथा स्वास्थ्यप्रद है।
१०. अन्त में, श्रम और शक्ति की वचत होती है।

वनावट

प्रैशर कुकर के मुख्य भाग निम्न हैं—

(१) प्रमुख अंग—भगौना नुमा साधारणतः सॉस पैन जैसा होता है जिसमें विद्युत-रोधी वस्तु का वना हुआ एक हत्था लगा होता है। यह पैन अल्यूमीनियम तथा स्टेनलैस स्टील का वना होता है। कुछ में तांवे का तला लगा होता है तथा कुछ में नहीं। पैन का ढक्कन पैन के ऊपर अच्छी तरह लग जाता है, जिससे अन्दर की भाप वाहर न निकल सके।

(२) ढक्कन—जिस धातु का पैन वना होता है, उसी धातु का ढक्कन वना होता है। इसका हत्था भी विद्युत-रोधी वस्तु का वना होता है। पैन का ग्रूव

(Groove) ढक्कन के ग्रूव (Groove) के आकार का होता है। ढक्कन में सुरक्षा नली (Safety valve) भी होती है जो भाप को नियन्त्रित करती है। यदि दबाव अत्यधिक उच्च हो जाता है तो रबर या प्लास्टिक का प्लग भाप द्वारा बाहर धकेल दिया जाता है। दबाव को नियन्त्रित करने के लिए निकास नली (vent pipe) के ऊपर 'वेट' (weight) लगाया जाता है। यह 'वेट' ५, १० तथा १५ पौंड के होते हैं।

(३) रबर का छल्ला (Rubber qasket)—ढक्कन में लगा रबर का छल्ला हल्की सील का कार्य करता है।

(४) तश्तरीनुमा जाली—यह धातु की बनी तश्तरी होती है। इसमें कई सूराख होते हैं। कोई सब्जी थोड़े से पानी में पकाई जाने के लिए रखने के पहले अथवा डिब्बे (Compartments) रखने से पहले इसे पैन में रख दिया जाता है।

(५) भोजन कक्ष (Food Compartments)—ये कक्ष एल्यूमीनियम अथवा स्टेनलैस स्टील के बने होते हैं। ये विभिन्न आकार के होते हैं; जैसे—गोलाकार, अर्ध गोलाकार अथवा आयताकार। ये सभी पेन में भली प्रकार फिट हो जाते हैं।

उपयोग में सावधानी

प्रेशर कुकर का प्रयोग करते समय विशेष सावधानी बरतने की आवश्यकता पड़ती है। उपयोग करते समय निम्न सावधानी बरतनी चाहिये।

१. पकायी जाने वाली भोजन सामग्री उपयुक्त मात्रा में जल के साथ रख दी जाती है।

२. कुल मिलाकर कुकर को ⅔ भाग से अधिक नहीं भरना चाहिए।

३. जब दो वस्तुएँ एक साथ पकाई जा रही हो तो यह ध्यान में रखना चाहिए कि कौन-सी दो वस्तुएँ एक साथ पकाई जा रही हैं। ऐसी दो वस्तुएँ ही एक साथ पकाई जानी चाहिए जिन्हें पकने में लगभग समान समय लगे।

४. जब ढक्कन बन्द किया जाए तो यह देखना चाहिए कि रबर का कास्केट उसमें है। प्रेशर कुकर में ढक्कन को भली प्रकार लगा दीजिए।

५. निकास नली (Vent pipe) से जब भाप धीरे-धीरे बढ़ने लगे तो दबाव (Pressure) ठीक स्थान पर रखा जाए।

६. किसी वस्तु को पकाने के लिए पकाये जाने का समय समाप्त हो जाए तो कुकर को ऊष्मा से हटाकर ठंडा होने दीजिए ताकि दबाव सामान्य स्तर तक आ जाए।

७. पकने की प्रक्रिया को अधिक तीव्रगामी बनाने के लिए वर्तन को वहते हुए ठंडे पानी में तब तक रखा रहने दीजिए जब तक कि दवाव समाप्त न हो जाए।

८. अन्त में दवाव (Pressure) को हटा दीजिए तथा इसके वाद ढक्कन को खोल दीजिए। ढक्कन एकदम नहीं खोलना चाहिये, क्योंकि कभी-कभी भाप वहुत तीव्र गति से ऊपर को निकलती है जिससे मुँह की त्वचा के जलने का भय रहता है।

सुरक्षा एवं स्वच्छता

१. प्रेशर कुकर को प्रयोग में लाने से पूर्व तथा वाद में निकास नली (Vent Pipe) को पूर्णतः साफ कीजिए।

२. पैन को $\frac{2}{3}$ भाग से अधिक नहीं भरना चाहिए।

३. विना जल के भोजन नहीं पकाना चाहिए।

४. ढक्कन को ठीक प्रकार से लगाना व खोलना चाहिए।

५. यदि रवर का छल्ला टूट जाए तो कभी भी इसमें भोजन नहीं पकाना चाहिए।

६. 'वेट' (weight) को सावधानी पूर्वक हटाइए।

७. कुकर को धोने के लिए सोडा का प्रयोग कभी नहीं करना चाहिए।

८. कुकर को सदैव स्वच्छ रखिए।

९. ढक्कन को आग पर अथवा आग के पास कभी मत रखिए।

१०. यदि कुकर का प्रयोग नहीं किया जा रहा हो तो पैन को ढक्कन से कभी मत ढकिए।

जल रहित कुकर (Waterless Cooker)

यह कुकर घर से वाहर कार्य करने वाली गृहिणियों के लिए विशेष रूप से उपयोगी होता है। इसमें तैयार किया गया भोजन लगभग चार घण्टे तक गर्म रहता है। इसमें खाना पकाने के लिए नाश्तेदान के आकार का वर्तन रहता है जिसमें मसालों व घी आदि सहित खाना तैयार कर भर दिया जाता है। इन नाश्तेदानों को धातु के इकहरे डोल में रखकर ढक दिया जाता है। आंच के लिए नीचे विशेष अँगीठी का प्रवन्ध होता है। इस अँगीठी के नीचे भी एक छोटा कटोरदान रहता है जिसमें आलू, अरवी, भिंडी आदि सूखी सब्जी भूनी हुई वनती है। इसके अतिरिक्त इसी डिब्बे में केक, पुडिंग आदि भी वनाई जा सकती है।

यह कुकर देखने मे लम्बाकार होता है। इसमे केवल मुट्ठी भर लकड़ी का कोयला जलता है। इसक अन्दर तीन या चार डिब्बे होते हैं जिनमे सबसे
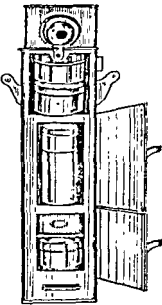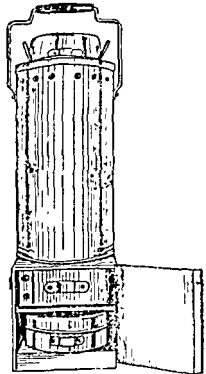
आनन्द कुकर (१) · आनन्द कुकर (२)

नीचे वाले मे दाल, सबसे ऊपर वाले मे चावल तथा बीच वालों मे सब्जियाँ रखी जाती हैं।

इस कुकर में खाना शुष्क सेंक से पकता है व स्वास्थ्यप्रद एव स्वादिष्ट होता है। जल रहित आनन्द कुकर एव दयालबाग कुकर विशेष रूप मे प्रसिद्ध हैं।

इकमिक कुकर (Icmic Cooker)

बाह्य रचना की दृष्टि से यह आनन्द कुकर जैसा ही होता है। किन्तु इसकी आन्तरिक बनावट आनन्द कुकर से भिन्न होती है। इसमे एक साथ ही भाप के द्वारा तीन चीजें पकाई जा सकती हैं। इसमें तीन डिब्बे रखने का प्रबन्ध होता है। इन डिब्बो में से ऊपर वाले में चावल, बीच वाले में सब्जी तथा नीचे वाले मे दाल डाली जाती है। इन तीनों डिब्बो को धातु के नाश्तेदान जैसे बर्तन में रख दिया जाता है। धातु के बाह्य ढोल में भाप के लिए जल भर दिया जाता है। कुकर के निचले भाग मे विशेष अंगीठी रखने का स्थान रहता है। डिब्बे को इस प्रकार ढका जाता है कि

भाप बाहर न निकल जाए। इसमें भोज्य पदार्थों की मात्रा एवं गुण समान बने रहते हैं। इस कुकर में पका खाना स्वास्थ्यप्रद होता है। इसमें ईंधन कम व्यय होता है व स्थान भी कम घिरता है, तथा समय की भी बचत होती है।

मिक्सर तथा ग्राइन्डर (Mixer and Grinder)

मिक्सर बिजली की मोटर द्वारा कार्य करता है। यह मोटर यंत्र के नीचे भाग में लगी होती है। इसके ऊपरी भाग में प्लास्टिक या शीशे का एक गिलास जैसा
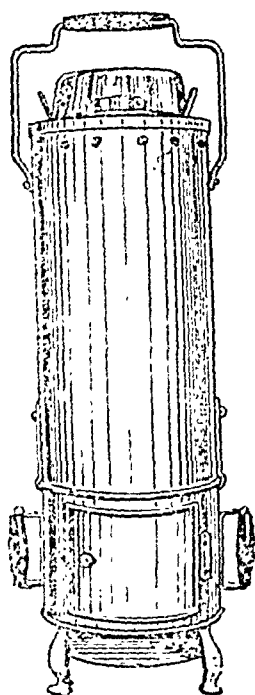
इकमिक कुकर
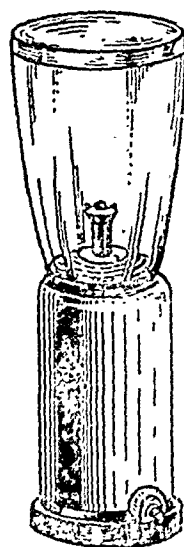
मिक्सर
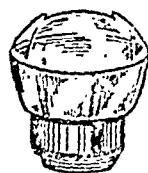
ग्राइन्डर

लगा होता है जिसमें सभी प्रकार की रस वाली वस्तुएँ डाल कर कुचला जा सकता है। इसके द्वारा भीगी दाल, लहसुन प्याज, अदरक, चटनी आदि को महीन करने का कार्य किया जा सकता है। इससे ही रसदार फलों का रस निकाला जा सकता है तथा केक-पेस्टरी बनाने के लिए अण्डे को भी फेंटा जा सकता है।

सूखे मसालों को पीसने के लिए इसमें ग्राइण्डर का प्रबन्ध भी होता है। इसे आवश्यकतानुसार मोटर के ऊपर लगा लिया जाता है। विभिन्न प्रकार के मसाले महीन होकर इसमें अपने आप एकत्रित होते रहते हैं।

इस यंत्र को क्रय करते समय व प्रयोग करते समय निम्नलिखित बातों दृष्टिगत रखना चाहिए—

१. परिवार की सदस्य संख्या के अनुसार छोटा या बड़ा यंत्र खरीदना चाहिए।
२. यंत्र की सुन्दरता को अधिक महत्त्व न देना चाहिए। सुन्दरता की अपेक्षा उसकी उपयोगिता को अधिक महत्त्व देना चाहिए।
३. यंत्र को लगातार उपयोग में नहीं लाना चाहिए। ऐसा करने से उसके खराब होने की सम्भावना रहती है। प्रत्येक ५ सेकंड के बाद मोटर बन्द कर देना चाहिये।
४. प्रयोग करने के पश्चात् प्रतिदिन इसकी सफाई करनी चाहिये।

विद्युत केतली (Electric Kettle)

जल गर्म करने के लिए यह अत्यन्त ही सुविधाजनक यंत्र है। इसका उपयोग करने से श्रम व समय की बचत होती है। परन्तु इसका उपयोग उन्हीं स्थानों के लिए लाभकारी है जहाँ विद्युत सरलता से उपलब्ध होती है।

बिजली की केतली

बनावट

बिजली की केतली धातु की बनी होती है। इसमें पकड़ने के लिए हत्था होता है। हत्थे के नीचे की ओर बिजली का तार लगाने की व्यवस्था होती है। ऊपर ढक्कन होता है, जिसको उठाकर केतली में जल डाला जाता है व इसकी सफाई की जाती है।

केतली की बनावट गोल, लम्बी हो सकती है तथा आकार छोटा व बड़ा हो सकता है। परन्तु इनकी कार्य-प्रणाली एक-सी ही होती है। बिजली का बटन खोलने पर बड़ी शीघ्रता से जल गर्म हो जाता है। तत्पश्चात् बटन बन्द कर दिया जाता है और आवश्यकतानुसार जल का उपयोग चाय व कॉफी के लिए किया जाता है—

इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए कि उपयोग करने के पश्चात् जल को केतली से निकाल देना चाहिए अन्यथा खनिज लवणों की एक तह इसके अन्दर जम जाती है, जिसका किसी अम्ल से छुड़ाया जाना आवश्यक है।

विद्युत द्वारा जल गर्म करने का यंत्र (Electric Water Boiler)

अधिक मात्रा में जल गर्म करने हेतु इलेक्ट्रिक वाटर बॉइलर का उपयोग किया जाता है। यह वस्त्र धोने व स्नानादि के लिए जल गर्म करने के काम में आता है। स्थान घेरने की दृष्टि से यह दो प्रकार के होते हैं :—(१) दीवार में टांगने वाले (२) पृथ्वी पर रखने वाले।
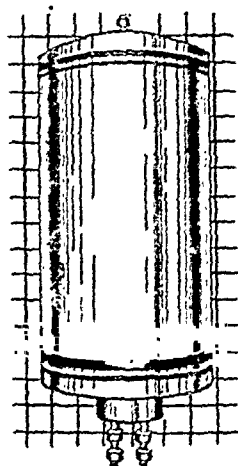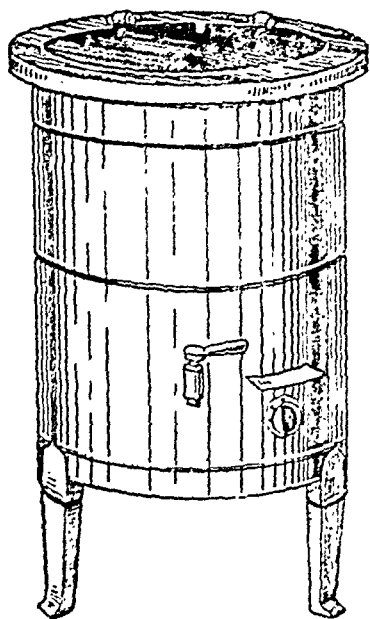
विद्युत द्वारा पानी गर्म करने के यंत्र

(१) दीवार में टांगने वाले —इसकी बनावट लम्बाकार लिए हुए एक ड्रम के समान होती है, जिसके ऊपर एनामेल की परत चढ़ी होती है। इसके नीचे दो वल्व लगे होते हैं जिनमें से एक को नल के पाइप से जोड़ा जाता है तथा दूसरे में से जल निकाला जाता है। बड़े-बड़े शहरों में जहाँ स्थान की कमी रहती है वहाँ यह अत्यधिक लाभकारी सिद्ध होता है, क्योंकि इसे दीवार के सहारे टाँग दिया जाता है, इसलिए कम स्थान घेरता है।

(२) पृथ्वी पर रखने वाले—रसोई गृह या स्नान गृह में रखे जाने वाले विद्युत जल ऊष्मक हमाम की तरह की बनावट का होता है। यह भी धातु का बना

होता है। इसमे सामने की ओर जल निकलने की व्यवस्था होती है। इसके ऊपर ढक्कन लगा होता है, जिसे उठाकर जल डाल दिया जाता है। इसमें दाँए हाथ की ओर ताप नियंत्रक लगा होता है, जिससे जल गर्म करने के लिए आश्यकतानुसार ताप का उपयोग किया जा सकता है। इसका उपयोग ऐसे परिवारों में ही किया जाता है जिनमे सदस्य संख्या अधिक हो तथा इसे स्थापित करने हेतु पर्याप्त स्थान हो।

यह यंत्र भी श्रम एवं समय की बचत की दृष्टि से अति उत्तम होता है किन्तु इसका उपयोग सम्पन्न परिवार ही कर सकते हैं क्योंकि इसमे विद्युत का व्यय अधिक होता है। इसके अभाव मे निम्न यंत्र प्रयोग मे लाया जा सकता है। इनमें पानी ईंधन के जलने से गर्म होता है।
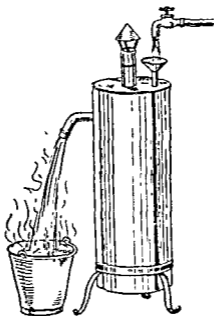
गर्म पानी करने का यन्त्र

विद्युत स्टोव (Electric Stove)

खाना बनाने के लिए विद्युत स्टोव अत्यन्त सरल, स्वच्छ व सुविधामय रहता है। किन्तु बिजली महँगी होने कारण यह उतना काम मे नही लाया जा सकता जितना इसका लाभ है। यह उच्च व मध्यम श्रेणी के गृहो मे नाश्ते आदि तैयार करने के लिए प्रयुक्त होने लगा है। इसमे साधारण अंगीठी से कई गुना अधिक व्यय होता है। यह स्टोव गोल, चपटे चौड़े व अगीठी के आकार के बने होते हैं। कुछ स्टोवो मे उच्च, मध्यम तथा निम्न ताप करने के लिए ताप

होता है। आवश्यकतानुसार ताप का उपयोग करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है।
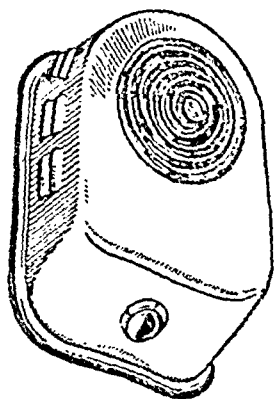
विद्युत स्टोव

स्टोव का ढाँचा धातु का बना होता है। इसके ऊपर तार की कुंडली (Coils) बनी होती हैं जो स्विच खोलने पर धीरे-धीरे गर्म हो जाती हैं। इनके ऊपर ही भोजन पकाने वाले बर्तन रख दिये जाते हैं।

टोस्टर (Toaster)

टोस्टर एक छोटा-सा विद्युत उपकरण है, जिसका उपयोग डबल रोटी के स्लाइस को सेंकने के लिये अधिकांशतः परिवार में किया जाता हैं। एक सुसज्जित गृह में तो टोस्टर आवश्यक ही होता है, क्योंकि यह एक आवश्यकता है तथा इससे समय व शक्ति की बचत होती है।

सिद्धान्त

विद्युत-प्रवाह का एक परिणाम—ऊष्मा उत्पादन है। ऊष्मा उत्पन्न करने वाले उपकरणों में तार के माध्यम से प्रवाहित की गई अधिकांश शक्ति ऊष्मा में परिवर्तित की जाती है। इस प्रकार विद्युत शक्ति उष्मा शक्ति में रूपान्तरित हो जाती है। ऊष्मा शक्ति के परिणामस्वरूप ही डबल रोटी का स्लाइस सेंका जाता है।

टोस्टर के प्रकार

विद्युत टोस्टर—वे होते हैं जिनका प्रचालन केवल विद्युत शक्ति से ही सम्भव है। विद्युत टोस्टर अग्रिम प्रकार के हो सकते हैं—

(अ) स्वचालित टोस्टर (Automatic Toaster)—प्रत्येक स्वचालित टोस्टर में सामान्य पुर्जों के अतिरिक्त, समय सूचक, एक या अधिक स्विच तथा समय चक्र को नियंत्रित करने वाला रंग नियंत्रक होता है।

कूप के आकार का टोस्टर

स्वचालित टोस्टर तीन प्रकार के हो सकते हैं :—

(i) कूप के आकार का स्वचालित टोस्टर—यह अधिक प्रचलित है तथा इसमे ब्रैड वाहक, ऊष्मा वाले तत्त्वो के सम्पर्क मे आने से सुरक्षा करने वाले तार, खोल, आधार एव डबल रोटी के बुरादा की ट्रे सम्मिलित होते हैं।
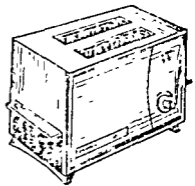
(ii) भट्टी के आकार का स्वचालित टोस्टर—ये कम व्यय साध्य होते है। इनका उपयोग कभी-कभी हल्के सेकनेके लिये भी किया जा सकता है। इनमे 'वन' रोल गर्म किये जा सकते हैं। इस प्रकार के टोस्टर मे बाहर निकल आने वाली ट्रे भी होती है।

(iii) कूप तथा भट्टी के मिश्रित आकार के टोस्टर—इस टोस्टर मे निम्न
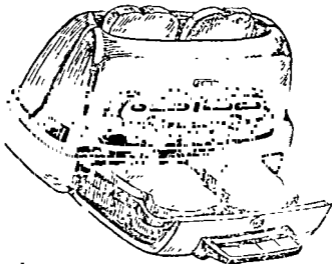
भट्टी के आकार का टोस्टर

ताप का विभाग भी होता है। जिसमे केक, रोल्स आदि सेंके जा सकते है। उसका ऊपरी भाग डबल रोटी सेंकने के लिए होता है। जब रोटी सिक जाती है तो

निम्न विभाग में स्थानान्तरित हो जाती है जहाँ वह गर्म रहती है। जब टोस्ट सिक जाता है तो दरवाजा खुल जाता है और ट्रे स्वतः ही बाहर आ जाती है।

प्रयोग करने की विधि

कूप के आकार के सामान्य स्वचालित टोस्टर में डबल रोटी के स्लाइस विभिन्न विधियों से कूप में रख दिये जाते हैं। पकने के समय के अन्त में स्लाइस प्रकाश अथवा घन्टी के संकेत के साथ अथवा बिना संकेत के बाहर आ जाती है, तथा बिना किसी ध्वनि के स्लाइस स्वतः ही नीचे जाती है फिर पुनः ऊपर आ जाती है। यदि किसी कारणवश स्वचालित विधि कार्य न करे तो हाथ से चलाने की व्यवस्था टोस्टर में होनी चाहिए। सेंकने के विभिन्न स्तरों का उपयोग करने के लिए उसमें संकेतक भी होता है।

(ब) अस्वचालित टोस्टर (Non-Automatic Toaster)—यह यद्यपि बिजली द्वारा संचालित होता है परन्तु इसमें स्विच, समय संकेतक, स्लाइस के रंग को नियंत्रित करने वाले नियंत्रक आदि नहीं होते हैं। इसको हाथ से चलाने की भी व्यवस्था होती है। इसमें मोटे तार होते हैं जो कि स्लाइस को सहारा देते रहते हैं।
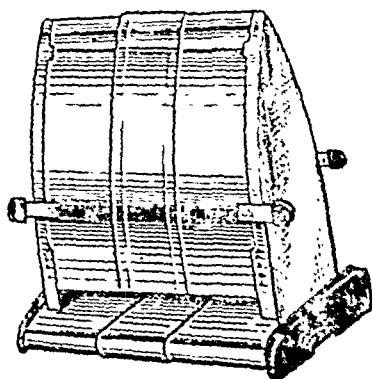
अस्वचलित टोस्टर

रने की विधि

त प्रकार के टोस्टर को खोलकर रोटी अन्दर रखी जाती है, फिर वह दिया जाता है। जब रोटी एक तरफ से सिक जाती है तो उसे बदलकर फ सेका जाता है। इसमें समय नियामक नहीं होता, और न टोस्टर ही खुलने के कोई स्विच ही होता है।

(स) अर्द्ध स्वचालित टोस्टर—यह स्वचालित व अस्वचालित टोस्टर के मध्य का टोस्टर होता है। यद्यपि इसमें स्लाइस के रंग को नियंत्रित करने वाला नियामक होता है परन्तु सिकने के पश्चात् स्लाइस स्वतः ही बाहर नहीं निकलती। इसे बाहर निकालने के लिए बटन दबाकर अथवा किसी अन्य विधि को बाहर निकाला जाता है।

विद्युत टोस्टर प्रयोग करने की विधि

डबल रोटी के स्लाइस टोस्टर के अन्दर रख दिये जाते है तथा उसके रंग को नियंत्रित कर लिया जाता है। एक निश्चित समयावधि बाद स्विच को दबाकर रोटी बाहर लाई जाती है।

टोस्टर के अंग

१. मुख्य अंग (Body)—यह जस्ते अथवा लोहे का बना होता है। जिस पर क्रोमियम अथवा जंग रहित इस्पात का परत चढ़ा होता है। एक समय में जितनी रोटी सेकी जा सकती हैं, उनकी संख्या पर ही इसका आकार निर्भर करता है।

२. गुटके (Knobs)—टोस्टर खोलने के लिए इनका उपयोग होता है। ये विद्युत-निरोधक पदार्थ के बने होने चाहिए।

३. आधार (*Base*)—*यह भी विद्युत-निरोधक पदार्थ का बना होता* है। प्रयोग में लाने के पश्चात् सफाई करने के लिये इसे खोला जाता है।

४. ऊष्मा उत्पादक तत्त्व—उष्मा उत्पादक तत्त्व में अभरक अथवा एसबेस्टोस की चद्दर लगी होती है। जिसके चारों तरफ जस्ते का तार लिपटा हुआ होता है। अभरक अथवा एसबेस्टोस चद्दर का प्रयोग इसलिए किया जाता है—क्योंकि यह एक विद्युत निरोधक का कार्य करता है, तथा उष्मा अथवा विद्युत को सोखता नही है, वरन् इसे प्रतिबिम्बित करता है।

५ तार तथा प्लग—टोस्टर का ऊष्मा उत्पादक तत्त्व तार से सम्बन्धित होता है और उस तार में प्लग सलग्न होता है।

६. नियंत्रक—नियत्रक साधारणतः स्वचालित तथा अर्द्ध स्वचलित टोस्टर मे लगा होता है, क्योंकि यह बादामी रंग को नियन्त्रित एव नियमित करता है।

७. अन्य स्विच—स्वचालित टोस्टर में कुछ अन्य स्विच होते हैं, जिनके दबाने से टोस्ट बाहर को निकलता है अथवा इसे दबाने पर टोस्टर खुलता है।

सुरक्षा एवं स्वच्छता

१. प्रयोग करने के तुरन्त बाद ही यदि उसमें डवल रोटी के टुकड़े लगे रह जायँ तो उन्हें निकाल देना चाहिये ।

२. टोस्ट को हटाने के लिए काँटों का उपयोग नहीं करना चाहिये क्योंकि इससे ऊष्मा उत्पादक पुर्जे में हानि पहुँच सकती है ।

३. इसे अन्दर और बाहर से सूखे कपड़े से साफ करना चाहिये, अन्दर से इसे साफ करने के लिये गीला कपड़ा कभी भी प्रयोग में नहीं लाना चाहिये ।

४. यदि विद्युत धारा में विचलन प्रतीत हो तो टोस्टर का प्रयोग कभी नहीं करना चाहिए ।

कॉफी परकोलेटर (Coffee Percolator)

कॉफी परकोलेटर गृहस्थी के छोटे विद्युत उपकरणों में से एक है, जिसका उपयोग बहुधा घरों में होता है ।
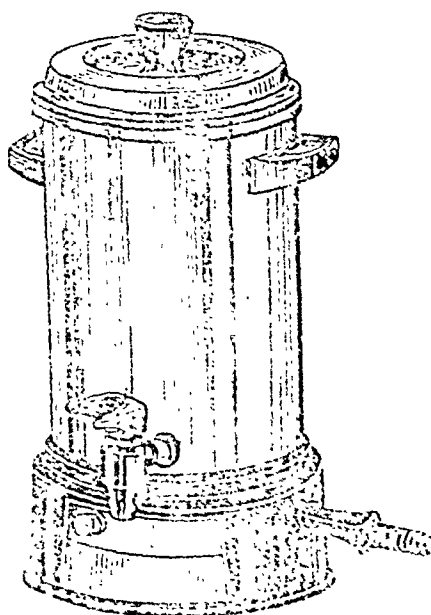
कॉफी परकोलेटर

प्रकार

१. विद्युत कॉफी परकोलेटर—विद्युत कॉफी परकोलेटर वे होते हैं जिनका सचालन विद्युत के द्वारा होता है । वे अग्र प्रकार के हो सकते हैं :—

(अ) स्वचालित परकोलेटर—स्वचालित विद्युत परकोलेटर निस्सन्देह अधिक उत्तम होता है क्योंकि इसमें देखभाल की आवश्यकता नहीं होती तथा इसकी सामान्यतः विशिष्ट विशेषतायें होती हैं—परसने के लिए कॉफी के ताप को नियन्त्रित करना, जब विभिन्न क्रियायें सम्पन्न हो जाती हैं उसका संकेत करने के लिए संकेतक प्रकाश आदि।

प्रयोग करने की विधि

कॉफी तैयार करने के लिए एक कॉफी का वर्तन तथा कॉफी रखने के लिए एक कटोरी होनी है।

कॉफी के वर्तन के तले में ठण्डा पानी डाल दिया जाता है तथा यह ध्यान रखा जाता है कि कहीं कटोरी ठण्डे पानी में तो नहीं डूब गई है। जब जल का क्वथनांक (boiling point) आ जाता है तो कटोरी के मध्य के केन्द्र बिन्दु में छिद्र में होकर निकाला जाता है तथा वर्तन में पुनः वापिस किया जाता है। विद्युत के गुजर जाने के पूर्व वांछित रंग प्राप्त करने हेतु समय सूचक का प्रयोग किया जाता है, ताप को नियन्त्रित कर दिया जाता है। कॉफी को थोडी देर के बाद निकाल लेते हैं।

(ब) अ-स्वचालित परकोलेटर—अस्वचालित परकोलेटर में यद्यपि समय-सूचक यन्त्र नहीं होता और न इसमे ताप नियन्त्रिक ही होता है तथा संकेतक प्रकाश भी नहीं होता तथापि इसमें ऊष्मा फ्यूज होता है जो कि अत्यधिक गर्म होने के कारण अथवा यदि परकोलेटर सूखा ही उबलने लगे तो वर्तन को होने वाली हानि से बचाता है।

प्रयोग करने की विधि

इसका प्रयोग भी स्वचालित परकोलेटर की तरह किया जाता है। इसमें केवल समय और ताप को नियन्त्रित नहीं किया जाता, परन्तु पानी के उबल जाने के बाद तथा कॉफी तैयार हो जाने पर इसे बार-बार देखना पड़ता है। इसके ढक्कन में एक शीशा लगा होता है जिसमें होकर उबलता हुआ जल तथा कॉफी का रंग देखा जा सकता है।

(२) अ-विद्युत परकोलेटर—अ-विद्युत परकोलेटर विद्युत द्वारा संचालित नहीं होते। इसमें परकोलेटर को ईंधन अथवा गैस के स्टोव पर रखा जाता है।

इसमें न तो समय अथवा तापमान नियन्त्रक होता है और न स्वचालित विद्युत परकोलेटर की भाँति संकेतक प्रकाश ही होना है। यह अ-स्वचालित विद्युत-परकोलेटर से बहुत कुछ मिलता-जुलता है अन्तर केवल इतना ही होना है कि इसमें विद्युत का प्रयोग नहीं किया जाता है।

प्रयोग करने की विधि

यह अ-स्वचालित परकोलेटर की भाँति कार्य करता है, कॉफी एक कटोरी में

रख दी जाती है तथा बर्तन के तले में ठण्डा पानी भर देते है। तत्पश्चात् इसको आग पर रख देते हैं। कुछ ही मिनटों में पानी गर्म हो जाता है, इसे स्टोव से उतार लेते हैं और कुछ समय पश्चात् ही इस्तेमाल करते हैं।

सुरक्षा एवं स्वच्छता

१. कॉफी परकोलेटर पूर्ण तरह स्वच्छ होना चाहिये।
२. इसे साबुन और पानी से धो देना चाहिए। इसके बाद जल में धोकर सुखा देना चाहिए।
३. पूर्ण स्वच्छता के लिए उबलते सोडे के पानी में धोकर सुखा देना चाहिये।
४. यदि परकोलेटर एल्यूमिनियम का बना हो तो सोडे के पानी का प्रयोग नहीं करना चाहिये।
५. यदि ऊपर क्रोमियम चढ़ा हो तो साबुन के गर्म पानी से भीगे हुए कपड़े से पोंछ देना चाहिए। तत्पश्चात् सूखे कपड़े से उस पर पालिश कर देना चाहिये।
६. स्वचालित अथवा वाष्प-इस्त्री को प्रयुक्त करते समय इस्त्री निर्माता कम्पनी द्वारा प्रदान की पुस्तिका को पढ़िए।

खाना पकाने का रेंज (Cooking Range)

रेंज भोजन बनाने का वह उपकरण है जिसका प्रयोग पकाने, भूनने तथा बेक
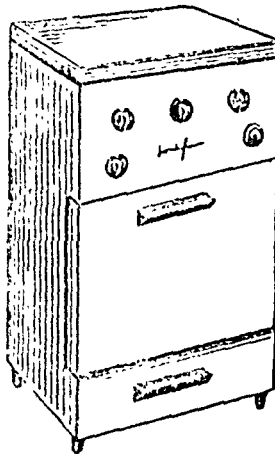
खाना पकाने का रेंज

करने की प्रक्रियाओं के लिये किया जाता है। इनमें गैस, मिट्टी के तेल, विद्युत का प्रयोग किया जाता है।

लाभ

१. यह भोजन बनाने की साफ-सुथरी पद्धति है।
२. इससे समय व श्रम की बचत होती है क्योंकि इसमें कई वस्तुएँ एक साथ पकाई जा सकती हैं।
३. इसमें ईंधन का अपव्यय नहीं होता क्योंकि इसको पकाई जाने वाली वस्तु के अनुसार नियन्त्रित किया जा सकता है।
४. रेंज में भोजन को विभिन्न विधियों से पकाया जा सकता है। भोजन को पकाना, भूनना, बेक करना—आदि।

रेंज के मुख्य अंग

(१) चौखटा (Frame)—चौखटे बहुधा इस्पात के बने होते हैं। रेंज का बाह्य परत पोर्सलेन, एनामेल अथवा जंग रहित इस्पात (stainless steel) अथवा पोर्सलेन, एनामेल चढ़े इस्पात के बने होते हैं। रेंज का ऊपरी भाग तथा कभी-कभी पूर्ण रेंज पर टिटेनियम एनामेल का परत चढ़ा होता है जो कि अधिक जंग निरोधक होता है।
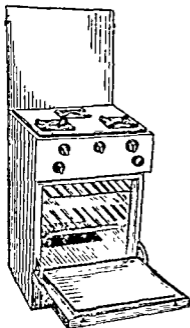
रेंज के बर्नर
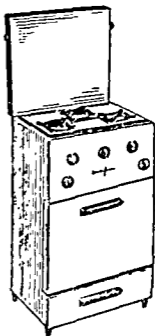
रेंज की भट्टी

(२) बर्नर्स—रेंज में तीन प्रकार के बर्नर होते हैं तथा इनमें वे बर्नर्स सम्मिलित होते हैं जो कि धरातलीय पकाने, भूनने, सेंकने के लिये प्रयुक्त होते हैं। धरातलीय

बर्नर्स रेंज के ऊपरी भाग में स्थित होते हैं। धरातलीय बर्नर्स एक या दो हो सकते हैं।

(३) भट्टी (Oven)—यह जंग रहित इस्पात (stainless steel) अथवा पोर्सलेन एनामेल युक्त इस्पात अथवा टिटेनियम अनामेल के पर्त युक्त होती है। चूल्हे में स्थित शैल्फ (shelves) समायोजन एवं हटाने योग्य होने चाहिये। यह जंग रहित होनी चाहिये। शैल्फ (shelf) की धातु की छड़ पकाने हेतु रखे गये बर्तनों को थामे रहने के लिए पर्याप्त खुली अथवा दूर होनी चाहिये। चूल्हे के दरवाजे में उसी विद्युत निरोधक का प्रयोग किया जाना चाहिये जो कि भित्ति में प्रयुक्त की जाती है। दरवाजे में निरीक्षण हेतु दुहरी पैनल का शीशा होना चाहिये। चूल्हे में विद्युत का लेम्प लगा होता है जो कि दरवाजा खुलते ही स्वतः ही जलने लगता है। चूल्हे का बर्नर गोल, लम्बा, चौकोर अथवा अण्डाकार हो सकता है जो कि चूल्हे के धरातल के नीचे होता है। भोजन चूल्हे की अन्दर की सतह गर्म हो जाने पर आंशिक रूप मे संचलन द्वारा, आंशिक रूप से सम्वहन तथा आंशिक रूप से विकिरण द्वारा पकाया जाता है। ताप ऊष्मा नियंत्रक के द्वारा नियन्त्रित किया जाता है।

(४) **विशिष्ट व्यवस्था**—इनके अन्तर्गत स्वचालित घड़ी तथा समय जानने की प्रविधियाँ, आन्तरिक समय सूचक, सुविधापूर्ण निकास, प्रकाश जो कि यह संकेत करती है कि बर्नर्स चालू हैं, सम्मिलित होती है।

(५) **गैस पाइप तथा गैस पूर्ति**—रेंज एक नली से जुड़ा होता है, जिसमें होकर गैस सिलिण्डर से गुजरती है।

सुरक्षा एवं स्वच्छता

१. प्रयुक्त करने के तुरन्त पश्चात् ही रेंज की स्वच्छता करनी चाहिये।
२. इसे साबुन और जल से धोना चाहिये। परन्तु यदि इससे सफाई न हो तो खाने का सोडा प्रयुक्त करना चाहिये। परन्तु एल्युमिनियम के रेंज पर इसका उपयोग नहीं करना चाहिये।
३. सम्पूर्ण धरातल को गर्म साबुन युक्त जल में भीगे हुए कपड़े से साफ करना चाहिये. तत्पश्चात् उसे पोंछकर सुखा देना चाहिए।
४. यदा-कदा बर्नर को सोड़ा के जल में उबालकर स्वच्छ करना चाहिए।
५. ताप नियंत्रक तथा शीशे को साफ रखना चाहिए।
६. गैस की नली को भी साफ रखना चाहिये।

गैस के स्टोव (Gas Stoves)

भोजन पकाने की नवीन, सरल विधियों में गैस का स्टोव भी एक है।

लाभ

१. यह स्वच्छ पद्धति है तथा इसे सरलता से स्वच्छ किया जा सकता है।
२. इसे प्रयुक्त करने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती है।
३. यह क्रय मूल्य तथा दैनिक व्यय की दृष्टि से कम व्यय साध्य होता है।
४. इसमें समय व शक्ति की वचत होती है।
५. यह तेल के स्टोव की अपेक्षा अधिक ठण्डा होता है।
६. इसे रखने के लिए कम स्थान की आवश्यकता होती है।
७. वर्नर की लौ को नियंत्रित किया जा सकता है।

हानियाँ

१. जहाँ पर गैस प्रदाय की व्यवस्था नहीं होती वहाँ इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता।

गैस स्टोव के अङ्ग

(१) *मुख्य अंग (Body)— यह लोहे का बना होता है।* इसकी बाह्य सतह एनामेल पर्त से ढकी होती है। इस प्रकार इसकी सतह चिकनी व आकर्षक होती है तथा इसे सरलता से स्वच्छ किया जा सकता है।

(२) ज्वालक (Burner)—स्टोव के आकार के अनुसार इसमें एक अथवा अधिक ज्वालक हो सकते हैं। स्वय ज्वलाक भी विभिन्न आकारों के होते हैं तथा उनमें एक या दो रिंग होते हैं जो नीची या ऊँची लौ देते हैं।
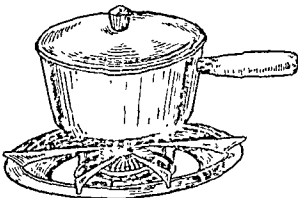
गैस का स्टोव

(३) नियन्त्रक—स्टोव में ज्वालकों की संख्या के अनुसार दो या दो से अधिक गुटके लगे होते हैं। ये गुटके 'बन्द स्थिति', 'खुली स्थिति', 'उच्च तथा

निम्न स्थिति' को प्रदर्शित करने का कार्य करते हैं तथा इनसे लौ नियन्त्रित की जाती है।

(४) नली तथा सिलिण्डर—स्टोव सिलिण्डर द्वारा नली से सम्बन्धित होता है। इसमें होकर गैस सुरक्षापूर्वक गुजरती है। यदि गैस प्रमुख प्रदाय से प्राप्य न हो तो गैस सिलिण्डर क्रय कर लेना चाहिये।

प्रयुक्त करने की विधि

१. पकाने वाले वर्तन पूर्णतः स्वच्छ होने चाहिये।
२. वर्तन पर्याप्त रूप से हल्के हों। एल्यूमिनियम जैसे हल्की धातु के बने वर्तन अधिक उपयुक्त होते हैं।
३. आवश्यकता के अनुकूल आकार वाले ज्वालकों का प्रयोग करना चाहिये।
४. पकाने के वर्तन के चारों ओर व्यर्थ ही ज्वाला को नहीं जाने देना चाहिये।
५. माचिस जलाने से पूर्व नियंत्रक को कभी मत खोलिये।
६. वर्तन उठाने से पूर्व सदैव बुझा देना चाहिए।
७. प्रयुक्त करने के पश्चात् सर्वप्रथम सिलिण्डर को बन्द करना चाहिए, तत्पश्चात्। नली में स्थित गैस को समाप्त होने देना चाहिये।

तेल का स्टोव (Oil Stove)

जहां विद्युत अथवा गैस या तो उपलब्ध नहीं हो पाती अथवा अत्यधिक
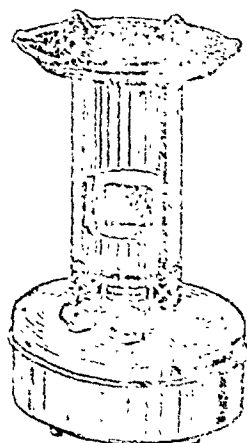
तेल का स्टोव

व्ययसाध्य हो वहाँ तेल-स्टोव का उपयोग किया जाता है। इस स्टोव का उपयोग भोजन पकाने के लिए किया जाता है।

लाभ

१. जिन स्थानों पर गैस अथवा विद्युत प्राप्य नहीं होती अथवा रसोईघर की व्यवस्था पुराने ढंग की है अथवा भली प्रकार आसज्जित नहीं है वहाँ तेल-स्टोव अत्यधिक उपयोगी होते हैं।

२. भोजन पकाने का यह साधन कम व्यय साध्य है।

३. इसका उपयोग करना सरल होता है।

४. गर्मियों में यह अधिक ठण्डा होता है। इसे कमरे अथवा बरामदे में रखकर भी उपयोग में ला सकते हैं।

५. इसके लिए अपेक्षाकृत कम स्थान की आवश्यकता होती है।

६. यह साफ-सुथरी विधि है।

७. विद्युत की अपेक्षा यह अधिक मितव्ययी होता है।

हानियाँ

१. तेल की कमी अथवा अनुपलब्धि की स्थिति में इसका उपयोग लाभदायक नहीं होता।

२. यदि इसकी सफाई सावधानी पूर्वक एवं नियमित रूप से न की जाय तो यह अधिक दुर्गन्ध फैलाता है।

३. इसकी सफाई के लिए अधिक समय व श्रम की आवश्यकता होती है।

४. दबाव वाले स्टोव बहुधा हानिकारक होते हैं।

५. इनमें प्रयुक्त तेल अत्यधिक ज्वलनशील होता है।

६. गैस अथवा विद्युत स्टोव की भाँति इसमें उष्मा अधिक नियन्त्रित नहीं होती।

प्रकार

(१) बत्तियों वाले स्टोव—ये स्टोव तेल में डूबी हुई बत्तियों की सहायता से जलते हैं।

बनावट

तेल के स्टोव के मुख्य भाग हैं—

(१) मुख्य अङ्ग (Body)—यह एनामेल पर्त की टीन का बना होता है

(२) तेलाशय—तेलाशय तेल संग्रह हेतु होता है जो कि बत्ती में सम्बन्ध रखता है। इसका संग्रह या तो बोतल में होता है अथवा इसके मुख्य अंग में ही।

(३) नली तथा आवरण—नली तेलाशय को वत्ती अथवा ज्वाला से सम्बन्धित करती है। आवरण ज्वालक के ऊपर भोजन पकाने वाले वर्तन को रखने के लिये होता है।

(४) गुटका (Knob)—गुटका भी नली से सम्बन्धित होता है। जब गुटका खोल दिया जाता है तो तेल वत्ती की ओर प्रवाहित होने लगता है तथा ज्वालक को जलाने पर यह जलने लगता है।

(५) चिमनी—इसका प्रयोग ज्वालक को ढकने के लिये किया जाता है।

प्रयुक्त करने की विधि

१. इसकी पूरी लम्बाई में वत्ती को जला दीजिए। धीमे से घुमा दीजिए, चिमनी को सही स्थिति में प्रतिस्थापित कर दीजिए, तत्पश्चात् वत्ती को थोड़ा-सा ऊपर कर दीजिये।
२. थोड़ी देर के लिए वत्ती को देखिए, तथा लैम्प को धुँआ से वचाने के लिए वत्ती को नियन्त्रित कर दीजिए।

सुरक्षा तथा स्वच्छता

१. इसे वहुत स्वच्छ रखिए, वत्ती को छाँट दीजिए तथा प्रतिदिन इसमें तेल भरिये।
२. सदैव अच्छे प्रकार का तेल प्रयुक्त कीजिए। तेल अत्यधिक कम कभी मत जलने दीजिये।
३. स्टोव को ऐसे स्थान पर रखिए जो वात-प्रवाह से सुरक्षित हो।
४. तेल के स्टोव पर टिन, अल्यूमीनियम आदि के हल्के वर्तन प्रयुक्त कीजिए क्योंकि ये भार में हल्के होने के कारण इनमें उष्मा भली प्रकार संचालित हो जाती है।
५. स्वच्छता करते समय तेलाशय, नली को भली प्रकार साफ कर दीजिए। तत्पश्चात् तेलाशय में दो-तिहाई भाग तेल से पुनः भर दीजिए।
६. इसके मुख्य अंग को हल्के सोड़ा, तथा सावुन एवं जल से साफ कर दीजिए।

(२) वत्तियां रहित स्टोव—ये स्टोव विना वत्तियों के ही जलते हैं। इनमें दूसरी ही यांत्रिकी होती है। प्राइमस स्टोव इसी का एक उदाहरण है।

वनावट

वत्तियों रहित स्टोव के मुख्य भाग हैं—

(१) तेलाशय—मिट्टी के तेल के लिये यह तेलाशय होता है।

(२) वायु पम्प—तेलाशय में वायु पम्प संलग्न होते हैं।

(२) छोटा प्याला—मेथिलेटेड स्प्रिट के लिए इसमें एक प्याला होता है। जब स्टोव जलाया जाता है तो ज्वालक को गर्म करने के लिए इसका उपयोग होता है। तथा तेल द्वारा छोड़ी गई गैस जलने लगती है। इस प्रकार यह गर्म तथा प्रदीप्त ज्वाला से जलता है।

(४) वाल्व—ज्वाला को बुझाने के लिये वाल्व होता है।

(५) जेट—यह कप के मध्य में आसज्जित होता है।

प्रयुक्त करने की विधि

१. स्टोव की टकी के दो-तिहाई भाग को तेल से भर देना चाहिए।
२. कप को स्प्रिट से भरिए स्प्रिट जला दीजिए, जब यह जल जाये तो पम्प से हवा भर दीजिए।
३. पम्प सावधानी पूर्वक करना चाहिए। अत्यधिक पम्पिङ्ग कभी मत कीजिए अन्यथा स्टोव के फट जाने का भय रहता है।

विद्युत इस्त्री

इस्त्री भी एक छोटा उपकरण है जो कि एक मुसज्जित घर में नितान्त आवश्यक होता है। विद्युत इस्त्री वह होती है जिसका सचालन विद्युत द्वारा होता है।

विद्युत इस्त्री

सिद्धान्त

इस्त्री उसी सिद्धान्त पर कार्य करती है जिस पर कि टोस्टर कार्य करता है। इस्त्री के गर्म हो जाने पर विद्युत-शक्ति ऊष्मा-शक्ति में परिवर्तित हो जाती है। उष्माशक्ति के कारण ही इस्त्री को उच्च ताप तक गर्म किया जाता है।

प्रकार

१. विद्युत इस्त्री—विद्युत इस्त्री निम्न प्रकार की होती है—

(अ) स्वचालित इस्त्री—स्वतः ही नियन्त्रित इस्त्री वाष्प सहित या शुष्क हो सकती है अथवा शुष्क तथा वाष्प युक्त इस्त्रियों का मिला-जुला रूप हो सकती है।

स्वचालित इस्त्री में ऊष्मा नियन्त्रक होता है जो कि वांछित ताप से उच्च ताप ह
पर विद्युत को रोक देता है। परन्तु जैसे ही इस्त्री ठण्डी होने लगती है तो ताप पु
उच्च होने लगता है। अधिकांश नियन्त्रकों में विभिन्न वस्तु के बने वस्त्रों के अनुकू
उच्च, साधारण, तथा निम्न ताप की व्यवस्था होती है। अधिकांशतः इस्त्री में ब
पैमाने पर रेयन, सिल्क, ऊन, सूत तथा लिनन लिखा रहता है। कभी-कभ
प्रत्येक प्रकार के वस्त्र के लिये ताप का विस्तार अंकित होता है। ऊष्मा-नियन्त्रक
अधिकतर हत्थे के पास ही लगा रहता है, जिससे इसे आसानी से देखा व प्रयुक्त किय
जा सके।

प्रयुक्त करने की विधि

स्वचालित इस्त्री का संचालन बहुत ही सरल एवं आसान होता है। प्रारम्भ
में विशिष्ट प्रकार के वस्त्र के लिये ऊष्म-नियन्त्रक स्थित कर दिया जाता है, तत्पश्चात्
इसे गर्म किया जाता है। कुछ समय बाद जब इस्त्री गर्म हो जाती है तो उसे प्रयुक्त
किया जाता है। इसमें ताप स्वतः ही नियन्त्रित हो जाता है। ताप वांछित से अधिक
नहीं बढ़ता तथा विद्युत बन्द हो जाती है, परन्तु यदि इस्त्री ठण्डी होने लगती है तो
ताप पुनः बढ़ने लगता है।

(ब) **अ-स्वचालित इस्त्री**—अ-स्वचालित इस्त्री वे होती हैं, जिनमें ऊष्मा-
नियन्त्रक नहीं होता, जो कि विभिन्न वस्त्रों के लिये उपयुक्त ऊष्मा का विस्तार संकेत
करता है। इस प्रकार की इस्त्री एक निर्धारित ताप तक ही गर्म होती है तथा स्वयं
ठण्डी नहीं होती वरन् इसे ठण्डा करने के लिये हाथ से बन्द करना पड़ता है।

२. **भाप इस्त्री**—भाप की इस्त्रियाँ सामान्यतः स्वचालित होती हैं।
वाष्प-इस्त्री एक कैटली के समान होती है जिसमें कि पानी भरा होता है तथा उसे
क्वथनांक तक पहिले ही गर्म कर लेते हैं। भाप को निकालने के लिये छिद्र विभिन्न
ढंगों से व्यवस्थित किये जाते हैं। प्रत्येक भाप-इस्त्री में या तो उसके अन्दर ही जल
संग्राहक निर्मित होता है अथवा इस्त्री के साथ एक बोतल संलग्न होती है, जिसमें से
थोड़ा-थोड़ा जल बहकर इस्त्री के संग्राहक में बहता रहता है तथा वह शनैः-शनैः भाप
में रूपान्तरित होता रहता है। भाप की कुछ इस्त्रियों में प्रेस करते समय वस्त्रों पर
पानी के छिड़कने की व्यवस्था होती है। हत्थे के ऊपरी हिस्से में लगे हुए बटन को
दबाने पर गर्म जल का छिड़काव वस्त्रों पर हो जाता है। साधारणतः स्वचालित
इस्त्रियों की भाँति इसमें भी ऊष्मा नियन्त्रक होता है जो कि वांछित ताप को नियंत्रित
एवं नियमित करता है।

प्रयुक्त करने की विधि

यह एक स्वचालित इस्त्री की तरह कार्य करती है जिसमें कि विशिष्ट प्रकार
के वस्त्रों के लिये ऊष्मा को नियन्त्रित किया जाता है। इसके अतिरिक्त इस्त्री में बने
हुए सुराख के द्वारा अथवा इस्त्री से संलग्न पानी की बोतल से पानी संग्राहक में भर

दिया जाता है। जब पानी उबलने लगता है तथा भाप उत्पादित हो जाती है, तब इस्त्री को कपड़े पर किया जाता है। भाप स्वयं सिलवटों को नहीं छुड़ाती है। वे तो तभी छूटती हैं जबकि भाप ठण्डे वस्त्र पर सघनित हो जाती है तथा इस्त्री से निकलने वाली उष्मा का उपयोग किया जाता है। यदि इस्त्री अत्यधिक गर्म है तो भाप नम रहने के स्थान पर शुष्क होने लगेगी। इस्त्री में प्रयुक्त करने के लिये मृदु जल का उपयोग करना चाहिये। प्रयुक्त करने के पश्चात् अवशेष जल को फेंक देना चाहिये।

इस्त्री के मुख्य भाग

(१) पेंदे की प्लेट—यह एल्यूमीनियम, जंग रहित इस्पात, ढलवाँ लोहे अथवा क्रोमियम चढ़े लोहे की बनी होती है। यह चिकनी और चौरस होती है। भाप की इस्त्री में यन्त्र के पेंदे में ने ही भाप निकलती है। ये इस्त्री में विभिन्न प्रकार से व्यवस्थित किये जाते हैं ताकि पूरे वस्त्र पर भाप का वितरण समान रूप से हो सके।

(२) इस्त्री का हत्था—पकड़ने की दृष्टि से सर्वाधिक सुगमतापूर्ण आकार और प्रकार का हत्था होना चाहिये। जलने के खतरे से सुरक्षा के लिए इस्त्री के मुख्य अंग से पर्याप्त दूर होना चाहिये। अंगूठे को रखने की जगह एक तरफ को मुड़ी होनी चाहिये। कुछ विद्युत इस्त्रियों में नीचे के हिस्से को थामने के लिए व्यवस्था होती है ताकि इस्त्री की स्थिति ठीक रहे।

(३) उष्मा नियन्त्रक—एक स्वचालित तथा वाष्प-इस्त्री में ऊष्मा नियन्त्रक होता है जो कि वांछित से अधिक ताप होने पर विद्युत प्रभाव को रोक देता है। परन्तु इस्त्री यदि ठण्डी होने लगती है तो पुनः सचालित होने लगती है। ऊष्मा-नियन्त्रक का परास, साधारण तथा निम्न हो सकता है। एक अच्छी इस्त्री में उच्च व निम्न ताप की व्यवस्था होनी चाहिये।

(४) उष्मा उत्पादक पुर्जा (Element)—उष्मा उत्पादक पुर्जे के अन्तर्गत अभरक अथवा एसबेस्टोस शीट पर लिपटे हुए तार होते हैं। सभी इस्त्रियों में उष्मा उत्पादक तत्त्व विद्युत निरोधक होते हैं, ताकि बिजली के धक्के से सुरक्षा की जा सके।

(५) भार—साधारणतः भार लोहे का बना होता है तथा यह उष्मा उत्पादक तत्त्व (Element) के ऊपर लगा होता है।

(६) डोरी—इस्त्री में प्रयुक्त डोरी के अन्दर एसबेस्टोस के परत से विद्युत को अवरोधित किया जाता है। यह एक विशेष प्रकार के सूत के परत से आच्छादित रहता है। डोरी लगभग ६ फीट लम्बी होती है तथा यह नमनीय होती है।

प्रयुक्त करने की विधि

१. इस्त्री को उपयोग में लाने से पूर्व वस्त्र की आवश्यकतानुसार ताप को नियंत्रित कर लेना चाहिये ।

२. जिन वस्त्रों को कम ताप की आवश्यकता होती है उन पर सबसे पहिले इस्त्री करनी चाहिये, तत्पश्चात् धीरे-धीरे क्रमशः अपेक्षाकृत अधिक ताप चाहने वाले वस्त्रों पर इस्त्री करनी चाहिये ।

३. इस्त्री करने से पूर्व वस्त्र को कम से कम आध घण्टे पूर्व गीला कर लेना चाहिये ।

४. प्रयोग करने के पश्चात् प्लग को निकाल देना चाहिये तथा इसे सीधी स्थिति में रखना चाहिये ।

५. जब इस्त्री गर्म हो तो उस पर लगे धब्बों को छुड़ा देना चाहिये ।

६. यदि इस्त्री गर्म हो तो उसके चारों तरफ डोरी नहीं बाँधनी चाहिये ।

कपड़े धोने की मशीन
(Washing Machine)

मानव श्रम को कम करने के लिए तथा कम समय में अधिक वस्त्र धोने के लिए
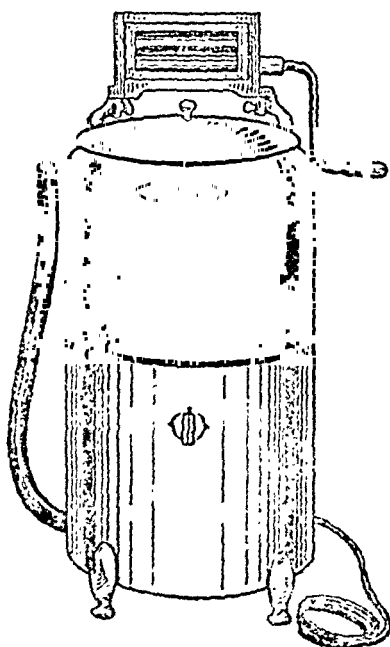
कपड़े धोने की मशीन

वस्त्र धोने की मशीन का निर्माण किया गया है। इस मशीन में सभी वस्त्र एक साथ धोये जा सकते हैं। प्रत्येक वस्त्र में पृथक् से साबुन लगाने, उन्हें रगड़ने व पटकने की आवश्यकता नहीं होती। इसमें सभी प्रकार के सूत में बने हुए वस्त्र; जैसे—सूती, रेशमी, रेयन, लिनन, ऊनी आदि धोए जा सकते हैं।

यह मशीन विद्युत से सचालित होती है। इसमें एक ताप-नियंत्रक होता है जिसका उपयोग जल के ताप को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। विभिन्न प्रकार के वस्त्रों के लिए भिन्न-भिन्न ताप तथा समय निश्चित होता है। यह अधोलिखित सारिणी में स्पष्ट किया गया है—

वस्त्र के प्रकार	तापक्रम	समय
१. सूती, लिनन	१६०°	३ मिनट
२. रेशम, रेयन, ऊनी	६०°	२ मिनट
३. अन्य प्रकार के भारी वस्त्र जैसे—पर्दे, चादरें, तौलिए	२००°	४ मिनट

इस मशीन में ८ पौंड भार के वस्त्र एक साथ धुल सकते हैं। इसमें वस्त्र निचोड़ने की भी व्यवस्था होती है। वस्त्र निचोड़ने के यंत्र में दो छोटे-छोटे डण्डे होते हैं। दाहिनी ओर एक हत्था लगा होता है। दोनों डण्डों के बीच वस्त्र रखकर हत्था घुमाने से वस्त्र निचोड़ लिए जाते हैं।

वस्त्र धोने की मशीन के बीचो-बीच में एक पुर्जा लगा होता है। जिसको खोलकर गन्दा जल बाहर निकाल दिया जाता है तथा यंत्र को साफ कर दिया जाता है। साफ करने के पश्चात् पुर्जे को बन्द कर दिया जाता है।

आजकल वस्त्र धोने की ऐसी मशीनें भी निर्मित हो चुकी हैं जिनमें वस्त्र धोने, निचोड़ने व सुखाने की व्यवस्था होती है।

अतः स्पष्ट है कि इस मशीन का उपयोग करके गृहिणी कम समय व शक्ति का व्यय करके अधिक से अधिक कार्य कर सकती है। जिन परिवारों में सदस्य संख्या अधिक होती है, उन परिवारों के लिए यह मशीन और भी अधिक लाभदायक होती है। गृहिणी को वस्त्र धोने की मशीन क्रय करते समय तथा उसका उपयोग करते समय अग्रिम बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए :—

१. ऐसी मशीन क्रय की जाए जिसको स्पर्श करने से वह स्वयं ही बन्द हो जाए। छोटे बच्चे वाले परिवारों के लिए यह बड़ी उपयोगी होती है।
२. मशीन परिवार के आकार तथा घर में उसे रखने के लिए उपलब्ध स्थान के अनुसार क्रय करना चाहिए।
३. मशीन में धुलाई हेतु केवल साबुन का पाउडर; जैसे—सर्फ़, लक्स, डेट इत्यादि का ही प्रयोग करना चाहिए। साबुन चिप्स का प्रयोग नहीं करना चाहिए। साबुन चिप्स मशीन में डालने से मशीन के अन्दर के छिद्र बन्द हो जाने की सम्भावना रहती है। प्रयोग करने के पश्चात् गन्दे पानी को मशीन से निकाल देना चाहिए तथा उसको भली प्रकार साफ कर देना चाहिए।

वैक्यूम क्लीनर
(Vacuum Cleaner)

वैक्यूम क्लीनर का उपयोग कालीन, दरियाँ तथा फर्श स्वच्छ करने के काम में आता है। इससे स्वच्छता का काम थोड़े समय में ही बड़ी अच्छी तरह किया जा सकता है। गृहिणी को परिश्रम भी कम से कम करना पड़ता है। समस्त वैक्यूम-क्लीनर इस सिद्धान्त पर कार्य करते हैं कि वायुमण्डलीय दबाव गंदगी पूर्ण वायु को कम दबाव वाले स्थान की ओर धकेलता है।

चयन

१. वह मशीन क्रय करिये जिसके पुर्जे सरलता से व सस्ते क्रय किए जा सकते हैं।
२. वह मशीन खरीदिये जिसकी कि कुछ समय की गारन्टी होती है।
३. किसी प्रतिष्ठित फर्म से मशीन खरीदिए।
४. एक ऐसी मशीन क्रय कर लीजिए जो कि घर में रखने के स्थान व उपयोगिता की दृष्टि से उपयुक्त हो।

प्रकार

(१) बाहर की ओर थैली वाला क्लीनर—हूवर (Hoover) इस प्रकार के वैक्यूम-क्लीनर का उदाहरण है। यह मशीन पीटकर, हिलाकर, ब्रुश करके, चूषण द्वारा सफाई करती है। इसकी समस्त प्रक्रिया बड़ी जटिल होती है।

वैक्यूम क्लीनर के अंग

(१) मुख्य अंग (Body)—यह धातु तथा क्रोमियम का बना होता है। जिस

के चारों ओर रबर लगा होता है। इसके सहज संचालन के लिए इसकी नीचे की सतह में पहिए जैसे (Runner) लगे होते हैं।

वैक्यूम क्लीनर
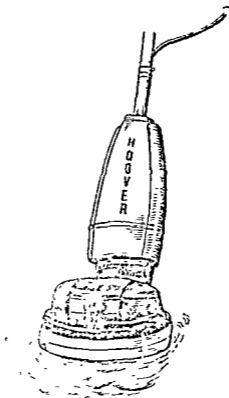
(२) हत्था (Handle)—यह धातु का बना होता है। पकड़ने के स्थान पर रबर लगा होता है।

(३) स्विच—यह पैर से नियन्त्रित होता है।

(४) मोटर—इसका उपयोग पंखा चलाने के लिए किया जाता है। गृहिणी को मोटर खोलने का प्रयास कभी नहीं करना चाहिए।

(५) थैली (Bag)—यह छिद्रपूर्ण वस्त्र की बनी होती है ताकि धूल इसमें एकत्रित हो सके तथा वायु निकलती रहे।

(६) पंखा—यह मोटर के ठीक पीछे स्थित होता है। यही वैक्यूम उत्पन्न करता है।

(७) नोज़िल (Nozzle)—यह वह भाग है जिसका क्लीनर से सीधा सम्बन्ध

होता है। स्वच्छ किए जाने वाले कालीन की मोटाई एवं आकृति के अनुसार इसकी भी आकार एवं आकृतियाँ भिन्न हो सकती हैं।

(८) तार—तार पर सामान्यतः रबर का खोल चढ़ा होता है। तार का एक सिरा दीवार पर प्लग से, तथा दूसरा सिरा क्लीनर के मुख्य यन्त्र से जुड़ा होता है।

उपयोग विधि

१. दीवार के प्लग तथा क्लीनर स्विच को विद्युत प्रवाह से सम्बन्धित कीजिए।

२. हत्थे के स्विच से गति को नियंत्रित कीजिए।

३. उपयुक्त आकार एवं आकृति के नोजिल एवं ब्रश को उसमें लगाइये, तथा इसे धीरे-धीरे, एक-सा तथा नियमित रूप से स्वच्छ किये जाने वाले पूरे फर्श के धरातल पर घुमाइए।

४. उपयोग करने के पश्चात् तुरन्त ही थैली को खाली करके स्वच्छ कीजिए।

५. प्लग निकालकर तार हत्थे के चारों ओर लपेट दीजिये, तथा यन्त्र को हत्थे सहित सीधा खड़ा करके रख दीजिए।

(२) बन्द थैली वाला वैक्यूम क्लीनर (Enclosed Bag Vaccunm Cleaner)—इस क्लीनर में कूड़े की थैली यन्त्र के बाहरी भाग में नहीं जुड़ी होती, अपितु यह यन्त्र के मुख्य अंग के भीतर रखी रहती है।
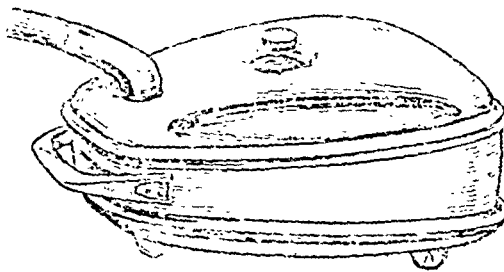
बन्द थैली वाला वेक्यूम क्लीनर

मुख्य भाग

(१) मुख्य अंग (Body)—यह पालिश की हुई, धातु से निर्मित होता है तथा इसके पहिये (runners) भी धातु के होते हैं जो कि किसी भी फर्श के धरातल पर सरलता से घुमाये जा सकते हैं। इसके ऊपरी सिरे पर पैर का स्विच लगा होता है।

५. विभिन्न अंगों को पृथक-पृथक कर दीजिए ।
६. कूड़े की थैली तथा क्लीनर को रिक्त कर दीजिए ।

सुरक्षा एवं स्वच्छता

१. उपकरण का प्रयोग करने के तुरन्त बाद कूड़े की थैली को रिक्त करके साफ करना चाहिए ।
२. नोजिल में स्थित गतिशील ब्रुशों की जाँच समय-समय पर करते रहना चाहिये, यदि ब्रुश टूट गई हों तो उन्हें ठीक करना चाहिए अथवा बदल देना चाहिए ।
३. प्रत्येक बार उपयोग करने के बाद मशीन में लगी हुई ब्रुश अथवा पिचकारी को साफ करना चाहिये । नली को भी साफ कर देना चाहिये ।
४. तार को ढीला लपेटना चाहिये ताकि उसमें गाँठें न पड़ें ।
५. निर्देशन पुस्तिका में दिये गये निर्देशनों के अनुसार इसमें तेल तथा ग्रीस लगाते रहना चाहिये ।
६. विशेषज्ञों द्वारा इसका परीक्षण समय-समय पर कराते रहना चाहिये ।

उपर्युक्त वर्णित गृहस्थी के उपकरण गृहिणी के लिये तथा उसके परिवार की सुख-सुविधा की दृष्टि से बड़े उपयोगी हैं । गृहिणी अपने अमूल्य समय व शक्ति को अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यों में उपयोग कर सकती है, क्योंकि इन उपकरणों के प्रयोग से उसे कम समय व शक्ति का व्यय घरेलू कार्यों पर करना पड़ता है । परन्तु यह भी स्पष्ट है कि हमारे देश का प्रत्येक परिवार इन उपकरणों का लाभ नहीं उठा सकता, क्योंकि ये कीमती होते हैं । इसके अतिरिक्त इनके संचालन के लिए विद्युत, गैस आदि का प्रयोग करना पड़ता है जो कि अन्य ईंधन की अपेक्षा व्यय-साध्य होते हैं । इसलिये निम्न व मध्य आर्थिक स्तर के परिवार इनका उपयोग नहीं कर पाते । ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत आदि उपलब्ध नहीं हो पातीं इसलिये जो परिवार इनका उपयोग करना भी चाहते हैं, वे नहीं कर पाते ।

गृहिणी को इन उपकरणों का उपयोग बड़ी सावधानीपूर्वक करना चाहिए । उपकरणों की स्वच्छता तथा सुरक्षा की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये । प्रत्येक गृहिणी को यन्त्रों की यांत्रिकी तथा उनकी मामूली मरम्मत के विषय में पर्याप्त जानकारी होनी चाहिये, ताकि आवश्यकता के समय उनकी मरम्मत की जा सके ।

स्वतः ज्ञान परीक्षा

१. आजकल खाना पकाने के उपकरण कौन-कौन से हैं ?
२. रेफ्रीजरेटर से क्या लाभ है ? इसके भागों का वर्णन कीजिए । इसका उपयोग करते समय किन-किन सावधानियों को दृष्टिगत रखना

३. पाकशाला में प्रेशर कुकर की क्या आवश्यकता है ? इसका उपयोग करते समय कौन-सी सावधानियाँ बरतनी चाहिए ?

४. विद्युत टोस्टर कितने प्रकार के होते है ? प्रत्येक के अङ्ग, उपयोग करने की विधि तथा उसकी सुरक्षा हेतु सावधानियों का वर्णन कीजिए ।

५. खाना पकाने के रेंज के क्या लाभ है ? इसके विभिन्न अङ्गों का वर्णन कीजिए ।

६. बिजली और तेल के स्टोव के लाभ और हानियों का वर्णन कीजिए ।

७. तेल के स्टोव कितने प्रकार के होते हैं ? प्रत्येक की सुरक्षा एवं स्वच्छता आप किस प्रकार करेंगे ?

८. इस्त्री कितने प्रकार की होती है ? प्रत्येक को प्रयुक्त करने की विधि बताइए ।

९. *निम्न पर टिप्पणियाँ लिखिये—*
विद्युत सचालित कपडे धोने की मशीन, वैक्यूम क्लीनर ।

५. विभिन्न अंगों को पृथक-पृथक कर दीजिए ।
६. कूड़े की थैली तथा क्लीनर को रिक्त कर दीजिए ।

सुरक्षा एवं स्वच्छता

१. उपकरण का प्रयोग करने के तुरन्त बाद कूड़े की थैली को रिक्त करके साफ करना चाहिए ।
२. नोज़िल में स्थित गतिशील ब्रुशों की जाँच समय-समय पर करते रहना चाहिये, यदि ब्रुश टूट गई हों तो उन्हें ठीक करना चाहिए अथवा बदल देना चाहिए ।
३. प्रत्येक बार उपयोग करने के बाद मशीन में लगी हुई ब्रुश अथवा पिचकारी को साफ करना चाहिये । नली को भी साफ कर देना चाहिये ।
४. तार को ढीला लपेटना चाहिये ताकि उसमें गाँठें न पड़ें ।
५. निर्देशन पुस्तिका में दिये गये निर्देशनों के अनुसार इसमें तेल तथा ग्रीस लगाते रहना चाहिये ।
६. विशेपज्ञों द्वारा इसका परीक्षण समय-समय पर कराते रहना चाहिये ।

उपर्युक्त वर्णित गृहस्थी के उपकरण गृहिणी के लिये तथा उसके परिवार की सुख-सुविधा की दृष्टि से बड़े उपयोगी हैं। गृहिणी अपने अमूल्य समय व शक्ति को अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यों में उपयोग कर सकती है, क्योंकि इन उपकरणों के प्रयोग से उसे कम समय व शक्ति का व्यय घरेलू कार्यों पर करना पड़ता है । परन्तु यह भी स्पष्ट है कि हमारे देश का प्रत्येक परिवार इन उपकरणों का लाभ नहीं उठा सकता, क्योंकि ये कीमती होते हैं। इसके अतिरिक्त इनके संचालन के लिए विद्युत, गैस आदि का प्रयोग करना पड़ता है जो कि अन्य ईंधन की अपेक्षा व्यय-साध्य होते हैं। इसलिये निम्न व मध्य आर्थिक स्तर के परिवार इनका उपयोग नहीं कर पाते । ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत आदि उपलब्ध नहीं हो पातीं इसलिये जो परिवार इनका उपयोग करना भी चाहते हैं, वे नहीं कर पाते ।

गृहिणी को इन उपकरणों का उपयोग बड़ी सावधानीपूर्वक करना चाहिए। उपकरणों की स्वच्छता तथा सुरक्षा की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। प्रत्येक गृहिणी को यन्त्रों की यांत्रिकी तथा उनकी मामूली मरम्मत के विषय में पर्याप्त जानकारी होनी चाहिये, ताकि आवश्यकता के समय उनकी मरम्मत की जा सके ।

स्वतः ज्ञान परीक्षा

१. आजकल खाना पकाने के उपकरण कौन-कौन से हैं ?
२. रेफ्रीजरेटर से क्या लाभ है ? इसके भागों का वर्णन कीजिए। इसका उपयोग करते समय किन-किन सावधानियों को दृष्टिगत रखना चाहिए ।

३. पाकशाला में प्रेशर कुकर की क्या आवश्यकता है ? इसका उपयोग करते समय कौन-सी सावधानियाँ बरतनी चाहिए ?

४. विद्युत टोस्टर कितने प्रकार के होते हैं ? प्रत्येक के अङ्ग, उपयोग करने की विधि तथा उसकी सुरक्षा हेतु सावधानियों का वर्णन कीजिए।

५. खाना पकाने के रेंज के क्या लाभ हैं ? इसके विभिन्न अङ्गों का वर्णन कीजिए।

६. बिजली और तेल के स्टोव के लाभ और हानियों का वर्णन कीजिए।

७. तेल के स्टोव कितने प्रकार के होते हैं ? प्रत्येक की सुरक्षा एवं स्वच्छता आप किस प्रकार करेंगे ?

८. इस्त्री कितने प्रकार की होती है ? प्रत्येक को प्रयुक्त करने की विधि बताइए।

९. निम्न पर टिप्पणियाँ लिखिये—
विद्युत सचालित कपड़े धोने की मशीन, वैक्यूम क्लीनर।

भाग ४

मकान का आयोजन

- मकान
- मकान में कमरों का विभाजन
- रसोईघर

अध्याय १५

मकान

गृह (Home) और मकान (House)

बोलचाल की भाषा में गृह और मकान प्रायः एक ही अर्थ के सन्दर्भ में प्रयुक्त किये जाते हैं। वस्तुतः दोनों शब्द पृथक्-पृथक अर्थ के सूचक हैं। गृह भावनात्मक एवं मानवीय सम्बन्धों पर प्रमुखतः आधारित होता है जबकि घर केवल भौतिक वस्तुओं का समुचित अनुपात में संयोजन मात्र है। गृह अंग्रेजी के (Home) होम शब्द का पर्यायवाची है। गृह विशिष्ट रूप से पारिवारिक जीवन के उस वातावरण को कहते हैं जिसमें दैनिक जीवन के पारस्परिक मानवीय सम्बन्ध अन्तर्निहित होते हैं। गृह का आधार पारस्परिक प्रेम, सहानुभूति दया, कर्त्तव्य-निष्ठा, सहयोग, मैत्रीपूर्ण भावना, त्याग और बलिदान हैं। यदि परिवार के सदस्यों में उक्त सभी गुण विद्यमान हैं तो झोपड़ी में रहने वाला यह परिवार उत्तम व आदर्श गृह का आनन्द प्राप्त करता है।

परन्तु मकान का प्रमुख आधार भौतिकीय रचना मात्र है जिसका निर्माण परिवार की सुरक्षा एवं समृद्धि के लिए किया जाता है। मकान मिट्टी, ईंट, पत्थर, चूने व सीमेन्ट आदि के भवन को ही कहते हैं। उसके साथ हमारा भावनात्मक सम्बन्ध या तो होता ही नहीं है यदि होता भी है तो वह गृह के प्रभाव के कारण ही होता है। हमें मकान विशेष छोड़ने में वेदना का अनुभव नहीं होता परन्तु गृह को त्यागने में असीम वेदना होती है। मकान अंग्रेजी के हाउस (House) शब्द का पर्यायवाची है। गृह एक विषद शब्द है जिसके अन्दर मकान भी सन्निहित है।

गृह वास्तव में परिवार के सदस्यों का आश्रय स्थल है जहाँ उनके सर्वांगीण विकास के लिए उपयुक्त संरक्षण एवं सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं। इसमें परिवार के

सदस्यों को आराम, मनोरंजन, अध्ययन तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। मानवीय गुणों के विकास के लिए उचित वातावरण एवं परिस्थितियाँ अच्छे गृह में ही उपलब्ध होती हैं। सुव्यवस्थित एवं सुसज्जित गृह बालक के लालन-पालन एवं समुचित विकास की दृष्टि से परमावश्यक है।

गृह की सुव्यवस्था पति-पत्नी तथा बच्चों के पारस्परिक सहयोग एवं स्नेहपूर्ण सम्बन्धों पर निर्भर करती है। पति आर्थिक व्यवस्था करने का कार्य करता है। पत्नी सीमित आर्थिक साधनों का उपयोग इस प्रकार करती है कि परिवार के प्रत्येक सदस्य को अधिकाधिक सुख सुविधा प्रदान कर सके। गृह के सदस्यों की सुविधा में मकान का भी अपना योगदान है। पत्नी मकान को विभिन्न प्रकार से सजाकर आकर्षक बनाने का प्रयास करती है। उत्तम सुसज्जित मकान गृह सुख में वृद्धि करता है।

उत्तम मकान

उत्तम मकान से हमारा तात्पर्य केवल उस छत तथा चहारदीवारी से नहीं है जो मनुष्य की शीत तथा उष्णता से रक्षा करे अथवा रात्रि में विश्राम के लिए सुरक्षित स्थान प्रदान करे। उत्तम मकान से हमारा अभिप्राय उस सुखदायक एवं शान्तिमय गृह से है जो मानव-जीवन की विविध आवश्यकताओं की पूर्ति का सुविधामय साधन हो। आज मानव-जीवन जहाँ इतना कठिन एवं जटिल हो गया है वहाँ सभ्य तथा सुसंस्कृत भी है। प्रत्येक परिवार की शारीरिक एवं मानसिक आवश्यकताएँ जहाँ पहले से बहुत अधिक तथा विस्तृत हो गयी हैं, वहाँ आर्थिक स्थिति अति दुर्बल हो गयी है। ऐसी परिस्थिति में भी एक परिवार के स्वास्थ्य, सुख तथा शान्ति की समस्या बहुत कुछ सुलझ सकती है, यदि वह ऐसे मकान में रहता है जो सुन्दर एवं सुदृढ़ होने के अतिरिक्त काम-काज, नहाने-धोने, खाने-पीने, सोने व विश्राम करने तथा मिलने-जुलने के स्थानों की सुविधा भी सरलता से प्रदान कर सके। ऐसे मकान में निवास करने वालों का शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा रहता है, मन प्रसन्न व स्वस्थ रहता है तथा उनकी कार्यक्षमता भी बढ़ती है। अतः एक उत्तम मकान का निर्माण या चुनाव करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

(i) मकान स्वास्थ्य के नियमों के अनुकूल बना हो।

(ii) मकान परिवार के दैनिक-जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त स्थान एवं सुविधाएँ प्रदान करता हो।

स्वास्थ्य की दृष्टि से

(१) स्वास्थ्य की दृष्टि से मकान की स्थिति, दिशा, बनावट, वायु के आवागमन की व्यवस्था, मल-मूत्र व गन्दे जल के निकास का प्रबन्ध, जल व बिजली का प्रबन्ध नितान्त आवश्यक है। इनके सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।

१. स्थान

(१) पास-पड़ोस—यह सर्वसाधारण को विदित है कि भौतिक व सामाजिक वातावरण मानव पर कितना प्रभाव डालता है। निवास-गृह के लिए उचित वातावरण का चुनाव करना एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है, क्योंकि जीवन का अधिकांश भाग तो गृह में ही व्यतीत होता है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से मकान का शहर के बाहर खुले स्थान में होना ही उत्तम है। किन्तु प्रायः सुविधा के विचार से अथवा अन्य कारणवश लोग शहर में ही मकान बनवाते हैं। ऐसी दशा में स्थिति सम्बन्धी अनेक बातें ध्यान में रखनी आवश्यक हैं। उदाहरणार्थ—(१)-मकान पतली या गन्दी गलियों, सड़कों के किनारे, अँधेरे या सीले स्थान पर नहीं होना चाहिये।

(२) नगरों व गाँवों में कुछ स्थल ऐसे होते हैं जिनके निकट निवास करना किसी भी दशा में उचित नहीं। उदाहरणार्थ, कूड़ा एकत्रित करने के गड्ढे, कसाईखाना, पशुशाला, टैनरी (tannery) आदि। ऐसे स्थानों के पास घर होने से न केवल दुर्गन्ध ही आती है, वरन् स्वास्थ्य की भी हानि होती है। इसी प्रकार रेलवे स्टेशन, कारखाने तथा फैक्टरियों के पास धुआँ तथा शोर-गुल आदि मनुष्य की शान्ति में बाधा उपस्थित करते हैं। भीड़-भाड़ वाले बाजार तथा चौक आदि भी इन्हीं कारणों से मकान की स्थिति के विचार से प्रायः वर्जित हैं।

(३) कुछ बस्तियाँ व मुहल्ले ऐसे हो सकते हैं जहाँ का वातावरण दूषित हो। कुसंगति का प्रभाव बहुत शीघ्र होता है। इसी से दूषित वातावरण में रहना कदापि उचित न होगा। बालकों वाले परिवार के लिए तो यह विशेषकर आवश्यक है कि गृह ऐसे स्थान पर हो जहाँ पर चारो ओर सुशील व सुसंस्कृत परिवार रहते हों, नीच अथवा आवारा प्रवृत्ति के व्यक्ति न हों।

(४) घर की स्थिति का निर्णय करते समय यह भी देखना चाहिए कि दैनिक आवश्यकताओं के साधन-केन्द्र; जैसे स्कूल, कॉलिज, दफ्तर तथा बाजार आदि बहुत दूर न हों। डाकघर तथा अस्पताल आदि से भी समय-समय पर काम पड़ता ही है। इसलिए यह आवश्यक है कि मकान यथासम्भव ऐसे स्थानों के निकट एक केन्द्रीय स्थान में हो जिससे आने-जाने में व्यर्थ समय व धन नष्ट न हो।

(५) शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के लिए शुद्ध व हवादार स्थान तथा सुन्दर दृश्य अति लाभदायक सिद्ध होते हैं। यदि मकान नदी, झील, बाग अथवा पार्क आदि के निकट हो तो निस्सन्देह प्रातः व संध्या के समय भ्रमण करने की सुविधा एक अमूल्य देन होगी। इसी प्रकार चित्त की प्रसन्नता तथा शान्ति के लिए सामाजिक केन्द्र, क्लब तथा सभा-सम्मेलन, थियेटर या सिनेमा, मन्दिर या गिरजा आदि भी निकट होने चाहिए। इस प्रकार मनोरंजन एवं धार्मिक तथा सामाजिक संस्थाओं का भी मकान के निकट होना कम आवश्यक नहीं है।

(६) मकान मनुष्य का आश्रय स्थल है। उसे सुरक्षा व सुख-शान्ति मकान में ही मिलती है। यदि मकान ऐसे स्थान पर बना है जहाँ जंगली जानवरों का भय रहता है, चोर और लुटेरो का भय रहता है तो ऐसे घर में मानव को सुख व शांति का अनुभव नहीं हो सकता। वह सदैव असुरक्षा और भय का अनुभव करता रहेगा। अतः घर सुरक्षित व स्वस्थ स्थान पर बना होना चाहिए।

(ग) भूमि—आस-पड़ोस के अतिरिक्त, मकान की स्थिति निश्चित करने में, भूमि की ओर भी ध्यान देना आवश्यक है। यह तो सब को ज्ञात है कि सूखी तथा ऊँची भूमि मकान के लिए सर्वोत्तम है। किन्तु भूमि भी अनेक प्रकार की होती है। मकान के लिये प्रत्येक भूमि की उपयुक्तता समान नहीं है।

(१) **चिकनी मिट्टी**—यह जल ग्रहण कर लेती है और सीलन फैलाती है। मकान के लिये यह कदापि उपयुक्त नहीं है। गृह-निवासियों के स्वास्थ्य के लिए सीलन अत्यन्त हानिकर है और जुकाम, खाँसी तथा गठिया एवं दमा आदि रोगों का कारण व सहायक हो सकती है। चिकनी मिट्टी के गीली रहने के कारण मकान की नींव दुर्बल हो जाती है। इसके अतिरिक्त सीलन से मच्छर, मक्खी एवं दीमक आदि भी बहुत हो जाती हैं।

(२) **रेतीली भूमि**—इसमें से पानी रिसकर नीचे की तहों में चला जाता है इसलिए सीलन का भय नहीं रहता तथा स्वास्थ्य के विचार से ऐसी भूमि पर बना मकान उपयुक्त होता है। किन्तु मजबूती के विचार से रेतीली भूमि में नींव डालने का काम विशेष सावधानी का है क्योंकि इस दशा में नींव बहुत गहरी रहनी चाहिए।

(३) **कंकरीली और पथरीली भूमि**—इसमें से भी पानी रिस-रिस कर नीचे चला जाता है। इसकी नींव रेतीली भूमि की अपेक्षा अधिक मजबूत होती है। ऐसी भूमि के नीचे कभी-कभी चट्टानों के खोखलों में पानी इकट्ठा हो जाता है, जो नींव को कमजोर कर देता है। इसलिए ऐसी भूमि पर मकान यदि सब खोखलों और दरारों को भरने के पश्चात् बनाया जाय तो ठीक रहता है।

(४) **बनाई हुई भूमि**—अर्थात् वह मिट्टी जो कूड़ा-करकट तथा मल आदि से भरे गड्ढों को ढक कर बनती है, मकान की दृढ़ता तथा निवासियों के स्वास्थ्य दोनों के विचार से ही सर्वथा अनुपयुक्त है।

२. दिशा

स्वास्थ्य के लिए घर जहाँ सूखे एवं अच्छे वातावरण में होना चाहिए वहाँ प्रकाशमय तथा हवादार भी। इसी से यह निश्चय करना चाहिए कि मकान के दरवाजे, खिड़की तथा सामने का भाग किस ओर हो। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। विभिन्न स्थानों की भिन्न भौगोलिक स्थितियों के कारण वायु तथा सूर्य-प्रकाश की आवश्यकताएँ व दिशा भिन्न होती है। ठण्डे देशों में धूप अधिक मात्रा में तथा अधिक समय तक आवश्यक है, गर्म देशों में कम। इसी से इस सम्बन्ध में कोई विशेष निश्चित

नियम नहीं बनाया जा सकता। किन्तु यह स्पष्ट है कि प्रत्येक गृह के हर भाग में दिन में किसी न किसी समय कुछ काल के लिए धूप का आना स्वास्थ्य के लिए नितान्त आवश्यक है। दरवाजे व खिड़कियों की दिशा या मकान का सामना किस ओर हो, इसका निर्णय इस बात को ध्यान में रखकर ही करना चाहिए। साथ ही वातावरण की अन्य स्थितियों को भी ध्यान में रखकर दिशा का निश्चय करना चाहिए। उदाहरणार्थ, यह आवश्यक है कि यदि गृह नदी, समुद्र या झील के किनारे हों तो मकान के कुछ दरवाजे व खिड़कियाँ उस ओर अवश्य हों। इसके विपरीत बड़े-बड़े वृक्षों या इमारतों की ओर या पीछे मकान के दरवाजे व खिड़की रहने से प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द नहीं उठाया जा सकता।

३. बनावट

उत्तम स्थिति, वातावरण एवं भूमि चुनकर तथा उचित दिशा निश्चित करके भी मकान सदैव उत्तम ही नहीं बन जाता। उसके लिए बुद्धिमान इंजीनियर एवं उचित नक्शे की आवश्यकता है, साथ ही उपयुक्त सामग्री एवं कारीगर की भी। मकान बनाने की कला तथा विज्ञान का पूर्ण ज्ञान जनसाधारण को होना सम्भव नहीं, परन्तु बनावट सम्बन्धी ऐसी कुछ मोटी-मोटी बातें हैं जिनकी मकान बनवाते अथवा किराये पर लेते समय जानकारी से निस्सन्देह सब लाभ उठा सकते हैं। किसी मकान की बनावट के सम्बन्ध में सुन्दरता, सुदृढ़ता, सुविधा तथा स्वास्थ्य इन सभी दृष्टिकोणों से मकान के विभिन्न भागों की बनावट की निम्न बातें जाननी आवश्यक हैं

(१) नींव और आधार—नींव गहरी और चौड़ी होनी चाहिए तथा सीमेंट व कंक्रीट जैसे पदार्थ से बनी होनी चाहिए। इसके ऊपर दीवार के लिए उससे कम चौड़ा ईंट या कंक्रीट का लगभग $\frac{1}{2}$ मीटर ऊँचा आधार रहना चाहिए। इस आधार को सीलन से बचाने के लिए ऐसे पदार्थ का प्रयोग करना चाहिए जिससे जल न रिस सके।

(२) मंच—आधार के ऊपर $\frac{1}{2}$ से $\frac{3}{4}$ मीटर की ऊँचाई तक जो दीवारें बनती हैं वे भीतर की ओर से फर्श की ऊँचाई अर्थात् कुर्सी या मंच (Plinth) का स्थान देती हैं। यह मंच बरसात के पानी या बाढ़ से ऊँचा होना आवश्यक है तथा फर्श की ऊपरी सतह सीमेन्ट, कंक्रीट, टाइल, पत्थर की सिल या ईंटों की बनी होनी चाहिए ताकि पानी न सोखे।

(३) दीवारें—दीवारें चाहे पत्थर की हों या ईंटों की, इनकी ऊँचाई कम से कम $3\frac{1}{2}$ मीटर होनी चाहिए। अधिकतर दीवारें ईंटों की ही बनाई जाती हैं। यह स्पष्ट ही है कि एक सुन्दर एवं सुदृढ़ मकान के लिए पूर्णतया पकी हुई एक-सी नाप तथा आकार की ईंटों का प्रयोग किया जाना चाहिए। ईंटों पर चूने-गारे का पलस्तर हो जिस पर सफेदी या रंग किया जा सकता है या इच्छानुसार घर के बाहर की दीवारों की ईंटों को बेतुका ही छोड़ सकते हैं। अन्दर की दीवारें रंगने या पोतने से बचाने की

सुन्दरता व स्वच्छता बढ़ती है तथा सीलन और उनकी हानियों से भी बचाव रहता है।

(४) छत—कमरों की छत व ऊँचाई कमरों की दीवारों से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। पर्याप्त वायु-स्थान के लिए कमरे की छत काफी ऊँची होनी चाहिए। ऊँची छत के होने से कमरा ग्रीष्मकाल में ठण्डा भी रहता है, इसलिए गर्म स्थानों में छत विशेषतः ऊँची रहती है।

छत कई प्रकार की हो सकती हैं—लकड़ी की कड़ियो और छप्परों की, स्लेट अथवा सीमेण्ट की और टीन की चादरों की, ईंटों और पाटियों की तथा कंक्रीट और सीमेण्ट आदि की। यह स्पष्ट है कि फूस के छप्पर या टीन की चादरों की छत सुविधा तथा स्वास्थ्य दोनों की दृष्टि से ही सन्तोषजनक न होगी। अन्दर तथा बाहर की (ceiling and roof) दोनों ही के विचार से पक्की सीमेण्ट अथवा कंक्रीट की छतें ही सर्वोत्तम रहती हैं, क्योंकि फूस की छत में प्रथम तो आग लगने का भय होता है; दूसरे उनमें चूहे आदि अपना घर बना लेते हैं जो स्वच्छता तथा छत की दृढ़ता दोनों के ही विचार से आपत्तिजनक है। टीन की चादर गर्मी में बहुत तप जाती है जिसके कारण सम्पूर्ण गृह का तापमान असह्य हो जाता है। जब छत टाइलों से बनी है तो ऊपर तथा भीतर की छतों के बीच यथेष्ठ वायु-स्थान रहने से घर ठण्डा रहता है। ऊपर की छत ढलवाँ होने से वर्षा का पानी सरलता तथा शीघ्रता से बह जाता है, किन्तु ढलवाँ छत में समतल जल के समान गर्मी के मौसम में बैठने व सोने की सुविधा नहीं रहती। यदि ऊपर की छत समतल हो तो पानी के बहने के लिए उचित नालियाँ तथा चारों ओर रक्षार्थ पर्याप्त ऊँची मुंडेर होनी चाहिए।

४. वायु-आवागमन का प्रबन्ध

शुद्ध वायु हमारे स्वास्थ्य के लिए नितान्त आवश्यक है। मकान में वायु के आवागमन तथा प्रकाश का समुचित प्रबन्ध होना चाहिए। हम जिस वायु को अपनी श्वास-प्रक्रिया द्वारा बाहर निकालते हैं वह अस्वास्थ्यकर होती है। यदि एक कमरे में वायु-गमन की व्यवस्था न हो तथा हम बार-बार उसी मुँह से निकली वायु का निरन्तर सेवन करते रहें तो वह मानव-शरीर में अनेक रोग उत्पन्न कर सकती है तथा जीना दूभर हो जाय। वायु में विसरण का गुण होता है, इसलिए मुँह से निकली वायु जो कि शरीर के ताप एवं अशुद्धियों के कारण गरम होती है, हल्की होकर ऊपर उठती है। उस वायु के स्थान को लेने के लिए ताजा वायु की आवश्यकता होती है। वह वायु अपेक्षाकृत भारी होती है।

इसके अतिरिक्त वायु में प्रवाह होता है जिसके कारण एक दरवाजे या खिड़की से प्रविष्ट वायु अपने प्रवाह के साथ विपरीत दिशा में बने दरवाजे से या खिड़की से कमरे की अशुद्धियों को बाहर निकाल देती है।

एक उत्तम मकान के प्रत्येक कमरे में प्रकाश तथा वायु के विचार से पर्याप्त

दरवाजे, खिड़कियाँ एवं रोशनदान होने आवश्यक हैं। गरम देशों में यह अत्यन्त आवश्यक है कि वायु के प्रवाह के लिए दरवाजे व खिड़की आमने-सामने हों। दूषित वायु के निकास के लिए रोशनदान छत के निकट होना चाहिए व उसमें ऐसा प्रबन्ध होना चाहिए कि यह इच्छानुसार खोला व बन्द किया जा सके। गन्दी हवा के बाहर निकालने में चिमनी भी विशेष रूप से सहायक होती है। मकान के अन्य भागों के समान ही दरवाजों, खिड़कियों आदि का सुन्दर एवं सुदृढ़ होना भी आवश्यक है। प्रायः ये लकड़ी के बने होते हैं और इनमें काँच भी लगा होता है। कभी-कभी ऐसे दरवाजों और खिड़कियों के साथ ही जाली के दरवाजे-खिड़की भी लगाये जाते हैं जो कमरे को मच्छर-मक्खियों से सुरक्षित रखते हैं। प्रकाश के विचार से पाश्चात्य देशों में खिड़कियाँ प्रायः बहुत बड़ी, चौड़ी और काँचदार होती हैं। सुरक्षा के विचार से बड़ी-बड़ी खिड़कियों में सलाखें अथवा लोहे की ग्रीलें (grills) हों तो अच्छा है।

दरवाजे-खिड़कियाँ यदि अच्छी सूखी लकड़ी के न बने हों तो वर्षा ऋतु में लकड़ी के फूल जाने से बन्द होने और खुलने में विशेष कष्ट होता है। दरवाजे यदि मजबूत न हों या ठीक से बन्द न होते हों तो गृह पूर्णतः सुरक्षित नहीं रहता। इसलिये मकान में सब प्रकार से उपयुक्त खिड़की-दरवाजों का होना भी महत्त्वपूर्ण है।

५. मल-मूत्र व गन्दे जल के निकास का प्रबन्ध

घर की नालियाँ तथा शौच-स्थान आदि का उचित अथवा अनुचित प्रबन्ध भी स्वास्थ्य पर अपना प्रभाव डालता है। यदि घर में फ्लश अर्थात् पानी से मल बहाने का प्रबन्ध है, और यदि घर में अन्दर ही अन्दर नालियों द्वारा मल-मूत्र तथा गन्दा पानी बहने की सुविधा है तब तो सर्वश्रेष्ठ है ही, नहीं तो घर चुनने से पूर्व स्नान-गृह, रसोई-घर तथा शौच-गृह सब जगहों के पानी निकलने के लिये जो नालियाँ हों उनका प्रवाह देख लेना चाहिए। शौच-गृह से मलनिवारण का उचित प्रबन्ध भी बहुत महत्त्वपूर्ण विषय है जिसको मकान चुनते समय सदैव ध्यान में रखना चाहिए।

मल-मूत्र व गन्दे पानी आदि के निकास की उचित व्यवस्था नहीं होगी तो इनकी गन्दगी व दूषित गैसें वायु में मिश्रित हो वातावरण को दुर्गन्ध एवं रोगयुक्त बना देंगी। फलस्वरूप व्यक्तियों को अनेक रोगों जैसे पेचिश, अतिसार, हैजा आदि का शिकार होना पड़ेगा। इन रोगों को फैलने से रोकने के लिए शौचालय व मूत्रालय पक्के हों उनमें वायु के आवागमन की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। उनका फर्श आदि पक्का होना चाहिये ताकि विसर्जित मल एकत्रित न हो सके। नालियाँ पक्की व ढालू होनी चाहिए।

६. जल का प्रबन्ध

आज जन-साधारण नल से जल प्राप्त करने का अभ्यस्त हो गया है। फिर हम यह भी जानते हैं कि नल से प्राप्त पानी अन्य साधनों से प्राप्त जल से अधिक स्वच्छ तथा स्वास्थ्यकर होता है। इसलिए ऐसा मकान लेने से हिचकना, जिसमें नल

का कुछ भी प्रवन्ध न हो हमारे लिए स्वाभाविक ही है। किन्तु जहाँ शहरों के मकानों में नल तथा साथ ही प्रायः जल एकत्र करने के लिये हौज व टंकी भी प्राप्त हो सकते हैं, वहाँ देहातों में आज भी अधिकतर कुएँ या नदी से पानी प्राप्त किया जाता है। मकान के अन्दर नल की अनुपस्थिति में, उसके निकट शुद्ध पानी के नल, पम्प या अन्य किसी उचित साधन का होना बहुत ही जरूरी है।

७. बिजली: गैस आदि का प्रवन्ध

रात्रि में प्रकाश व ग्रीष्म ऋतु में पंखा चलाने के लिए मकान में बिजली का होना एक सौभाग्य है। बिजली से सफाई तथा सुविधा दोनों प्राप्त होते हैं। कुछ नगरों में प्रकाश के अतिरिक्त अन्य कामों, जैसे खाना पकाने, कपड़े धोने व इस्त्री करने तथा रेडियो आदि चलाने के लिये सस्ती बिजली उपलब्ध है। उसके प्रयोग से समय तथा धन दोनों की ही पर्याप्त बचत होती है।

बिजली के समान ही गैस का प्रयोग भी गृह के कामों में समय व शक्ति बचाता है। किन्तु यह अभी तक केवल थोड़े बड़े-बड़े शहरों में ही उपलब्ध है। इससे रसोई घर में ईंधन की सब समस्या दूर हो जाती है, सफाई रहती है और समय बचता है।

परिवार की आवश्यकताओं की दृष्टि से

मकान का अन्य प्रमुख कार्य हमारी बुनियादी व मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। प्रमुख बुनियादी आवश्यकताएँ हैं—आश्रय, भोजन, स्वास्थ्य, स्वच्छता, तथा एकान्तता, अभिव्यंजकता। मकान की योजना को बनाने का आधार उसमें सम्पन्न की जाने वाली खाना पकाने, खाने, सोने, स्नान करने, वस्त्र पहनने, सफाई करने, [illegible] धोने तथा वस्तुओं को भण्डारघर में रखने आदि आवश्यक क्रियाएँ ही होती हैं। इ[illegible] अतिरिक्त कुछ घर में कुछ सांस्कृतिक महत्त्व के क्रिया-कलाप भी किये जाते [illegible] इनका भी घरों के निर्माण की योजना बनाने में ध्यान रखना पड़ता है। प्रमु[illegible] तिक क्रियाकलाप हैं—बातचीत करना, पढ़ना, लिखना, खेलना, मनोरंजन [illegible]ना, संगीत सुनना, शौक पूरा करना तथा कार्य करना।

मकान की आवश्यकताओं के निर्धारण में परिवार का सामाजिक और आर्थिक स्तर भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालता है। नौकरी करने वाले का धन्धा उसके परिवार की आवश्यकताओं का संकेतक होता है। उदाहरणार्थ चिकित्सक, मन्त्री, शिक्षक, अभिनेता, लेखक, मैकेनिक, बढ़ई, कृषक, सब्जी व फल बेचने वाले के परिवारों को रहने के लिये भिन्न-भिन्न आवासीय स्थान की आवश्यकता होती है। उनके खान-पान, मनोरंजन, शौक भिन्न होते। कुछ के लिए बड़े कमरों की आवश्यकता होती है तो कुछ को अतिरिक्त कमरे चाहिए। उदाहरण के लिए मन्त्री, शिक्षक तथा लेखक के लिए पुस्तकों के लिए, अध्ययन अथवा कार्यालय के लिये अतिरिक्त कमरों की आवश्यकता

होती है । मकान की योजना करते समय आवश्यकताओं का विश्लेषण भी आवश्यक है ।

मकान का आयोजन करते समय निश्चित किया जाने वाला एक महत्त्वपूर्ण कारण इस पर व्यय की जाने वाली धनराशि है । बजट बनाने वाले अनुभवी व्यक्ति का कथन है कि आश्रय या मकान पर किसी व्यक्ति की आय के चौथाई भाग से अधिक धनराशि व्यय नहीं करनी चाहिए चाहे यह राशि किराये के रूप में व्यय की जाये या स्वयं का मकान बनवाने के लिये व्यय की जाए । साधारणतः तीन या चार वर्ष की आय मकान पर व्यय की जाती है । किसी मकान को बनवाने में उससे मिलने वाले मासिक किराए का अधिकतम १२० गुना व्यय करना चाहिए ।

मकान बनाने के लिए हमारे पास कितना धन है यह तथ्य ही मकान की योजना व उसके माप का निर्धारण करता है ।

(१) अभिव्यंजकता (Expressiveness)—मकान बनाने की योजना बनाने से पूर्व उसकी अभिव्यंजकता का निर्धारण परमावश्यक है । भावी मकान की भावना और व्यक्तित्व का निर्धारण मकान की रचना प्रारम्भ करने से पूर्व परिवार के सभी सदस्यों की राय से कर लेना चाहिए । किसी परिवार की विशेषताएँ उस आधारीय विचार या चित्तवृत्ति की तर्कसंगतता एवं युक्तियुक्तता का निर्माण करती है जिसे उस मकान में व्यक्त करना है । एक परिवार में विविध प्रकार के व्यक्तित्व, रुचि एवं क्रियाएँ होती हैं इसलिए सर्व सम्मत सामान्य व्यक्तित्व के निर्धारण करने का कार्य कठिन होता है ।

व्यक्तित्व के निर्धारण की प्रक्रिया की एक विधि यह है कि परिवार के प्रत्येक सदस्य को स्वयं अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण करके ऐसे विशेषणों की जो उनकी विशेषताओं को व्यक्त करते हों सूची बना लेनी चाहिए । परिवार के सदस्यों को उन विशेषताओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जो सभी सदस्यों या अधिकांश सदस्यों की सूची में बार-बार आए हो । विचार-विमर्श करने के बाद एक 'सामूहिक व्यक्तित्व' के स्वरूप को निर्धारित किया जा सकता है । इस विधि से निर्धारित कुछ व्यक्तित्व निम्नलिखित हो सकते हैं ।

१. प्रबल, यथार्थवादी, व्यावहारिक, वास्तविकता पर विश्वास करने वाले, स्वतन्त्र ।
२. चतुर, वाचाल, कल्पना प्रधान, उत्साहयुक्त, मैत्रीपूर्ण ।
३. औपचारिक, आत्मसंयमी, श्रेष्ठ, हाइवादी, धार्मिक ।
४. नियम परायण, शान्त, आत्मनिर्भर, एकान्त-प्रिय, अध्ययनशील ।

आत्म-विश्लेषण करने के पश्चात् परिवार के सदस्यों को सामूहिक रूप से अपने भावी मकान की विशेपताओं का निर्धारण करना चाहिए । यही रूप में वह विचार या विषय वस्तु बनेगा जिसका अनुगमन मकान बनाते समय व उसकी सज्जा करते समय एक पथप्रदर्शक के रूप में करना चाहिए ।

(२) एकान्तता (Privacy)—यद्यपि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और वह सदैव अन्य व्यक्तियों के साथ रहना पसन्द करता है फिर भी कुछ ऐसे क्षण प्रतिदिन उसके जीवन में आते हैं जबकि वह एकान्त में रहना चाहता है। उसे अध्ययन करने, चिन्तन और मनन करने तथा विश्राम करने के लिए एकान्त स्थान की आवश्यकता होती है। अतः उत्तम मकान में घर के सभी व्यक्तियों के लिए एकान्तकाल का उपयोग करने के लिए पृथक कमरा होना चाहिए। मकान अधिक भीड़-भाड़ पूर्ण व शोरगुल का केन्द्र नहीं होना चाहिए। घर के प्रत्येक सदस्य के लिए पृथक-पृथक कमरा हो तो अच्छा है। मकान में खाना पकाने, सामान रखने तथा बैठक के लिए अलग कमरे होने चाहिए।

(३) परिवार के सदस्यों की संख्या के अनुकूल—यदि मकान छोटा है और उसमें रहने वाले सदस्यों की संख्या अधिक है तो सदस्यों को अधिक आराम नहीं मिलेगा। मकान परिवार के सदस्यों की आवश्यकता के अनुकूल हो। जिस घर में पढ़ने वाले लड़के हों वहाँ उनके अध्ययन के लिए पृथक कमरे होने चाहिए। यदि परिवार में एक से अधिक दम्पत्ति हों तो प्रत्येक दम्पत्ति के लिए पृथक-पृथक कमरा होना चाहिए। यदि घर में छोटे-छोटे बच्चे हैं तो उनके खेलने कूदने के लिये पर्याप्त स्थान होना चाहिये।

(४) कमरों का पारस्परिक सम्बन्ध—उपयोगिता की दृष्टि से परम्परागत मकानों में कमरों का पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाता है। स्वाभाविक है कि शयनकक्ष स्नान गृह से तथा रसोईघर भोजन कक्ष से लगा हुआ हो। वर्तमान समय की क्रियाओं, सुविधाओं और ज्ञान के आधार पर परम्परागत व्यवस्था में परिवर्तन कर लेना चाहिए।

(५) स्थान की निरन्तरता—प्राचीनकाल की कमरों की पृथक-पृथक व्यवस्था का स्थान आजकल तथा कथित खुली योजना (Open Planning) ने ले लिया है। स्थान की निरन्तरता का बोध उत्पन्न करने के लिए पार्टीशन को यथासम्भव समाप्त कर दिया जाता है। इस प्रकार स्थान कम होते हुए भी अधिक स्थान का प्रभाव मकान में उत्पन्न कर दिया जाता है। क्रियात्मक क्षेत्रों का पृथककरण तीन फीट ऊँची दीवार से किया जाना उचित होता है। सीढ़ियाँ बिल्कुल खुली होनी चाहिए। केवल रसोईघर, स्नानगृह और शयनकक्ष पूर्णतः पृथक होने चाहिए।

घर के अन्दर की जगह को बढ़ी हुई व फैली हुई अनुभव करने के लिए बाहर के स्थान को बाह्य दीवार पर शीशे के बड़े दरवाजे व खिड़की लगाकर कमरे के अन्दर की जगह में जोड़ा जा सकता है।

(६) सुगमता से मकान में आना-जाना हो (Ease of Circulation)—आने-जाने की सुगमता अधिकांशतः कमरों की स्थिति पर निर्भर करती है। मकान के किसी भी भाग में अनावश्यक रूप से चले बिना पहुँचना सम्भव होना चाहिए। रसोईघर और

भोजन कक्ष में अधिक लोगों का आना-जाना रहना है। इसके बाद शयन कक्ष व स्नान-गृह के मध्य जाने-आने का क्रम अधिक रहता है। मकान में एक अन्दर का हॉल होने से आने-जाने की समस्या हल हो जाती है। उस हॉल मे सभी महत्वपूर्ण कमरों के दरवाजे खुलने चाहिए।

आने-जाने की प्रक्रिया का सम्बन्ध दरवाजों की स्थिति से भी है। दरवाजे से निकलकर व्यक्ति जिस दिशा में मुड़ता है उस दिशा के विपरीत दिशा में दरवाजे के किवाड़ मुड़ने चाहिए। दरवाजों के पास फर्नीचर नहीं लगाना चाहिए।

(७) परिवर्तन शीलता (Flexibility)—कमरों की योजना बनाते समय उनके उपयोग की परिवर्तनशीलता की ओर विशेषरूप से ध्यान देना चाहिए। आजकल के सघनित घरो में बहु-प्रयोजनशील कमरों का होना आवश्यक है। अतीत के लोगों की अपेक्षा आज का मानव,घरों का उपयोग भिन्न प्रकार से करता है। उदाहरणार्थ भोजन; अध्ययन कक्ष, बैठक या बाहर बैठकर किया जा सकता है। भोजन कक्ष के एक भाग को मनोरंजन क्षेत्र या अध्ययन या सिलाई क्षेत्र के रूप में भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

(८) मकान का क्षेत्रों में विभाजन—कमरों की व्यवस्था करते समय इस तथ्य को अवश्य ही ध्यान मे रखना चाहिए कि शोरयुक्त क्रिया-कलापों का क्षेत्र शान्त वातावरण में की जाने वाली क्रियाओं के क्षेत्र से बिल्कुल पृथक होना चाहिए। विभिन्न आयु और रुचियों वाले सदस्यो के परिवार में विविध मनोरंजन के क्षेत्रो की आवश्यकता होती है। यदि घर में खेलने के लिए पृथक कक्ष नहीं हो तो मुख्य बैठक के कमरे में ही खेल आदि मनोरंजन की व्यवस्था की जा सकती है, परन्तु जो व्यक्ति बातचीत करना चाहे या अध्ययन करना चाहे या पढ़ना चाहे तो उनके लिए बराबर वाले कमरे में बैठने की व्यवस्था कर देनी चाहिए। बैठक का कमरा आमतौर पर आराम करने के लिए होता है यदि जो लोग अधिक शोरयुक्त क्रिया या शान्तपूर्ण क्रिया करना चाहते हैं उनके लिए अन्यत्र पृथक-पृथक कमरों में व्यवस्था कर देनी चाहिए।

(९) स्थान की मितव्ययता—मकान की योजना का प्रमुख उद्देश्य स्थान की मितव्ययता है क्योंकि आधुनिक घरो में अनावश्यक स्थान बिल्कुल भी नही होना। आजकल इस तथ्य की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है कि घर में एक कमरे से दूसरे कमरे तक जाने की प्रक्रिया को कम से कम कर दिया जाए तथा उपलब्ध स्थान का उपयोग अधिकतम ढंग से किया जाए।

(१०) बाह्य स्वरूप—मकान की योजना बनाते समय उसके बाह्य स्वरूप के सम्बन्ध में भी विचार कर लेना चाहिए। जब तक मकान के बाह्य स्वरूप की योजना न बनाली जाए तब तक पहली मंजिल की योजना अन्तिम रूप से नहीं बनाई जा सकती। प्रारम्भिक योजनाएँ बनाते समय ही खिड़कियों को साथ-साथ ही समूहीकृत करें। कमरे उपयुक्त समानुपात में हों। वर्गाकार और लम्बे व तंग कमरे नहीं बनाए जाएँ।

(११) **मकान का वातावरण सदस्यों की व्यक्तिगत रुचि के अनुकूल हो**—मकान की सुसज्जा और व्यवस्था का भी व्यक्ति के जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। मकान की व्यवस्था और सज्जा का भार प्रमुखतः गृहिणी पर होता है। उसे परिवार के सभी सदस्यों की रुचि से भली प्रकार परिचित होना चाहिए। सभी की रुचि का ध्यान रखते हुई बैठक, सोने का कमरा, अध्ययन कक्ष, फर्नीचर आदि की सुसज्जा करनी चाहिए। मकान का वातावरण स्वच्छ, सुन्दर व आकर्षक होना चाहिए। मकान की सुव्यवस्था व सुसज्जा में परिवार के सभी सदस्यों का वांछित सहयोग गृहिणी को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। बच्चों को भी प्रारम्भ से ऐसी शिक्षा दी जाए कि वे अपनी वस्तुओं को व्यवस्थित ढङ्ग से यथास्थान रखें व मकान को गन्दा न करें।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह और मकान के अन्तर को स्पष्ट कीजिए।
२. अच्छे व आरामदायक मकान की योजना बनाते समय किन-किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?
३. मकान बनाने के लिए उत्तम स्थान की विशेषताएँ बताइए।
४. एक मध्यम स्तर के परिवार के लिए मकान में किन-किन सुविधाओं का होना आवश्यक है ?

अध्याय १६

मकान में कमरों का विभाजन

उचित विभाजन का महत्व—अपनी परिस्थिति व आर्थिक क्षमतानुसार भिन्न-भिन्न प्रकार के मकान उपलब्ध होते हैं। यदि आवश्यकताओं की अपेक्षा मकान छोटा है तो चतुर गृहिणी ऐसे मकान की भी ऐसी सुव्यवस्था व विभाजन कर सकती है कि परिवार की विविध आवश्यकताओं की पूर्ति सुचारु रूप से हो सके।

एक आधुनिक गृह मे परिवार की विभिन्न शारीरिक, मानसिक एव सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उचित स्थान प्राप्त होना अत्यन्त आवश्यक है। पूर्ण योजनानुसार एक सर्व सुविधामय मकान में, जिसमे एक विशेष परिवार की प्रत्येक आवश्यकता के लिये अलग कमरा व स्थान प्राप्त है गृह का विभाजन व व्यवस्था करना कठिन नही। किन्तु साधारणत· मकान एक विशेष परिवार की आवश्यकताओं को ध्यान मे रखकर तो बनते नही; किराये पर लिये हुए मकान, जायदाद में मिले हुए मकान, बने बनाए खरीदे हुए मकान या आर्थिक बन्धनों के कारण आवश्यकता से छोटे लिए हुए मकान, कमरो के विभाजन तथा व्यवस्था की जटिल समस्या पैदा करते हैं। ऐसी परिस्थिति में परिवार की मुख्य आवश्यकताओं के लिए विचारपूर्वक स्थान निश्चित न होने से परिवार के सदस्यों को असुविधा होती है। फलस्वरूप बहुधा गृहस्थी का वातावरण सर्वथा असन्तोषमय हो जाता है, और घर से सुख-शान्ति का लोप हो जाता है। इसीलिए घर तथा कमरो के विभाजन के विषय को विशेष महत्व देने की आवश्यकता है।

परिस्थिति-अनुसार विभिन्न विभाजन—परिवारों की परिस्थितियों में अन्तर होने के कारण गृह विभाजन करने के लिए निश्चित नियमो का निर्धारित करना तो सम्भव नही है, किन्तु अग्रिम बातों को ध्यान में रखने से विभाजन मे सहायता अवश्य मिलेगी—

१—घर के प्रत्येक सदस्य की आवश्यक सुविधाएँ तथा अधिकतम हित।

२—उपलब्ध स्थान का पूर्ण उपयोग।

परिस्थिति के अनुसार एक ही परिवार के लिए विभिन्न मकानों के विभाजन में अन्तर होगा, तथा विभिन्न परिवारों के लिए एक ही मकान का विभाजन भिन्न होगा। प्रत्येक गृहस्थी की परिस्थितियाँ भिन्न होने से एक मकान का सदा समान विभाजन उचित नहीं। उदाहरणार्थ दो समान सदस्य-संख्या तथा समान आर्थिक व सामाजिक स्थिति वाले परिवार लीजिए। यदि एक परिवार किसी छोटे शहर में रहता है, तथा दूसरा बम्बई जैसे बड़े शहर में, तो यह स्पष्ट है कि बम्बई में छोटे शहर की अपेक्षा बहुत छोटा मकान प्राप्त होगा। अतः दोनों के विभाजन में अन्तर होगा।

इसी प्रकार दो ऐसे परिवार लीजिए जो समान आर्थिक-सामाजिक स्थिति के हैं और समान घरों में रहते हैं, किन्तु यदि उनके सदस्यों की संख्या, आयु तथा आवश्यकताओं में भेद है तो घर का समान विभाजन सुविधापूर्ण न होगा।

अब दो ऐसे परिवार लें जो एक-से मकान में रहते हैं, जिनके सदस्यों की संख्या भी बराबर है किन्तु जिनकी आर्थिक-सामाजिक स्थिति भिन्न है। उनके रहन-सहन का ढंग समान होने से विभाजन में कुछ-न-कुछ अन्तर आवश्यक है। कुछ भी हो, मकान-विभाजन में परिवार के विभिन्न सदस्यों के अधिक से अधिक हित एवं सुविधा के साथ ही सुन्दर व्यवस्था को भी पूर्ण महत्व मिलना चाहिए।

भारत में आज भी करोड़ों झोंपड़ियाँ ऐसी हैं जिनमें एक ही कमरे में पूरा परिवार शरण पाता है तथा जिनमें स्नान, रसोई या शौच का कुछ भी प्रबन्ध नहीं है। केवल दरिद्रता ही, मकानों की शोचनीय दशा का कारण नहीं है, अज्ञान तथा रहन-सहन का निम्न स्तर भी इसके मुख्य कारण हैं। प्रत्येक सभ्य व्यक्ति व सभ्य परिवार के लिए मकान में शौच-गृह, स्नानागार तथा रसोई घर आदि का होना आवश्यक है। नगरों के मकानों में प्रायः यह स्थान अवश्य रहते हैं। मकानों में ऐसे विशेष भागों के अतिरिक्त अन्य कुछ कमरे, दालान व बराण्डे आदि ऐसे भी होते हैं जिनका प्रयोग परिस्थिति-अनुसार विभिन्न रूपों में हो सकता है। वास्तव में कमरों के विभाजन की समस्या ऐसी आवश्यकताओं से ही विशेष सम्बन्ध रखती है जिनकी पूर्ति परिस्थिति-अनुसार गृह के विभिन्न भागों में हो सके। खाना-पीना, मिलना-जुलना, पढ़ना-लिखना, खेलना-कूदना एवं सोना तथा विश्राम करना ऐसी ही आवश्यकताएँ हैं। इन कार्यों के लिए विशेष व उचित स्थान की व्यवस्था पर नीचे विचार किया जायगा।

बैठक (Drawing Room)

प्रत्येक गृह में अवकाश के समय विश्राम व मनोरंजन के लिए तथा मित्रों व अन्य मिलने-जुलने वालों को बिठाने के लिए एक बैठक की व्यवस्था हो तो
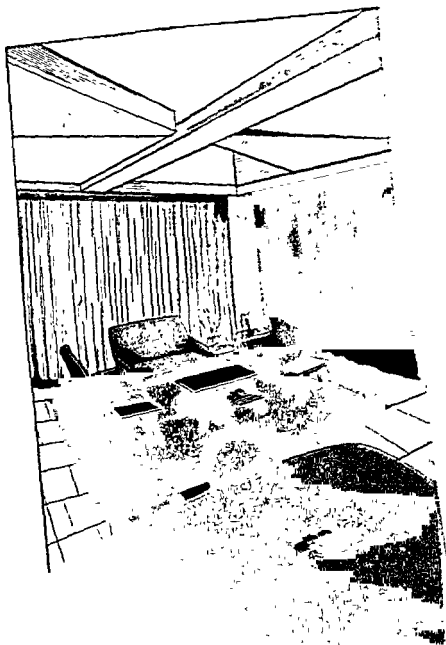
बहुत सुविधा रहती है। यह कमरा घर के प्रवेश द्वार के पास ही होना चाहिए, ताकि आगन्तुक को अन्य कमरों में से न गुजरना पड़े और वे सीधे ही बैठक में पहुँच सकें। बैठक वर्गाकार नहीं होनी चाहिए, उसकी लम्बाई और चौड़ाई का अनुपात ३ और २ होना चाहिए। इस कमरे की स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि यह घर के लिए आमरास्ते के रूप मे नही होना चाहिए। तथा इसके दरवाजे यथासम्भव एक ही सिरे पर होने चाहिए। इस कमरे को कम-से-कम दो दीवारें बाहरी हों तथा इनमें खिड़कियाँ होनी चाहिए। इस प्रकार के कमरे की व्यवस्था के लिए पूर्व से प्रशिक्षण व योजना की आवश्यकता होती है। इसमे फर्नीचर के लिए दीवार के सहारे काफी रिक्त स्थान होना चाहिए। यदि बैठक के लिए विशेष कमरा उपलब्ध न हो सके तो मकान के बाहरी बरामदे में ही उठने-बैठने का कुछ प्रबन्ध किया जा सकता है और यदि बरामदा भी सम्भव न हो तो किसी और कमरे मे सुविधानुसार बैठक की व्यवस्था करनी पड़ेगी।

बैठक

यदि घर की व्यवस्था आरामदायक एवं सन्तोषजनक करनी है तो बैठक उपयोगी व देखने में सुन्दर होनी चाहिए। यह कमरा घर के अन्य कमरों की अपेक्षा अधिक सुव्यवस्थित, सुसज्जित एवं आकार में बड़ा होना चाहिए।

मैदानी क्षेत्रो मे सर्दी के मौसम में तथा पहाड़ी क्षेत्रों में बैठक की सजीवता और सुन्दरता के लिए एक वास्तविक फाइरप्लेस का होना नितान्त आवश्यक है। इसकी स्थिति बैठक की लम्बी दीवार पर खिड़कियों के पास परन्तु दरवाजों से दूर होनी चाहिए। फायरप्लेस के पास बैठने के लिए इसके विपरीत दिशा में सोफा, कुर्सियाँ व टेबिल लैम्प होने चाहिए।

गौण बैठक (Family living Room)

जिन घरों में संयुक्त परिवार व्यवस्था है, अर्थात् जहाँ परिवारीजनों की संख्या अधिक है तथा जहाँ बैठक का कमरा छोटा पड़ता है वहाँ गौण बैठक अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होती है। इस कमरे की सज्जा भी बैठक के समान की जाती है परन्तु इसमें कालीन आदि नहीं बिछाते हैं।

इस कमरे में देखने के लिए टेलीविजन, सुनने के लिए रिकार्ड प्लेयर, ताश आदि खेलने के लिए मेज़ या तख्त की, किताबों के लिए अलमारियों की एवं बैठने व आराम करने के लिए कुर्सी व तख्त की व्यवस्था होती है। इस कमरे में परिवार की स्त्रियाँ गप-शप लगा सकती हैं, सब्जी आदि काट सकती हैं; सिलाई, बुनाई आदि का कार्य कर सकती हैं। इन सब कार्यों के लिए उचित व्यवस्था का होना आवश्यक है। इस कमरे की व्यवस्था से एक लाभ यह भी है कि मुख्य बैठक का उपयोग अधिक न होने के कारण वह जल्दी गन्दी वह अव्यवस्थित नहीं होने पाती। इस कमरे का दूसरा लाभ यह भी है कि घर के बच्चे, बड़े, वृद्ध सभी एक साथ यहाँ बैठकर मनोरंजन कर सकते हैं।

भोजन-कक्ष (Dining Room)

खाना खाने के लिए यदि एक अच्छा हवादार कमरा अलग मिल सके तो अवश्य रखना चाहिए। यह कमरा रसोईघर के समीप होना चाहिए, जिससे गर्म खाना सुविधापूर्वक प्राप्त हो सके तथा आने-जाने में समय व शक्ति की बचत रहे। यदि यह बैठक के पास हो तो समय-समय पर आमन्त्रित जनों को खाना खिलाने में सुविधा होगी। इस कमरे के पास ही अगर एक अन्य छोटा कमरा हो तो खाने का सामानादि रखने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। यदि खाने के लिए अलग कमरा सुलभ न हो तो खाने का प्रबन्ध गृहिणी के कमरे में या भीतर के बरामदे में हो सकता है। बहुत-से घरों में खाने का प्रबन्ध प्रायः रसोईघर में ही होता है। यदि मकान में कमरों का अभाव हो, तो खाने के कमरे में ही अध्ययन तथा सिलाई आदि के कार्य का भी प्रबन्ध किया जा सकता है, क्योंकि खाने के लिए यह कमरा थोड़े समय ही प्रयोग में आता है। यदि स्थान के अभाव के कारण खाने का कोई कमरा नहीं बन सकता और बराण्डे में भी मेज, कुर्सियाँ रखने का पर्याप्त स्थान नहीं है तो वहाँ पर खुलने, बन्द होने वाली कुर्सियाँ, मेज प्रयोग में लायी जा सकती हैं। कुछ भी हो, इस बात का सदा ध्यान रहे कि खाना खाने का स्थान स्वच्छ और मक्खियों से सुरक्षित हो।

भोजनकक्ष में फर्श से लेकर छत तक पूरी दीवार के सहारे बर्तन आदि संग्रह करने के लिए अलमारी होनी चाहिए। चलने की बचत की दृष्टि से रसोईघर व भोजनकक्ष के मध्य की दीवार में अलमारी व शैल्फ बने होने चाहिए। इनके दरवाजे दोनों कमरों में खुलने चाहिए।

यदि भोजनकक्ष बड़ा हो तो उसमें दो मेजों की व्यवस्था की जा सकती है। एक बड़ी मेज होनी चाहिए। इसका उपयोग विशेष अवसरों पर करना चाहिए। इसके अतिरिक्त एक-दो लोगों अथवा बच्चों को भोजन करने के लिए छोटी मेज होनी चाहिए। यदि यह मेज फोल्डिंग हो या दीवार के सहारे फोल्ड हो सके तो अच्छा है।

शयन-कक्ष (Bed Room)

भारत में अधिकतर ग्रीष्म ऋतु में आँगन, अहाता या घर की छत सोने के काम आती है। किन्तु शीतकाल में तथा ठण्डे स्थानों में शयन-कक्ष की आवश्यकता होती है। यह कमरा शोरगुल से दूर हो, हवादार तथा प्रकाशमय होना चाहिए। यदि दरवाजा और खिड़कियाँ पूर्व दिशा की ओर हैं तो प्रातःकाल की सूर्य-किरणें कमरे में प्रकाश कर सकेंगी। शयन-कक्ष में फ्रौस सम्वातन होना चाहिए, ताकि पर्याप्त वायु उसमें जा सके। इस व्यवस्था से सूर्य के डूबते समय पर्याप्त वायु कमरे में आ सकेगी और कमरा शीघ्र ही ठण्डा हो सकेगा।
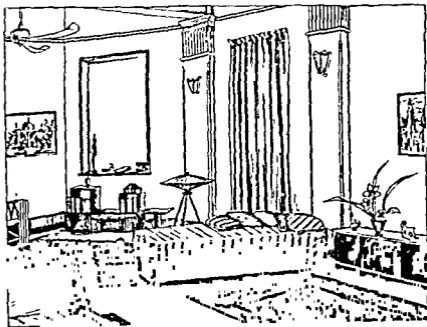
शयन कक्ष

घर की योजना को आकर्षक बनाने के लिए शयन-कक्ष विभिन्न आकृति व व आकार के होने चाहिये। आधुनिक घरों में स्थानाभाव के कारण शयन-कक्ष के नाप में पर्याप्त कमी कर दी गई है।

शयन-कक्ष में दरवाजे व खिड़कियों की स्थिति इस प्रकार की होनी चाहिए कि फर्नीचर सुविधापूर्वक व्यवस्थित किया जा सके। बड़े नाप के शयन-कक्षों में

कम-से-कम दो चारपाई बिछाने के लिए स्थान होना चाहिये। यदि स्थान की कमी है तो एक बड़ी व एक छोटी चारपाई हो। दिन के समय या जब चारपाई उपयोग में न आये उस समय छोटी चारपाई को बड़ी के नीचे बिछा देना चाहिये।

गृहस्वामी व गृहस्वामिनी के कमरे—गृहस्वामी, गृहस्वामिनी तथा अन्य सदस्यों को अपने व्यक्तिगत काम-काज तथा सामान रखने के लिये अलग-अलग स्थान अपेक्षित होता है। अतः यदि अपने व्यक्तिगत उपयोग के लिये व अवकाश के समय विश्राम के लिये गृहस्वामी व गृहस्वामिनी को भी अलग-अलग कमरे प्राप्त हो सकें तो विशेष सुविधा रहती है। स्थान के अभाव में गृहस्वामी के लिखने-पढ़ने व गृहस्वामिनी की सिलाई आदि के काम की व्यवस्था बैठक व खानपान-गृह में ही की जा सकती है। कपड़े बदलने तथा शृङ्गार करने एवं सन्दूक, ट्रंक, सूटकेस, कपड़ों की अल्मारी आदि रखने का प्रबन्ध शयन-कक्ष में हो सकता है।

बालकों के कक्ष—यदि पढ़ने वाले बच्चों को एक अलग कमरा सोने, रहने तथा पढ़ने के लिये मिल जाय तो उन्हें बहुत सुविधा होगी। अथवा सोने और रहने के लिये अलग तथा पढ़ने-लिखने के लिये अलग कमरा भी ठीक रहता है। स्थानाभाव
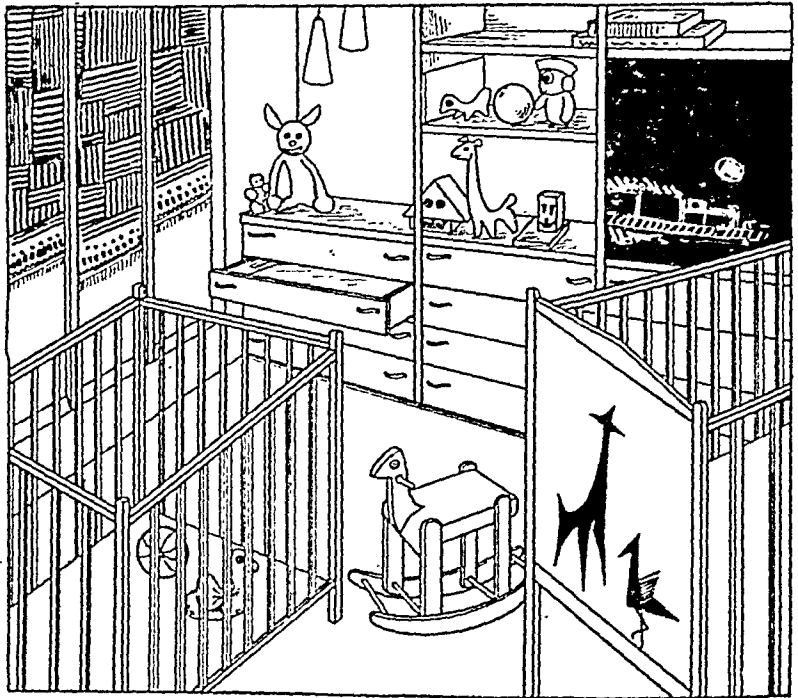
खेलने का कमरा

हो तो पढ़ने का प्रबन्ध बैठक या शयनगृह में जो साधारणतः रात में ही प्रयोग में आता है, जहाँ का वातावरण शान्त है, एक ओर हो सकता है। छोटे बालकों के लिये खेलने का स्थान उतना ही आवश्यक है जितना पढ़ने वाले बालकों के लिये पढ़ने का। एक अलग कमरा या एक कमरे या बरामदे का कुछ भाग बच्चों के खेलने के लिये निर्धारित कर देना चाहिये, ताकि वहाँ निर्विघ्न खेलने के अतिरिक्त वे अपने खिलौने व अन्य वस्तुएँ नियमित रूप से सँभालना सीखें। इससे अन्य लोगों के कामों में भी विघ्न नहीं पड़ता।

अतिथि-कक्ष—प्रत्येक गृहस्थी में समय-समय पर अतिथि या अन्य सम्बन्धी आते रहते हैं। घर में उनके रहने के लिए कोई निश्चित स्थान न होने से प्रायः बहुत असुविधा होती है। एक बड़े घर में तो सम्भवतः एक अलग कमरा मेहमानों के लिये
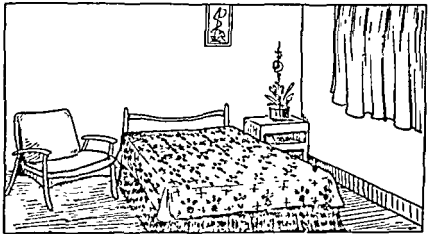
अतिथि-कक्ष

भी उपलब्ध हो सकता है, किन्तु छोटे-छोटे मकानों में बैठक या अन्य किसी कमरे को जैसी परिस्थिति हो, वैसे सोच-विचार कर मेहमान के प्रयोग के लिये तैयार किया जा सकता है।

स्नानगृह (Bathroom)

विदेशी रीति के आधार पर व्यवस्थित मकान में आजकल भारत में प्रत्येक कमरे के साथ स्नानगृह की व्यवस्था होती है। स्नानगृह में मुख्य रूप से तीन क्षेत्र होते हैं—स्नान करने का जिसमें स्नान के लिए चीनी, सीमेन्ट या मोजेक का एक बड़ा टब रहता है, दूसरे क्षेत्र में मुँह—हाथ धोने के लिए दीवार से लगी चिलमची

(wash basin) तथा तीसरे क्षेत्र में शौच के लिए विदेशी या देशी शैली की शौच सीट होती है। मल का निष्कासन जल प्रवाह (फ्लश) के द्वारा होता है।

२ मीटर × १½ मीटर नाप का स्नानगृह पर्याप्त है। स्नानगृह के अन्य आवश्यक उपकरण कपड़े टाँगने की खूँटियाँ, टब वाली दीवार में उठने के लिये छल्ला, तथा साबुन रखने के लिए डिश लगी होनी चाहिए। हाथ धोने की चिलमची की एक बगल में तौलिया टाँगने की खूँटी तथा दूसरी बगल में साबुन के घोल की शीशी लगी होनी चाहिए। दीवार में दवाइयाँ रखने के लिए एक केबीनेट तथा तौलियाँ टाँगने के लिये अलमारी होना आवश्यक है।

नौकर का कमरा—नौकर का कमरा गृह के मुख्य कमरों से दूर होना चाहिये, जिससे उसकी स्वतन्त्रता में विघ्न न पड़े। बंगलों में, जहाँ प्रायः अहाता होता है वहाँ कोई कठिनाई नहीं होती। परन्तु शहरों के मकानों में वह सचमुच एक समस्या बन जाती है। बड़े मकानों में कोई एक कोठरी नौकर के लिए अवश्य होनी चाहिये जो प्रकाश व वायु की दृष्टि से सन्तोषजनक हो।

मोटर-घर—जिन परिवारों की अपनी मोटर गाड़ी रहती है उनको एक मोटर-घर की आवश्यकता होनी स्वाभाविक ही है। ऐसी दशा में यदि सम्भव हो तो मकान में मोटर-घर की व्यवस्था अवश्य करनी चाहिये। जिन बंगलों में अहाता होता है उनमें मोटर-घर की व्यवस्था सरलता से हो सकती है।

मोटर-घर की स्थिति व बनावट के सम्बन्ध में सर्वप्रथम गाड़ी को अन्दर ले जाने व बाहर निकालने की सुविधा को ध्यान में रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त मोटर को साफ करते समय उसकी धुलाई इत्यादि के पानी के निकास का भी सुचारु रूप से प्रबन्ध होना चाहिए।

गाय-भैंस के लिए स्थान—कुछ लोग अपनी निजी गाय-भैंस आदि रखना पसन्द करते हैं। इनके लिये भी विशेष स्थान का प्रबन्ध होना आवश्यक है। यह स्थान भी हवादार व सीलन से रहित होना चाहिए। शहरों के मकानों में गाय-भैंस आदि रखना ठीक नहीं है, क्योंकि मनुष्यों के निवास-स्थान से पशुशाला दूर ही होना लाभकारी होता है। हाँ, अहाते वाले मकानों में इस प्रकार की सुविधा हो सकती है।

वराण्डा व आँगन—घर में वराण्डा होने से घर ठण्डे रहते हैं। वराण्डा वर्षा ऋतु में सोने के लिए व अन्य समय अनेक कामों में आता है। किन्तु ग्रीष्म ऋतु में अधिकांश स्थानों में कमरे या वराण्डे में सोना सम्भव नहीं। अतः जिन घरों में बाहर अहाता न हो, उनमें आँगन होना अनिवार्य हैं। गर्मी में सोने व सर्दी में दिन के समय धूप सेंकने के विचार से यह अति महत्त्वपूर्ण है। साथ ही धुले कपड़े सुखाने,

ग्रीष्म ऋतु मे रात्रि को पीने का पानी ठंडा रखने आदि आवश्यकतानुसार अनेक कामों में आता है।

एक से अधिक मंजिलें—मकान मे एक से अधिक मंजिलों का होना कुछ लोगो को पसन्द है, कुछ को नही। आर्थिक प्रश्न के अतिरिक्त दुमजिले मकान से विरोध होने के कारण ही अनेक व्यक्ति एक मंजिल के मकानो को ही अपनाते हैं। किन्तु बड़े परिवारों के लिये प्रायः एक से अधिक मजिलो के मकान अत्यन्त सुविधाजनक होते हैं तथा कम स्थान घेरते हैं। साथ ही भारत जैसे गर्म देशो मे ऊँचे दुमंजिले-तिमंजिले मकानों की निचली मे कमरे ठण्डे भी रहते हैं। इसके अतिरिक्त ग्रीष्म ऋतु में रात्रि मे सोने के लिए ऊपर की मजिलों की छत ठण्डी रहती है।

मकान के चारों ओर अहाता—निस्सन्देह मकान के चारों ओर थोड़ा अहाता होने मे मकान का मूल्य स्वास्थ्य, सुन्दरता तथा सुविधा की दृष्टि मे दुगुना हो सकता है—हाँ केवल उसी दशा में जब अहाते को सुचारु रूप से उपयोग में लाया जाय। फल-फूल तथा घास एवं वृक्षों की हरियाली, ठण्डक तथा सौन्दर्य तो प्राप्त होगा ही, साथ ही विश्राम एवं खेल-कूद के लिये खुला व हवादार स्थान भी मिल सकेगा। इसके अतिरिक्त शाक-भाजी आदि की कुछ उपज करके ताजा फल व सब्जी की सुविधा हो सकती है।

मकान की विभिन्न योजनाओं के रेखाचित्र

अगले पृष्ठ पर मकान की कतिपय योजनाओं के रेखाचित्र प्रस्तुत किए जा रहे हैं। इन योजनाओं का अन्धवत् अनुकरण करना आवश्यक नही है। मकान का आयोजन परिवार की आवश्यकताओ, अभिरुचियो, परिस्थितियो के अनुकूल होना चाहिए। मकान परिवार के व्यक्तित्व को अभिव्यक्त करते हुए होना चाहिए। यहाँ दिए गए मकान के आयोजनों से मकान निर्माता को मार्गदर्शन अवश्य प्राप्त होता है।
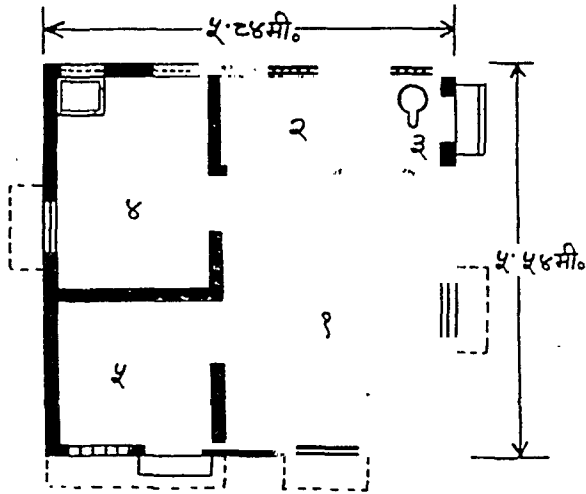
१.	रहने का कमरा	३·०३ मी॰ × ३·६४ मी॰
२.	स्नान-गृह	१·६७ मी॰ × १·२१३ मी॰
३.	शौच-गृह	·६१ मी॰ × १·२१३ मी॰
४.	रसोई	२·१२ मी॰ × २·७३ मी॰
५.	वराण्डा	२·१२ मी॰ × २·१२ मी॰

आच्छादित क्षेत्र ३५·५ वर्ग मीटर।
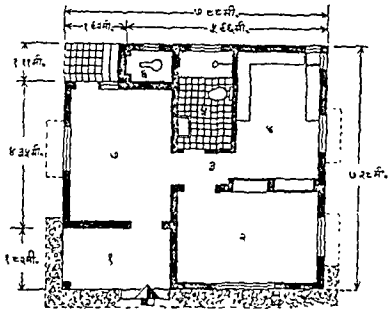
१.	वराण्डा	३ ०३ मी० × १ ८२ मी०
२.	शयन-गृह	४·२५ मी० × २ ७३ मी०
३.	लोबी	६१ मी०
४.	रसोई	२·७३ मी० × ३ ३४ मी०
५.	स्नान-गृह	१·७२ मी० × २·६३ मी०
६.	शौच-गृह	१·२१३ मी० × ·६१ मी०
७.	बैठक	३·०३ मी० × ३·०४ मी०

आच्छादित क्षेत्र ६० ६६ वर्ग मीटर।
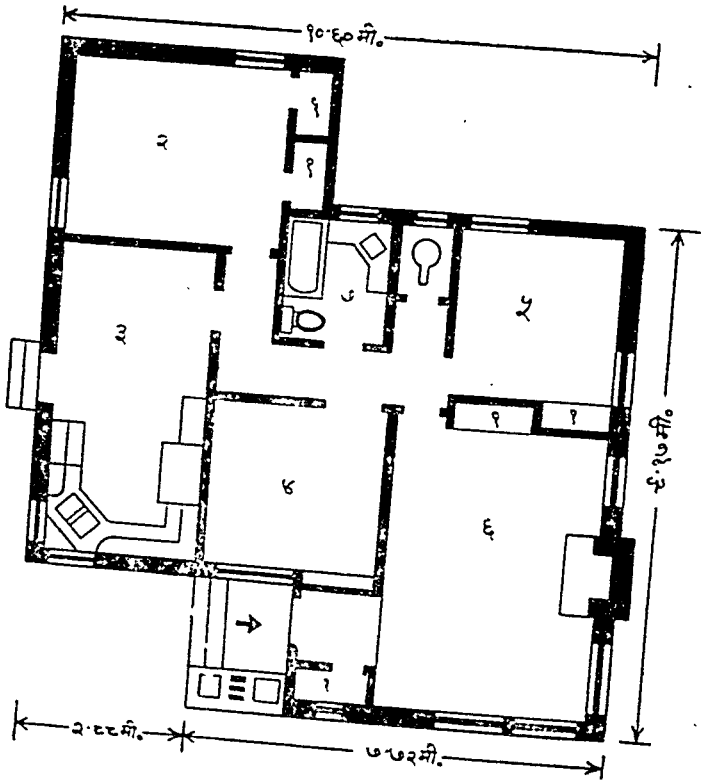
१. शौच-गृह
२. शयन-गृह
३. रसोईघर एवं खानपान-गृह
४. पढ़ने का कमरा
५. शयन-गृह
६. बैठक

३·६४ मी० × ३·३४ मी०
२·७३ मी० × ४·८५ मी०
३·०३ मी० × ३·३४ मी०
३·०३ मी० × ३·३४ मी०
३·६४ मी० × ५·४६ मी०

आच्छादित क्षेत्र १०४·३४ वर्ग मीटर ।
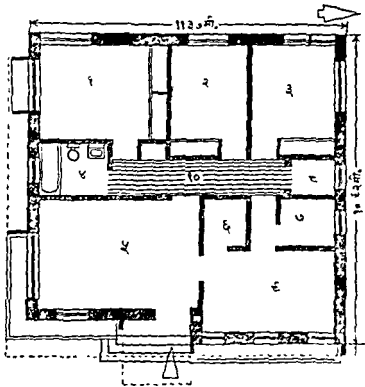
१.	शयन-गृह	३·६४ मी० × ३·३४ मी०
२.	शयन-गृह	३·३४ मी० × २·७३ मी०
३.	शयन-गृह	३·०३ मी० × ३·३४ मी०
४.	स्नान-गृह	२·४३ मी० × १·८२ मी०
५.	बैठक एवं खानपान-गृह	५·७६ मी० × ३·६४ मी०
६.	स्टोर	१·५२ मी० × १·६७ मी०
७.	स्नान-गृह	१·६७ मी० × १·६३ मी०
८.	शौच-गृह	१·५२ मी० × १·२१ मी०
९.	रसोईघर	४·४० मी० × २·८८ मी०
१०.	रास्ता	१·२१ मी०

आच्छादित क्षेत्र १३३·४६ वर्ग मीटर।
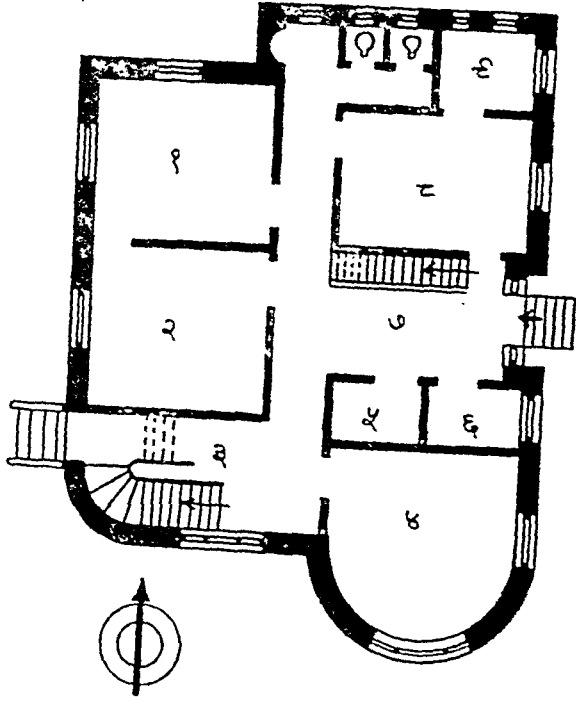
१.	खानपान-गृह	३·६४ मी० × ३·६४ मी०
२.	गृहिणी का कमरा	३·६४ मी० × ४·०६ मी०
३.	वराण्डा	
४.	स्वागत-गृह	४·२५ मी० × ४·५५ मी०
५.	स्नान-गृह	२·१२ मी० × १·३६ मी०
६.	स्नान-गृह	१·६७ मी० × १·३६ मी०
७.	बैठक	५·१६ मी० × २·७३ मी०
८.	रसोईघर	३·०३ मी० × ४·२५ मी०
९.	स्टोर	

दूसरी मंज़िल
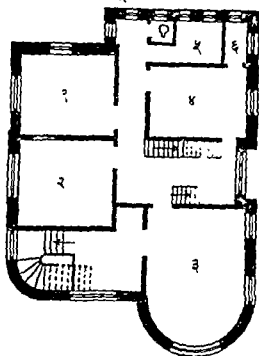
१.	शयन-गृह	३·६४ मी० × ३·६४ मी०
२.	शयन-गृह	३·६४ मी० × ४·०४ मी०
३.	बैठक	४·२५ मी० × ६·०७ मी०
४.	शयन-गृह	३·०३ मी० × ४·२५ मी०
५.	स्नान-गृह	१·८२ मी० × १·८२ मी०
६.	स्नान-गृह	

दो मंजिल का मकान आच्छादित क्षेत्र १४४·५ वर्ग मीटर।

छोटे मकानों की सुव्यवस्था

उपर्युक्त रेखाचित्र से यह स्पष्ट है कि मकान में स्थान विभाजन की समस्या की सरलता या कठिनता परिवार की आवश्यकताओं एवं कितना और कैसा स्थान उपलब्ध है—इसी पर निर्भर है। एक पर्याप्त कमरों वाले मकान को—जिसमें भिन्न-भिन्न व्यक्तियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं के लिए तथा सम्मिलित आवश्यकताओं के लिये अलग-अलग कमरे उपलब्ध हों—विभाजित करना तो सरल है। उस दशा में केवल यही निश्चित करना होगा कि कौन-सा कमरा किस कार्य के लिए, अथवा कौन-सा कमरा किस व्यक्ति के लिए नियत किया जाय। किन्तु एक कमरा वाले मकान में स्थान-विभाजन की समस्या कठिन हो जाती है। कुछ भी हो यदि बुद्धि एवं चतुराई से इस समस्या को सुलझाया जाय तो एक छोटे मकान में भी सब प्रकार से उचित प्रबन्ध किया जा सकता है। पाश्चात्य देशों में मध्यम-श्रेणीय मकान प्रायः छोटे ही होते हैं, किन्तु छोटे मकानों को ही वहाँ के निवासी इस चतुराई से विभाजित एवं व्यवस्थित करते हैं कि परिवार की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति सन्तोषजनक रूप से होती है। उदाहरणार्थ, कभी बैठक तथा खाने का कमरा एक ही बनाया जाता है, तो कभी खाने का प्रबन्ध गृहिणी के कमरे में या रसोईघर में ही किया जाता है, कभी बैठक में इस प्रकार का सोफा सैट और अन्य सामान रक्खा जाता है जो रात्रि में खोल व पलट कर घर वालों या मेहमान के लिए पलंग का काम दे सके। इन विविध रूपों में एक ही कमरे को सुविधापूर्वक प्रयोग में लाने के लिये इन छोटे मकानों में तरह-तरह के साधनों को प्रयुक्त किया जाता है। खुलने, बन्द होने व फैलने वाला फर्नीचर (Furniture) तथा दीवारों के भीतर बड़ी अल्मारियाँ ऐसे साधन हैं जो स्थान कम घेरते हैं तथा एक से अधिक उपयोगों के काम आते हैं। इसी प्रकार कभी-कभी बड़े कमरों को परदे या लकड़ी के तख्तों से या अल्मारी आदि से दो या अधिक भागों में विभाजित करके विभिन्न कामों में लाया जाता है।

स्थान का अभाव देखते हुए यदि हमें उपर्युक्त साधनों का महत्त्व समझ में आ जाय तो सम्भवतः कमरों के विभाजन की समस्या अधिक सफलतापूर्वक सुलझ सकती है। गृहिणी को चाहिये कि वह अपने छोटे व बेढब घर को भी विविध युक्तियों व साधनों द्वारा अधिकतम सुविधामय व सुन्दर बनाने का प्रयत्न करे।

स्वतः ज्ञान परीक्षा-प्रश्न

१. मकान में कमरों का वितरण किस आधार पर करना चाहिए ?

२. परिवार के सदस्यों की विभिन्न क्रियाओं की दृष्टि से मकान में किन-किन कमरों का होना आवश्यक है ?

३. मकान के विभिन्न कमरों के निर्माण कराते समय किन बातों को दृष्टिगत रखना चाहिए।

अध्याय १७

रसोईघर

रसोईघर गृहिणी का एक मुख्य कार्य-केन्द्र है जिसकी सुव्यवस्था पर उसका तथा उसके परिवार का सुख व स्वास्थ्य निर्भर है, किन्तु दुःख का विषय है कि भारतवर्ष में आधुनिक मध्यम श्रेणीय गृहिणी को रसोईघर के प्रति कोई विशेष रुचि नहीं है। इसका एक प्रधान कारण यह हो सकता है कि रसोई की वर्तमान व्यवस्था व विधि आधुनिक जीवन के अनुकूल नहीं रही। पिछले सौ वर्षों में विज्ञान के विकास व पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से जहाँ भारतवासियों के रहन-सहन व विचारों में इतना परिवर्तन हो गया है, वहाँ उनकी रसोईघर की व्यवस्था प्रायः पूर्ववत् ही है। अधिकांश घरों में आज भी वही धुएँदार चूल्हे व बर्तन काला करने वाले ईंधन प्रयोग में लाये जा रहे हैं जो शताब्दियों पूर्व प्रयुक्त होते थे। पुराने विचारों में दबी गृहिणी तो बहुत संकुचित क्षेत्र प्रदान करती है और चूल्हा, बर्तन तथा भोजन सामग्री ही उसकी रसोई-गृह की आवश्यकताएँ हैं, किन्तु आधुनिक नारी का दृष्टिकोण बदल चुका है। वह अब केवल गृहस्थी के कार्यों में ही नहीं, सामाजिक, व्यावसायिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों में भी भाग लेना चाहती है। इसके लिए उसे अधिक अवकाश की आवश्यकता है। प्राचीन मध्यम श्रेणीय गृहिणी के समान आधुनिक गृहिणी दिन भर रसोई के कामों में ही समय व्यतीत नहीं करना चाहती, अतः उसने रसोईघर से अपना हाथ खींच लिया है। दास-दासी ही रसोईघर के स्वामी हैं। ऐसी दशा में अधिकांश रसोईघरों की व्यवस्था असंतोषजनक होना स्वाभाविक ही है। फलस्वरूप अधिक खर्च करने पर भी [illegible] का स्तर गिरता आ रहा है। उचित निर्देशन के बिना भारतीय गृहिणी इसी [illegible] को सुलझाने में असमर्थ है। पाश्चात्य देशों में दशा इससे बहुत भिन्न है। [illegible] साधारणतः नौकर सुलभ नहीं होते। गृहिणियाँ स्वयं ही खाना पकाती हैं [illegible] व रसोईघर की सफाई भी करती हैं। किन्तु उनकी रसोई की व्यवस्था [illegible]

है कि उन्हें काम में थकावट भी बहुत कम होती है तथा समय भी कम लगता है। विभिन्न प्रयोगों व वैज्ञानिक यन्त्रों द्वारा वे रसोईघर अधिक-से-अधिक सुन्दर, स्वच्छ व सुविधामय बनाने की निरन्तर चेष्टा करती हैं। आधुनिक पाश्चात्य रसोईघर इतना आकर्षक है कि यह अनुमान करना भी कठिन है कि कोई गृहिणी रसोई के काम से मुँह मोड़ सकती है। भारतीय शिक्षित गृहिणी को भी इस ओर अधिक रुचि लेकर अपने रसोईघरों को सुधारना चाहिए। दूसरों के अनुभव के आधार पर अपनी परिस्थितियों के अनुसार भारतीय रसोईघर को भी यथासम्भव स्वच्छ, सुन्दर व सुविधामय बनाना प्रत्येक गृहिणी का कर्तव्य है। रसोईघर की उत्तम व्यवस्था से लाभ केवल गृहिणी को ही नहीं जो धुआँदार, गन्दी व कष्टमय रसोई से मुक्त होकर रसोई के कार्य में पुनः उल्लास व सुख अनुभव करेगी, बल्कि परिवार के प्रत्येक सदस्य को भी लाभ होगा, जिससे समूचे परिवार के स्वास्थ्य का स्तर निस्सन्देह ऊँचा उठेगा।

रसोईघर की सुव्यवस्था—रसोईघर की उत्तम व्यवस्था करने के लिए कुशल गृहिणी को उपलब्ध स्थान व अपनी अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखकर एक उचित योजना बनानी चाहिए। रसोईघर की योजना भी गृह के अन्य भागों की भाँति ही सुविधा, स्वच्छता व सुन्दरता के सिद्धान्तों के आधार पर बननी चाहिए। सुविधा से तात्पर्य यह है कि रसोई का सब काम कम-से-कम समय व परिश्रम से ही सर्वोत्तम हो सके। अतः परिश्रम व समय-बचाऊ युक्तियों पर पूर्ण विचार करना चाहिए। सुन्दरता भी रसोईघर का एक विशेष गुण होना चाहिए, क्योंकि गृहिणी का बहुत समय यहाँ पर व्यतीत होता है तथा भोजन जैसी जीवन की मुख्य आवश्यकता की पूर्ति यहीं से होती है। सुव्यवस्थित व आकर्षक होने से गृहिणी का वहाँ पर काम करने में मन भी लगेगा व काम भी अच्छा होगा।

रसोईघर की सुव्यवस्था के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए :

रसोईघर के कमरे का नाप, स्थिति व बनावट—रसोईघर की स्थिति व बनावट महत्त्वपूर्ण विषय है। रसोईघर बैठक, सोने व रहने के कमरों से कुछ दूर होना चाहिए जिससे धुआँ, खाना पकाने की गन्ध वहाँ तक न पहुँचे। किन्तु रसोईघर गृहिणी के कमरे से अधिक दूर न होना चाहिए। यदि गृहिणी स्वयं खाना पकाती है, तब तो रसोई का उसके कमरे के समीप होना सुविधामय है ही और यदि खाना पकाने के लिए नौकर भी है तब भी निरीक्षण के विचार से निकट रसोईघर ही बेहतर है।

रसोईघर के पास ही रसोई का भण्डार रखने के लिए एक कोठरी हो तो सुविधा के साथ ही सामान की देखभाल भी पूर्ण रूप से हो सकेगी। यदि भण्डार के लिए अलग कोठरी न हो तो रसोईघर में ही अल्मारी आदि में भण्डार संगृहीत किया जा सकता है। दूध, दही, अण्डे आदि जल्दी बिगड़ने वाले पदार्थों को छोड़कर यदि भोज्य सामग्री रखने की अलमारी चूल्हे के निकट हो तो रसोई में चलना-फिरना काफी

कम हो जाता है जिससे समय व श्रम की बचत होती है। इसी प्रकार बर्तन रखने का स्थान भी चूल्हे या बर्तन धोने के स्थान के निकट होना उचित है। ईंधन रखने के लिए भी रसोईघर के समीप ही अलग स्थान उपलब्ध हो तो सुविधा व स्वच्छता रहेगी।

यह बहुत आवश्यक नहीं कि रसोई का कमरा बहुत बड़ा हो। यदि रसोई का सब सामान क्रमपूर्वक व ढंग से व्यवस्थित किया जाय तो कम स्थान में भी उत्तम प्रबन्ध हो सकता है। बड़े कमरे की अपेक्षा छोटे सुव्यवस्थित कमरे में तो विभिन्न वस्तुओं को उठाने-धरने में भी अधिक सुविधा रहती है तथा समय व शक्ति की बचत भी होती है। पाश्चात्य देशों में रसोईघर इन्हीं आधारों पर नियोजित किया जाता है।

परन्तु रसोईघर इतना छोटा भी न हो कि गर्मी में दम घुटे। रसोईघर में, विशेषकर छोटे रसोईघर में यह अति आवश्यक है कि प्रकाश व वायु-प्रवेश की व्यवस्था बहुत अच्छी हो। इसलिए दरवाजे, खिड़कियाँ व रोशनदान उचित रूप व स्थान पर बनना अनिवार्य है। यदि दरवाजे, खिड़की उत्तर-पूर्व व दक्षिण-पश्चिम की ओर खुलें तो तेज धूप भी कष्ट न देगी व प्रकाश का प्रबन्ध भी अच्छा रहेगा। रसोई-घर में चूल्हे के ऊपर पर्याप्त प्रकाश का प्रबन्ध होना भी अनिवार्य है।

कमरे की दीवारों में बर्तन व अन्य सामान आदि रखने के लिए अल्मारियाँ, ताक आदि हों तो अलग से अलमारी का प्रबन्ध नहीं करना पड़ेगा।

फर्श व दीवारों के नीचे का भाग पक्का सीमेन्ट या टाइलों का बना होने से सफाई में सुविधा रहती है तथा सीलन भी नहीं होती। पानी निकलने की नालियों का ढलाव बाहर की ओर रहना चाहिए, ताकि पानी बिना रोक-टोक बाहर जा सके।

रसोईघर के दरवाजे खिड़कियों में जाली का प्रबन्ध होने से मक्खियों से बचाव रहता है।

चूल्हा रसोईघर का मुख्य अंग है। यदि अँगीठी व स्टोव का [illegible] जाता है तो उसको रखने के लिए एक मेज या ईंट व सीमेंट का चबूतरा [illegible] जिस पर अँगीठी या चूल्हा रखकर खाना बनाने में सुविधा रहती है। [illegible] चूल्हा घर पर ही बनाना हो तो इसमें विशेष सावधानी रखनी चाहिए [illegible] प्रकार का दोष न हो। धुएँ व गर्म हवा के निकास के लिए [illegible] प्रकार से बनी हुई चिमनी का होना अनिवार्य है।

रसोईघर व्यवस्था को देखते हुए विदेशी शैली—रसोईघर [illegible] सिद्धान्तों में सुविधा के [illegible] स्थान मिलना चाहिए [illegible]

की व्यवस्था इस प्रकार की होनी चाहिए कि कम परिश्रम व कम-से-कम समय में सर्वोत्तम कार्य हो। ऐसी सुविधा रसोई-व्यवस्था की शैली पर बहुत कुछ निर्भर है। देशी शैली के अनुसार, व्यवस्थित रसोई में चूल्हा बहुधा फर्श पर बना होता है तथा गृहिणी चौकी या पटरे पर या नीचे आसन पर बैठकर खाना पकाती है। चूल्हे पर रखे व देगची में पकते खाने के निरीक्षण में कष्ट के अतिरिक्त उसे विभिन्न कार्यों के लिए बार-बार उठने में असुविधा भी होती है। इसके विपरीत विदेशी शैली के अनुसार, खड़े होकर खाना पकाने में विभिन्न कार्यों व वस्तुओं को लेने-धरने में निरर्थक परिश्रम से बचाव रहता है व काम शीघ्र भी होता है। स्वच्छता के विचार से भी ऊँचा चूल्हा अधिक उत्तम है। चाहे कितनी ही सावधानी रखी जाये, रसोईघर का फर्श आने-जाने से थोड़ा-बहुत गन्दा तो अवश्य हो जाता है, अतः फर्श पर कोई भी वर्तमान खाद्य पदार्थ रखना स्वास्थ्य के विचार से सर्वथा अनुचित है। नीचे बैठकर व बार-बार उठने-बैठने में गन्दे हाथों से सँभालने से पहने हुए वस्त्र बहुत शीघ्र गन्दे हो जाते हैं।

यह सम्भव है कि अधिकांश गृहिणियाँ नीचे चूल्हे की अभ्यस्त होने के कारण ऊँचे चूल्हे को अपनाना पसन्द न करें। ऐसी दशा में भी असुविधामय नीचे चूल्हे में थोड़ा परिवर्तन कर उसे सुविधामय बनाया जा सकता है। इसके लिए यदि चूल्हा फर्श की सतह पर न बनाकर २०-२५ सेण्टीमीटर ऊँचे चबूतरे पर बने तथा गृहिणी इसी ऊँचाई के पीढ़े या पटरे पर बैठे तो खाना बनाने में काफी सरलता रहेगी। उठने-बैठने में भी सुविधा रहेगी। काम में आने वाले बर्तन व खाद्य पदार्थ रखने के लिए भी कुछ ऊँचा चबूतरा रहना चाहिए जिससे फर्श की गन्दगी खाने तक न पहुँचे। जिन स्त्रियों को खड़े होने का अभ्यास न हो तथा जिनको नीचे बैठकर बार-बार उठने में भी कष्ट होता हो, उनके लिए यह मध्यस्थ व्यवस्था सर्वोत्तम है।

चाहे चूल्हा फर्श पर ही बना हो, चाहे २०-२५ सेण्टीमीटर की ऊँचाई पर बने तथा चाहे ८०-८५ सेण्टीमीटर ऊँचा हो अपनी सामर्थ्य व आदतों को विचार में रखते हुए प्रत्येक गृहिणी को रसोई की ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिसमें सबसे अधिक सुविधा हो और सफाई के नियमों का पूर्णतः पालन हो सके।

रसोई सम्बन्धी विभिन्न कार्य-केन्द्रों की व्यवस्था—रसोई सम्बन्धी मुख्य कार्य निम्न हैं—

१. खाना पकाने की तैयारी—जैसे दाल-चावल बीनना, आटा गूँधना व सब्जी काटना आदि।

२. खाना पकाना।

३. खाना परोसना।

४. खाने व पकाने के बर्तनों की सफाई करना।

५. बर्तनों को सुरक्षित रखना।

६. पानी व खाद्य पदार्थों का संग्रहीकरण।

७ स्थानाभाव या अन्य कारणवश परिवार का रसोईघर में ही भोजन करना।

८. स्थानाभाव के कारण रसद व ईंधन रखने का प्रबन्ध भी रसोईघर में ही करना।

रसोईघर की व्यवस्था का नियोजन करते समय सुविधा के विचार से अन्त-सम्बन्धित इन विभिन्न कार्य-केन्द्रों के लिए उचित स्थान नियुक्त करना चाहिए जिससे परिश्रम व समय दोनों की बचत हो सके। उसके लिए संकेत मात्र कुछ प्रमुख बातों पर विचार करना चाहिए।

यह स्पष्ट है कि तैयारी का स्थान खाना पकाने के स्थान के बिलकुल निकट होना चाहिए। अनेक प्रयोगों द्वारा पाश्चात्य देशों में यह देखा गया है कि यदि तैयारी का स्थान चूल्हे से बाईं ओर हो तो अधिक सुविधामय होता है। तैयारी में खाद्य पदार्थों को धोने के लिए पानी की आवश्यकता होती है, इसलिए तैयारी करने का स्थान पानी रखने के स्थान के भी निकट होना चाहिए।

भोजन परोसने का केन्द्र खाना पकाने के स्थान के निकट तथा यथासम्भव दाईं ओर होना चाहिए। इससे सुविधा रहती है व श्रम कम होता है।

यदि खान-पान-गृह अलग न हो तो भोजन करने के लिए भी रसोईघर में ही स्थान की व्यवस्था की जा सकती है। इसके लिए यदि परोसने के स्थान की ओर ऐसा स्थान निर्दिष्ट हो सके जहाँ पर अन्य कार्यों से विघ्न न पड़े तो अति उत्तम है।

बर्तन धोने व साफ करने का स्थान पानी के स्थान के निकट होना चाहिए। किन्तु भोजन करने के स्थान के समीप नहीं। बर्तनों की सफाई जिस स्थान पर की जाय, वहाँ से पानी बहने का उत्तम प्रबन्ध होना चाहिए।

इसी प्रकार खाना पकाने के काम आने वाले भोज्य पदार्थों के लिये सबसे उपयुक्त स्थान तैयारी के स्थान के निकट, पकाने के बर्तनों के लिए चूल्हे के निकट व भोजन करने के बर्तनों के लिए परोसने के स्थान के निकट हो। इससे काम में समय बचता है, शक्ति कम लगती है व सब प्रकार से सुविधा भी रहती है। इसी सिद्धान्तानुसार अचार-मुरब्बे, मिठाई, नमकीन व बिस्कुट आदि खाने के पदार्थ तथा फल-मेवा आदि भोजन करने के स्थान की ओर ही होने चाहिए।

अगले पृष्ठ पर दिये गये मानचित्र में रसोईघर के विभिन्न कार्य-केन्द्रों की स्थिति दिखायी गयी है। प्रत्येक कार्य-केन्द्र की स्थिति निश्चित करने में सुविधा व श्रम-समय बचत के सिद्धान्तों का विशेष ध्यान रखा गया है। रसोईघर-व्यवस्था की चाहे देशी

शैली अपनायी जाय चाहे विदेशी, कार्य-केन्द्रों की उपयुक्त स्थिति का महत्त्व दोनों में ही समान है। निम्न मानचित्र के अनुसार नियोजित रसोईघर की व्यवस्था खड़े होकर खाना पकाने या बैठकर खाना पकाने—दोनों प्रकार से की जा सकती है। विभिन्न कार्य-केन्द्रों की व्यवस्था पर विस्तारपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है।
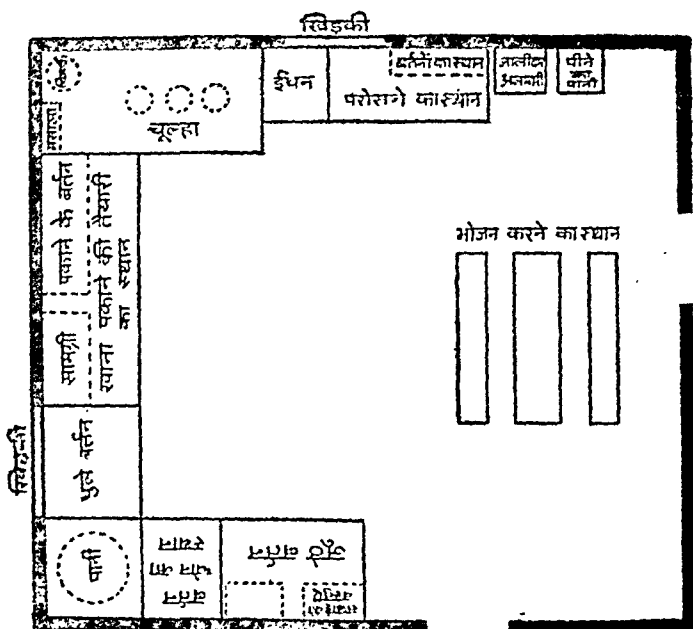
सुव्यवस्थित रसोईघर का रेखाचित्र

तैयारी-केन्द्र—खाना पकाने के पूर्व अनेक प्रकार की तैयारी करने की आवश्यकता होती है—जैसे सब्जी काटना, दाल-चावल आदि बीनना, खाद्य पदार्थ धोना, आटा गूँधना आदि। इन कामों के लिए ऊँची शैली में तो प्राय: एक मेज का प्रबन्ध रहता है। मेज के नीचे की ओर अलमारी बनी हो तो उसमें काम की वस्तुएँ (चाकू, छुरी, छलनी व कद्दूकस आदि) रखी जाती हैं। मेज के ऊपर दीवार में भी केबीनेट होने से सामान रखने में सुविधा रहती है।

नीचे खाना पकाने की शैली में खाने की तैयारी के लिए पक्का सीमेंट का चबूतरा या लकड़ी का चौड़ा पटरा रहना चाहिए। इससे सुविधा के साथ ही साथ स्वच्छता भी रहती है। तैयारी के लिये बर्तन व सामग्री रखने के लिए अलमारी तो इस दशा में भी अनिवार्य हैं। यहाँ तरकारी के छिलके आदि डालने के लिये कूड़े का डिब्बा रहना भी आवश्यक है।

खाना पकाने का क्षेत्र—चूल्हा इस केन्द्र की मुख्य वस्तु है। इसके उचित या अनुचित होने पर समस्त रसोई-व्यवस्था की सफलता या असफलता निर्भर रहती है।

चूल्हे के अतिरिक्त इस केन्द्र की मुख्य आवश्यकताएँ हैं खाना पकाने के लिए बर्तन, मसालों व घी-तेल आदि रखने के लिए उपयुक्त प्रबन्ध व खाना पकाने वाले के लिए उपयुक्त स्थान। बैठकर खाना पकाने की शैली में गृहिणी के लिए पटरा या चौकी इतनी ऊँचाई की होनी चाहिये कि गृहिणी को खाना पकाने में झुकना या उचकना न पड़े। बैठने का स्थान यदि चूल्हे के बाईं ओर हो तो सुविधामय रहता है। ऊँची शैली में तो बहुधा यह प्रश्न नहीं उठता, क्योंकि खड़े होकर चूल्हे की ओर मुँह करके ही खाना पकाया जाता है; किन्तु इस शैली में भी यथासम्भव शक्ति व थकान बचाने के लिए गृहिणी के बैठने की सुविधा रहनी आवश्यक है। इसलिए ऊँची तिपाई या कुर्सी रसोईघर में चूल्हे के पास अवश्य रहनी चाहिए।

पकाने के बर्तन, अन्य आवश्यक वस्तुएँ व सामग्री रखने के लिए चूल्हे के निकट ही प्रबन्ध होना चाहिए। यदि दीवार में ही केबीनेट व शैल्फ न बने हों तो इस प्रयोजन से लकड़ी के छोटे-छोटे विशेष ताक बनाये जा सकते हैं। मसालों की शीशियाँ तथा भगौने, देगची, कढ़ाई आदि को इन शैल्फों पर विधिपूर्वक सजाकर रखना चाहिए। कलछी-चिमटा व सँडसी आदि के टाँगने का भी निकट ही प्रबन्ध होना चाहिए।

खाना परोसने का क्षेत्र

भोजन परोसने के बर्तनों को सुसज्जित रूप से रखने के लिए अल्मारी का होना आवश्यक है। रसोई की सुव्यवस्था में खाने व नाश्ते के बर्तनों को स्वच्छता तथा सुन्दरता से रखना अति महत्त्वपूर्ण है। विधिपूर्वक व्यवस्थित साफ चमकते हुए बर्तन रसोईघर की शोभा बढ़ाते हैं व खाने को आकर्षक बनाते हैं। यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि नाश्ते व खाने के बर्तन तथा भिन्न धातुओं के बर्तनों को पृथक्-पृथक् रखना चाहिए।

खाना तैयार हो जाने के पश्चात् या तो अलग-अलग थाली-कटोरियों में भोजन परोसकर भोजन करने के स्थान पर लाया जाता है या खाना परोसने के साफ व सुन्दर ढक्कन वाले बर्तन में पलटकर मेज या खाने के अन्य स्थान पर सजाया जाता है। दूसरी विधि में खाना परोसने के लिए छोटी कलछी व चम्मच आदि रखे जाते हैं तथा प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि व इच्छानुसार स्वयं भोजन परोसता है। इस रीति से भोजन प्रायः व्यर्थ कम जाता है। बचा हुआ भोजन साफ छोटे बर्तन में पलटकर जाली की अल्मारी में सुरक्षित रखा जाना चाहिए।

भोजन परोसते या पलटते समय थाली, कटोरी अथवा अन्य बर्तनों को जमीन पर रखना कदापि उचित नहीं। इसके लिए रसोई की नीची व्यवस्था में एक पक्का

चबूतरा या लकड़ी का पटरा होना चाहिए तथा ऊँची व्यवस्था में एक मेज। इसी मेज या पटरे के ऊपर दीवार में वर्तनों की अलमारियाँ आदि की व्यवस्था रहने से स्थान बचता है व सुविधा भी रहती है।

परोसने के स्थान पर पानी तथा अचार-चटनी आदि का भी आवश्यकतानुसार उचित प्रबन्ध होना चाहिए।

खाना खाने का स्थान—चाहे भोजन करने का अलग कमरा उपलब्ध हो, चाहे इसके लिए रसोईघर अथवा अन्य किसी कमरे में ही खाना खाने का प्रबन्ध किया जाय, दोनों दशाओं में ही भोजन करने की ऊँची या नीची कोई भी शैली अपनायी जा सकती है। कुर्सी पर बैठकर भोजन के लिए उपयुक्त ऊँचाई की मेज आवश्यक है। नीचे बैठकर भोजन करने में आसन या पटरे के सामने २०-२५ सेण्टीमीटर ऊँची चौकी रहनी चाहिए जिससे खाना खाते में झुकना न पड़े। लकड़ी की मेज व चौकी सुन्दरता के विचार से मेजपोश से ढकी जा सकते है। पत्थर या काँच से ढके मेज या चौकी सुन्दर व सुविधामय रहते हैं। खाने की मेज के बीच में एक नीचे फूलदान में सजे फूल मेज की शोभा बढ़ाते हैं। खाना खाने की देशी शैली अपनाने में भी खाने के स्थान को फूलों से सुसज्जित किया जा सकता है।

यदि खाना पकाने की देशी शैली अपनायी जाय तथा रसोईघर में ही भोजन करने की व्यवस्था हो तो यही भला प्रतीत होता है कि भोजन करने के लिए आसन-चौकी का प्रयोग किया जाय। यदि रसोईघर की व्यवस्था नीचे की है किन्तु भोजन करने की विदेशी रीति पसन्द है तो रसोईघर में भोजन करने का प्रबन्ध न कर किसी अन्य स्थान (बराण्डा या बैठक आदि) पर ही करना चाहिए। यह आवश्यक है कि चाहे किसी भी स्थान पर भोजन किया जाय तथा चाहे कोई भी शैली अपनायी जाय, भोजन करने का स्थान स्वच्छ व आकर्षक हो।

पानी का प्रबन्ध—जहाँ नल में २४ घण्टे पानी आता हो वहाँ पानी संग्रह करके रखने का विशेष प्रश्न नहीं होता। खाना बनाने व वर्तन-चौका आदि धोने के लिए तो नल से पानी मिल जाता है, केवल पीने के लिए ग्रीष्म ऋतु में पानी ठण्डा रखने के लिए सुराही, घड़े आदि में संग्रह करना पड़ता है।

जिन स्थानों पर नल नहीं है या हर समय का नल नहीं है, वहाँ पर रसोई के सब कामों के लिए पानी जमा करना पड़ता है। इसके लिए बड़ा ढकनेदार डोल या टंकी, जो ठीक से साफ हो सके, उत्तम रहता है। यदि इसमें टोंटी लगी हो तो पानी लेने में सुगमता रहती है। टोंटी की अनुपस्थिति में लोटे या गिलास आदि किसी अन्य वर्तन से पानी निकालना पड़ता है। इसके लिये डण्डीदार छोटी लुटिया अति उत्तम रहती है। पानी संग्रह करने के लिए यदि एक वर्तन कम होता हो तो आवश्यकतानुसार एक से अधिक वर्तन प्रयोग में लाने चाहिए।

वर्तन धुलाई-क्षेत्र—वर्तन माँजने-धोने के लिए जो स्थान निश्चित किया जाय, उसकी सबसे मुख्य विशेपता होनी चाहिए जल-निकास के लिए उचित प्रबन्ध। वर्तनों की
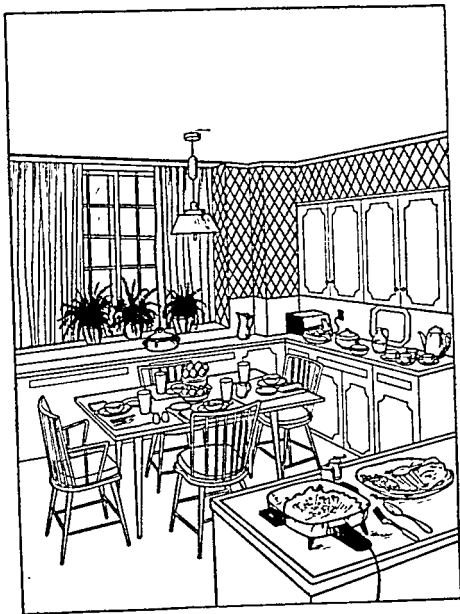
संयुक्त रसोई एवं भोजन कक्ष

सफाई की देशी विधि मे तो रसोई की नाली के निकट थोडा गहरा स्थान रहता है जहाँ बर्तन मंजते व धुलते हैं। यदि इस स्थान के एक ओर जूठे व दूसरी ओर धुले बर्तन रखने के लिए चबूतरा हो तो स्वच्छता व सुविधा दोनों दृष्टिकोणों से उत्तम है। कभी-कभी रसोई छोटी होने के कारण या अन्य कारणवश बर्तन रसोई के बाहर ही धोये जाते हैं। यदि रसोई के बाहर बर्तन धोने के लिए विशेष स्थान प्राप्त हो तब तो विशेष हानि नहीं, किन्तु खुले आँगन में जूठे बर्तन जमाकर धोना कदापि उचित नहीं, क्योंकि वे कौवों, चिड़ियों तथा कुत्ते-बिल्लियों को ही आमन्त्रित नहीं करते, वरन् देखने में भी भद्दे लगते हैं।

विदेशी विधि में बर्तन धोने की व्यवस्था भी खड़े होकर ही रहती है। इसमें चिलमची के समान चीनी मिट्टी का एक सिंक (Sink) होता है जिसमें बर्तन धोये जाते हैं। इसके दोनों ओर गन्दे व साफ बर्तन रखने के लिए लकड़ी या धातु के तख्ते होते हैं जिनका ढाल सिंक की ओर होने से पानी इधर ही बह जाता है। इस विधि के अनुसार बर्तन धोने मे परिश्रम व समय की बचत होती है तथा कपड़े भी कम गन्दे होते हैं।

यदि नीची शैली अपनाना ही पसन्द किया जाय या सिंक का प्रबन्ध न हो सके, तो दो चिलमची की तरह खुले बर्तनों मे गरम व ठण्डा पानी डालकर मँजे बर्तन धोने से काम शीघ्र व अच्छा होता है।

बर्तनों की सफाई का जूना, ब्रुश व भिन्न कपड़े, झाड़न आदि धोकर सुखाने के लिए खूँटियाँ या अन्य उचित प्रबन्ध होना चाहिए। विम, छनी राख तथा सफाई की अन्य आवश्यक सामग्री रखने के लिए ताक या अलमारी बर्तन माँजने के स्थान के पास ही होनी चाहिए।

संग्रहीकरण क्षेत्र

पूर्ण सुविधा के लिए सब प्रकार की खाद्य सामग्री को एक ही स्थान पर रखना उचित न होगा। आवश्यकतानुसार भिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों को भिन्न-भिन्न स्थानों पर रखना चाहिए। उदाहरणार्थ, खाना पकाने का सामान (आटा, दालें, चावल, पापड़, बड़ी, मँगोड़ी, बेसन, मैदा, दलिया आदि) तैयारी के स्थान के निकट व मसाले चूल्हे के समीप होना उपयुक्त है। इसी प्रकार नाश्ते का सामान (बिस्कुट, डबलरोटी, मिठाई, नमकीन आदि) तथा अचार-मुरब्बे आदि तैयार भोज्य पदार्थ भोजन करने के स्थान के पास होना आवश्यक है। इन विविध सामग्रियों के लिए अल्मारियाँ (दीवार में या पृथक्) होना आवश्यक है। फल, दूध, दही व अन्य बिगड़ने वाला सामान रखने के लिए जाली की अल्मारी उत्तम है।

खाने की सब वस्तुएँ अल्मारियों में इस प्रकार सुव्यवस्थित रखना आवश्यक है कि प्रत्येक वस्तु आवश्यकता के समय सुगमता से मिल जाय तथा देखने में भी भली प्रतीत हो। एक वर्ग की एक समय में काम आने वाली वस्तुएँ यथासम्भव एक साथ

रखने से परिश्रम व समय दोनों की बचत होगी। इसी से विभिन्न अनाज एक साथ, मसाले एक साथ, अचार-चटनी एक साथ व मिठाई-मिष्टान्न एक साथ रखे जाने चाहिए।

खाना बनाने की सामग्री—अनाज, दालें, आटा, चावल, मैदा आदि—जब भण्डार में संग्रह की जाती हों तो थोड़ी-थोड़ी मात्रा में सब वस्तुओं को रसोईघर में रख लेना चाहिए जिससे काम में आसानी रहे। यदि भोज्य सामग्री के लिए अलग भण्डार का स्थान उपलब्ध न हो, तो सब सामान रसोईघर में ही अति विधिपूर्वक रखना चाहिए। कनस्तर या डिब्बे आदि भी फर्श पर लगाकर नहीं रखने चाहिए, अन्यथा चीजों में सीलन आ जाने का भय रहता है।

हीनर और मैककलफ का सुझाव है कि वे बर्तन तथा सामग्रियाँ जिनका उपयोग सर्वप्रथम जल के साथ किया जाता है वे धुलाई के क्षेत्र के पास होनी चाहिए। जिनका उपयोग सर्वप्रथम चूल्हे के केन्द्र में किया जाना है वे चूल्हे के पास संग्रहीत होनी चाहिये। अन्य वस्तुओं तथा ऐसे बर्तनों जिनका उपयोग सर्वप्रथम धुलाई-क्षेत्र में होता है तथा परोसने के उपयोग में आने वाली वस्तुएँ और चूल्हे पर प्रयुक्त होने वाली वस्तुओं को पृथक्-पृथक् संयोजित करने पर चलने के कदमों में कमी हो सकती है।[1,2,3]

रसोईघर के आकार

रसोईघर में कार्य के स्थानों पर उपकरणों की व्यवस्था किस प्रकार की जाए, इस तथ्य को रसोईघर की आकृति और आकार तथा दरवाजे व खिड़कियों की स्थिति-प्रभावित करती है। उपकरणों की U की आकृति वाली योजना में, L की आकृति वाली; खंडित U की आकृति वाली, दो-दीवारों वाली अथवा एक दीवार वाली योजनाओं के रसोई घर में व्यवस्था की जा सकती है।

L (एल) की आकृति वाली योजना—इस योजना में दो संगति-दीवारों को उपकरणों की व्यवस्था के लिये उपयोग किया जाता है। तीसरी दीवार का उपयोग भोजन करने की मेज लगाने के लिए किया जाता है। परन्तु इसका उपयोग तभी

---

1. Mary Koll Heiner and Helen E. Mccullough, Kitchen Storage Space, *Cornell Uni : Ext.* Iul. 703, 1947.
2. Mary Koll Heiner, "Functional Kitchen Storage in terms of Body Economy" *Journal of the Economics*, Vol. 39. (Feb., 1947) pp. 70-72.
3. Mary Koll Heiner, "Functional storage of Kitchan Utensils, *The Kitchen Reporter, Published by Kelvinator Kitchen*, October, 1946.

किया जा सकता है, जबकि उस दीवार में दरवाजे व खिड़कियाँ न हों। चित्र से स्पष्ट होता है कि खाना पकाने व परोसने का क्षेत्र पास-पास ही है। खाना पकाने के स्थान से ठीक विपरीत दिशा में खाना खाने की मेज रखी गई है। खाना पकाने के पास लगी हुई दीवार के पास बर्तन धोने की चिलमची की व्यवस्था है। चिलमची के दोनों ओर बर्तन धोने व रखने के लिए पर्याप्त स्थान है। रसोईघर के दैनिक उपयोग में आने वाले सामान को रखने के लिए दीवार में पर्याप्त अलमारियाँ हैं तथा काउन्टर (Counter) के नीचे भी सामान रखने की व्यवस्था है। रैफ्रीजरेटर रखने का स्थान खाना पकाने के स्थान से पर्याप्त दूरी पर है।

रसोई के कार्य के लिये कमरे की केवल दो ही दीवारें उपयोग में आती हैं। कमरे में पर्याप्त स्थान खाना खाने व अन्य कार्य करने के लिये बचा रहता है।

एल आकार का रसोईघर

खण्डित L आकृति वाले रसोईघर—इस योजना में दरवाजे होने या अन्य कारण से L की आकृति खण्डित हो जाती है। परन्तु खाना पकाने आदि के उपकरणों से कार्य की व्यवस्था L आकृति की तरह ही होती है। काउन्टर के दाईं ओर का स्थान खाना पकाने और बर्तन धोने के काम में प्रयुक्त होता है। काउन्टर के बाईं ओर खाना परोसने व भोज्य सामग्री के संग्रह करने का क्षेत्र होता है। यदि घर में स्थान की कमी है तो इस प्रकार के रसोईघर में भोजन करने की

व्यवस्था भी की जा सकती है। रसोईघर के शेष आधे भाग का उपयोग बैठक के लिए भी किया जा सकता है।

U आकृति के रसोईघर—इस आकृति वाले रसोईघर में तीन दीवारों का उपयोग होता है। इस आकृति वाले रसोईघर व्यवस्था में भी तीन क्षेत्र—(१) वस्तुएँ संग्रह करना और भोजन पकाने की तैयारी करने का, (२) सफाई एवं धुलाई करने का, (३) खाना पकाने व परोसने का, होते हैं। इस प्रकार के रसोईघर में उक्त तीन क्षेत्र स्पष्ट रूप से पर्याप्त पृथक्-पृथक् होते हैं, क्योंकि ये तीनों व्यवस्थाएँ तीन पृथक्-पृथक् दीवारों के सहारे की जाती हैं। कमरे में बाईं ओर सामान संग्रह करने का स्थान व तैयारी करने का स्थान होता है। उसके बाद रेफ्रीजरेटर भी बाईं ओर रखा जाता है। काउन्टर के नीचे और दीवार में सामान रखने के लिए केबीनेट व अलमारियाँ होती हैं। काउन्टर के शेष आधे भाग में बर्तन धोने आदि के लिए चिलमची लगी होती है।

U के केन्द्रीय स्थान—बीच की दीवार पर खाना बनाने का स्थान होता है। इसके दाईं ओर का स्थान खाना परोसने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। शेष तीसरी दाईं ओर की दीवार के सहारे खाने की मेज लगाकर भोजन करने के लिए इस्तेमाल की जाती है।

U आकार के रसोईघर की व्यवस्था कमरे के आकार तथा आवश्यकता के अनुसार अन्य प्रकार से भी की जा सकती है। U की आकृति पूर्ण हो सकती है जिसमें कमरे की तीनों दीवारों का पूर्ण उपयोग किया जाता है। इस व्यवस्था में या तो तीनों दीवारें पूरी प्रयुक्त की जाएँ या बीच की दीवार पूरी व बगलों की आधी-आधी दीवारें प्रयुक्त की जाएँ।

खण्डित U आकृति के रसोईघर—इस आकृति वाले रसोई घर में U की आकृति दीवारों में दरवाजे होने के कारण खण्डित हो जाती है। इसलिए रसोईघर की व्यवस्था सम्पूर्ण U आकृति के रसोईघर के समान लगातार एक ही क्रम में नहीं हो पाती। रसोईघर के तीन क्षेत्र कुछ पृथक्-पृथक् हो जाते हैं। इस व्यवस्था में रसोईघर का एक कोना खाली रहता है, जिसका उपयोग भोजन करने व अन्य कार्य करने के लिए किया जाता है।

द्वि-दीवार रसोईघर—इस योजना में रसोईघर के उपकरणों की व्यवस्था कमरे की दो समानान्तर दीवारों के सहारे की जाती है। इस योजना में रसोईघर के कार्यों की व्यवस्था दो दीवारों के सहारे कई प्रकार से की जाती है परन्तु भोजन करने के लिए इसमें स्थान नहीं बचता। रसोईघर की शेष दो विपरीत दीवारों में दरवाजे हों तो बीच का रिक्त स्थान आने जाने के लिए मार्ग के रूप में प्रयुक्त होता है, उसे किसी अन्य कार्य में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता।

एक दीवार वाले रसोईघर—इस प्रकार के रसोईघर उन घरों में आयोजित किए जाते हैं जहाँ घर छोटा है व स्थान की कमी है। इस व्यवस्था में कमरे की केवल एक ही दीवार का उपयोग रसोईघर के लिए किया जाता है। इस व्यवस्था के रसोईघर में कार्य के तीनों क्षेत्र एक ही दीवार के सहारे व्यवस्थित किए जाते हैं। रेफ्रीजरेटर और वस्तु संग्रह दीवार के विपरीत सिरों पर होने चाहिये। कमरे की शेष तीन
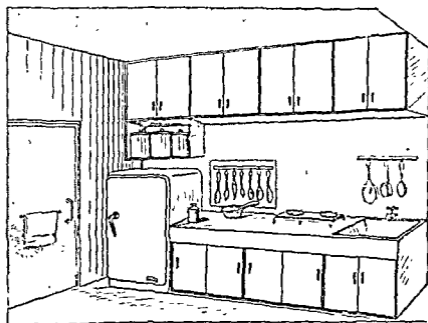
एक दीवार वाला रसोईघर

दीवारों का उपयोग भोजन करने, लिखाई, बुनाई-सिलाई, इस्त्री करने आदि कार्यों में किया जा सकता है। इन तीनों दीवारों में से किसी भी दीवार पर वस्तुओं को रखने के लिए अल्मारियाँ भी बनाई जा सकती हैं। यदि रसोईघर पर्याप्त बड़ा है तथा घर में स्थानाभाव के कारण बैठक की व्यवस्था नहीं है तो हम कमरे के बीच में खाना खाने की मेज और शीशे के बर्तन तथा भोज्य पदार्थ रखने की अल्मारी (Side Board) रखकर शेष भाग को बैठक के काम में लाया जा सकता है।

कुछ रसोईघर ऐसे भी होते हैं जिनमें प्रत्येक दीवार में दरवाजे होते हैं, इसलिए कार्य के तीनों क्षेत्र पूर्णतः पृथक्-पृथक् हो जाते हैं। पृथक्-पृथक् होने के कारण गृहिणी को असुविधा हो जाती है तथा उसे कार्य की अवधि में अधिक चलना भी पड़ता है।

सभी प्रकार के रसोईघर आयोजनों में कार्य के केन्द्रों के मध्य आने-जाने के मार्ग का, विभिन्न कार्य करने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान तक चलने की दूरी का

अध्ययन स्थायी व्यवस्था करने से पूर्व वांछनीय है। रसोईघर के बड़े-बड़े उपकरण फर्श की योजना के माप के अनुसार व्यवस्थित किए जा सकते हैं तथा उन्हें सर्वोत्तम व्यवस्था की दृष्टि से एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित किया जा सकता है। किसी भी योजना की कुशलता का परीक्षण किसी भोज्य सामग्री की काल्पनिक तैयारी या भोजन परोसने के बाद बर्तनों को धोने और उनका संग्रह करने के माध्यम से किया जा सकता है। विविध रसोईघर प्रक्रियाओं में कार्य-केन्द्रों के मध्य आने-जाने तथा प्रत्येक केन्द्र पर कार्य सम्पादित करने से उपकरणों का सर्वाधिक कुशल ढंग से समूहीकरण करने के लिए संकेत या निर्देश प्राप्त होगा।

रसोईघर में ईंधन

खाना पकाने के लिए ताप की आवश्यकता होती है। ताप की उत्पत्ति के लिए विभिन्न प्रकार के ईंधन प्रयुक्त किए जाते हैं। खाना पकाने के लिए किस प्रकार का ईंधन काम में लाया जाए यह प्रश्न गृहिणी के लिए विशेष महत्त्व का है। साधारणतः हमारे गाँव में लकड़ी व उपले तथा शहरों में लकड़ी और पत्थर के कोयले जलाने के काम में लाए जाते हैं। कुछ शहरी परिवारों में मिट्टी के तेल का स्टोव, गैस का स्टोव तथा विद्युत का स्टोव भी भोजन पकाने के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं। प्रत्येक गृहिणी को अपनी सामर्थ्य और परिस्थितियों के अनुकूल ईंधन का चुनाव करना पड़ता है। ईंधन के रूप में प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न सामग्रियों का वर्गीकरण उनके स्वरूप के आधार पर निम्नानुसार किया जा सकता है—

(१) ठोस ईंधन, (२) तरल ईंधन, (३) गैस तथा (४) विद्युत।

(१) ठोस ईंधन—इस वर्ग के अन्तर्गत लकड़ी व लकड़ी का कोयला, कण्डे .. पत्थर का कोयला सम्मिलित होते हैं।

लकड़ी—हमारे देश में लकड़ी का खाना पकाने के लिए सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। लकड़ी जंगलों से प्राप्त होती है। देश के भिन्न क्षेत्रों में जंगल अधिक हैं वहाँ लकड़ी पर्याप्त मात्रा में और सस्ती मिल जाती है। लकड़ी जलाने के चूल्हे प्रायः जमीन पर बने होते हैं। चूल्हे के पास जमीन पर या पट्टे पर बैठकर गृहिणी खाना बनाती है। लकड़ी का उपयोग करने पर धुएँ से बचने का पूरा प्रबन्ध करना चाहिए। धुएँ से न केवल आँखों को ही कष्ट होता है वरन् रसोई का सब सामान व रसोईघर काला व गन्दा हो जाता है। धुएँ के निकास के लिए चूल्हे के ऊपर चिमनी की व्यवस्था होनी चाहिए।

उपले—उपलों को लकड़ी के साथ जलाने के काम में लेते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में इनका उपयोग अधिक किया जाता है। गाँवों में पशुओं के गोबर को एकत्रित करके गृहिणियाँ उपले बना लेती हैं। लकड़ी के समान उपले भी अधिक धुआँ देते हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से इनको एकत्रित करके रखना हानिकारक होता है, क्योंकि इनसे, विशेषकर बरसात में मच्छर उत्पन्न हो जाते हैं जो कि मलेरिया के जन्मदाता हैं।

लकड़ी का कोयला—यह कोयला लकड़ी को जलाकर तैयार किया जाता है। इसका उपयोग लकड़ी की अपेक्षा अधिक व्ययसाध्य होता है। इसका उपयोग अधिकांशतः शहरी क्षेत्र के निम्न मध्यम वर्ग के लोग करते हैं। लकड़ी के कोयला का उपयोग अंगीठी में किया जाता है। लकड़ी के कोयले पर खाने पकाने से धुआँ की हानियों से बचा जा सकता है, यद्यपि इस ईंधन पर खाना बनाने में समय अपेक्षाकृत अधिक व्यय होता है। जलते समय यह कोयला लाल रंग की रोशनी देता है।

पत्थर का कोयला (Coke)—यह घरेलू कार्यों के लिए ताप का अति उत्तम साधन है। कोल को जलाकर पत्थर का कोयला तैयार किया जाता है। इसे जलाने में कठिनाई अवश्य होती है, किन्तु यह पर्याप्त सस्ता रहता है तथा एक बार सुलग जाने के पश्चात् अधिक देर तक प्रयुक्त किया जा सकता है। यह कोयला सुलग जाने के पश्चात् धुआँ नहीं देता तथा बर्तन भी काले नहीं होते। इसका ताप बड़ा तीव्र होता है यदि मन्द ताप पर कोई वस्तु पकानी हो तो देगची-पतीली के नीचे तवा रखकर इसके ताप की तीव्रता को कम किया जा सकता है।

(२) तरल ईंधन (Liquid Fuel)—इस वर्ग के अन्तर्गत मिट्टी का तेल, पैट्रोलियम, स्पिरिट, अल्कोहल आदि आते हैं। इनमें से मिट्टी का तेल सबसे अधिक सस्ता होता है। हमारे देश में मिट्टी के तेल का अत्यधिक उपयोग किया जाता है। इस तेल का उपयोग आग जलाने व लैम्प जलाने के काम में भी किया जाता है। मिट्टी का तेल विभिन्न प्रकार के स्टोवों में प्रयोग किया जाता है। स्टोवों पर खाना बड़ी स्वच्छता, सरलता व सुविधापूर्वक बनाया जा सकता है। इसमें धन, समय व शक्ति की बचत होती है। साधारणतः मिट्टी के तेल वाले दो प्रकार के स्टोव अधिक प्रचलन में है—(१) बिना बत्ती वाले (२) बत्ती वाले। बिना बत्ती वाले स्टोव को जलाने के लिए स्पिरिट का उपयोग किया जाता है।

(३) गैस—आजकल शहरी क्षेत्र के सम्पन्न परिवारों में गैस का ईंधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। विदेशों में तो गैस का अत्यधिक उपयोग किया जाता है। यह ईंधन का अत्यधिक सुविधाजनक साधन है। इसका प्रयोग करने पर घर में धुआँ नहीं फैलता। श्रम व शक्ति की बचत होती है। इसे जलाने में तथा इस पर खाना पकाने में अधिक समय भी व्यय नहीं होता। परन्तु यह ईंधन अत्यधिक व्ययसाध्य होता है। इसलिए प्रत्येक परिवार इसका उपयोग नहीं कर सकता।

(४) विद्युत—विद्युत का उपयोग भी भोजन पकाने के लिए ईंधन के रूप में किया जाता है। आजकल बिजली ग्रामीण क्षेत्रों में भी पहुँच गई है, इसलिए ईंधन के रूप में ग्रामीण क्षेत्रों के सम्पन्न परिवारों में इसका प्रयोग किया जाने लगा है। बिजली के चूल्हे व अंगीठी के माध्यम से इसका उपयोग किया जाता है। बिजली के चूल्हे पर भोजन बड़ी सरलता व शीघ्रता से बनाया जाता है। धुएँ की हानियों से बचा जा सकता है, क्योंकि इसमें धुआँ नहीं होता। बिजली द्वारा भोजन पकाने से रसोईघर गन्दा भी

नहीं होता। बिजली द्वारा भोजन पकाना अधिक व्ययसाध्य होता है, इसलिए सम्पन्न परिवार ही इसका उपयोग कर सकते हैं। पाश्चात्य देशों में इसका उपयोग अत्यधिक किया जाता है।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. रसोईघर गृहिणी का मुख्य कार्य-केन्द्र क्यों माना गया है ?

२. रसोईघर के निर्माण की योजना बनाते समय किन बातों की ओर ध्यान देना चाहिए ?

३. रसोईघर के विभिन्न कार्य-क्षेत्र कौन-कौन-से हैं ? प्रत्येक की उपयोगिता एवं समुचित व्यवस्था का वर्णन कीजिए।

४. रसोईघर की व्यवस्था के कौन-कौन से प्रकार हैं ? प्रत्येक की विशेषताएँ बताइए।

५. रसोईघर में खाना पकाने के लिए आजकल कौन-कौन से ईंधन का प्रयोग किया जाता है ? प्रत्येक की हानि-लाभ का वर्णन कीजिए।

अध्याय १८

कला के तत्त्व

कला क्या है—कला विचार और भावों का इस ढंग से अभिव्यक्तीकरण है कि वह आनन्द प्रदान करती है। कलाकार अपने द्वारा उत्पादित वस्तु में—चाहे वह कविता हो, संगीत हो या चित्रकारी आदि—अन्तरतम की भावनाओं को प्रकाशित करता है। उनमें उसकी सच्ची भावनाएँ व संवेग प्रस्तुत किये जाते हैं। विचार और भावनाओं के अभिव्यक्तीकरण से सन्तोष का उत्पादन होता है। कलात्मक वस्तु शारीरिक इन्द्रियों की अपेक्षा मस्तिष्क और हृदय को अधिक सन्तुष्टि प्रदान करती है।

आकर्षक व सुन्दर वस्तुओं की प्रशंसा करने से मस्तिष्क को सन्तोष की प्राप्ति होती है। यदि किसी व्यक्ति में किसी वस्तु की रसानुभूति करने की क्षमता है तो उसमें सौन्दर्य-बोध भी है तथा वह कला का अर्थ भी समझता है। कला का वास उस व्यक्ति के अन्दर भी होता है जो असामान्य एवं अनोखी वस्तुओं की, चाहे वे दिन प्रतिदिन के जीवन से सम्बन्धित छोटी व अत्यन्त महत्त्व की वस्तुओं में ही क्यों न हों, प्रशंसा करता है।

किसी कला की अनुभूति व अनुकरण करने के लिए सौन्दर्य के प्रति जन्मजात प्रेम और इसे अभिव्यक्त करने की आवश्यकता का अनुभव नितान्त आवश्यक है। ऐसा व्यक्ति सदैव नई-नई योजनाएँ बनाता रहता है तथा अपने विचारों को दृश्य-स्मृतियों और रंग विभेदीकरण में रूपान्तरित करता है। आपके अन्दर कौन-सी योग्यता है तथा इसे किस ओर निर्देशित किया जाए, यह ज्ञात करने का सर्वाधिक सुन्दर माध्यम स्वेच्छा से कलात्मक वस्तुओं का सृजन करने की स्वतन्त्रता है।

कला के तत्त्व

कलाकृति के तत्त्व, जो कि समस्त दृश्य-कलाओं के मौलिक आधार हैं, रेखा, आकार, रंग, बनावट हैं। गृह-योजना व साज-सज्जा में तीन अतिरिक्त तत्त्व और

प्रयुक्त किए जाते हैं। वे हैं—नमूना (Pattern), प्रकाश तथा स्थान। नमूना अन्य तत्त्वों के समान अधिक स्पष्ट तत्त्व नहीं है। परन्तु यह एक महत्त्वपूर्ण अंग है तथा आन्तरिक सजावट की व्यावहारिक शब्दावली का एक आवश्यक शब्द है। प्रकाश और स्थान साधारणतः कला के तत्त्वों के अन्तर्गत सम्मिलित नहीं किए जाते, क्योंकि साधारण लोग उनकी अनुभूति हाल ही के कुछ दिनों से करने लगे हैं।

कला के तत्त्व चित्रकारी व मूर्तिकला में तथा उन वस्तुओं के सृजन में जो कि व्यक्ति की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं जैसे स्थापत्यकला, गृह की सज्जा, हस्तकला और औद्योगिक, व्यापारिक एवं अन्य सम्बन्धित कलाओं में, मौलिक विचारों को स्थानान्तरित करने हेतु उपकरणों का कार्य करते हैं।

यद्यपि कला के तत्त्वों का उपयोग करके सुन्दरता की प्राप्ति अनिवार्य नहीं है, तथापि इस लक्ष्य के अग्रसित होने में यह महत्त्वपूर्ण योग अवश्य देता है। अब हम कला के तत्त्वों का पृथक्-पृथक् वर्णन करेंगे।

रेखा (Line)—गृह आयोजन एवं साज-सज्जा में रेखा एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। कभी-कभी तो यह आकार का एक ऐसा अभिन्न अंग बन जाता है कि इस पर पृथक् से विचार करना कठिन हो जाता है। रेखाओं की निश्चयात्मक संवेगात्मक सार्थकता होती है जो कि उनकी दिशा और गुण पर निर्भर करती है। मानव ने कतिपय रेखाओं के साथ निश्चित प्रारम्भिक विचारों का सम्बद्ध कर दिया है, क्योंकि उसके स्वयं के शरीर की स्थितियों ने इस प्रकार के विचार उसके मस्तिष्क में उत्पन्न कर दिए हैं। जब वह लेट जाता है तो वह आराम कर रहा होता है या सो रहा होता है; इसलिए स्वाभाविक है कि पड़ी हुई रेखाएँ विश्राम, स्थिरता एवं अवधि का विचार मस्तिष्क में उत्पन्न हो। चूँकि, जब वह खड़ा होता है तो सावधान की स्थिति में होता है और कार्य करने के लिए तत्पर होता है, इसलिए खड़ी रेखाएँ सजीवता एवं क्रियाशीलता के विचार का संकेत मस्तिष्क में उत्पन्न करती हैं। चूँकि वह दौड़ने व वस्तुओं को खींचने के लिए आगे की ओर झुकता है, इसलिए तिरछी रेखाएँ निश्चित ही गतिशीलता एवं शक्ति का संकेत करती हैं। विश्राम और खेल में शरीर वक्राकार आसन ग्रहण करता है, इसलिए वक्र रेखाएँ शालीनता और नमनीयता प्रकट करती प्रतीत होती हैं।

आन्तरिक सज्जा में सरल रेखाएँ संवेगात्मक की अपेक्षा बौद्धिक, रोमांचकारी की अपेक्षा शास्त्रीय तथा कभी-कभी तीव्र और पुरुषत्व-प्रधान समझी जाती हैं। यदि वक्र रेखाएँ भली प्रकार बनाई गई हैं तथा उनका उपयोग ठीक तरह किया गया हो तो उनका उपयोग अधिक आनन्द, सूक्ष्मता एवं सम्पन्न प्रभाव डालने वाला होता है, अन्यथा वे निर्बलता व अस्थिरता का सूचक होती हैं। तिरछी रेखाएँ अत्याधिक क्रियाशीलता प्रकट करती हैं इनका उपयोग घर में अत्याधिक नहीं करना चाहिए, क्योंकि वे बेचैनी को व्यक्त करती हैं।

आकार (Form)—शब्द आकार का उपयोग सामान्यत: द्विविमित्तीय (Two-dimensional) क्षेत्रों या आकृतियों तथा त्रिविमित्तीय (Three dimensional) आयतन या संहति (mass) में प्रयुक्त हुआ समझा जाता है। गृह-आयोजन में आकार सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है। आकार की सुन्दरता के अभाव में श्रेष्ठतम रंग, बनावट और सजावट व्यर्थ ही हैं। कई जीवनोपयोगी वस्तुओं का आकार इतना सुन्दर हो सकता है कि वे ललित कलाओं के समान मानव को प्रोत्साहित कर सकती हैं।

अच्छे आकार की दो आवश्यक विशेषताएँ होती हैं। सर्वप्रथम तो वस्तु का आकार उसकी कार्यात्मक उपयोगिता के अनुकूल होना चाहिये। दूसरे जिस पदार्थ से वह वस्तु बनी है, उस पदार्थ से वह पूर्णत: प्रभावित होनी चाहिये।

गृह की साज-सज्जा की वस्तुओं का सज्जीकरण करते समय आकार की अनुरूपता नितान्त आवश्यक है। एक प्रकार के आकार अथवा आकृति की प्रबलता सम्पूर्ण प्रभाव को एकीभूत करती है। जिस आकृति पर अधिक बल दिया गया है, उसी के अनुरूप अन्य सहायक वस्तुएँ भी होना कम महत्वपूर्ण नहीं है।

बनावट (Texture)—बनावट शब्द का प्रयोग मूलत: केवल वस्त्रों के लिए किया जाता था परन्तु अब यह सामान्यत किसी वस्तु के धरातल के स्पर्शीय गुण के लिए प्रयुक्त होता है। बोलचाल की भाषा में बनावट का अर्थ उन गुणों से होता है जिनका प्रत्यक्ष ज्ञान स्पर्शेन्द्रिय के माध्यम से हो सके। यद्यपि बचपन में हम सर्वप्रथम बनावट सम्बन्धी अन्तर को अनुभूत करके पहचान पाते हैं, परन्तु बड़े होने पर वस्तु के स्पर्श किए बिना ही उसके स्पर्श सम्बन्धी गुण का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

गृह आयोजक एवं सजावट करने वाले की दृष्टि से निम्नलिखित बनावटें उपयोगी हैं—

१. कुरकुरा (Crisp)
२. कोमल (Delicate)
३. फरी (Furry)
४. चिकना (Glossy)
५. रोएदार (Hairy)
६. तीखा (Harsh)
७. छिद्रयुक्त (Porous)
८. चर्म जैसा (Leathery)
९. समतल (Level)
१०. धातुयीय (Metallic)

११. चट्टानी (Rocky)
१२. खुरदुरा (Rough)
१३. रबड़ के समान (Rubbery)
१४. बालू सदृश (Sandy)

बनावट का उपयोग

बनावट कला का वह तत्त्व है जो वस्तुओं, आन्तरिक भागों, भवनों और भूदृश्य-उद्यानों को विशेषता और सुन्दरता प्रदान करने की दृष्टि से मूल्यवान है। कुछ क्षेत्रों में बनावट की लगभग उपेक्षा ही कर दी गई है, परन्तु बनावट में रुचि की एक तीव्र लहर उत्पन्न हो गई है जिसके कारण समस्त दृश्य-कलाओं में इसको एक सबल और महत्त्वपूर्ण कारक के रूप में माना जाने लगा है।

उन्नीसवीं शताब्दी में चित्रकार अपने समय के परिष्कार को अभिव्यक्त करते हुए यथासम्भव चिकने धरातल वाले चित्र बनाते थे। बीसवीं शताब्दी के चित्रकार तेलयुक्त रंगों का गाढ़ा, खुरदरापन व प्रबलतापूर्ण चित्र बनाते हैं।

मूर्त्तिकला का बनावट से विशिष्ट सम्बन्ध है, क्योंकि कलाकार के भाव को व्यक्त करने की दृष्टि से मूर्त्ति की बनावट अत्याधिक महत्त्वपूर्ण होती है।

वास्तुकलाकार भवन-निर्माण की सामग्री का सुन्दर उपयोग बनावट सम्बन्धी गुण प्रदान करने में करता है। विभिन्न पदार्थों की भौतिक रचना स्पर्श सम्बन्धी प्रभाव उत्पन्न करती है जिससे वस्तु को विशिष्ट गुण प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

वस्तु का चिकनापन या खुरदरापन प्रकाश को अवशोषित करने या उसे प्रतिबिम्बित करने में योग देता है। इसलिये इसकी दृश्य एवं बनावट सम्बन्धी विशेषताओं पर, बाह्य एवं आभ्यांतरिक दोनों ही बनावटों पर विचार किया जाना आवश्यक है। वास्तुकला के आधुनिक स्कूल सामग्री की बनावट के अध्ययन पर बल देते हैं।

आभ्यांतरिक सजावटकर्ता बनावट के महत्त्व के प्रति अधिकाधिक सजग हो रहे हैं। इस दिशा में और अधिक सुधार की आवश्यकता है, क्योंकि अनेक स्त्रियाँ बनावट के सम्बन्ध में बहुत कम ही जानकारी रखती हैं।

बनावट की अनुभूति में परिष्कार इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि रंग और बनावट में पारस्परिक सम्बन्ध विद्यमान है। खुरदरी बनावट और नाज़ुक रंगों में तर्कसंगतता नही हैं, जबकि उत्तम बनावट और पेस्टल रंगों में अनुरूपता है।

कमरे अथवा घर को सजाते समय सर्वप्रथम लकड़ी के फर्नीचर का चयन करना चाहिए, क्योंकि घर में प्रयुक्त अन्य सभी बनावटें लकड़ी की बनावट के अनुरूप होनी चाहिए। प्रत्येक प्रकार की लकड़ी देखने वालों में अपनी विशिष्ट भावना उत्पन्न करती है। पाइन (Pine) व ऑक (Oak) शक्ति का, महोगनी (Mahogany) और रोडवुड (Rosewood) सुन्दरता का संकेत करती है। स्पष्ट है कि ऑक और महोगनी

का फर्नीचर एक साथ प्रयुक्त नहीं किया जा सकता; अखरोट की लकड़ी वास्तव में बनावट के लिए माध्यम का कार्य कर सकती है। इसे या तो महोगनी या हल्के शाह-बलूत के साथ प्रयुक्त किया जा सकता है। महोगनी के लिए उत्तम रेशम, साटिन, मखमल आदि कोमल बनावट वाले पदार्थों की आवश्यकता होती है जब कि शाहबलूत के लिए खुरदरी बनावट वाली वस्तुओं जैसे टैपस्ट्री, बड़ी पैटर्न वाली लिनेन आदि का प्रयोग किया जाना उपयुक्त होता है।

बनावट का आधुनिक उपयोग रचनात्मक है।

नमूना (Pattern)

नमूने शब्द का सम्बन्ध किसी प्रकार के बाह्य धरातल की सजावट से होता है तथा इसका प्रयोग द्विविमितीय और त्रिविमितीय दोनों ही प्रकार की वस्तुओं के लिए किया जाता है। आभ्यान्तरिक सजावट में सजावट सम्बन्धी डिजाइन या अलंकरण की अपेक्षा शब्द नमूने का प्रयोग उत्तम होगा, क्योंकि सजावटकर्ता, विक्रेता एवं जनता नमूनेदार या आकृतिपूर्ण (Patterned या Figured) विशेषणों का अर्थ सादा का विरोधी ही समझते हैं।

धरातलीय नमूना कमरे की सजीवता और रोचकता में वृद्धि करता है। कई नीरस कमरों की उदासीनता नमूनों के अभाव में बढ़ जाती है, जबकि उत्तेजक या क्रियाशीलतापूर्ण कमरे में कई नमूने होते हैं। एक कमरे में कितने नमूने होने चाहिए, इस सम्बन्ध में मतभेद हैं। परन्तु यह साधारणतः एक रिवाज है कि धरातल के कुल क्षेत्र के चौथाई भाग पर नमूने होने हैं। यदि दीवारें और धरातल सादे हैं तो पर्दे और दो-तिहाई गद्दियों के वस्त्र नमूनेयुक्त हो सकते हैं। बड़े कमरे में छोटे कमरे की अपेक्षा अधिक नमूने हो सकते हैं।

प्रकाश (Light)

प्रकाश एक कला का तत्व भी है और व्यावहारिक दृष्टि से उपयोगी भी इसका एक निश्चयात्मक संवेगापूर्ण प्रभाव होता है। प्रकाश उत्तेजक, अन्धकार व अवसाद उत्पन्न करने वाला होता है। धूपयुक्त दिन चहल-पहल व प्रसन्नता पूर्ण होता है, जबकि धूप रहित उदासीनता उत्पन्न कर देता है। घरों में आवश्यकतानुसार पर्याप्त प्रकाश की व्यवस्था होनी चाहिए।

छाया भी बाह्य और आन्तरिक सजावट की दृष्टि से महत्वपूर्ण कारक है। भवन-निर्माणकर्ता बल प्रदान करने हेतु, सामने के दरवाजे, ड्योढ़ी की छतों के नीचे, ऊँचे-नीचे धरातल पर छाया का उपयोग करते हैं।

कमरे की दिखावट में दिन का प्रकाश इतना अधिक महत्वपूर्ण कारक है कि सजावट की कोई भी योजना खिड़कियों की संख्या, घर में प्रविष्ट होने वाली धूप की मात्रा, पेड़ और बेलें जो प्रकाश को रोकती हैं तथा किस मौसम में कमरे का [illegible] सर्वाधिक होता है आदि बातों का विचार किए बिना निर्मित नहीं हो सकती

के प्रकाश की वांछित मात्रा शीशे की दीवारों अथवा फर्श से छत तक विस्तृत बड़ी खिड़कियों के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। प्रकाश की मात्रा को रहने वाले की आवश्यकतानुसार सरलता से नियंत्रित करने के लिए गतिशील पर्दे प्रयुक्त किए जाने चाहिए।

आधुनिक कृत्रिम प्रकाश, विशेषकर विद्युत प्रकाश, केवल कार्यात्मक उपयोगिता की दृष्टि से ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, वरन् अद्भुत लचीली कला का माध्यम भी है। जिस प्रकार कोई कलाकार चित्र में प्रकाश का उपयोग करता है, उसी प्रकार कृत्रिम प्रकाश को कमरे में प्रयुक्त किया जाना चाहिए। कृत्रिम प्रकाश पूरे कमरे में अपनी किरणें बिखेर कर एकता उत्पन्न कर सकता है। महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में तेज प्रकाश व शेष क्षेत्रों में छाया के द्वारा बल और विरोध प्रदर्शित किया जा सकता है। बल के विविध बिन्दुओं को एक दूसरे से सहसम्बन्धित करके कृत्रिम प्रकाश द्वारा कमरे की सज्जा में लय और निरन्तरता उत्पन्न की जा सकती है।

स्थान (Space)

रचनात्मक कला के तत्त्व के रूप में स्थान का महत्त्व हाल ही के कुछ वर्षों से पहचाना जाने लगा है। स्थान का संगठन आधुनिक स्थापत्यकला तथा आन्तरिक सजावट की दृष्टि से बुनियादी महत्त्व रखता है।

स्थान की सुन्दरता के बोध के कारण हम असुसज्जित दीवारें और फर्श चाहने लगे हैं। हम कम मात्रा में फर्नीचर प्रयुक्त करना चाहते हैं तथा उसे एक ही स्थान पर केन्द्रित करना पसन्द करते हैं इसका प्रमुख कारण रिक्त स्थान की प्रशंसा का भाव है, ताकि हमें कमरे में शान्त रिक्त स्थान पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सके।

आधुनिक प्रवृत्ति यह है कि पूरे घर में पर्याप्त खुली जगह हो। घर के अन्दर बड़े-बड़े दरवाजे लगाए जाने लगे हैं। कमरों के मध्य में कम-से-कम दीवारें आड़ के लिए लगाई जाती हैं। घर के अन्दर की जगह को बाहर की लम्बी-चौड़ी जगह से शीशे की दीवारों, बड़े-बड़े दरवाजों व खिड़कियों के द्वारा सह सम्बन्धित किया जाता है।

डिजाइन के सिद्धान्त

डिजाइन अथवा विन्यास के स्पष्ट रूप से परिभाषित कुछ सिद्धान्त हैं जिनका चित्रकारी, मूर्ति-निर्माण, भवन-निर्माण-कला, हस्तकला, औद्योगिक कलाएँ, व्यापारिक-कलाएँ तथा अन्य कलाओं में समानरूप से प्रयोग किया जाता है। ये सिद्धान्त सुन्दरता की रचना करने के लिए सूत्रों के समान प्रयुक्त नहीं होते, वरन् वे तो यह निर्धारित करने में सहायता मात्र करते हैं कि कोई वस्तु कलात्मक दृष्टि से अच्छी या बुरी क्यों है।

डिजाइन के ६ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त हैं—समानुपात (Proportion), सन्तुलन

(Balance), बल (emphasis), लय (Rhythm), आवृत्ति (Repetition) तथा अनुरूपता (Harmony)। इनके अतिरिक्त कुछ कम महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त भी हैं। ये सिद्धान्त हैं—एकान्तरण (Alternation), अनुक्रम (Sequence), विकिरण (Radiation), समानान्तरण (Parallelism), संक्रमण (Transition), समसिति (Symmetry) तथा विरोध (Contrast)। इस अध्याय में डिजाइन के केवल महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों का ही विस्तार से वर्णन किया जा रहा है।

समानुपात (Proportion)

समानुपात का सिद्धान्त कला के अन्य सभी सिद्धान्तों में व्याप्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार किसी वस्तु के विभिन्न अंगों के मध्य अथवा किसी एक ही समूह की विभिन्न वस्तुओं के मध्य के सम्बन्ध आकर्षक व मनोरंजक होने चाहिए। इसमें आकार, आकृति, रंग, प्रकाश, बनावट तथा नमूने विषयक सम्बन्धों की व्याख्या की जाती है। इसलिए इस सिद्धान्त को कभी-कभी 'सम्बन्धों के नियम' के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है।

किसी घर के बाह्य भाग के स्वरूप का निर्धारण समानुपातों के द्वारा ही होता है। सर्वप्रथम घर का सम्पूर्ण बाह्य स्वरूप जो कि लम्बाई के अनुपात में ऊँचाई पर निर्भर करता है, इसके पश्चात् छत, दीवार और उसकी नींव के समानुपात तथा अन्त में दरवाजे, खिड़की तथा अन्य वस्तुओं के सम्बन्धों पर जिनको कि एकीकृत पूर्णता प्रदान करने के लिए संगठित किया जाना आवश्यक होता है। कमरों तथा गृह सज्जा की प्रत्येक वस्तु की आकृति का निर्धारण उनके समानुपातों के आधार पर करना चाहिए। फूलदान की आकृति और फूल-सज्जा की ऊँचाई समानुपात सम्बन्धी समस्या ही है। गृहिणी में समानुपात पहचानने की योग्यता का होना नितान्त आवश्यक है।
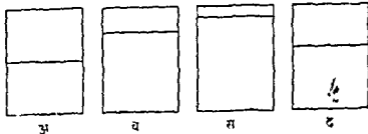
उपर्युक्त आकृतियों को एक-एक रेखा द्वारा विभाजित किया गया है। प्रत्येक आकृति के विभाजित क्षेत्रों के समानुपात भिन्न-भिन्न हैं। इन समानुपातों के आधार पर कुछ आकृतियाँ दूसरे की अपेक्षा अधिक आकर्षक प्रतीत होती हैं। आकृति अ और ब में विभाजन अत्यधिक सरल है, इसलिए अधिक आकर्षक नहीं लगता, यद्यपि अ के विभाजन से ब का विभाजन कहीं अधिक आकर्षक है। 'स' आकृति में दोनों भाग एक दूसरे से अत्यधिक भिन्न हैं।

आकृति 'द' में आधे से अधिक भाग को विभाजित करने वाली रेखा खींची गई है। यह विभाजन मस्तिष्क को आनन्ददायक प्रतीत होता है, क्योंकि तुलना करने की दृष्टि से दोनों भाग लगभग समान-से प्रतीत होते हैं तथा आकर्षण की दृष्टि से उनमें पर्याप्त भिन्नता भी है।

माप (Scale)

समानुपात एक विस्तृत अर्थ-सूचक शब्द है। आकृतियों को महत्व दिए बिना जब सापेक्षिक आकारों (Sizes) पर विचार किया जाता है तो उस दृष्टि से समानुपात शीर्षक के अन्तर्गत माप शब्द अधिक उपयुक्त है। बगीचे के डिजायन, बाह्य घर के डिजाइन, आन्तरिक घर के डिजाइन तथा फर्नीचर के डिजाइन में सही माप अर्थात् आकार में तर्क युक्तता का होना अनिवार्य होता है।

बगीचे के डिजायन में ऐसे पेड़-पौधों का चयन करना आवश्यक है जो जमीन और घर की माप के अनुकूल हों। बाह्य घर के डिजाइन में दरवाजों, खम्भों, औलाती आदि का माप घर के आकार के अनुसार होना नितान्त आवश्यक है।

गृह-सज्जा में माप चार विभिन्न विधियों से प्रयुक्त किया जाता है। किसी कमरे में रखी जाने वाली प्रत्येक वस्तु उस कमरे तथा कमरे की अन्य वस्तुओं के माप के अनुकूल होनी चाहिए। प्रत्येक वस्तु के संरचनात्मक अंग (Structural) एक दूसरे व पूरी वस्तु के माप के अनुकूल हों। प्रत्येक वस्तु की सज्जा उसके माप के अनुसार होनी चाहिए।

नाप में जो सामान्य त्रुटि की जाती है वह यह है कि अनुपयुक्त आकार की वस्तुओं का संयोजन कर दिया जाता है; उदाहरणार्थ छोटी मेज पर बड़े लैम्प; छोटे फूलदान में बड़े गुलदस्ते, दीवारों पर छोटे चित्र टांग देना, बड़ी मेज पर छोटी-छोटी कलात्मक वस्तुएँ रखना। यदि वस्तुएँ आकार में किसी समूह विशेष की वस्तुओं से मेल नहीं खातीं तो उन्हें उस समूह में सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि उस समूह में उनका सम्मिलित किया जाना मस्तिष्क को उचित प्रतीत नहीं होता।

सन्तुलन (Balance)

जीवन में सर्वत्र सन्तुलन पाया जाता है। जिस प्रकार जीवन के लिए सन्तुलन आधारभूत है, उसी प्रकार दृश्य-कलाओं के लिए भी सन्तुलन आधारभूत है। सन्तुलन का विचार इतना सरल है कि लगभग प्रत्येक व्यक्ति यह तथ्य भली-भाँति समझ सकता है कि स्थिरता, विश्राम और सन्तुलन को भावना केन्द्र बिन्दु के दोनों ओर विद्यमान आकर्षणों के समानीकरण का ही परिणाम है। यथार्थ में सन्तुलन विश्राम व स्थिरता की स्थिति है। डिजाइन में सन्तुलन इतना स्वाभाविक होता है कि हम इससे बिल्कुल ही अनभिज्ञ रहते हैं। परन्तु जैसे ही सन्तुलन भंग हो जाता है तो हमें बेचैनी अथवा क्रोध का बोध होने लगता है। गोल्डस्टेन ने सन्तुलन की व्याख्या करते हुए लिखा है—"सन्तुलन आराम अथवा विश्राम है। यह विश्रामदायक प्रभाव आकृतियों

और रंगों को एक केन्द्र-बिन्दु के चारों ओर इस प्रकार समूहीकृत करके प्राप्त किया जाता है कि केन्द्र के प्रत्येक ओर समान आकर्षण स्थित रहे।"[1]

रंग, बनावट, नमूना, प्रकाश तथा भार में सन्तुलन प्राप्त करना नितान्त आवश्यक है। कलाकार अपनी कृति को आकर्षक व मनोहारी तभी बना सकता है, जबकि उक्त समस्त क्षेत्रों में सन्तुलन का पूर्णतः ध्यान रखे।

सन्तुलन दो प्रकार का होता है—(१) औपचारिक (Formal), (२) अनौपचारिक (Informal).

(१) औपचारिक सन्तुलन—यह देखा गया है कि विचाराधीन स्थान का केन्द्र वह बिन्दु है जिसके चारों ओर समस्त आकर्षण समायोजित होते हैं। केन्द्र-बिन्दु से समान दूरी पर दोनों ओर समान भार की वस्तुएँ रखी जाती हैं तो इसका परिणाम औपचारिक सन्तुलन होता है। यदि केन्द्र के दोनों ओर रखी वस्तुएँ रूप, शक्ल में भी एक-सी हैं तो उसे द्वि-सममितीय (Bi-Symmetrical) सन्तुलन कहेंगे। परन्तु यदि ये वस्तुएँ एक जैसी नहीं हैं तो उसे केवल औपचारिक सन्तुलन ही कहेंगे।

(२) अनौपचारिक सन्तुलन—इसे असममितीय (Asymmetrical) सन्तुलन भी कहते हैं। जब वस्तुओं को इस प्रकार सजाया जाता है कि भारी व बड़ी वस्तु केन्द्र के पास तथा छोटी व हल्की वस्तु केन्द्र से दूर रखकर सन्तुलन स्थापित किया जाता है तो यह अनौपचारिक सन्तुलन कहलाता है। अनौपचारिक सन्तुलन में पर्याप्त विविधता पाई जाती है। औपचारिक सन्तुलन की अपेक्षा यह अधिक कठिन होता है।

औपचारिक सन्तुलन बुद्धि-प्रधान है, अनौपचारिक सन्तुलन में बुद्धि और भावना दोनों का ही प्रयोग होता है। अनौपचारिक सन्तुलन औपचारिक सन्तुलन की अपेक्षा अधिक रचनात्मक होता है, क्योंकि इसके निर्धारण के लिये निर्देशनात्मक नियम नहीं है। औपचारिक सन्तुलन अपेक्षाकृत सरल और कम जटिल तथा अधिक निष्क्रिय होता है।

आधुनिक गृह-सुसज्जा में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों ही प्रकार के सन्तुलन प्रयुक्त किए जाते हैं, क्योंकि एक ही प्रकार के सन्तुलन का प्रयोग करने से गृह-सुसज्जा नीरस हो जाती है।

कुछ प्रकार के मकानों के बाह्य डिजाइन औपचारिक सन्तुलन का प्रयोग करके श्रेष्ठता और एकान्तता को व्यक्त करते हैं। जिन घरों में औपचारिक सन्तुलन का प्रयोग किया जाता है उनमें मैत्री व आतिथ्य-सत्कार का भाव अभिव्यक्त होता है।

घर के भीतरी भाग में प्रयुक्त सन्तुलन उसमें सरक्षित संवेगात्मक प्रभाव को निर्धारित करने में सहायता प्रदान करता है। यदि किसी कमरे को औपचारिक सन्तु-

---

1. Harriet and Vells Goldstein, Art in Every Day Life : p. 86 1963.

लन पद्धति से सजाया गया है तो स्वाभाविक है कि उससे औपचारिकता का भाव प्रकट होगा। इसलिए छोटे कमरे या घर अथवा ऐसा स्थान जो प्रसन्नतापूर्ण हो, जहाँ नवयुवक रहते हों उसमें यह सन्तुलन उपयुक्त नहीं होता।

फर्नीचर विन्यास में प्रयुक्त करने की दृष्टि से सन्तुलन का सिद्धान्त अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

वल (Emphasis)

प्रायः यह देखा जाता है कि किसी वस्तु की सजावट में समानुपात और सन्तुलन के सिद्धान्त का कितना भी ध्यान क्यों न रखा गया हो, फिर भी उस वस्तु की सजावट हमारे ध्यान को पर्याप्त मात्रा में आकर्षित कर सकने में अधिक सफल नहीं हो पाती। इसका प्रमुख कारण यह है कि उसमें ऐसा कोई विशिष्ट विन्दु नहीं होता जो ध्यान को तेजी से आकर्षित कर सके। दूसरे शब्दों में उसमें वल का अभाव है। इस कमी के कारण ही आनन्द की सक्रिय अनुभूति नहीं हो पाती।

वल कला का वह सिद्धान्त है जिसके द्वारा हमारा ध्यान सर्वप्रथम सजी हुई वस्तु के उस विन्दु की ओर आकर्षित होता है जो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती है। उस विन्दु से महत्त्व की तीव्रता के अनुसार अन्य वस्तुओं की ओर ध्यान जाता है। जिस किसी विशेष गुण पर हम वल दे रहे हैं, उसके अतिरिक्त अन्य वस्तुएँ या गुण सरल और कम आकर्षक होने चाहिए। किसी भी साज-सज्जा में विचार, आकार, रंग आदि पर वल दिया जा सकता है।

घर को सजाते समय वल के सिद्धान्त का प्रयोग करना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो घर के प्रत्येक कमरे में आकर्षण का केन्द्र होना चाहिए। यह केन्द्र-विन्दु कमरे में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होता है तथा इसमें ध्यानाकर्षण की क्षमता भी होनी चाहिए। यह सदैव वांछनीय नहीं कि एक विशिष्ट गुण को सर्दी और गर्मी में अथवा दिन और रात में वल प्रदान किया जाए। परिस्थितियों व वातावरण के अनुसार वल प्रदान करने का केन्द्र परिवर्तित होता रहता है।

जब कोई वस्तु सजाने के लिए चुनी गई है तो उसे सजाते समय वल के सिद्धान्त का प्रयोग करना चाहिए। सजाने वाले को वांछित सफलता तभी मिल सकती है जब कि उसे निम्नलिखित वातों का पूर्ण ज्ञान हो—

(१) किस चीज पर वल दिया जाए ?

(२) किस प्रकार वल दिया जाए ?

(३) कितना वल दिया जाए ?

(४) कहाँ वल दिया जाए ?

किस चीज पर वल दिया जाय—सजाने का कार्य करने से पूर्व कार्य की स्पष्ट योजना वना लेनी चाहिए। योजना वनाते समय यह तथ्य ध्यान में रखना चाहिए कि किन वातों को वह सबसे अधिक व किन वातों को सबसे कम महत्त्वपूर्ण समझते

हैं। सजावट में सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण के विषय में विविधता हो सकती है परन्तु जो सबसे कम महत्व की है वह एक ही होनी चाहिए, अर्थात् वह पृष्ठभूमि जिसके विपरीत वस्तु महत्वपूर्ण दिखाई देती है। अतः जिस पृष्ठभूमि पर हमें किसी वस्तु को बल प्रदान करना है वह पृष्ठभूमि वस्तु की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण होनी चाहिए। पृष्ठभूमि और प्रमुख वस्तु के रंगों को भी दृष्टिगत रखना चाहिए।

बल किस प्रकार दिया जाए—बल प्रदान करने अथवा अवधान का आकर्षण केन्द्र बनाने के कई साधन हैं, उनमें से प्रमुख निम्नानुसार हैं—

(१) वस्तुओं के समूह बनाकर—वस्तुओं के समूह में अव्यवस्था प्रतीत नहीं हो। समूह की वस्तुओं में कुछ भिन्नता है परन्तु उनको इस प्रकार संगठित किया जाय कि समूह में एकता प्रतीत हो। कमरे के केन्द्र-बिन्दु को इस प्रकार सुसंगठित किया जाना चाहिए कि सभी वस्तुएँ अपना पृथक्-पृथक् महत्त्व रखते हुए भी उनकी एकता बनी रहे। इस प्रकार वे सुन्दर दिखाई देंगी।

(२) विरोधी रंगों का उपयोग करके भी बल प्रयोग किया जाता है। हल्के और गहरे रंगों को एक साथ प्रस्तुत करने पर ध्यान बड़ी शीघ्रता से आकर्षित होता है। जिस रंग को बल प्रदान करना है उसके विपरीत रंग का धरातल होना चाहिए। उदाहरणार्थ हल्के रंग को बल देना है तो धरातल गहरे रंग का होना चाहिए।

(३) सजावट का उपयोग करके—जिस वस्तु को बल प्रदान करना हो उसे भली-भाँति सजाकर रखिए दर्शकों का ध्यान स्वतः ही उसकी ओर आकर्षित होगा। उदाहरण के लिए यदि साधारण से कपड़े का फिरॉक है उस पर लैस व कढ़ाई का प्रयोग करके उसे बल प्रदान किया जा सकता है। अत्यधिक सजी हुई वस्तु आँखों को सुन्दर लगती है। यदि सजी हुई वस्तु को सजावट व्यवस्था के मध्य में रख दिया जाता है तो वह सजावट को बल प्रदान कर देती है।

(४) वस्तुओं के चारों ओर पर्याप्त रिक्त स्थान छोड़कर—जब कोई वस्तु अपने चारों ओर रखी वस्तुओं से पृथक् कर दी जाती है तथा उसकी पृष्ठभूमि के लिए पर्याप्त रिक्त स्थान छोड़ दिया जाता है तो उसका महत्त्व बढ़ जाता है।

(५) विरोधी अथवा असामान्य रेखाओं, आकृतियों अथवा आकार द्वारा—जो वस्तुएँ रेखा, आकृति अथवा आकार की दृष्टि से असामान्य होती हैं वे अधिक आकर्षक दिखाई देती हैं। आकृति अथवा आकार में परिवर्तन करके अथवा असामान्य रेखा या रंग का प्रयोग करके वस्तुओं को बल प्रदान किया जा सकता है।

कितना बल दिया जाए—जिस वस्तु या वस्तु के अंग को हम आकर्षण का केन्द्र-बिन्दु बनाना चाहते हैं उसे उतने ही बल की मात्रा प्रदान की जाए कि वह आकर्षण का प्रधान केन्द्र भी बन जाए तथा अपने वातावरण की सुन्दरता को भी बनाए रखे।

बल कहाँ प्रदान किया जाए—यह वस्तु के आकार और स्वरूप पर तथा जिस स्थान पर यह वस्तु रखी जाएगी इन सभी बातों पर निर्भर करता है। यदि समतल स्थान पर वस्तु को रखना हो और उसे चारों ओर से देखना हो तो वह बीचोबीच में रखी जानी चाहिए। यदि किसी डिजाइन को खड़ी स्थिति में देखना हो तो नीचे की ओर पर्याप्त स्थान छोड़ देना चाहिए।

लय (Rhythm)

लय प्रकृति और कलाकृति दोनों में ही महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। समस्त प्राकृतिक तथ्यों में किसी-न-किसी मात्रा में लय होती है, इसीलिए तो वे आकर्षक व सुन्दर दिखाई देती हैं।

मनुष्य प्रकृति का अनुकरण करके कलात्मक वस्तुओं का निर्माण करता है। उसकी कला को सुन्दरता प्रदान करने में लय का अपना स्थान है। यथार्थ में लय सुसंगठित सतत गति मात्र है। यह नियमित, आवृत गति में उत्पन्न होती है और स्वतन्त्र रूप से कभी-कभी होने वाली गति से भी इसकी उत्पत्ति होती है। गोल्डस्टेन का कथन है—"कला में लय का अर्थ है एक सरल सम्बद्ध ऐसा मार्ग जिस पर आँख रेखाओं, आकारों अथवा रंगों के किसी भी विकास पर यात्रा कर सकती है इस प्रकार लय गति से सुसम्बद्ध है।"[1]

अतः स्पष्ट है कि लय का गति से अटूट सम्बन्ध है। रिक्त स्थान में कोई गति नहीं होती, ऐसे स्थान को देखकर आँख शान्त और प्रायः स्थिर रहती है परन्तु उस रिक्त स्थान पर कोई वस्तु या नमूना रख दिया जाता है तो आँखें उस वस्तु या नमूने द्वारा प्रस्तुत रेखाओं पर चलने लगती हैं अर्थात् उसी क्षण गति उत्पन्न हो जाती है। कभी-कभी गति विचलित व ध्वंसात्मक होती है ऐसी स्थिति में वह लय पूर्ण नहीं कही जाती। जब वह शांत, सुसंगठित होती है तभी वह लय पूर्ण होती है। लय दो प्रकार की होती है—

(१) नियमित लय—यह अनुरूपता और व्यवस्था उत्पन्न करने वाली सबसे अधिक सरल और प्राचीन विधि है। यह संगीत, नृत्य और काव्य का आधारीय तत्त्व है। स्थापत्य कला और आभ्यान्तरिक डिजाइन में भी इसका अधिक महत्त्व है।

जब इकाइयों को बार-बार नियमित रूप से प्रयुक्त किया जाता है तो उनके मध्य में एक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। उसी को नियमित लय कहते हैं। इसका उपयोग गृह की साज-सज्जा, वस्त्रों की कढ़ाई व छपाई आदि में किया जाता है।

(२) स्वच्छन्द लय (Variable Rhythm)—विषम अंगों को अनियमित अन्तरों के साथ प्रयुक्त करने पर स्वच्छन्द लय की उत्पत्ति होती है। इस लय में नेत्र को

---

1. Goldstein Harriet Q Velte, Art In Everyday life, 1961, chapt. VI, p, 108.

नियमित रेखा पर यात्रा करनी पडती है अथवा यह ध्यान को एकाएक एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर वाछित संवेगात्मक प्रभाव सम्वाहित करने हेतु वाध्य करती हैं। इस प्रकार की लय का प्रयोग नेत्र को सम्पूर्ण चित्रकारी देखने के लिए आकर्षित करने हेतु किया जाता है। यह लय फर्नीचर के समूह मे समस्त वस्तुओं को संयोजित करती है तथा प्रत्येक समूह को पडोस के अन्य समूह से सम्वद्ध करती है। स्वच्छन्द लय का प्राकृतिक दृश्यो और वक्ररेखीय अथवा तिरछे प्रकार के पुष्पों के विन्यास (Arrangement) में प्राधान्य होता है।

गृह की वाह्य और आभ्यान्तरिक साज-सज्जा मे दोनो ही प्रकार की लय का प्रयोग किया जा सकता है। गृहिणी रुचि के अनुकूल फर्नीचर सजाने या अन्य गृह सम्बन्धी सजावट करने में किसी एक या दोनों ही प्रकार की लय का प्रयोग करके घर को आकर्षक बना सकती है।

लय सम्बन्धी गति प्राप्त करने की तीन प्रमुख विधियाँ हैं—

(१) आकृति की आवृत्ति द्वारा लय प्राप्त करना— जब कोई आकृति (Shape) नियमित रूप से एक निश्चित अन्तर के पश्चात् दुहराई जाती है तो उसमें एक गति उत्पन्न हो जाती है जो नेत्र को एक इकाई से दूसरी इकाई की ओर इस ढंग से ले जाती है कि किसी को इस पृथक् इकाई का बोध नही हो पाता। यह रोचक तथ्य स्मरणीय है कि आकृति की पुनरावृत्ति रेखाओं की सख्या, विश्राम का प्रभाव प्रदान करती है तथा कभी-कभी एक आवृत्ति जिसका अकेले प्रयुक्त करना कठिन होता, अब उसकी छोटे-छोटे अन्तर के पश्चात् सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जा सकता है।

(२) आकार (Size) की उत्तरोत्तर वृद्धि द्वारा लय—लय प्राप्त करने की दूसरी विधि आकार की उत्तरोत्तर वृद्धि करके लय प्राप्त करना है। आकार की नियमित वृद्धि फीते और कढ़ाई पर Scallops के लिए पर्याप्त रूप से सन्तोषप्रद हो सकती है। यदि बडी वस्तु पर डिजाइन बनाए गए हो तो उत्तरोत्तर वृद्धि के तरीके मे परिवर्तन किया जा सकता है। उत्तरोत्तर बढ़े हुए आकार से नेत्र में बडी शीघ्रता से गति उत्पन्न हो जाती है तथा उनका उपयोग बहुधा बडी बुरी तरह किया जाता है।

(३) निरन्तर रेखा-गति द्वारा लय की प्राप्ति—जो सजाई हुई या बनाई हुई वस्तुएँ निरन्तर रेखा—गति द्वारा लय प्रदर्शित करती हैं, वे अधिकाशत. वक्र रेखाओ की वनी होती हैं। इस प्रकार की आकृतियो मे झूलती हुई गति प्रतीत होती है चाहे कभी भी हमारी दृष्टि उसके किसी भी भाग पर क्यों न पडे। रेखा, प्रकाश एव अन्धकार, और रंगो की सरल व गतिपूर्ण व्यवस्था के सकेत से दृष्टि गतिशील रहती है। इस प्रकार दृष्टि बिना किसी रुकावट के सम्पूर्ण कलाकृति पर विचरण करती है। इन रचनाओं मे ऐसी अनोखी गति प्रतीत होती है कि इसमे सुन्दर नृत्य से उत्पन्न होने वाली सम्वेदना की-सी आनन्दपूर्ण अनुभूति होने लगती है।

आवृति (Repetition)

आवृति का लय से घनिष्ठ सम्बन्ध है, क्योंकि इसका उपयोग करने पर ही लय की उत्पत्ति होती है। किसी व्यवस्था को सुन्दरता प्रदान करने की दृष्टि से सामान्यतः पुनरावृत्ति का उपयोग किया जाना आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त सुव्यवस्था स्थापित करने की यह सरलतम विधि है। किसी नवीन कलाकृति का रचना करने के उद्देश्य से किसी विचार अथवा विषय-वस्तु को कला के किसी भी रूप में आवृत्त किया जा सकता है। गृह-सज्जा में कमरे में प्रयुक्त किए जाने वाले रंग, रेखाएं, आकृतियों की आवृति एकता स्थापित करने दृष्टि से की जाती है। धरातलीय नमूने वनाने के लिए भी आवृत्ति के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रयोग किया जाता है। प्राकृतिक एवं मानवकृत दोनों ही प्रकार के सौन्दर्य में यह आधारभूत सिद्धान्त कार्य करता है। फूल, पत्ती, घोंघा आदि प्राकृतिक वस्तुंओं का डिजाइन वनाने में इसका आधारीय महत्त्व है।

अनुरूपता (Harmony)

अनुरूपता कला का वह सिद्धान्त है जिसमें सुसंगत वस्तुओं एवं विचारों के चयन और व्यवस्थापन के माध्यम से एकता के प्रभाव को उत्पन्न किया जाता है। जव एक समूह की सभी वस्तुओं में अत्यधिक आपसी समानता दिखाई दे; तो इसमें चुनाव की अनुरूपता का सिद्धान्त क्रियाशील होता है। जव ये एक सी वस्तुएँ इस प्रकार व्यवस्थित की जातीं हैं कि ये जिस पदार्थ पर रखी गई हैं उसकी आकृति के अनुकूल इनकी सज्जा का क्रम है तो चयन व व्यवस्था दोनों में ही अनुरूपता उत्पन्न हो जाती है। किसी व्यवस्थापन में कितनी समानता व कितनी विविधता और विषमता वांछनीय है, इसका निर्धारण स्थिति विशेष पर निर्भर रहता है। व्यक्ति विशेष की रुचि के ऊपर विविधता और विरोध की मात्रा निर्भर करती है। जिन वड़ी वस्तुओं को एक साथ रखा जाना है उन समस्त वस्तुओं के मध्य कुछ वातें उभयनिष्ठ रहनी चाहिए। परन्तु विविधता और वल प्रदान करने के लिए प्रयुक्त छोटी वस्तुएँ विषमतापूर्ण हो सकती है।

किसी सुसज्जा की रचना में प्रयुक्त रेखाओं को प्रमुख तीन समूहों में समूहीकृत किया जा सकता है—

(१) रेखाओं की आवृत्ति—किसी कोने की रेखाओं का अनुगमन करती हुई कुछ रेखाओं का समूह कोने में खींचा जाता है तो वहीं रेखाओं की आवृत्ति होती है।

(२) रेखाओं में विरोध (Contrast in Lines)—जव किसी कोने या समकोण आकृति के कोने में समतल और लम्बवत् रेखाएँ एक साथ आती हैं तो ये एक दूसरे के विपरीत होती हैं तथा इन्हीं से विरोध का निर्माण होता है। जव कोई रेखा किसी विरोधी रेखा के कोने को काटती है तो वह संक्रान्ति रेखा (Transitional Line) कहलाती है। परन्तु, किसी कोने को पार करती हुई सरल रेखा खींची जाती

है तो वह अप्रत्याशित व तीव्र विरोधपूर्ण है तथा यह कोने को बड़ी तेजी से काटती है इसी को विरोध (Contradiction) कहते हैं।

रेखाओं में संक्रान्ति (Transition in Lines)—यह एक सरलता से व भव्यता से खींची गई रेखा है जो एक रेखा या आकृति से दूसरी की ओर अप्रसित होती है तथा अनुरूपता प्रदान करती है। सक्रान्त शब्द का प्रयोग उस रेखा की कोमलता व सशोधीकरण गुण को व्यक्त करने के लिए किया जाता है जो विरोधी रेखाओं को भी अनुरूपता प्रदान करती है। वक्र रेखाएँ एक सरल रेखा से दूसरी सरल रेखा तक सरलता से सक्रान्त बनाती हैं और यदि सरल रेखा का उपयोग किया गया है तो उनके साथ वक्र रेखाओ को सयोजित करके उनकी तीव्रता को कम कर दिया जाता है।

व्यावहारिक व ललित दोनों ही प्रकार की कलाओं मे अनुरूपता के सिद्धान्त के अन्तर्गत पाँच पक्ष होते हैं—ये हैं—(१) रेखा और रूप की अनुरूपता, (२) आकार की अनुरूपता, (३) बनावट की अनुरूपता, (४) विचार की अनुरूपता और (५) रंग की अनुरूपता।

(१) **रेखा और आकृति की अनुरूपता**—रेखाओ के संयोजन के परिणाम-स्वरूप ही रूप या आकृतियाँ निर्मित होती हैं। एक-दूसरे के साथ मिश्रित होकर दिखाई देने वाली आकृतियो में तीनो प्रकार की रेखाओं—आवृत रेखा, विषम रेखा और सम रेखा--का प्रयोग करके यह प्रतीत होगा कि एक दूसरे के अनुरूप आकृतियाँ पूर्णत: अनुरूपतापूर्ण हैं। किसी आयत मे रखी जाने वाली सर्वाधिक अनुरूप आकृति उसी रूप का दूसरा छोटा आयत है अथवा गोले के अन्दर रखा जाने वाला इसी आकार का दूसरा वृत है।

जो रेखाएँ एक दूसरे की विरोधी होती हैं वे आकृति मे विरोध का निर्माण करती हैं, इसलिए वे अनुरूपता के विपरीत होती हैं। वर्गाकार, गोलाकार अथवा आयताकार आकृतियों मे त्रिभुजाकार और हीरे की Diamond आकृतियों का समा-योजन विरोधपूर्ण अथवा अनुरूपताहीन होता है।

संक्रान्त रेखाओं मे अनुरूपताहीन आकृतियों को भी सयोजित करने की शक्ति होती है।

अनुरूप अथवा सुसंगत आकार—जब आकार में विषम आकारो का प्रयोग किया जाता है तो वे असंगत कहलाते हैं। सुसगत आकार के अर्थ मे माप के नाम से समानु-पात का प्रयोग किया जाता है।

बनावट की अनुरूपता—उँगलियों के द्वारा किसी वस्तु की धरातलीय रचना को स्पर्श करने पर जो सवेदनशीलता होती है वही बनावट होती है। बनावट को नेत्रों के द्वारा भी अनुभव किया जाता है।

अच्छी (Fine) और रफ (Coarse) वस्तुओं की बनावट मे

होती। परन्तु मध्यम श्रेणी की कुछ वस्तुएँ ऐसी होती हैं जिनमें उक्त दोनों श्रेणी की बनावट के कुछ सामान्य गुण उभयनिष्ठ पाए जाते हैं।

रंग की अनुरूपता—अत्यधिक आकर्षक और आनन्ददायक रंग संयोजन वह होता है जिसमें अनुरूपता या एकता हो। इन संयोजनों में ऐसा प्रतीत होता है कि सभी रंग यथार्थ में एक दूसरे से सम्बन्धित हैं, तो भी इसके साथ-साथ उदासीनता उत्पन्न करने वाली व्यवस्था की सम्भावना को नष्ट करने के लिए उसमें पर्याप्त विविधता होनी चाहिए। गर्म रंगों में पारिवारिक समानता—प्राकृतिक अनुरूपता—होती है। ऐसी ही समानता ठण्डे समूह के रंगों में भी होती हैं। इसलिए रंगों की अनुरूपता स्थापित करने के लिए गर्म रंगों के साथ गर्म रंग व ठण्डे रंगों के साथ ठण्डे रंगों का संयोजन होना चाहिए। यदि विषमता वांछनीय प्रतीत हो तो गर्म रंगों के साथ ठण्डे रंग व ठण्डे रंगों के साथ गर्म रंगों को मिश्रित कर देना चाहिए। ठण्डे और गर्म रंगों के समूहों में ठण्ड और गर्मी की मात्रा की भिन्नता होती है।

विचारों की अनुरूपता—आकार, आकृति, रंग और बनावट की अनुरूपता के साथ-साथ प्रस्तुत किए गए विचारों में भी अनुरूपता होनी चाहिए। किसी कलाकृति में व्यक्त किए जा रहे विचारों में निष्ठा और भव्यता होनी चाहिए।

गृहिणी को घर की सज्जा करते समय अनुरूपता के कलात्मक महत्त्व को दृष्टिगत रखकर छोटी-से-छोटी व्यवस्था करते समय भी अनुरूपता का ध्यान रखना चाहिए।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. कला क्या है? इसके प्रमुख तत्त्व कौन-कौन-से हैं?
२. कला में समानुपात का क्या अभिप्राय है? गृह-सज्जा में इस सिद्धान्त का प्रयोग किस प्रकार किया जा सकता है?
३. घर की सज्जा में सन्तुलन का क्या महत्त्व है? यह कितने प्रकार का होता है? वर्णन कीजिए।
४. गृह-सज्जा में बल के सिद्धान्त का क्या अभिप्राय है? इसका प्रयोग करते समय गृहिणी को किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए?
५. कला में लय का क्या महत्त्व है? गृह सज्जा में लय सम्बन्धी गति किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है?
६. कला के विभिन्न तत्त्वों में अनुरूपता किस प्रकार लाई जा सकती है?

अध्याय १६

गृह सुसज्जा के सिद्धान्त

जीवन 'अपने साधनों के अनुसार गृह को सुन्दर बनाने' की अपेक्षा कही अधिक चुनौतीपूर्ण समस्याएँ प्रस्तुत करता है। सौभाग्य से इस समस्या का हल एक साधारण व्यक्ति के लिए ढूँढ निकालना अत्यधिक कठिन नही है। प्रायः प्रत्येक स्त्री में सुन्दरता तथा घरों में उसकी उपयुक्तता को पहचानने व तदनुकूल घरो को सजाने की स्वाभाविक योग्यता होती है। यह सुपुप्त प्रतिभा अध्ययन, निरीक्षण और रचनात्मक समस्याओं में अनुभव प्राप्त करने के द्वारा विकसित की जा सकती है। अधिकाश स्त्रियाँ ऐसे अध्ययन हेतु समय और प्रयत्न को समर्पित करने को उत्सुक रहती हैं जो उन्हें अच्छी गृहिणी बनाने के साथ-साथ उनके स्वय के जीवन को समुन्नत बनावे।

गृह का स्वरूप उसके उच्च उद्देश्य के अनुकूल होना चाहिए। इसका प्रमुख उद्देश्य है परिवार को संरक्षण प्रदान करने के साथ-साथ उसके आध्यात्मिक, बौद्धिक तथा शारीरिक उन्नति हेतु स्थान प्रदान करना। घर का मनोहारी वातावरण चक्षु-इन्द्रिय की सुन्दर रुचि के विकास मे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य करता है, क्योंकि नित्य प्रति सुन्दरता के सम्पर्क मे रहने से स्थायी रसानुभूति का गुण उत्पन्न हो जाता है। वे सौभाग्यशाली परिवार जो अपनी रुचि के घरो में निवास करते हैं, चाहे वे कितने भी सादा क्यों न हो, उनमें अन्य व्यक्तियो की अपेक्षा गृह का अर्थ समझने की अधिक क्षमता होनी चाहिए। उनके बच्चों मे भी सुन्दर घरो का सृजन करने का प्रोत्साहन होना चाहिए।

घर को आयोजित करने व सुसज्जित करने का एकमात्र उद्देश्य सुन्दरता ही नही है। इसके अतिरिक्त वह घर के स्वामी के व्यक्तित्व को प्रतिबिम्वित करने वाला तथा इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण, कुशलतापूर्वक उत्तरदायित्वो का निर्वाह करने वाला होना चाहिए। इस प्रकार घर द्वारा प्राप्त किया जाने वाला अन्तिम लक्ष्य इन तीनो उद्देश्यो—सौन्दर्य, अभिव्यजकता (Expressiveness) और कार्यात्मकता (Functionalism) का सफल एकीकरण होना चाहिए।

सौन्दर्य (Beauty)

यद्यपि कुछ लेखक सुन्दरता को कठिनाई से प्राप्त होने वाला मूल्यवान गुण के रूप में वर्णन करते हैं परन्तु यहां इसका उपयोग सुन्दर ढंग से निर्मित एवं आनन्द-दायक वस्तुओं का वर्णन करने के लिए प्रयुक्त किया गया है। सौन्दर्य की एक सरल सी परिभाषा यह है—सुन्दरता "गुणों का वह संयोजन है जो प्रशिक्षित आंख तथा कान को आनन्द देने वाला हो।" विभिन्न काल व देशों के दार्शनिक और कलाकार सुन्दरता की परिभाषा के सम्बन्ध में एकमत नहीं हैं। एक कहावत प्रसिद्ध है, 'एक व्यक्ति की दृष्टि में जो चीज सुन्दर है वह दूसरे की दृष्टि में कुरूप हो सकती है।"

सौन्दर्य के दार्शनिक पक्ष को सौन्दर्यशास्त्र कहते हैं। सौन्दर्यशास्त्रियों ने मानव द्वारा निर्मित वस्तुओं का अध्ययन करके समस्त सुन्दर वस्तुओं में पाई जाने वाली समान विशेषताओं का निर्धारण करके कतिपय ऐसे सिद्धान्तों की स्थापना कर दी है जो हमें सुन्दरता को पहचानने व उसका परिबोधन (Appreciation) करने में सहायता प्रदान करते हैं। कला के ये सिद्धान्त हैं—समानुपात, सन्तुलन, बल (Emphasis), लय, और आवृत्ति।

सौन्दर्य-शास्त्र में कला के तत्त्व अथवा अंग एक बुनियादी कारक है। ये अंग हैं—रेखा, रूप, रंग, धरातल, नमूना, प्रकाश और स्थान।

कला के तत्त्व और कला के सिद्धान्तों का अध्ययन करके मानव निर्मित वस्तुओं के स्वरूप को जांचने की योग्यता का विकास होता है। यह ज्ञान व्यक्ति के अन्दर सुन्दरता और केवल फैशन के मध्य अन्तर को समझने की योग्यता प्रदान करता है। जब नई चीजें प्रगट होती हैं और विचारों में परिवर्तन होता है उस समय यह विभेदी-करण का गुण बड़ा मूल्यवान व उपयोगी सिद्ध होता है।

अभिव्यंजकता (Expressiveness)

घर को चयन करने, सजाने व सुसज्जित करने की विषय-वस्तु तक पहुंचने हेतु निश्चित विचार अथवा विचार वस्तु को इसमें अभिव्यक्त करने की खोज करनी चाहिए। चाहे घर बड़ा हो या छोटा, परन्तु सर्वाधिक रोचक घर वे हैं जो सदैव संगतिपूर्ण हैं। यही कारण है कि घर तथा उसकी साज-सज्जा की अभिव्यंजकता का सावधानीपूर्ण अध्ययन वांछनीय है।

यहां कुछ विचार प्रस्तुत किए जा रहे हैं जिनकी अभिव्यक्ति जाने या अनजाने में घरों में की जाती है—विश्राम, सजीवता, स्वाभाविकता, दिखावा घनिष्ठता, औपचारिकता, उत्साह, उदासीनता, कोमलता, शक्ति, नवीनता, प्राचीनता।

चूंकि घर में अभिव्यक्त किए जाने वाले समस्त विचारों को यहां प्रस्तुत कर सकना असम्भव है, इसलिए औपचारिकता, अनौपचारिकता, स्वाभाविकता और आधुनिकता—उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

औपचारिकता—जो घर औपचारिकता को व्यक्त करता है, उसमें आमतौर पर श्रेष्ठता, शक्ति, आरक्षण (Reserve) तथा प्रभावपूर्णता भी अभिव्यक्त होगी। इस प्रभाव को प्रदर्शित करने में सहायता देने वाली विशेषताएँ हैं—अखंडित रेखाएँ, बड़े वृहत् खाली स्थान तथा घर के सामने दो समान रूप वाले लम्बीय स्थान। आन्तरिक भाग में सममिति (Symmetry) तथा परम्परागत रंगों से औपचारिकता प्रकट होती है। उपस्कर (Furniture) सामान्यतः, आवश्यक रूप से नहीं, परम्परागत ढंग का होता है, तथा उसे औपचारिक संतुलन से सजाया गया होता है। इस प्रकार के घर का निर्माण करने वाला परिवार रूढ़िगत, श्रेष्ठ, अनुशासित जीवन व्यतीत करता है।

अनौपचारिकता—आधुनिक अमेरिकन जीवन की एक प्रमुख विशेपता अनौपचारिकता है। वहाँ आकस्मिक वस्त्र और आकस्मिक तौर-तरीके प्रचलित हैं। स्वाभाविक है कि घर में भी अनौपचारिकता पसन्द की जाती है। अनौपचारिकता स्पष्टता, मैत्रीपूर्ण स्वागत, घनिष्ठ आकर्षण के माध्यम से अभिव्यक्त की जाती है। उपस्कर (फर्नीचर) चमकीले व गर्म रंग के होते हैं, वे सादे व आरामदायक होते हैं। घर का साधारण आकार, असममितीय सन्तुलन और खंडित रेखाएँ घर सम्बन्धी अनौपचारिकता को व्यक्त करती हैं।

स्वाभाविकता—अनौपचारिकता का एक प्रकार यह है जिसमें स्वाभाविकता या आदिकालीनता पर बल दिया जाता है। इस प्रकार के घर में निम्नांकित विचार अभिव्यक्त होंगे—सादगी, घर की बनी वस्तुएँ ईमानदारी, मितव्ययिता, दिखावाहीनता, मौलिकता, कृत्रिमता के विरुद्ध संघर्ष, हास्यप्रियता। प्राकृतिक प्रभाव को प्राप्त करने में सहायता देने वाली बातें हैं—देशी वस्तुओं और देशी तरीकों का उपयोग, हाथ की बनी वे वस्तुएँ जिनकी बनावट में स्वाभाविक अनियमितताएँ हों, सस्ती वस्तुएँ, ग्रामीण अथवा प्राचीन ढंग के रंग।

उच्च श्रेणी के सुसंस्कृत रुचि वाले व्यक्ति प्राचीन अथवा ग्रामीण नमूने पर बनी वस्तुएँ पसन्द करते हैं, क्योंकि ऐसी वस्तुएँ सन्तोष प्रदान करने वाली होती हैं, जबकि सुसभ्य और विकसित समाज के उत्पादन कृत्रिमतापूर्ण होते हैं।

आधुनिकता—आधुनिक घर मशीन युग की आत्मा की अभिव्यक्ति करते हैं। डिजाइन में से समस्त अनावश्यक वस्तुओं को निकालकर गति और प्रत्यक्षता को व्यक्त किया जाता है। आधुनिक साज-सज्जा को पसन्द करने वाले परिवार आमतौर पर युवा, साहसी, प्रयोगात्मक, वस्तुगत एवं तर्कप्रधान होते हैं। वे उस तरीके को पसन्द करते हैं, जिसके द्वारा उनका समय अभिव्यक्त हो सके।

गृह-निर्माता का व्यक्तित्व—घर में अभिव्यक्त किए जाने वाले विचार का निर्धारण गृह-स्वामी का व्यक्तित्व करता है। परिवार के वास्तविक गुण गृह-सज्जा के

प्रमुख आधार होते हैं। स्थायी महत्त्व की रुचियाँ साज-सज्जा की योजना हेतु प्रोत्साहन प्रदान करती हैं।

यदि परिवार परम्पराओं को वांछित सम्मान देते हुए कार्यों को औपचारिक ढंग से करना चाहता है, तो यह अभिवृत्ति घर के निर्माण तथा उसकी साज-सज्जा को प्रभावित करेगी। इसके विपरीत यदि परिवार की अनौपचारिक, घरेलू, घर पर बने रहने की अभिवृत्ति है तो सुन्दर, परन्तु साधारण प्रकार का घर, बगीचा और साज-सज्जा चुनी जावेगी। आधुनिक कलाकार सस्ता-सा अपना फर्नीचर बनाकर, अपने सादा जीवन के अनुरूप सीधी-सादी साज-सामग्री का उपयोग करके घर पर एक विशेष प्रकार का प्रभाव डालेगा।

एक लापरवाह क़िस्म के परिवार को जो कि गर्मियों में घर से बाहर रहता है व सर्दियों में घर में, तो उसे भारी, मजबूत और साधारण किस्म के फर्नीचर की आवश्यकता होगी। पर्याप्त जीवन-यापन के साधनों से युक्त घूमने-फिरने वाली महिला को कृत्रिमता युक्त फ्रांस के फैशन के आधार पर सुसज्जित कमरा चाहिए।

जिस परिवार में विरोधी रुचियों व विचारों के लोग रहते हों, वहाँ समझौता करके कुछ सामान्य विचार घर में अभिव्यक्त करने हेतु निश्चित करने पड़ेंगे। जिस घर में बालक व बालिका दोनों की ही आवश्यकताओं की सन्तुष्टि करनी हो वहाँ घर की साज-सज्जा न तो अत्यधिक कोमलतापूर्ण ही हो और न ही अत्यधिक रुक्षतापूर्ण।

किसी भी परिवार के लिए यह निश्चित करना कठिन नहीं होता कि वह अपनी रुचियों में औपचारिक है अथवा अनौपचारिक। यह निर्धारित करना भी प्रायः सरल होता है कि परिवार का झुकाव स्वाभाविक, परम्परागत अथवा आधुनिक प्रभाव की ओर है। ये निर्णय लेने के पश्चात् उपयुक्त घर तथा अनुकूल साज-सज्जा चयन करने का कार्य सरल हो जाता है।

कार्यात्मकता (Functionalism)

आधुनिक मशीनों के समान घर को भी कार्य करना चाहिए। घरों को कम-से-कम देखभाल करने पर परिवार की अधिक-से-अधिक सेवा, आराम और आनन्द प्रदान करना चाहिए। जो व्यक्ति नवीन गृह-भवनों का निर्माण कर रहे हैं, उन्हें कार्यात्मकता को नहीं त्यागना चाहिए; क्योंकि पूर्व में बने घरों से आज की आवश्यकता की पूर्ति होने की आशा नहीं की जा सकती। पुराने ढंग के बने घर अपने समय में बहुत अच्छे सिद्ध हुए होंगे, परन्तु आज वे उतने उपयोगी नहीं रहे।

घर की योजना और सुसज्जा की प्रत्येक स्थिति कार्य पर आधारित होनी चाहिए। कमरों की संख्या एवं उनकी व्यवस्था इस बात पर निर्भर करती है कि वे किस सीमा तक सर्वोत्तम ढंग से परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं। घर के बाहरी क्षेत्र का विभाजन खाने, खेलने, व्यायाम करने तथा बगीचे की दृष्टि से किया जाता है। फर्नीचर की व्यवस्था भी कार्य की दृष्टि से की जाती है, जैसे अध्ययन, पढ़ने, बातचीत करने, लिखने एवं संगीत आदि।

वस्तुओं का चयन भी इस आधार पर किया जाएगा कि वे किस सीमा तक
ार्यों की पूर्ति करती हैं। वस्तुओं का चयन करने में कुछ सामान्य त्रुटियाँ हो जाती हैं,
ते पढ़ने वाले की आँखों पर प्रकाश डालने वाला लैम्प, शीघ्र ही लुढकने वाला
लदान आदि। ये सभी त्रुटियाँ वस्तुओं की गलत बनावट होने के कारण होती हैं।
सी वस्तु की सही व उचित बनावट वह है जो सर्वोत्तम ढंग से काम मे आ सके
ा देखने में भी सामान्यतः सर्वोत्तम दिखाई दे।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-सज्जा के प्रमुख उद्देश्य कौन-कौन-से है ?
२. गृह-सज्जा मे सौन्दर्यात्मकता का क्या अर्थ है ? स्पष्ट कीजिए।
३. गृह-सज्जा में किन-किन बातों की अभिव्यजना की जाती है ?
४. गृह-सज्जा करते समय कार्यात्मकता का सिद्धान्त गृहिणी के लिए ध्यान में रखना क्यों आवश्यक है ?

अध्याय २०

गृह में रंग-संयोजन

साधारणतः हमारे घरों में रंग-व्यवस्था की ओर यथेष्ट ध्यान नहीं दिया जाता, किन्तु यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है। कमरे व घर का सम्पूर्ण वातावरण उचित या अनुचित रंग-व्यवस्था से प्रभावित होता है। कल्पना कीजिए कि आप एक घर में जाती हैं जिसकी बैठक की दीवारें गहरे नीले रंग से पुती हैं, फर्श पर गहरे रंग की दरी बिछी है, सोफा गिलाफ बैंगनी रंग के हैं, दरवाजे के परदे लाल-पीले फूलदार हैं, मेजों पर रंग-बिरंगे चटख मेजपोश बिछे हैं और कुर्सियों पर तरह-तरह के रंगों की गद्दियाँ सजी हैं। तात्पर्य यह कि जहाँ पर किसी एक वस्तु का रंग दूसरी वस्तु के रंग से मेल नहीं रखता, ऐसे स्थान पर आपकी दृष्टि तथा मन की दशा क्या होगी? निस्संदेह रंगों के ऐसे असामंजस्य से मन उसी प्रकार घबरा उठेगा, जिस प्रकार विरोधी स्वरों को एक साथ सुनने से चित्त घबरा जाता है। जिस प्रकार विशेष स्वरों के संयोग से मधुर संगीत की सृष्टि होती है, उसी प्रकार उचित रंगों के संयोग से ही शान्ति व सुख का अनुभव होता है। कमरे को व्यवस्थित करने में इसीलिए रंगों की ओर ध्यान देना आवश्यक है। प्रत्येक घर तथा घर के प्रत्येक कमरे को सजाने का मौलिक ध्येय सुख व शान्ति प्राप्त करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति में रंगों का बहुत बड़ा भाग है। रंगों के संयोग के लिये सबसे सरल नियम यह है कि कमरे में कम-से-कम रंगों को लाओ, जिससे उनके विरोध की आशङ्का न रहे।

रंगों के संयोग, मेल या सामंजस्य से हमारा तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि पीला रंग पीले से ही मिलेगा और नीला नीले से ही। वास्तव में सत्य तो यह है कि यदि बादामी व हरे जैसे अनुरूप रंग मेल खा सकते हैं तो हरा व लाल जैसे विरोधी रंग भी साथ-साथ अच्छे लगते हैं। किन्हीं दो रंगों का मेल खाना उनके नाम पर इतना निर्भर नहीं करता, जितना उनके उतार-चढ़ाव (shade) पर। पाश्चात्य देशों में प्रायः हल्के व मन्द रंगों को प्रयोग में लाते हैं तथा भारत में गहरे व चमकदार।

कमरे के रंगों का सम्बन्ध अनेक वस्तुओं से है। दीवारें, दरी-कालीन, कुर्सियाँ व सोफा, दिवान व तख्त आदि के गिलाफ व गद्दियाँ और परदे आदि सब वस्तुओं के रगों में संयोग होना चाहिये। इसके लिए अपनी रुचि के अनुसार कमरे के लिए एक रंग निश्चित कर लेना चाहिये। फिर उस रग से मेल खाने वाले अनुरूप व विरोधी गौण रंग चुन लेने चाहिए। ये गौण रंग प्रधान रंग की सुन्दरता को बढ़ाने के लिये होते हैं। यदि आप बैठक के लिये प्रधान रग नीला चुनती हैं तो विविध वस्तुओं की रंग-व्यवस्था आप नीले, बादामी तथा भूरे रगो मे उतार-चढ़ाव लाकर कर सकती हैं। इस प्रकार नीले रंग की शोभा बादामी रग के साथ मिलने से दुगुनी हो जायगी। किन्तु यदि आप नीले रंग के साथ मे दूसरा रग हरा रखें तो भला नही लगेगा। यदि कमरे को सजाने के लिये आप एक मन्द रंग चुनती हैं, उदाहरणार्थ भूरा, तो उसके साथ दूसरा कोई चटकीला रंग आना चाहिये, नही तो कमरे का प्रभाव अति फीका पड़ जायगा।

दीवारों पर पुताई के लिये गहरा रग कदापि उपयुक्त नही, क्योकि उससे कमरे मे अँधेरा-सा हो जायगा। इसीलिए कमरे की दीवारो को सदा हलके रगो या सफेद रग से ही पुतवाना चाहिये, जिससे कमरा प्रकाशमय प्रतीत हो। डिसटैम्पर में बहुत सुन्दर-सुन्दर रंग मिलते हैं। ये महँगे अवश्य होते हैं पर डिसटैम्पर की पुताई तीन-चार वर्ष तक सहज ही चलती है।

दरी व कालीन आदि बहुत हल्के रग की हों तो शीघ्र मैली हो जाती हैं, इसलिये उनका रग अधिक हलका नही होना चाहिए। अन्य छोटी-छोटी वस्तुओं जैसे फूलदान व लैम्प आदि के रगो को विचारपूर्वक चुनना भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। यहाँ तक कि एक ही फूलदान मे सब प्रकार के रगों के फूल भी सदा अच्छे नही लगते। कमरे की सजावट व रग-व्यवस्था के अनुकूल ही फूलो की सजावट होनी चाहिए।

गृह में रंग को प्रयुक्त करने की सफलता मे प्रयोगात्मक अभिवृत्ति सहायक होती है। नीरस व रूढ़िगत रंग-योजना को काम में लाने की अपेक्षा रगो के इस्तेमाल में त्रुटियाँ करना अधिक अच्छा है, क्योकि रग के साहसपूर्ण ढङ्ग से प्रयोग करने से व्यक्ति की रंग-संवेदनशीलता बढ़ती है।

घर के अन्दर प्रयुक्त किए जाने वाली रंग-व्यवस्था एक पूर्ण इकाई के रूप मे आयोजित की जानी चाहिए। यदि सभी कमरो मे एक-से ही रग की पृष्ठभूमि प्रयुक्त की जाती है तो छोटा-सा घर या कमरा भी अधिक बड़ा प्रतीत होने लगता है।

ऐसे पूरे घर की रंग-योजना मे जिसमे प्रत्येक कमरा एक-दूसरे से पृथक् है, सम्बन्धित योजना की अपेक्षा कम एकता होती है, परन्तु यह अधिक उत्तेजना और विविधता प्रदान करता है तथा कमरे के उद्भासन पर विचार करने के अधिक अवसर मिलते हैं।

कमरे के लिए रंग-योजना के कारक

१. कमरा, उसका आकार व उद्भासन (exposure)
२. चित्त-वृत्ति
३. शैली
४. वर्तमान फैशन
५. व्यक्तिगत वरीयता
६. सुसज्जा के उपलब्ध साधन
७. कमरे का उपयोग ।

कमरा—कमरे के लिये रंग-योजना बनाने के लिये कमरे का विश्लेषण सबसे पहला कारक है। प्रत्येक कमरे की अपनी विशिष्टताएँ होती हैं। ये विशिष्टताएँ उसके रंग सम्बन्धी समस्याओं के निराकरण को प्रभावित करती हैं। अत्यधिक छोटे कमरे में यदि एक ही ठण्डा, हल्का रंग सभी पृष्ठभूमि के अङ्गों तथा यहाँ तक कि फर्नीचर पर भी प्रयुक्त किया जाता है तो वह कमरा अधिक बड़ा दिखाई देने लगता है। इसके विपरीत गर्म लाल व बैंगनी रंग कमरे के आकार को कम करते हुए से प्रतीत होते हैं। यदि एक लम्बे व सँकरे कमरे में सिरे की दोनों दीवारें गर्म, व चमकीले रंगों से सजाई जाती हैं तो कमरे का आकार उपयुक्त अनुपातमय प्रतीत होने लगता है। यदि वर्गाकार कमरे की विरोधी दीवारों पर गहरा रंग तथा शेष दो विरोधी दीवारों पर हल्का रंग कर दिया जाए तो वह वर्गाकार के स्थान पर अधिक लम्बा-लम्बा दिखाई देने लगेगा।

चित्तवृत्ति (Mood)—कमरे की चित्तवृत्ति उसके रंगों के माध्यम से व्यक्त की जा सकती है। एक शानदार कमरे को भूरे-नीले, गुलाबी तथा भूरे रंग से सजाया जा सकता है; महिलाओं के कोमल कमरे को हल्के गुलाबी रंग, हल्के (Jada) तथा सफेद रंग से; पुरुषत्व का भाव प्रकट करने वाले कमरे को लाल भूरे, बादामी, नैवीब्ल्यू से; आमोद-प्रमोद के कमरे को सफेद, आसमानी नीले व हल्के पीले रंग से सजाया जा सकता है।

शैली (Style)—कमरे की शैली उसमें प्रयुक्त किये जाने वाले रंग के विकल्प को सीमित कर देती है; क्योंकि ऐतिहासिक काल के प्रत्येक रंग की अपनी विशेषता होती है। प्रारम्भिक अमेरिकन रंग सामान्यतः कम तीव्र होते हैं; उपनिवेशवादी रंग सम्पन्न और मध्यम महत्त्व के होते हैं; संघात्मक रंग स्पष्ट व हल्के होते हैं; विक्टोरियन रंग तीव्र और तड़क-भड़कपूर्ण होते हैं; साम्राज्यवादी रंग चमकीले और शक्तिशाली होते हैं; ग्रामीण रंग स्पष्ट व आनन्दपूर्ण; फ्रान्सीसी रंग मटमैले तथा आधुनिक रंग अत्याधिक बलपूर्ण मध्यम प्रकार के होते हैं।

फैशन (Fashion)—घरों में प्रयुक्त किए जाने वाले रंग निश्चित ही फैशन द्वारा प्रभावित होते हैं। रुचि में कुछ निश्चित प्रवृत्तियाँ एक सीमित समयावधि के

लिए दृश्य कलाओं के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त किए जाने वाली रंग-योजना के प्रकार को निर्धारित करती हैं। रंगों का वर्तमान फैशन किसी कमरे की सज्जा को प्रभावित करता है; यहाँ तक कि परम्परागत प्रकार की रंग-योजना को भी फैशन प्रभावित करता है। प्रत्येक गृहिणी को रंगों के फैशन के सम्बन्ध में आधुनिकतम ज्ञान प्राप्त करने के लिए पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ते रहना चाहिए तथा दुकानों में जाकर देखते रहना चाहिये।

व्यक्तित्व (Personality)—गृहिणी की व्यक्तिगत वरीयता घर के लिए, विशेषकर उसके व्यक्तिगत कमरे के लिए, रंग का चुनाव करने की प्रक्रिया को अत्याधिक प्रभावित करती है। कुछ रंग-विशेषज्ञों का कहना है कि पृष्ठभूमि व वस्त्रों के लिए हल्के रंग व भूरे रंग के बालों वाले गोरे व्यक्ति ठण्डे रंगों को व श्याम वर्ण के लोग गर्म रंगों को पसन्द करते हैं। ऐसा कहा जाता है कि बच्चे हल्के रंगों को अधिक पसन्द करते हैं, युवा लोग स्पष्ट रंगों को व अन्य व्यक्ति कोमल मध्य रंगों को अधिक पसन्द करते हैं।

सुसज्जा की वस्तुओं पर अधिकार (Possession)

वस्तुओं पर व्यक्ति का अधिकार रंग के विकल्प की सीमा को निर्धारित करता है। एक नौसिखुआ गृहिणी जिसे पुरानी साज-सज्जा को प्रयुक्त करना हो एक निश्चित प्रकार की अन्तिम योजना का निर्माण करने के लिए आवश्यक सामग्री को जोड़ने या कम करने का कार्य भली प्रकार कर सकती है। किसी के पुराने सामान में से कम्बल साधारणतः रंग की योजना के विकल्प में सर्वाधिक प्रतिबन्धित करने वाला कारक है। पुराने कम्बलों को धोया जा सकता है तथा किसी भी कम्बल को रँगा जा सकता है।

कमरे का उपयोग—कमरे का उपयोग किस कार्य के लिए किया जायेगा, यह तथ्य रंग-योजना को अत्यधिक प्रभावित करता है। कमरे की कुशलता में योग देने के अतिरिक्त रंग कमरे के प्रयोजन को बल देने में भी सहायता करता है। दिन का समय जबकि कमरा मनुष्यों से भरा रहता है रंग-योजना के निर्धारण में एक कारक हो सकता है; स्वाभाविक रूप से उस समय सबसे अधिक अच्छा दिखाई देगा।

प्रवेश-कक्ष का रंग बहुधा रहने के कमरे के समान ही होगा, यद्यपि बड़े-बड़े घरों में बहुधा यह रहने के कमरों की अपेक्षा रंग की दृष्टि से अधिक अव्यक्तिगत एवं गौरवपूर्ण होता है। एक कमरे या छोटे घर में जहाँ प्रवेश-कक्ष एक गैलरी के रूप में होता है, वहाँ यह निश्चित ही अच्छी तरह सुसज्जित एवं रंग-युक्त होना चाहिए। हॉल में फर्नीचर तो कम मात्रा में होता है, इसलिए इसके फर्श और दीवारों को आकर्षक बनाने के लिए रंगों का उपयोग किया जाना चाहिए।

रहने का कमरा—रहने का कमरा शान्ति और विश्राम युक्त होने के साथ-साथ उससे प्रसन्नता और मैत्री भाव भी व्यक्त होना चाहिए। इसलिए इसकी रंग योजना प्रसन्नतापूर्ण होनी चाहिए, परन्तु वह अत्यधिक उत्तेजक नहीं होनी

ठण्डे देशों में रहने के कमरे के लिये हल्के गर्म रंग अत्यधिक उपयुक्त होते हैं परन्तु गर्म देशों में रहने के कमरे में सादे ठण्डे रंग की योजना जैसे सफेद दीवारें तथा नीली छत और फर्श आनन्द प्रदान करने वाले होते हैं। जिन स्थानों की जलवायु सम हो वहाँ सफेद, बादामी तथा मूँगिया रंग का उपयोग किया जाना चाहिये। रहने के कमरे में रंग का आकर्षण रहने वाले तथा सुसज्जा की वस्तुओं के सामान्य स्तर के अनुकूल होना चाहिये न कि फर्श, दीवार या छत के स्तर पर।

औपचारिक घर में भोजन-कक्ष स्वभावतः उसी नमूने पर होना चाहिए, जिस पर कि पूरा घर है। इसकी रंग-योजना परम्परागत एवं गौरवपूर्ण होती है; क्योंकि अधिकांश भोजन-कक्ष अनौपचारिक होते हैं रंग और सजावट की दृष्टि से वे आनन्द-पूर्ण आश्चर्य के अवसर प्रदान करते हैं। एक अनोखी रंग-युक्त सजावट की योजना भोजन-कक्ष में नीरसता उत्पन्न करने वाली नहीं होती, क्योंकि घर में रहने वाले व्यक्ति उसमें अधिक समय तक नहीं रहते।

चुकन्दरी हरा, हल्का गुलाबी, मक्खनी पीला, नीबू के समान पीला, तरबूजे के समान गुलाबी या टमाटर जैसा लाल रंग ताजगी और आनन्द के आशय को व्यक्त करते हैं। इनके अतिरिक्त सफेद रंग का उपयोग वांछनीय होता है।

रसोईघर में प्रयुक्त की जाने वाली रंग-योजना प्रसन्नतापूर्ण, हल्की व चमकीली होनी चाहिए। ठण्डे रंग भोजन पकाने की गर्मी पर प्रतिक्रिया करते बताए जाते हैं। रसोईघर की रंग-योजना का आधार सिंक, रेन्ज और रेफ्रीजरेटर के रंग होते हैं। ये तीनों एक ही रंग के होने चाहिए। जब ये तीनों चीजें सफेद या हल्के भूरे रंग की हैं तो वे सर्वाधिक सरलता से कमरे के डिजाइन में संयोजित हो जाती हैं। उपयोगिता की स्थायी वस्तुएँ यदि रंगीन हैं तो उनमें नीरसता उत्पन्न करने की सम्भावना रहती है, इसलिए रंग की दृष्टि से कम स्थायी वस्तुओं का प्रयोग किया जाना चाहिए।

देखने की दृष्टि से सफेद या हल्के रंग की दीवारें साधारणतः सर्वोत्तम मानी जाती हैं। प्राकृतिक लकड़ी का प्रयोग भी वांछनीय होता है। एक तीव्र रंग, जैसे शुद्ध प्राथमिक या गौण रंग, कप बोर्ड के आन्तरिक भागों में, फर्नीचर के लिये, पर्दों में और सम्भवतः फर्श, छत, एक दीवार या लकड़ी के किनारों पर प्रयुक्त किया जा सकता है। बर्तन व पौधे अन्य रंगों के हो सकते हैं। खाना पकाने वाला सक्रिय बना रहे इसके लिए रसोईघर में पर्याप्त रूप से उत्तेजक रंग का उपयोग किया जाना चाहिए।

सोने के कमरे की रंग-योजना साधारणतः अन्य कमरों की अपेक्षा अधिक व्यक्तिगत होती है। कमरे में रहने वाले व्यक्ति की पसन्द का रंग ही प्रधान होना चाहिए। रंग के निर्धारण के लिए कमरे में आने वाले प्रकाश की मात्रा को ध्यान में रखना चाहिए, सोने का वह प्रमुख कमरा जिसमें पति-पत्नी सोते हों, उसमें दोनों व्यक्तियों के व्यक्तित्व को व्यक्त करने वाले रंग होने चाहिये। पुरुष या बालक का कमरा पुरुषत्व प्रधान होना चाहिए। उसमें प्रभावपूर्ण चमकीले रंग होने चाहिए।

एक स्त्री या लड़की के कमरे में तेज व स्त्रीत्व-प्रधान तथा स्वयं स्त्री के रंग से मेल खाते हुए रंग होने चाहिए। एक सुन्दर, रंग युक्त कमरा लड़की के व्यक्तित्व को विकसित करने में सहायता प्रदान करता है।

अतिथि-गृह की सज्जा अव्यक्तिगत रंगों से करनी चाहिए, क्योंकि इस कमरे में किसी भी लिंग व किसी भी आयु के अतिथि ठहर सकते हैं। यदि सोने के कमरे को बैठक के कमरे के रूप में भी प्रयुक्त करना हो तो उसमें अधिक गहरे व कम व्यक्तिगत रंगों का उपयोग करना चाहिए।

कोठरी की रंग-योजना चैरी के रंग की होनी चाहिए। इसका रंग भी सोने के कमरे की छत या दीवारों या इनके रंगों के विलोम रंग के होने चाहिए। प्राकृतिक लकड़ी के रंग की दीवारें अधिक आकर्षक एवं सुविधापूर्ण होती हैं।

स्नान-गृह की दीवारें स्वच्छता एवं सौन्दर्यात्मक दृष्टि से सफेद होनी चाहिए। स्नान-गृह में प्रयुक्त रंगीन Fixtures थकान उत्पन्न करने वाले सिद्ध हुए हैं। स्नान-गृह में एक चमकीले, स्पष्ट रंग की आवश्यकता होती है। इस रंग का उपयोग फ़र्श पर, या ऊपर की दीवारों की ओर छत पर तथा तौलिया, चटाई, पर्दे आदि में प्रयुक्त किया जाना चाहिए। स्नान-गृह में जल के रंग जैसे हरे, नीले, बैंगनी या भूरे रंग का उपयोग उसकी सज्जाहेतु किया जाना चाहिए।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-सज्जा में रंग-व्यवस्था का क्या महत्त्व है? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
२. कमरे की रंग-योजना को प्रभावित करने वाले कौन-कौन-से कारक हैं? प्रत्येक का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
३. कमरे की रंग-योजना करते समय कौन-कौन-सी ध्यान देने योग्य बातें हैं?

अध्याय २१

गह सुसज्जा के उपसाधन

सज्जा के उपसाधनों का गृह-सजावट में पर्याप्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये वे तत्त्व हैं जिनसे कमरे में आकर्षक वैयक्तिकता एवं सजीवता आ जाती है। उचित प्रकार के उपसाधनों का प्रयोग किसी कमरे के सज्जा-सम्बन्धी विचार को बल प्रदान करने में सहायता प्रदान करता है। वे सजावट में प्रयुक्त सज्जा के ढंग का अन्तिम अभिव्यक्तीकरण हो सकते हैं, घर के विचार के सूक्ष्म तत्त्व को चित्रित कर सकते हैं। उपसाधनों के अभाव में धनात्मक प्रभाव उत्पन्न करने में कठिनाई हो सकती है। उपसाधनों में गृहिणी को अपनी मौलिकता और व्यक्तित्व को व्यक्त करने के विशिष्ट अवसर ःलते हैं।

आकर्षक प्रभाव के लिए सज्जा उपसाधनों पर इतना अधिक निर्भर करती है कि जो फर्नीचर भण्डार के आदर्श कमरे में उतना अधिक आकर्षक नहीं दिखेगा जितना कि जब उसे भली प्रकार चुने गए उपसाधनों के साथ घर के कमरे में सजाया जाता है। सज्जा के उपसाधन कमरे को उसी प्रकार परिसज्जन प्रभाव (Finishing Touches) प्रदान करते हैं जिस प्रकार पोशाक को ड्रैस की सज्जा के उपसाधन। ड्रैस की सज्जा के उपसाधनों के समान इनका उपयोग भी केवल सुन्दरता बढ़ाने के लिए ही नहीं किया जाता, बल्कि इसलिए भी कि वे इकाई के रूप में पोशाक या कमरे के स्वरूप को उन्नत बनाते हैं।

उपसाधनों को कमरे में महत्त्वपूर्ण स्थानों पर रखा जाना चाहिए। वहाँ पर ये नेत्रों को आनन्दपूर्ण विश्राम देने के केन्द्र स्थापित कर देते हैं। आकर्षक स्थानों पर अवधान बनाए रखने से उपसाधन कमरे के डिजाइन को सरलीकृत एवं एकीकृत कर देते हैं।

घर में वास्तविक सुन्दरता और अभिव्यंजकतापूर्ण वस्तुएँ ही इस प्रकार के बल अथवा महत्त्व को प्राप्त करने के योग्य या पात्र होती हैं। बजट में उन्हें कम महत्त्व नही दिया जाना चाहिए अथवा उन्हें अपव्ययपूर्ण नही समझना चाहिए, क्योंकि उन पर जो भी व्यय किया जावेगा उसका अत्यधिक सुन्दर लाभ प्राप्त होगा। एक बार इन वस्तुओ पर धन व्यय करने के कई वर्ष बाद पुनः इस मद पर व्यय करने की आवश्यकता अनुभव होगी।

सज्जा के उपसाधनो का प्रयोग बडी सावधानीपूर्वक करना चाहिए। इनका उपयोग करते समय निम्नलिखित बातो को ध्यान में रखना चाहिए।

अभिव्यंजकता—उपसाधनो का उपयोग जिस विचार को व्यक्त करता है, उसी को अभिव्यक्त करने के लिए किया जाना चाहिए। उनका प्रमुख उद्देश्य असाधारण सुन्दरता प्रदान करने की अपेक्षा कमरे की चित्तवृत्ति या भावना को महत्त्व प्रदान करना होता है।

घर के व्यक्तित्व का प्रकाशन उपसाधनों के माध्यम से ही होता है। कुछ वस्तुएँ जैसे पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ, पौधे तथा कुछ शौक की वस्तुएँ जैसे मढे हुए स्टाम्प, सिक्के, फोटो, मानचित्र या चित्र गृह-सज्जा को अत्याधिक प्रभावपूर्ण बना देते हैं।

रेखा एवं रूप (Line and form)—रेखा और स्वरूप की दृष्टि से उपसाधन घर के डिजाइन की सामान्य भावना के अनुरूप होने चाहिए। किसी काल-विशेष में, सदव प्रयुक्त होने वाले अथवा आधुनिक सज्जा के अन्तर्गत फर्नीचर के अनुकूल सामान्य रेखा और स्वरूप वाले उपसाधनो का प्रयोग करना चाहिए। यदि प्रचलित फैशन से थोडा-बहुत अन्तर भी हो तो अन्य सज्जा के सामान की अपेक्षा उपसाधनों में यह अन्तर भद्दा नही लगता। वर्तमान प्रचलन यह है कि पहले की अपेक्षा आजकल अधिक वडे उपसाधनो का प्रयोग किया जाता है।

रंग—जिस कमरे मे उपसाधनों का उपयोग किया जाना है, उस कमरे की सज्जा के अनुकूल ही उपसाधन का रंग होना चाहिए। इसलिए यदि सम्भव हो सके तो उपसाधनों को क्रय करने से पूर्व ही इस तथ्य को भली प्रकार जाँच लेना चाहिए। यद्यपि अधिकाश उपसाधन कमरे को तीव्र रग का प्रभाव प्रदान करते हैं, परन्तु कुछ ऐसे उपसाधन भी चुने जाने चाहिए जिनका रग अन्दर की अपेक्षा अधिक आकर्षक न हो।

उपसाधनों के प्रकार

चित्र (Pictures)—चित्रो का घर की सज्जा मे पर्याप्त महत्त्व है। घर की सजावट में इस्तेमाल किये गए चित्रो से गृह-स्वामी और गृहस्वामिनी के सौन्दर्यात्मक एवं कलात्मक स्तर का अनुमान भली प्रकार लगाया जा सकता है। धनाभाव के कारण हम बहुत अच्छा फर्नीचर एक बार को इस्तेमाल नही कर सकते, परन्तु यह नहीं कहा

जा सकता कि धनाभाव के कारण घटिया किस्म के चित्र प्रयुक्त किए जाते हैं, क्योंकि घटिया किस्म और स्तर के चित्रों की अपेक्षा दीवारें बिना चित्रों के ही रहें वह कहीं अधिक अच्छा है।

जिन गृहिणियों ने चित्रों का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया होता है, उन्हीं से यह आशा की जा सकती है कि उनमें चित्रों को छांटने के लिए पर्याप्त सौंदर्य-बोध है। चित्रों के प्रति जो रुचि होती है, वह प्राकृतिक हो यह आवश्यक नहीं। अच्छे और सुन्दर चित्रों के मध्य अधिक समय तक रहने से चित्रों सम्बन्धी सौन्दर्य-बोध के गुण में विकास होता है।

घर के लिए चित्रों के चुनाव में विषय की अनेक अवस्थाओं पर विचार किया जाना चाहिए—कलाकार प्रयोजन एवं पहुँच, विषय-वस्तु की मार्मिकता एवं सौन्दर्यात्मक मार्मिकता, समकालीन एवं असमकालीन चित्र, मौलिक एवं पुनः उत्पादन मात्र तथा विभिन्न माध्यम-पानी के रंग, तेल युक्त रंग तथा प्रिण्ट।

चित्र को बनाते समय कलाकार का प्रयोजन स्वयं को अभिव्यक्त करना तथा अपने विचारों को दूसरों तक पहुँचाना होता है।

कलाकार मनुष्य के वातावरण के साथ सम्बन्ध के प्रति संवेदनशील होता है तथा बड़ी तीव्रता से उसका निरीक्षण करता है। उनमें मानव के प्रमुख अनुभवों को पहचानने तथा उन्हें उस ढंग से चित्रित करने की क्षमता होती है कि दूसरे भी उनकी सार्थकता का अनुभव करते हैं।

चित्र कलाकार और दर्शक के मध्य संवाद वाहन का एक प्रमुख साधन है। कलाकार यह आशा करता है कि जब दर्शक उसके चित्र को देखेगा तो उसको वही अनुभूति होगी जो स्वयं कलाकार को हुई थी। कुछ कलाकारों का उद्देश्य केवल दर्शक को उत्प्रेरित करना व उसे प्रसन्न करना होता है। अन्य कलाकार अपने विचारों को दर्शक तक पहुँचाने का कार्य करते हैं। कुछ कलाकार दर्शक के मत को सम्भवतः सामाजिक, राजनैतिक अथवा धार्मिक क्षेत्रों में प्रभावित करना चाहते हैं। यदि चित्र प्रमुखतः एक कलाकृति मात्र है तो प्रचार उसका न्यायोचित लक्ष्य होता है।

डिजाइन के सिद्धान्तों को समझना कलाकार के लिए एक मूल्यवान पथ-प्रदर्शन है चाहे डिजाइन के सिद्धान्तों का उपयोग जाने में या अनजाने में हो रहा हो। यहाँ पर डिजाइन के सिद्धान्तों में प्रयुक्तीकरण के कुछ सिद्धान्त प्रस्तुत किए जा रहे हैं। कैनवास में उत्तम प्रकार का समानुपात होना चाहिए; आकर्षण के केन्द्र-बिन्दु को सर्वाधिक बल मिलना चाहिए; विषय-वस्तु पुनरावृत्ति के माध्यम से सुदृढ़ होनी चाहिए; प्रभावपूर्ण एवं सहायक रेखाएँ लयपूर्ण होनी चाहिए; भार का वितरण समान होना चाहिए, ताकि सन्तुलन बना रहे।

चित्र में कलाकार के अभिप्राय को दूसरों तक पहुँचाने के लिए रंग के तत्त्व का उतना ही महत्त्व होना चाहिए, जितना कि आकार (Form) का। रंग चित्तवृत्ति

स्थापित करता है, आकार को शक्ति प्रदान करता है तथा तीसरी विमित्तीय (Third Dimension) की ओर संकेत करता है।

सौन्दर्यात्मक मार्मिकता

घर के लिए चित्र का चुनाव करते समय सौन्दर्यात्मक तथा विषय-वस्तु सम्बन्धी मार्मिकता—दोनो पर ही विचार कर लेना चाहिए। कुछ विशेषज्ञों का कथन है कि यदि चित्र प्रमुखतः कमरे को सजाने की दृष्टि से प्रयुक्त किए जाते हैं तो उनके लिए सौन्दर्यात्मक मार्मिकता पर्याप्त होती है। परन्तु अन्य लोगों का विचार है कि सौन्दर्यात्मक गुण तो एक अच्छा स्टाइल मात्र है, महत्वपूर्ण विषय-वस्तु एक आवश्यक अंग है तथा अवस्तुनिष्ठ को छोड अच्छे चित्रो का उद्देश्य विषय-वस्तु ही है।

सौन्दर्यात्मक मार्मिकता की अनुभूति वे ही व्यक्ति कर सकते हैं जो चित्र का विश्लेषण करके यह ज्ञात कर सकें कि वाछित परिणामो को प्राप्त करने के लिए कला के तत्वो का प्रयुक्तीकरण किस प्रकार किया गया है। प्रत्येक व्यक्ति में चित्रो का विश्लेषण करने की क्षमता होनी चाहिए, क्योकि इस अनुभव की सहायता से ही चित्र के सौन्दर्यात्मक मूल्यो को पहचानना सीखा जा सकता है।

एक दर्शक की दृष्टि से सौन्दर्यात्मक मार्मिकता प्रधानतः रग और रूप से सम्बन्धित होती है। कई बार चित्र का चयन करने का एक मात्र आधार रग ही होता है, रचना की पूर्णतः उपेक्षा कर दी जाती है। यदि हम चाहते हैं कि दर्शक का आकर्षण चित्र के प्रति बना रहे तो इसके लिए न तो रग की ही और न डिजाइन की ही उपेक्षा की जा सकती है।

किसी चित्र के रग की मार्मिकता पर जिस कमरे मे चित्र को टाँगना हो उस कमरे के सन्दर्भ मे विचार करना चाहिए। कमरे की रग-योजना का आधार चित्र के सुन्दर रग हो सकते हैं।

विषय-वस्तु की मार्मिकता

विषय-वस्तु की मार्मिकता सदैव सौन्दर्यात्मक मार्मिकता के अनुकूल होनी चाहिये। विषय-वस्तु की मार्मिकता का सर्वाधिक स्पष्ट प्रकार कहानी-कथन-चित्र, जैसे डूबते हुए आदमी को बचाता हुआ कुत्ता, जन्म-दिवस पर दिया गया भोज का चित्र में प्रस्तुत है। इस प्रकार के चित्रो का उद्देश्य दीवार पर टाँगे जाने वाले चित्रो से भिन्न होता है। केवल कहानी-कथन-चित्र बच्चो के लिए अधिक उपयुक्त होते हैं।

स्थायी भावो को उत्तेजित करने वाले चित्र का अच्छा होना आवश्यक नही है। बिल्लियों (Kittens) का एक चित्र स्थायी भावो को आनन्दित करने वाला हो सकता है परन्तु ऐसी मार्मिकता चित्र को सुन्दरता प्रदान नही करती। एक परिचित घटना का चित्र अथवा ऐतिहासिक घटना का चित्र विषयवस्तु की दृष्टि से मार्मिक हो सकता है परन्तु उसमें सौन्दर्यात्मक मार्मिकता की कमी हो सकती है।

घर में प्रयुक्त किये जाने वाले चित्र पर्याप्त रूप से आनन्दपूर्ण विषय-वस्तु को व्यक्त करें, क्योंकि यहाँ चित्र लगाने का प्रधान लक्ष्य सजावट है। फूलों की चित्रकारी विश्वव्यापी आकर्षण है। प्राकृतिक फूल की चित्रकारी की अपेक्षा सुसज्जित फूल की चित्रकारी अधिक आकर्षक मानी जाती है।

मानव-जाति के लिए अत्याधिक महत्त्व की विषय-वस्तु संसार के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण चित्रों को प्रोत्साहित करने वाली रही है। जिस समय धर्म का स्थान मानव-मस्तिष्क में सर्वोच्च था, तभी महान चित्रों की चित्रकारी की गई। डीगो (Diego) रिवैरा (Rivera) तथा जोस ऑरोजको (Jose Orozco) ने वर्तमान पीढ़ी की सामाजिक अशांति का चित्रण किया है। महान चित्रों में सामान्यत: सौन्दर्यात्मिक एवं विषय-वस्तु सम्बन्धी मार्मिकता का मिश्रण होता है।

चित्र तथा व्यक्तित्व

यथार्थ में चित्र क्रेता की भावना को मुखरित करता है। इसलिए गृहिणी को यह तथ्य भली प्रकार ज्ञात होना चाहिए कि चित्र क्या कहता है। यदि गृहिणी विनम्र और सुसंस्कृत महिला है तो उसके चित्र इन गुणों को व्यक्त करने वाले होने चाहिए। यदि वह साहसी एवं मौलिक है तो उसके चित्र भी वैसे ही होने चाहिए। सीधी-सादी रुचियों वाला व्यक्ति स्वभावत: जटिल प्रभाव वाले चित्रों को चुनने वाले व्यक्ति से बिलकुल ही भिन्न प्रकार के चित्रों का चयन करेगा। एक छोटी लड़की चमकीले रंग के फूल या गुड़ियों के चित्र पसन्द करेगी तो एक लड़का सम्भवत: भारतीय पशु अथवा ग्वाले का चित्र पसन्द करेगा। विदेशों से आया कोई यात्री ऐतिहासिक इमारतों के चित्र पसन्द कर सकता है।

चित्रों का कमरों से सम्बन्ध

औसत परिवार के रहने के कमरे के चित्र रचना, रंग अथवा विषय-वस्तु की दृष्टि से असामान्य नहीं होने चाहिए, क्योंकि यह कमरा आरामदायक होना चाहिए तथा इसमें टँगे चित्रों अथवा परिवार के किसी भी सदस्य को आक्रामक (Offensive) प्रतीत न हों। रहने के कमरे के लिए उपयुक्त चित्र हैं—प्राकृतिक भू-दृश्य, समुद्र का दृश्य, फूलों के चित्र, आकृति रचनाएँ तथा रूप चित्र।

भोजन-कक्ष के चित्र अधिक आनन्ददायक होने चाहिए, क्योंकि घर के सदस्य यहाँ अधिक समय नहीं रहते। फूल, आनन्दपूर्ण शान्त जीवन तथा फूलों से लदे वृक्ष अथवा झरने के चित्र भोजन-कक्ष के लिए अधिक उपयुक्त होते हैं।

पुराने ढंग के रसोईघर में चमकीले रंगों के फूलों के चित्रों की पंक्ति हेतु स्थान हो सकता है।

अतिथि-गृह में सामान्य मार्मिकता के चित्र होना अधिक अच्छा होता है। अन्य शयन-कक्षों में व्यक्तिगत चित्र जैसे फोटो ग्राफ होने चाहिए। सोने के एक कमरे में एक ही प्रकार के चित्र हों, ताकि कक्ष में एकता बनी रहे।

बच्चों के कमरों में वे चित्र होने चाहिए जो बच्चों को अधिक आकर्षक लगते हो तथा जिनमें सौन्दर्यात्मक गुण भी हो इन गुणों से परिपूर्ण कहानी-कथन-चित्रो का यथा सभव उपयोग करना अधिक अच्छा होता है। बच्चों के लिए चित्र पर्याप्त रूप से बड़े आकार के होने चाहिए, ताकि वे उन्हें सरलता से देख सकें। उन्हें बच्चों के नेत्रो के स्तर पर टाँगना चाहिए। जैसे-जैसे बच्चों का विकास होता जाए, चित्र भी परिवर्तित कर देने चाहिए, क्योंकि बड़े होने पर वे अधिक चित्रो की रसानुभूति करना सीख जाते हैं।

चित्रों का संयोजन (Combining of Pictures)

एक कमरे के सभी चित्रों की बनावट, अनुपात, विषय-वस्तु तथा रंग में समायोजन होना चाहिए। यदि प्रिन्ट, पानी के रंग और तेल के रग समान रूप से तीव्र हों तो उन्हें संयोजित किया जा सकता है।

एक कमरे में प्रयुक्त चित्रो के आकार में थोडी विविधता होनी चाहिए। परन्तु ऐसा न हो कि कुछ चित्र माप की दृष्टि से अनुपयुक्त हों।

सामान्य आकार के रहने के कमरे में साधारणतः १४ इंच × १८ इंच से लेकर २० इंच × २४ इच तक के आकार के चित्र हो, यदि कमरे में केवल ३ या ४ चित्र ही लगाने हो। आकार और सुन्दरता की दृष्टि से कमरे में एक चित्र अन्य चित्रों की अपेक्षा अधिक प्रभावपूर्ण होना चाहिए। इस चित्र को महत्त्वपूर्ण स्थान जैसे अँगीठी (Fireplace) के ऊपर टाँगना चाहिए।

एक ही कमरे के विभिन्न चित्रो में विषय-वस्तु की दृष्टि से पर्याप्त सुसंगतता होनी चाहिए। उनमें नीरसता का होना अवांछनीय है परन्तु बहुत बड़ा अन्तर भी नही होना चाहिए, जैसा कि जगल में लगी आग के चित्र और छोटे बालक के चित्र के मध्य में अन्तर है।

एक ही कमरे के चित्र यदि वे उसी कमरे के लिए सावधानीपूर्वक चुने गये हैं तो रग की दृष्टि से उनमें एक दूसरे के अनुरूप होने की अधिक सम्भावना रहती है। साधारणतः ऐसे चित्रों को साथ-साथ लगाना चाहिए जिनमें भिन्न-भिन्न रंग प्रभावपूर्ण हों। चित्रों को पास-पास लगाने में सामान्य त्रुटि यह हो जाती है कि अत्यधिक गहरे रग के तथा अत्यधिक हल्के रग के चित्र पास लगा दिये जाते हैं। इस त्रुटि से बचना चाहिए।

चित्रों का मढ़वाना (Framing of Pictures)

साधारणतः प्रत्येक चित्र को मढ़वाना उचित होता है, क्योंकि मढ़वाने से चित्र की रेखाओ की गति रुक जाती है। इसके अतिरिक्त चौखटे (Frame) से चित्र तथा जिस दीवार वह टाँगा गया है उन दोनों के मध्य सक्रमण स्थापित हो जाता है। चित्र

का आकार, विषय-वस्तु, गतिशीलता, रंग तथा जिस माध्यम से यह किया गया है ये सभी फ्रेम का चुनाव करने की क्रिया को प्रभावित करते हैं।

सभी प्रकार के चित्रों के लिए लकड़ी के सादे फ्रेम प्रयुक्त किये जा सकते हैं, सादे ढले हुए फ्रेम भी उपलब्ध होते हैं। लकड़ी के फ्रेम जो अपने प्राकृतिक रंग या फ्रेम किये जाने वाले चित्र के रंग के अनुकूल रंग से रंगे हुए हों, ठीक होते हैं। फ्रेम में चित्र के प्रभावपूर्ण रंग को प्रयुक्त किया जा सकता है अथवा इसको विपरीत रंग से रंगना चाहिए। फोटो ग्राफ तथा अन्य काले-सफेद चित्रों के फ्रेम का रंग काला, सफेद, भूरा या हल्का सिल्वरी होना चाहिए।

तैल चित्रों के लिए अपेक्षाकृत भारी फ्रेम की आवश्यकता होती है, क्योंकि कैनवास और तैलयुक्त रंगों के कारण चित्र का वजन भारी हो जाता है। आजकल इन चित्रों के लिए रंगे हुए या लकड़ी के स्वाभाविक रंगों वाले सादे फ्रेम प्रयुक्त किये जाते हैं।

चित्रों को टाँगना (Hangnig of Pictures)—चित्र घर की शोभा बढ़ाते हैं, अतः जन-साधारण की यह धारणा है कि एक कमरे में जितने अधिक चित्र हों, वह उतना ही अधिक सुन्दर लगता है। इसी से वे दीवारों पर दर्जनों चित्र टाँग देते हैं। पुस्तकों की अलमारी के ऊपर, आतिशदान पर, मेज पर, ताक में—जहाँ भी स्थान मिले वे चित्र लगा देते हैं। इसके अतिरिक्त फोटो व कैलेण्डरों से भी कमरे को भर देना सुन्दरता को बढ़ाना समझा जाता है। वास्तव में इस प्रकार बिना किसी क्रम के कमरे में तस्वीरों व चित्रों की भरमार कर देना बजाय कमरे की सुन्दरता को बढ़ाने के उसे कुरूप कर देता है।

यदि कमरे में लगा प्रत्येक चित्र स्वयं सुन्दर भी हो, तब भी अनगिनत चित्रों को साथ-साथ लगा देने से सुन्दरता कम हो जाती है। अनुमान करिए कि आप एक कमरे में पहुँचती हैं जिसमें दस-पन्द्रह धार्मिक नेताओं के, आठ-दस महापुरुषों के, आठ-दस सुहावने दृश्यों के तथा कुछ ऐतिहासिक व कुछ गृह-निवासियों के चित्र लगे हैं। रहने का कमरा अजायबघर या चित्रशाला तो है नहीं कि आप सारा समय प्रत्येक चित्र देखने में ही लगायेंगी, इसलिए उन दर्जनों चित्रों की ओर ध्यान देने के बदले आप अपना ध्यान उनकी ओर से हटाने का ही प्रयत्न करेंगी।

चित्रों को केवल दीवार के रिक्त स्थानों की पूर्ति करने भर के लिए ही नहीं टाँगना चाहिए, क्योंकि रिक्त जगहें अनुचित नहीं होतीं। उच्च कोटि की कला का एक चित्र साधारण बीस चित्रों से बढ़कर है तथा कमरे में एक-दो अच्छे चित्र आगन्तुकों को दस-बीस अच्छे चित्रों की अपेक्षा अधिक प्रभावित करते हैं। परिवार के सदस्यों के फोटो सजाने में भी यह नियम लागू होना चाहिए। एक-दो बढ़िया फोटो या समूह-फोटो ढेरों फोटों से कहीं अधिक भले लगते हैं। चित्र किसी निश्चित वस्तु अथवा फर्नीचर के ऊपर या उसके समीप एक रचना बनाने, दीवार और फर्नीचर

को एकीकृत करने हेतु टाँगना चाहिए। यदि चित्रों की रेखा ऊपर की ओर है तथा फर्नीचर की रेखा नीचे की को ओर है तो इस प्रकार का टाँगना दोषपूर्ण होगा। समस्त चित्रों की ऊपरी रेखा एक-सी है या समतल है तो एकीकरण में वृद्धि हो जाती है। चित्र सदैव खड़े हुए आदमी के नेत्रों के स्तर के नीचे ही टाँगने चाहिए, ऊपर नही।

छोटे चित्र बहुधा समूह मे टाँगे जाते हैं, ताकि चित्रों का पूर्ण प्रभाव फर्नीचर के अनुपात में हो। उदाहरणार्थ चित्रो की एक या दो पक्तियाँ एक लम्बे, नीचे चैस्ट (chest) अथवा सोफा के ऊपर हैं तो वे सुन्दर दिखाई देते हैं परन्तु वहाँ केवल एक ही चित्र टाँगना ठीक नही। समूह से सभी चित्र रंग और विषय-वस्तु की दृष्टि से सम्बन्धित होने चाहिए। आमतौर से यह वाछनीय है कि दो चित्रों के बीच मे छोड़ी गई जगह स्वय चित्रो की चौडाई से कम होनी चाहिए। कभी-कभी साधारण कपडा या कागज का उपयोग छोटे चित्रो के समूह की पृष्ठभूमि के लिए किया जा सकता है।

चित्रों को यथासम्भव चौरस स्थिति मे टांगना चाहिए, ताकि वे दीवार का अग जैसे प्रतीत होने लगें। यदि फ्रेम के ऊपरी भाग मे स्क्रू आईज (Screw eyes) प्रयुक्त की जाएँ तो चित्र को चौरस ही टाँगना चाहिए।

चित्रो को दीवार पर टाँगने के लिए कील व खूँटी तथा डोरी की ओर भी ध्यान देना चाहिए। बहुधा अच्छे-से-अच्छे चित्र टाँगने की अनुचित विधि के कारण अपनी शोभा खो बैठते हैं। टाँगने का स्थान व ऊँचाई निश्चित करना चित्र-चित्र पर निर्भर करता है। बारीक, छोटा चित्र कदापि ऊँचा नही लगाना चाहिए।

पुस्तकें—पुस्तकों को खुली ही शैल्फ में रखना सर्वाधिक आकर्षक एवं सुसज्जात्मक होता है। रहने के कमरे में एक छोटी दीवार के सहारे रखना सम्भवतः पर्याप्त होगा। शीशेयुक्त पुस्तक रखने के केस रहने के कमरे में नही होने चाहिए, क्योंकि शीशा आकर्षक नही होता। इनका उपयोग मूल्यवान पुस्तकें रखने के लिए पुस्तको के कमरे अथवा पुस्तकालय में किया जाना चाहिए।

गतिशील अल्मारियों की अपेक्षा दीवार में बनी अल्मारियाँ पुस्तकों के लिये अधिक उपयुक्त होती है, क्योंकि वे कमरे की रेखा से अधिक मेल खाती हैं। पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओ अथवा फोनोग्राम अभिलेखन की ऊँचाई के अनुसार अल्मारी के खानो में संयोजनशीलता होनी चाहिए। अल्मारी के खाने खाली नही रहने चाहिये। उनमें सस्ती पुस्तकें क्रय करके रखी जा सकती हैं।

पुस्तको के आकार और रग को ध्यान में रखकर उन्हें व्यवस्थित करना चाहिए। सबसे बडी पुस्तकें सबसे नीचे के खाने में रखनी चाहिए। सबसे अधिक गहरे रग की पुस्तकें फर्श के पास सबसे नीचे के खानों में अच्छी दिखाई देती हैं। एक ही रग की पुस्तकें साधारणत: एक साथ रखी जाने पर सुन्दर लगती हैं। कुछ पुस्तकों को कागज के रंगीन खोलो में रख देना चाहिए।

घड़ियाँ (Clocks)—साज-सज्जा के अन्य उपसाधनों के समान घड़ी को भी कमरे की भावना एवं उसकी शान या सादापन के अनुकूल व्यवस्थित करना चाहिए। आजकल की असाधारण डिजाइन की घड़ियाँ आधुनिक सज्जा के अनुरूप होती हैं।

औसत स्तर के घर में आजकल अत्यधिक बड़े आकार की तथा अत्यधिक सजी-धजी घड़ियाँ पाई जाती हैं, इसलिये उन्हें जितना ध्यान आकर्षित करना चाहिए उससे कहीं अधिक अवधान को आकर्षित करती हैं। सादी रेखाओं और कम सजावट वाली घड़ियाँ साधारणतः किसी भी कमरे के लिए सर्वोत्तम होती हैं।

छोटी मूर्त्तियाँ (Small Sculpture)—गृह सुसज्जा के लिए पत्थर, लकड़ी, धातु. हाथीदांत, चीनी मिट्टी, पॉर्सेलीन, प्लास्टिक अथवा काँच की छोटी मूर्त्तियाँ उपयुक्त होती हैं। १२ इंच से १८ इंच ऊँचाई की मूर्त्तियाँ बड़ी सरलता से रखी जा सकती हैं, क्योंकि वे अकेली या जोड़े के साथ रखी जाने की दृष्टि से पर्याप्त बड़ी होती हैं। पुष्प-विन्यास के साथ यदि इन्हें रखा जाए तो वे अधिक आकर्षक लगती हैं। कमरे को सजाने की दृष्टि से ४ इंच या इससे छोटी ऊँचाई की मूर्त्तियाँ माप की दृष्टि से उपयुक्त नहीं होतीं परन्तु यदि इन्हें समूहीकृत करके छोटे कमरे में इस्तेमाल किया जाये तो उचित रहता है। परन्तु यह संग्रह कुछ विषयों, कुछ सामग्रियों अथवा कुछ प्रकारों तक ही सीमित हो सकता है।

जो व्यक्ति पुनरुत्पादित मूर्त्तियों के बजाय मौलिक मूर्त्तियाँ क्रय कर सकते हों, उन्हें सजीव मूर्त्तियों को प्रोत्साहित करने तथा मौलिक वस्तु के एकाधिकार की सन्तुष्टि प्राप्त करने के लिए मौलिक मूर्त्तियों को ही क्रय करना चाहिए। मूर्त्तियों की प्रदर्शनियों को देखकर मूर्त्तिकला के तत्कालीन कार्य से परिचय प्राप्त कर सकते हैं। जो व्यक्ति मूर्त्तियों के सम्बन्ध में निर्णय-शक्ति प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें इस विषय पर उपलब्ध उत्तम पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाएँ पढ़नी चाहिये।

एक अच्छी मूर्त्ति के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण गुणों में से एक यह है कि इसमें मानव-जाति के महत्त्व का कोई विचार अवश्य व्यक्त होना चाहिए। मूर्त्ति कलाकार के सन्देश का प्रोत्साहक एक आधारीय मानवीय आवश्यकता या अनुभव होता है। छोटी-छोटी मूर्त्तियों के द्वारा भी इस भाव को सम्वाहित किया जा सकता है।

पत्थर की मूर्त्तियाँ सघनित, भारी एवं पत्थर के समान होनी चाहिए। मिट्टी की मूर्त्तियाँ अधिक गोलाकार और विस्तीर्ण रूपों में अपने सुनम्य गुण को प्रदर्शित करती है। धातु की मूर्त्तियों में पिघली हुई धातु की तरलता अभिव्यक्त होनी चाहिए। लकड़ी की मूर्त्ति में लकड़ी के दाने प्रकट होने चाहिए तथा स्वयं लकड़ी के समान इसमें अनौपचारिकता प्रदर्शित होनी चाहिए।

पशु, पक्षी आदि

कुछ सज्जा इस प्रकार की होती हैं जिनमें उद्यान की भावना प्रदान करने के लिये पक्षियों का होना अनिवार्य होता है। पक्षियों के बिना सजावट में पूर्णता नही आ पाती। पक्षियों के गीत, गतियाँ तथा रंग सजावट की स्थिर वस्तुओं को आनन्द-दायक व सजीव बना देते हैं। सुन्दर डिजाइन के बने हुए पक्षियों के पिंजड़े विभिन्न शैलियों मे प्राप्त किये जा सकते हैं। धूपयुक्त कमरों, ड्योढ़ियों, भोजन कक्ष अथवा बच्चों के कमरो के लिए रीड (घास) के बने पिंजड़े उपयुक्त होते हैं। जिस व्यक्ति की रुचि चिड़ियो मे होती है वह फर्श से छत तक बड़े-बड़े पिंजड़े ड्योढ़ी के दोनों ओर रखता है। किसी टहनी पर बैठा तोता किसी उद्यान का आभूषण होता है।

घर को आकर्षक और सजीव बनाने के लिये सजावट के उपसाधनों के रूप मे मछलियों को भी प्रयुक्त किया जा सकता है। अपने रग, बनावट तथा गौरवपूर्ण गति के कारण गर्म प्रदेशीय मछली सजावट की दृष्टि से सर्वोत्तम होती है। घर के अन्दर *तथा बाहर दोनों स्थानों पर वे समान रूप से सजावट को प्रभावपूर्ण बना देती हैं।* मछलियो को घर के अन्दर कलात्मक ढंग से प्रदर्शित किया जा सकता है। सादे शीशे के पात्र में मछलियाँ सबसे अधिक स्पष्ट और आकर्षक ढङ्ग से प्रदर्शित की जा सकती हैं। मकान की रचना से मेल खाती हुई एक जल जीवशाला बनवा लेनी चाहिए। जल जीवशाला हॉल तथा धूप वाले कमरे के मध्य की दीवार मे बनवानी चाहिये, ताकि इसका उपयोग दोनों कमरो से किया जा सके। मछली तथा मछलियो को रखने के पात्र *पौधो और ड्योढ़ी मे युक्तिसंगतता होनी चाहिये।*

हमारे देश मे घर की शोभा बढ़ाने के लिये कुत्तों और बिल्लियो को भी पाला जाता है। किसी भी सुसज्जित सज्जा की निर्जीव वस्तु की अपेक्षा सुनहरी रग की काली नाक, पजे और पूँछ, बड़ी-बड़ी आँख वाली श्याम देश की बिल्ली अधिक आकर्षक होती है। काले-सफेद रंग का कुत्ता घर की सजावट मे चार चाँद लगा देता है।

उपसाधनों की स्थापना

किसी कमरे मे सुसज्जा के उपसाधनों को कमरे मे विद्यमान फर्नीचर, लैम्प तथा चित्रो की दृष्टि से विवेकपूर्ण ढङ्ग से इस प्रकार रखना चाहिये, ताकि कमरे के आकर्षण में अधिक वृद्धि की जा सके। सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपसाधनो को कमरे के आकर्षण के केन्द्र-बिन्दु पर रखना चाहिए। आकर्षण के गौण केन्द्रो पर कम महत्त्व के उपसाधन सजाने चाहिए।

उपसाधनों की सज्जा मौलिक तथा आकर्षक ढङ्गो से करनी चाहिये।

सजावट के अन्य साधन

परदे—कमरो के दरवाजे-खिड़कियो पर परदे लगाने के आगे लिखे उद्देश्यों मे से कोई एक या अधिक उद्देश्य हो सकते हैं :

१. दरवाजा खुला होने की दशा में भी कमरे के अन्दर-बाहर के दृश्य, व्यक्ति व वस्तुएँ दृष्टिगोचर न हो सकें।
२. तीव्र प्रकाश, गर्मी तथा तेज हवा और ठण्डक से बचाव हो।
३. कमरे की शोभा व सुन्दरता बढ़े।

स्पष्ट है कि परदा यदि मुख्यतः प्रथम उद्देश्य से लगाया जा रहा है तो वह ऐसे कपड़े का हो जो हवा व प्रकाश की राह में रुकावट न डालते हुए भी अपारदर्शक हो। यदि परदा द्वितीय उद्देश्य से लगाया जा रहा है तो परदे का कपड़ा मोटा व रंगीन या छपा हुआ रहे, तभी उपयुक्त होगा। ऐसे परदे का रंग पक्का होना अत्यन्त आवश्यक है, नहीं तो धूप में फीका पड़ जाता है। पहले दोनों उद्देश्यों के परदे लगाते समय भी यह तो आवश्यक है ही कि परदे सुन्दर भी लगें किन्तु यदि परदे लगाने का विशेषतः उद्देश्य सौन्दर्य-वृद्धि ही है तब तो इस ओर विशेष ध्यान देना पड़ेगा। पाश्चात्य देशों में बहुधा एक ही कमरे में मोटे व महीन दो प्रकार के परदे साथ-साथ लगे रहते हैं। सुन्दर, हल्के रंग के जाली या अन्य महीन कपड़े के बेल-बूटेदार परदे दरवाजे व खिड़की के शीशों पर लगे रहते हैं और दिन को काम आते हैं। अन्धकार के समय मोटे व गहरे रंग के परदे जिन्हें ब्लाइन्ड कहते हैं, खोल दिये जाते हैं। इससे रात्रि को कमरे में प्रकाश से भी अन्दर का दृश्य बाहर से दिखाई नहीं देता। उचित रीति से परदे लगाना सरल नहीं है। आवश्यकता व रुचि के अनुसार प्रयोग करने से ही गृहिणी परदों का ठीक चुनाव व उपयोग सीख सकती है।

साधारणतः भारत में गर्मी की ऋतु में मोटे या गहरे रंग के परदे अच्छे नहीं लगते। परदों के रंग निश्चित करने के लिए गृहिणी को कमरे की दीवारों व अन्य वस्तुओं के रंगों को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए तथा परदों का रंग ऐसा होना चाहिए जो कमरे के अनुकूल हो।

परदे का कोई भी रंग चुना जाये, यह आवश्यक है कि रंग पक्का हो जो धूप व धुलाई से न बिगड़े। कपड़े की बनावट तथा प्रकार की ओर भी ध्यान देना चाहिए तथा सदैव मजबूत एवं अच्छा कपड़ा ही परदों के लिए खरीदना चाहिये, जिससे आये दिन परदे बदलने की समस्या न रहे। धोने पर सिकुड़ जाने वाले कपड़े परदे के लिए नितान्त अनुपयुक्त हैं। परदे अनेक प्रकार के कपड़ों के बन सकते हैं जिनमें कुछ प्रकार के कपड़े महँगे होते हैं व कुछ सस्ते। यह आवश्यक नहीं है कि महँगे कपड़े सदैव परदों के लिए उत्तम ही होंगे। यदि आवश्यकतानुसार परदों के लिए ठीक कपड़ा ढूँढ़ते समय विविध कपड़ों की विशेषताओं को ध्यान में रखा जाय तो सस्ते दामों में भी अच्छा परदा तैयार हो सकता है। आजकल भारतीय हस्तकला (Handloom) के अजन्ता व कलात्मक नमूनों से सुसज्जित अति सुन्दर परदे सस्ते दामों पर मिल जाते हैं। यदि परदे के कपड़े के लिए सीमित धन व्यय करना है तो परदे का कपड़ा सस्ता अवश्य खरीदा जा सकता है, परन्तु कपड़े के नाप में कमी नहीं करनी चाहिये। एक दरवाजे के परदे के लिए इतना कपड़ा अवश्य हो कि उससे पर्याप्त चौड़ा परदा बन

सके। दरवाजों से परदे की चौड़ाई एक चौथाई या आधी होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त घर में रखी हुई विविध प्रकार की, प्रयोग में न आने वाली साड़ियों को भी विधिपूर्वक चतुराई से प्रयोग करके आकर्षक परदे बनाये जा सकते हैं। परदों से घर को सजाना एक आवश्यकता है तो एक कला भी है, जिसकी ओर प्रत्येक गृहिणी को ध्यान देना चाहिए।

दरी व कालीन—ठण्डे देश-प्रदेश में फर्श को दरी व कालीन से ढक कर रखने की प्रथा केवल सुन्दरता के लिए ही नहीं है, वरन् आवश्यकतावश भी है क्योंकि बिना दरी या कालीन के खाली फर्श बहुत ही ठण्डा हो जाता है। भारत के उष्ण भागों में गर्मी की ऋतु में तो खाली फर्श ही अधिक भला प्रतीत होता है—विशेषत: जब वह सुन्दर टाइलों या सीमेंट का बना हो किन्तु शीतकाल में या शीत प्रधान स्थानों में फर्श पर दरी व कालीन बिछाना आवश्यक हो जाता है।

साधारणत: जब कालीन या दरी शीत से बचने के विचार से नहीं, वरन् सुन्दरता के विचार से ही बिछाई जाय, तो कमरे के पूरे फर्श पर न होकर केवल बीच के थोड़े स्थान में रहे, तो अधिक उत्तम होगा। छोटे कालीन सरलता से उठाये-बिछाये व झाड़े जा सकते हैं जिससे कमरे के फर्श की सफाई में सुविधा रहती है। पूरे कमरे में दरी बिछाकर छोटा कालीन केवल मध्य में ही बिछा दिया जाता है। यह भी सुन्दर लगता है।

कालीन अनेक प्रकार के होते हैं। सूती, ऊनी, काश्मीरी, फारसी या मुर्शिदाबादी कालीन सुन्दर किन्तु महँगे होते हैं। बैठक में तथा शयन कक्ष में विशेषत. कालीन की आवश्यकता पड़ती है। धनाभाव की दशा में कालीन के स्थान पर केवल दरी या सन (Jute) की सुन्दर कालीन जैसी चटाई से ही काम चलाया जा सकता है। गर्मी में तो बहुधा शीतल-पाटी ही सबसे सुखदायक प्रतीत होती है।

दरी व कालीन चुनते समय यह ध्यान देना कि रंग व नमूना कैसा है, अति महत्त्वपूर्ण है। कमरे की अन्य वस्तुओं, विशेषत: परदे व गद्देदार कुर्सियों के साथ कालीन व दरी के रंग व डिजाइन से मेल खाते हुए होना चाहिये। बैठक में जिस रंग विशेष को प्रधानता दी जा रही हो, कालीन व दरी का रंग उसके अनुरूप होना चाहिये। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि यदि कुर्सी की गद्दियाँ व सोफा के गिलाफ आदि सादे रंगे हुए कपड़े के हैं, तो कालीन यथासम्भव फूलदार हो और यदि सोफा फूलदार डिजाइन का हो तो कालीन सादा। कालीन के रंग व नमूने के साथ ही साथ उसकी बनावट व प्रकार की ओर भी ध्यान देना चाहिये तथा अपनी सामर्थ्य के अनुसार यथाशक्ति अच्छा कालीन लेने का प्रयत्न करना चाहिए। कमरे के नाप व रंग व्यवस्था के अनुसार ठीक चुना हुआ कालीन वही है जिससे छोटा कमरा भी कुछ बड़ा प्रतीत होने लगे, तथा अँधेरा कमरा भी प्रकाशमय मालूम हो। इसके लिए यह आवश्यक है कि छोटे कमरे के लिए सादा या बहुत बारीक डिजायन का कालीन या दरी प्रयोग में लाया जाय, व अँधेरे कमरे के लिए हल्के रंग का।

१. दरवाजा खुला होने की दशा में भी कमरे के अन्दर-वाहर के दृश्य, व्यक्ति व वस्तुएँ दृष्टिगोचर न हो सकें।
२. तीव्र प्रकाश, गर्मी तथा तेज हवा और ठण्डक से वचाव हो।
३. कमरे की शोभा व सुन्दरता वढ़े।

स्पष्ट है कि परदा यदि मुख्यतः प्रथम उद्देश्य से लगाया जा रहा है तो वह ऐसे कपड़े का हो जो हवा व प्रकाश की राह में रुकावट न डालते हुए भी अपारदर्शक हो। यदि परदा द्वितीय उद्देश्य से लगाया जा रहा है तो परदे का कपड़ा मोटा व रंगीन या छपा हुआ रहे, तभी उपयुक्त होगा। ऐसे परदे का रंग पक्का होना अत्यन्त आवश्यक है, नहीं तो धूप में फीका पड़ जाता है। पहले दोनों उद्देश्यों के परदे लगाते समय भी यह तो आवश्यक है ही कि परदे सुन्दर भी लगें किन्तु यदि परदे लगाने का विशेपतः उद्देश्य सौन्दर्य-वृद्धि ही है तव तो इस ओर विशेप ध्यान देना पड़ेगा। पाश्चात्य देशों में वहुधा एक ही कमरे में मोटे व महीन दो प्रकार के परदे साथ-साथ लगे रहते हैं। सुन्दर, हल्के रंग के जाली या अन्य महीन कपड़े के वेल-वूटेदार परदे दरवाजे व खिड़की के शीशों पर लगे रहते हैं और दिन को काम आते हैं। अन्धकार के समय मोटे व गहरे रंग के परदे जिन्हें वलाइन्ड कहते हैं, खोल दिये जाते हैं। इससे रात्रि को कमरे में प्रकाश से भी अन्दर का दृश्य वाहर से दिखाई नहीं देता। उचित रीति से परदे लगाना सरल नहीं है। आवश्यकता व रुचि के अनुसार प्रयोग करने से ही गृहिणी परदों का ठीक चुनाव व उपयोग सीख सकती है।

साधारणतः भारत में गर्मी की ऋतु में मोटे या गहरे रंग के परदे अच्छे नहीं लगते। परदों के रंग निश्चित करने के लिए गृहिणी को कमरे की दीवारों व अन्य वस्तुओं के रंगों को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए तथा परदों का रंग ऐसा होना चाहिए जो कमरे के अनुकूल हो।

परदे का कोई भी रंग चुना जाये, यह आवश्यक है कि रंग पक्का हो जो धूप व धुलाई से न विगड़े। कपड़े की वनावट तथा प्रकार की ओर भी ध्यान देना चाहिए तथा सदैव मजवूत एवं अच्छा कपड़ा ही परदों के लिए खरीदना चाहिये, जिससे आये दिन परदे वदलने की समस्या न रहे। धोने पर सिकुड़ जाने वाले कपड़े परदे के लिए नितान्त अनुपयुक्त हैं। परदे अनेक प्रकार के कपड़ों के वन सकते हैं जिनमें कुछ प्रकार के कपड़े महँगे होते हैं व कुछ सस्ते। यह आवश्यक नहीं है कि महँगे कपड़े सदैव परदों के लिए उत्तम ही होंगे। यदि आवश्यकतानुसार परदों के लिए ठीक कपड़ा ढूँढ़ते समय विविध कपड़ों की विशेषताओं को ध्यान में रखा जाय तो सस्ते दामों में भी अच्छा परदा तैयार हो सकता है। आजकल भारतीय हस्तकला (Handloom) के अजन्ता व कलात्मक नमूनों से सुसज्जित अति सुन्दर परदे सस्ते दामों पर मिल जाते हैं। यदि परदे के कपड़े के लिए सीमित धन व्यय करना है तो परदे का कपड़ा सस्ता अवश्य खरीदा जा सकता है, परन्तु कपड़े के नाप में कमी नहीं करनी चाहिये। एक दरवाजे के परदे के लिए इतना कपड़ा अवश्य हो कि उससे पर्याप्त चौड़ा परदा वन

सके। दरवाजो से परदे की चौडाई एक चौथाई या आधी होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त घर में रखी हुई विविध प्रकार की, प्रयोग में न आने वाली साडियो को भी विधिपूर्वक चतुराई से प्रयोग करके आकर्षक परदे बनाये जा सकते हैं। परदो से घर को सजाना एक आवश्यकता है तो एक कला भी है, जिसकी ओर प्रत्येक गृहिणी को ध्यान देना चाहिए।

दरी व कालीन—ठण्डे देश-प्रदेश में फर्श को दरी व कालीन से ढक कर रखने की प्रथा केवल सुन्दरता के लिए ही नही है, वरन् आवश्यकतावश भी है क्योकि बिना दरी या कालीन के खाली फर्श बहुत ही ठण्डा हो जाता है। भारत के उष्ण भागों में गर्मी की ऋतु में तो खाली फर्श ही अधिक भला प्रतीत होता है—विशेषत: *जब वह सुन्दर टाइलो या सीमेंट का बना हो किन्तु शीतकाल मे या शीत प्रधान* स्थानो में फर्श पर दरी व कालीन बिछाना आवश्यक हो जाता है।

साधारणतः जब कालीन या दरी शीत से बचने के विचार से नही, वरन् सुन्दरता के विचार से ही बिछाई जाय, तो कमरे के पूरे फर्श पर न होकर केवल बीच के थोड़े स्थान मे रहे, तो अधिक उत्तम होगा। छोटे कालीन सरलता से उठाये-बिछाये व झाड़े जा सकते हैं जिससे कमरे के फर्श की सफाई में सुविधा रहती है। पूरे कमरे में दरी बिछाकर छोटा कालीन केवल मध्य मे ही बिछा दिया जाता है। *यह भी सुन्दर लगता है।*

कालीन अनेक प्रकार के होते हैं। सूती, ऊनी, काश्मीरी, फारसी या मुर्शिदावादी कालीन सुन्दर किन्तु महँगे होते हैं। बैठक मे तथा शयन कक्ष मे विशेषत: कालीन की आवश्यकता पडती है। धनाभाव की दशा मे कालीन के स्थान पर केवल दरी या सन (Jute) की सुन्दर कालीन जैसी चटाई से ही काम चलाया जा सकता है। गर्मी में तो बहुधा शीतल-पाटी ही सबसे सुखदायक प्रतीत होती है।

दरी व कालीन चुनते समय यह ध्यान देना कि रग व नमूना कैसा है; अति महत्त्वपूर्ण है। *कमरे की अन्य वस्तुओ, विशेषत: परदे व गद्देदार कुर्सियो के साथ* कालीन व दरी के रग व डिजाइन से मेल खाते हुए होना चाहिये। बैठक मे जिस रंग विशेष को प्रधानता दी जा रही हो, कालीन व दरी का रग उसके अनुरूप होना चाहिये। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि यदि कुर्सी की गद्दियाँ व सोफा के गिलाफ आदि सादे रगे हुए कपड़े के हैं, तो कालीन यथासम्भव फूलदार हो और यदि सोफा फूलदार डिजाइन का हो तो कालीन सादा। कालीन के रग व नमूने के साथ ही साथ उसकी बनावट व प्रकार की ओर भी ध्यान देना चाहिये तथा अपनी सामर्थ्य के अनुसार *यथाशक्ति अच्छा कालीन लेने का प्रयत्न करना चाहिए।* कमरे के नाप व रंग व्यवस्था के अनुसार ठीक चुना हुआ कालीन वही है जिससे छोटा कमरा भी कुछ बड़ा प्रतीत होने लगे, तथा अँधेरा कमरा भी प्रकाशमय मालूम हो। इसके लिए यह आवश्यक है कि छोटे कमरे के लिए सादा या बहुत बारीक डिजायन का कालीन या दरी प्रयोग मे लाया जाय, व अँधेरे कमरे के लिए हल्के रग का।

१. दरवाजा खुला होने की दशा में भी कमरे के अन्दर-बाहर के दृश्य, व्यक्ति व वस्तुएँ दृष्टिगोचर न हो सकें ।
२. तीव्र प्रकाश, गर्मी तथा तेज हवा और ठण्डक से बचाव हो ।
३. कमरे की शोभा व सुन्दरता बढ़े ।

स्पष्ट है कि परदा यदि मुख्यतः प्रथम उद्देश्य से लगाया जा रहा है तो वह ऐसे कपड़े का हो जो हवा व प्रकाश की राह में रुकावट न डालते हुए भी अपारदर्शक हो । यदि परदा द्वितीय उद्देश्य से लगाया जा रहा है तो परदे का कपड़ा मोटा व रंगीन या छपा हुआ रहे, तभी उपयुक्त होगा । ऐसे परदे का रंग पक्का होना अत्यन्त आवश्यक है, नहीं तो धूप में फीका पड़ जाता है । पहले दोनों उद्देश्यों के परदे लगाते समय भी यह तो आवश्यक है ही कि परदे सुन्दर भी लगें किन्तु यदि परदे लगाने का विशेषतः उद्देश्य सौन्दर्य-वृद्धि ही है तब तो इस ओर विशेष ध्यान देना पड़ेगा । पाश्चात्य देशों में बहुधा एक ही कमरे में मोटे व महीन दो प्रकार के परदे साथ-साथ लगे रहते हैं । सुन्दर, हल्के रंग के जाली या अन्य महीन कपड़े के बेल-बूटेदार परदे दरवाजे व खिड़की के शीशों पर लगे रहते हैं और दिन को काम आते हैं । अन्धकार के समय मोटे व गहरे रंग के परदे जिन्हें बलाइन्ड कहते हैं, खोल दिये जाते हैं । इससे रात्रि को कमरे में प्रकाश से भी अन्दर का दृश्य बाहर से दिखाई नहीं देता । उचित रीति से परदे लगाना सरल नहीं है । आवश्यकता व रुचि के अनुसार प्रयोग करने से ही गृहिणी परदों का ठीक चुनाव व उपयोग सीख सकती है ।

साधारणतः भारत में गर्मी की ऋतु में मोटे या गहरे रंग के परदे अच्छे नहीं लगते । परदों के रंग निश्चित करने के लिए गृहिणी को कमरे की दीवारों व अन्य वस्तुओं के रंगों को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए तथा परदों का रंग ऐसा होना चाहिए जो कमरे के अनुकूल हो ।

परदे का कोई भी रंग चुना जाये, यह आवश्यक है कि रंग पक्का हो जो धूप व धुलाई से न बिगड़े । कपड़े की बनावट तथा प्रकार की ओर भी ध्यान देना चाहिए तथा सदैव मजबूत एवं अच्छा कपड़ा ही परदों के लिए खरीदना चाहिये, जिससे आये दिन परदे बदलने की समस्या न रहे । धोने पर सिकुड़ जाने वाले कपड़े परदे के लिए नितान्त अनुपयुक्त हैं । परदे अनेक प्रकार के कपड़ों के बन सकते हैं जिनमें कुछ प्रकार के कपड़े महँगे होते हैं व कुछ सस्ते । यह आवश्यक नहीं है कि महँगे कपड़े सदैव परदों के लिए उत्तम ही होंगे । यदि आवश्यकतानुसार परदों के लिए ठीक कपड़ा ढूँढ़ते समय विविध कपड़ों की विशेषताओं को ध्यान में रखा जाय तो सस्ते दामों में भी अच्छा परदा तैयार हो सकता है । आजकल भारतीय हस्तकला (Handloom) के अजन्ता व कलात्मक नमूनों से सुसज्जित अति सुन्दर परदे सस्ते दामों पर मिल जाते हैं । यदि परदे के कपड़े के लिए सीमित धन व्यय करना है तो परदे का कपड़ा सस्ता अवश्य खरीदा जा सकता है, परन्तु कपड़े के नाप में कमी नहीं करनी चाहिये । एक दरवाजे के परदे के लिए इतना कपड़ा अवश्य हो कि उससे पर्याप्त चौड़ा परदा बन

सके। दरवाजों से परदे की चौड़ाई एक चौथाई या आधी होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त घर में रखी हुई विविध प्रकार की, प्रयोग में न आने वाली साड़ियों को भी विधिपूर्वक चतुराई से प्रयोग करके आकर्षक परदे बनाये जा सकते हैं। परदों से घर को सजाना एक आवश्यकता है तो एक कला भी है, जिसकी ओर प्रत्येक गृहिणी को ध्यान देना चाहिए।

दरी व कालीन—हमारे देश-प्रदेश में फर्श को दरी व कालीन से ढक कर रखने की प्रथा केवल सुन्दरता के लिए ही नहीं है, वरन् आवश्यकतावश भी है क्योंकि बिना दरी या कालीन के खाली फर्श बहुत ही ठण्डा हो जाता है। भारत के उष्ण भागों में गर्मी की ऋतु में तो खाली फर्श ही अधिक भला प्रतीत होता है—विशेषतः जब वह सुन्दर टाइलों या सीमेंट का बना हो किन्तु शीतकाल में या शीत प्रधान स्थानों में फर्श पर दरी व कालीन बिछाना आवश्यक हो जाता है।

साधारणतः जब कालीन या दरी शीत से बचने के विचार से नहीं, वरन् सुन्दरता के विचार से ही बिछाई जाय, तो कमरे के पूरे फर्श पर न होकर केवल बीच के थोड़े स्थान में रहे, तो अधिक उत्तम होगा। छोटे कालीन सरलता से उठाये-बिछाये व झाड़े जा सकते हैं जिससे कमरे के फर्श की सफाई में सुविधा रहती है। पूरे कमरे में दरी बिछाकर छोटा कालीन केवल मध्य में ही बिछा दिया जाता है। यह भी सुन्दर लगता है।

कालीन अनेक प्रकार के होते हैं। मूर्री, ऊनी, काश्मीरी, फारसी या मुर्शिदाबादी कालीन सुन्दर किन्तु महँगे होते हैं। बैठक में तथा शयन कक्ष में विशेषतः कालीन की आवश्यकता पड़ती है। धनाभाव की दशा में कालीन के स्थान पर केवल दरी या सन (Jute) की सुन्दर कालीन जैसी चटाई से ही काम चलाया जा सकता है। गर्मी में तो बहुधा शीतल-पाटी ही सबसे सुखदायक प्रतीत होती है।

दरी व कालीन चुनते समय यह ध्यान देना कि रंग व नमूना कैसा है; अति महत्त्वपूर्ण है। कमरे की अन्य वस्तुओं, विशेषतः परदे व गद्देदार कुर्सियों के साथ कालीन व दरी के रंग व डिजाइन में मेल खाते हुए होना चाहिए। बैठक में जिस रंग विशेष को प्रधानता दी जा रही हो, कालीन व दरी का रंग उसके अनुरूप होना चाहिये। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि यदि कुर्सी की गद्दियाँ व सोफा के गिलाफ आदि सादे रंगे हुए कपड़े के हैं, तो कालीन यथासम्भव फूलदार हो और यदि सोफा फूलदार डिजाइन का हो तो कालीन सादा। कालीन के रंग व नमूने के साथ ही साथ उसकी बनावट व प्रकार की ओर भी ध्यान देना चाहिये तथा आर्थिक सामर्थ्य के अनुसार यथाशक्ति अच्छा कालीन लेने का प्रयत्न करना चाहिए। कमरे के नाप व रंग व्यवस्था के अनुसार ठीक चुना हुआ कालीन वही है जिससे छोटा कमरा भी कुछ बड़ा प्रतीत होने लगे, तथा अँधेरा कमरा भी प्रकाशमय मालूम हो। इसके लिए यह आवश्यक कि छोटे कमरे के लिए सादा या बहुत बारीक डिजाइन का कालीन या दरी प्रयोग में लाया जाय, व अँधेरे कमरे के लिए हल्के रंग का।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-सज्जा के उप-साधनों का क्या महत्त्व है ?
२. सज्जा के उप-साधनों का उपयोग करते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?
३. गृह-सज्जा में चित्रों का प्रयोग करते समय ध्यान देने योग्य बातें कौन-कौनसी होती हैं और क्यों ?
४. चित्रों को लगाते समय कला के किन सिद्धान्तों का प्रयोग करना चाहिए ?
५. गृह-सज्जा के अन्य आभूषण कौन-कौन-से हैं ? प्रत्येक का प्रयोग कहाँ और कैसे करेंगे ? वर्णन कीजिए ।
६. पर्दों का गृह-सज्जा में क्या महत्त्व है ? पर्दों को लगाते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?
७. दरी व कालीन कितने तरह के होते हैं ? इनको चुनते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?

अध्याय २२

फर्नीचर

फर्नीचर (Furniture) अंग्रेजी भाषा का एक शब्द है जिससे तात्पर्य मेज, तिपाई, कुर्सी, मूढ़ा, पलंग, तख्त व अल्मारी, डोली आदि ऐसे सामान से है जो उठने-बैठने अथवा विविध वस्तुओं को सुरक्षित रखने के काम आता है। ऐसा सामान आधुनिक सभ्य जीवन में कितना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है तथा उसके बिना खाली कमरों में जीवन कितना कष्टमय हो सकता है, इसकी कल्पना करना कठिन नहीं है। फर्नीचर कमरों का एक मुख्य अंग है। अत. गृह-निवासियों के जीवन का भी यह एक प्रमुख भाग है।

फर्नीचर अनेक प्रकार का होता है। इसमे मुख्य निम्न हैं :

१. भिन्न-भिन्न प्रकार की लकड़ी का—देवदार, आबनूस, शीशम, अखरोट, चीड़ आदि लकडी का फर्नीचर। मेज, कुर्सी, अल्मारी, पलग के पाये आदि अधिकतर लकडी के ही बनते हैं। एक विशेष प्रकार की लकडी—पलाईवुड को भी प्रायः फर्नीचर बनाने में प्रयुक्त करते हैं।

२. बेंत का—लकडी की कुर्सियो मे प्रायः बेंत का जाल बनाकर उस पर बैठने का प्रबन्ध किया जाता है। मोटे बेंत की छड़ों से भी कुर्सी, सोफा व मेज आदि बनाते हैं। यह बहुत हल्के रहते हैं तथा भिन्न-भिन्न रगों में अत्यन्त सुन्दर लगते हैं। परन्तु यह फर्नीचर बहुत मजबूत नहीं होता।

३. गद्देदार—ऐसे फर्नीचर का ढांचा तो लकड़ी का ही बना होता है जिस पर नारियल का छिलका, रुई व भूसा आदि लगाकर तथा स्प्रिग डालकर मोटे गद्दों की व्यवस्था की जाती है। बैठक का सोफासेट प्रायः इसी प्रकार का होता है। आजकल कपड़े से ढके होने के स्थान पर गद्दे सुन्दर चमड़ा, प्लास्टिक या रेक्सीन आदि से भी ढके रहते हैं, जो जल्दी गन्दे नही होते तथा गद्दों में स्प्रिग के स्थान पर फोम-रबर (Foam-rubber) का प्रयोग होने लगा है। यद्यपि यह अभी महँगी है, परन्तु बहुत टिकाऊ होती है।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-सज्जा के उप-साधनों का क्या महत्त्व है ?
२. सज्जा के उप-साधनों का उपयोग करते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?
३. गृह-सज्जा में चित्रों का प्रयोग करते समय ध्यान देने योग्य बातें कौन-कौनसी होती हैं और क्यों ?
४. चित्रों को लगाते समय कला के किन सिद्धान्तों का प्रयोग करना चाहिए ?
५. गृह-सज्जा के अन्य आभूषण कौन-कौन-से हैं ? प्रत्येक का प्रयोग कहाँ और कैसे करेंगे ? वर्णन कीजिए।
६. पर्दों का गृह-सज्जा में क्या महत्त्व है ? पर्दों को लगाते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?
७. दरी व कालीन कितने तरह के होते हैं ? इनको चुनते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?

अध्याय २२

फर्नीचर

फर्नीचर (Furniture) अंग्रेजी भाषा का एक शब्द है जिससे तात्पर्य मेज, तिपाई, कुर्सी, मूढा, पलंग, तख्त व अल्मारी, डोली आदि ऐसे सामान से है जो उठने-बैठने अथवा विविध वस्तुओं को सुरक्षित रखने के काम आता है। ऐसा सामान आधुनिक सभ्य जीवन में कितना महत्वपूर्ण स्थान रखता है तथा उसके बिना खाली कमरों में जीवन कितना कष्टमय हो सकता है, इसकी कल्पना करना कठिन नहीं है। फर्नीचर कमरों का एक मुख्य अंग है। अतः गृह-निवासियों के जीवन का भी यह एक प्रमुख भाग है।

फर्नीचर अनेक प्रकार का होता है। इसमें मुख्य निम्न हैं :

१. भिन्न-भिन्न प्रकार की लकड़ी का—देवदार, आबनूस, शीशम, अखरोट, चीड़ आदि लकड़ी का फर्नीचर। मेज, कुर्सी, अल्मारी, पलग के पाये आदि अधिकतर लकड़ी के ही बनते हैं। एक विशेष प्रकार की लकडी—पलाईवुड को भी प्रायः फर्नीचर बनाने में प्रयुक्त करते हैं।

२. बेंत का—लकडी की कुर्सियों में प्रायः बेंत का जाल बनाकर उस पर बैठने का प्रबन्ध किया जाता है। मोटे बेंत की छड़ों से भी कुर्सी, सोफा व मेज आदि बनाते हैं। यह बहुत हल्के रहते हैं तथा भिन्न-भिन्न रंगों में अत्यन्त सुन्दर लगते हैं। परन्तु यह फर्नीचर बहुत मजबूत नहीं होता।

३. गद्देदार—ऐसे फर्नीचर का ढांचा तो लकड़ी का ही बना होता है जिस पर नारियल का छिलका, रुई व भूसा आदि लगाकर तथा स्प्रिंग डालकर मोटे गद्दों को व्यवस्था की जाती है। बैठक का सोफासेट प्राय. इसी प्रकार का होता है। आजकल कपड़े से ढके होने के स्थान पर गद्दे सुन्दर चमड़ा, प्लास्टिक या रेक्सीन आदि से भी ढके रहते हैं, जो जल्दी गन्दे नही होते तथा गद्दों मे स्प्रिंग के स्थान पर फोम-रबर (Foam-rubber) का प्रयोग होने लगा है। यद्यपि यह अभी महँगी है, परन्तु बहुत टिकाऊ होती है।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-सज्जा के उप-साधनों का क्या महत्त्व है ?
२. सज्जा के उप-साधनों का उपयोग करते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?
३. गृह-सज्जा में चित्रों का प्रयोग करते समय ध्यान देने योग्य बातें कौन-कौनसी होती हैं और क्यों ?
४. चित्रों को लगाते समय कला के किन सिद्धान्तों का प्रयोग करना चाहिए ?
५. गृह-सज्जा के अन्य आभूषण कौन-कौन-से हैं ? प्रत्येक का प्रयोग कहाँ और कैसे करेंगे ? वर्णन कीजिए।
६. पर्दों का गृह-सज्जा में क्या महत्त्व है ? पर्दों को लगाते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?
७. दरी व कालीन कितने तरह के होते हैं ? इनको चुनते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?

अध्याय २२

फर्नीचर

फर्नीचर (Furniture) अंग्रेजी भाषा का एक शब्द है जिससे तात्पर्य मेज, तिपाई, कुर्सी, मूढा, पलग, तख्त व अल्मारी, डोली आदि ऐसे सामान से है जो उठने-बैठने अथवा विविध वस्तुओं को सुरक्षित रखने के काम आता है। ऐसा सामान आधुनिक सभ्य जीवन में कितना महत्वपूर्ण स्थान रखता है तथा उसके बिना खाली कमरों में जीवन कितना कष्टमय हो सकता है, इसकी कल्पना करना कठिन नहीं है। फर्नीचर कमरों का एक मुख्य अंग है। अतः गृह-निवासियों के जीवन का भी यह एक प्रमुख भाग है।

फर्नीचर अनेक प्रकार का होता है। इसमे मुख्य निम्न हैं :

१. भिन्न-भिन्न प्रकार की लकड़ी का—देवदार, आवनूस, शीशम, अखरोट, चीड़ आदि लकड़ी का फर्नीचर। मेज, कुर्सी, अल्मारी, पलग के पाये आदि अधिकतर लकड़ी के ही बनते हैं। एक विशेष प्रकार की लकडी—पलाईवुड को भी प्रायः फर्नीचर बनाने में प्रयुक्त करते है।

२. बेंत का—लकडी की कुर्सियों में प्राय. बेंत का जाल बनाकर उस पर बैठने का प्रबन्ध किया जाता है। मोटे बेंत की छडो से भी कुर्सी, सोफा व मेज आदि बनाते हैं। यह बहुत हल्के रहते हैं तथा भिन्न-भिन्न रगो में अत्यन्त सुन्दर लगते हैं। परन्तु यह फर्नीचर बहुत मजबूत नहीं होता।

३. गद्देदार—ऐसे फर्नीचर का ढांचा तो लकडी का ही बना होता है जिस पर नारियल का छिलका, रुई व भूसा आदि लगाकर तथा स्प्रिंग डालकर मोटे गद्दों की व्यवस्था की जाती है। बैठक का सोफासेट प्राय. इसी प्रकार का होता है। आजकल कपड़े से ढके होने के स्थान पर गद्दे सुन्दर चमडा, प्लास्टिक या रेक्सीन आदि से भी ढके रहते हैं, जो जल्दी गन्दे नही होते तथा गद्दो मे स्प्रिंग के स्थान पर फोम-रबर (Foam-rubber) का प्रयोग होने लगा है। यद्यपि यह अभी महँगी है, परन्तु बहुत टिकाऊ होती है।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. गृह-सज्जा के उप-साधनों का क्या महत्त्व है ?
२. सज्जा के उप-साधनों का उपयोग करते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?
३. गृह-सज्जा में चित्रों का प्रयोग करते समय ध्यान देने योग्य बातें कौन-कौनसी होती हैं और क्यों ?
४. चित्रों को लगाते समय कला के किन सिद्धान्तों का प्रयोग करना चाहिए ?
५. गृह-सज्जा के अन्य आभूषण कौन-कौन-से हैं ? प्रत्येक का प्रयोग कहाँ और कैसे करेंगे ? वर्णन कीजिए।
६. पर्दों का गृह-सज्जा में क्या महत्त्व है ? पर्दों को लगाते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?
७. दरी व कालीन कितने तरह के होते हैं ? इनको चुनते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?

अध्याय २२

फर्नीचर

फर्नीचर (Furniture) अंग्रेजी भाषा का एक शब्द है जिससे तात्पर्य मेज, तिपाई, कुर्सी, मूढ़ा, पलंग, तख्त व अल्मारी, डोली आदि ऐसे सामान से है जो उठने-बैठने अथवा विविध वस्तुओं को सुरक्षित रखने के काम आता है। ऐसा सामान आधुनिक सभ्य जीवन में कितना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है तथा उसके बिना खाली कमरों में जीवन कितना कष्टमय हो सकता है, इसकी कल्पना करना कठिन नहीं है। फर्नीचर कमरों का एक मुख्य अंग है। अतः गृह-निवासियों के जीवन का भी यह एक प्रमुख भाग है।

फर्नीचर अनेक प्रकार का होता है। इसमें मुख्य निम्न हैं :

१. भिन्न-भिन्न प्रकार की लकड़ी का—देवदार, आबनूस, शीशम, अखरोट, चीड़ आदि लकड़ी का फर्नीचर। मेज, कुर्सी, अलमारी, पलग के पाये आदि अधिकतर लकडी के ही बनते हैं। एक विशेष प्रकार की लकडी—पलाईवुड को भी प्रायः फर्नीचर बनाने में प्रयुक्त करते हैं।

२. बेंत का—लकड़ी की कुर्सियों में प्रायः बेंत का जाल बनाकर उस पर बैठने का प्रबन्ध किया जाता है। मोटे बेंत की छड़ों से भी कुर्सी, सोफा व मेज आदि बनाते हैं। यह बहुत हल्के रहते हैं तथा भिन्न-भिन्न रगों में अत्यन्त सुन्दर लगते हैं। परन्तु यह फर्नीचर बहुत मजबूत नहीं होता।

३. गद्देदार—ऐसे फर्नीचर का ढाँचा तो लकडी का ही बना होता है जिस पर नारियल का छिलका, रुई व भूसा आदि लगाकर तथा स्प्रिंग डालकर मोटे गद्दों की व्यवस्था की जाती है। बैठक का सोफासेट प्रायः इसी प्रकार का होता है। आजकल कपड़े से ढके होने के स्थान पर गद्दे सुन्दर चमड़ा, प्लास्टिक या रेक्सीन आदि से भी ढके रहते हैं, जो जल्दी गन्दे नहीं होते तथा गद्दों में स्प्रिंग के स्थान पर फोम-रबर (Foam-rubber) का प्रयोग होने लगा है। यद्यपि यह अभी महँगी है, परन्तु बहुत टिकाऊ होती है।

४. **फौलादी फर्नीचर**—इसी प्रकार का अन्य फर्नीचर फौलाद की खोखली नलों या चादरों से बना होता है। ऐसी अलमारियाँ विशेषतः सुदृढ़ होती हैं। उनमें कीड़े-मकोड़े भी नहीं घुस सकते। इन कुर्सियों के गद्दों में चमड़े व रेक्सीन का प्रयोग होता है। यह फर्नीचर हलका व सुदृढ़ होता है पर इसके दाम बहुत होते हैं।

प्रायः प्रत्येक पुराने परिवार में कुछ मेज-कुर्सी, पलंग-चारपाई आदि होते ही हैं। बाजार में भी कई प्रकार के फर्नीचर मिल सकते हैं। परन्तु गृहिणी को अपना गृह सुसज्जित करने से पूर्व चाहिए कि वह घर के विभिन्न कमरों की उचित व्यवस्था पर पूर्ण विचार-परामर्श करके एक सुन्दर योजना बनाये। इस योजना द्वारा वह यह निश्चित करे कि उसको अपना घर अधिकतम सुविधा-सम्पन्न तथा सुन्दर बनाने के लिए क्या-क्या व किस प्रकार का फर्नीचर चाहिए। यदि उपस्थित फर्नीचर आवश्यकता से कम हो तो आर्थिक सामर्थ्य के अन्दर नया फर्नीचर खरीदना चाहिए। बिना सोचे-समझे सामान खरीदने से पैसा अधिक व्यय होगा तथा लाभ कम। यहाँ यह भी कहना अनुचित न होगा कि मकान में केवल उतना ही फर्नीचर होना चाहिए जो नितान्त आवश्यक हो। छोटी-छोटी आवश्यकता के लिए फर्नीचर बटोरने से गृह की व्यवस्था सुधरने की अपेक्षा बिगड़ जायेगी।

पुराना फर्नीचर—घर पर उपस्थित पुराने फर्नीचर को भी यथासम्भव प्रयोग में लाना चाहिए। यदि फर्नीचर योजना के अनुसार सन्तोषपूर्ण नहीं है तो उसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन करवाना सम्भव हो सकता है। यदि वह प्रयोग में कदापि नहीं आ सकता तो उसको बेच दिया जाय।

पुराना फर्नीचर अच्छा व सुदृढ़ होते हुए भी उचित देख-भाल न होने से या असावधानी से प्रयोग करने से बहुधा शोभा नहीं देता। कभी-कभी यह भी होता है कि पुराना फर्नीचर आधुनिक फर्नीचर से डिजाइन में भिन्न, भारी व भद्दा लगता है। पुराना फर्नीचर बहुधा खुदाईदार व कटावयुक्त भी होता है, जिसमें मिट्टी धूल की ढेरों तहें जम चुकी होती हैं, अतः वह गृहिणी को आकर्षित नहीं करता। परन्तु यदि धैर्य व बुद्धिमत्ता से काम लिया जाय तो निराश होने की आवश्यकता नहीं। गन्दे फर्नीचर को हल्के गर्म पानी व साबुन के घोल में कपड़ा भिगोकर मलने से साफ किया जा सकता है। खरोंच आदि को रेगमार (Sand paper) से दूर करके पालिश, वार्निश व पेण्ट करके उसमें सुन्दरता व नवीनता लाई जा सकती हैं। यदि धातु के हैण्डल, ताले, साँकल व कुण्डे आदि टूटे-फूटे हों और मरम्मत के योग्य न हों तो पूर्णतया बदल देने चाहिए और यदि केवल गन्दे ही हों तो विभिन्न धातुओं को साफ करने के लिए विशेष विधियाँ प्रयोग में लानी चाहिए। नक्काशी वाले भाग प्रायः किनारे व सिरे पर होते हैं; इसलिए उनको काटकर अलग कर देने से सफाई व आधुनिक सादापन लाकर उस फर्नीचर की प्रयुक्तता को बनाये रखा जा सकता है। यदि सजावट वाले भाग के कट जाने से उनको क्षति पहुँचती है तो पुर [illegible] जमी हुई गन्दगी को हटाकर अथवा सदैव [illegible] रहने से वह अपने निराले [illegible] रण आकर्षक लगेगा।

नया फर्नीचर खरीदना—जब नया फर्नीचर खरीदना हो तो गृहस्थी की आवश्यकता व खर्च करने की क्षमता के साथ-ही-साथ फर्नीचर के प्रकार पर, अर्थात् उस ओर कि कौन-सा फर्नीचर उत्तम श्रेणी का है और कौन घटिया है, पूरा ध्यान देना चाहिए। फर्नीचर खरीदने मे यह कहावत हमेशा याद रखनी चाहिए कि 'सस्ता रोवे बार-बार, महँगा रोवे एक बार,' जिससे शीघ्रता में सस्ता व घटिया फर्नीचर खरीदने की भूल न कर बैठें। सारांश यह है कि फर्नीचर योजनानुसार प्रयुक्त होना चाहिए। धन बचाने या अधिक फर्नीचर लेने के हेतु सस्ता व अनुपयुक्त ढेर-सा फर्नीचर कदापि नही खरीदना चाहिए। धनाभाव की दशा में केवल वही सामान खरीदना चाहिए जो सर्वथा अनिवार्य है, अन्यथा सस्ते व घटिया फर्नीचर से घर भरने से दुःख एवं कष्ट ही अधिक होगा। फर्नीचर के उचित चुनाव की सहायतार्थ बढ़िया फर्नीचर के कुछ लक्षण नीचे दिये जाते हैं :

उत्तम डिजायन—फर्नीचर का डिजायन (Design) अर्थात् नमूना बहुत महत्त्वपूर्ण है। कुशल कारीगरों द्वारा डिजायन किया हुआ फर्नीचर एक साधारण कारीगर के फर्नीचर मे निश्चय ही अधिक बढ़िया ठहरता है। कुशल कारीगर अपने अनुभव तथा ज्ञान के आधार पर सदैव ऐसे नवीन डिजायन सोच निकालते हैं जिनके प्रयोग से अधिक से अधिक सुविधा व कम-से-कम थकावट हो। वे सदैव ऐसे डिजायन खोजने का प्रयत्न करते हैं जो बनाने मे सरल, देखने मे सुन्दर, फिर भी खरीदने में महँगा न रहे। इस दृष्टि से कुशलतापूर्वक डिजायन किये फर्नीचर का नाप, भार तथा नमूना सभी आधुनिक जीवन तथा आधुनिक मकानों के उपयुक्त रहता है।

बढिया फर्नीचर देखने मे सुन्दर, सुडौल व आकर्षक तथा साफ करने में सुविधामय होना चाहिए। आजकल खुदाई (Carving) के फूल-पत्तीदार किनारे और कोणों वाले या नक्काशीदार फर्नीचर को पसन्द नही किया जाता, क्योंकि महँगा होने के अतिरिक्त ऐसे फर्नीचर को साफ रखना भी आसान नही। इसी प्रकार आज भारी फर्नीचर को प्रायः नापसन्द करते हैं, क्योंकि भारी-भारी सोफों, कुर्सियों व अल्मारियों के पीछे व नीचे छिपकलियाँ, चूहे, झींगुर तथा मच्छर अपना घर बना लेते हैं। इसलिए ऐसा फर्नीचर जिसके नीचे व पीछे सरलता से सफाई हो सके, जो आसानी से उठाया-धरा जा सके, अधिक प्रयोग में लाना चाहिए।

अच्छा फर्नीचर सुन्दर व सुविधामय होने के साथ-साथ बहुत टिकाऊ भी होता है। उसके कब्जे, जोड व ताले आदि बडी मजबूती मे कुशलतापूर्वक लगे होते हैं। उसके निर्माण में सदैव बढिया सामान का प्रयोग किया जाता है। फर्नीचर की लकड़ी यदि कच्ची व नयी (unseasoned) हो तो वर्षा ऋतु में फूलकर ऊँची-नीची हो जाती है। मेजों के खाने (drawers) व अल्मारियों के पाट भली प्रकार बन्द नहीं हो पाते। कभी-कभी तो वे ऐसे जम जाते हैं कि खुलने का नाम नहीं लेते। गर्मी में लकड़ी के सूख जाने से फर्नीचर में दरारें पड जाती हैं। कुर्सियों की बेंत तथा सोफासेट के

अल्मारियों व मेजों के ताले, साँकल, कब्जे आदि भी सब उत्तम श्रेणी के रहने से ही फर्नीचर द्वारा पूर्ण सुख-लाभ उठाया जा सकता है।

फर्नीचर का कमरे के नाप व आकार के अनुकूल होना बहुत आवश्यक है। एक बड़े कमरे के लिए जो फर्नीचर उपयुक्त है वही एक छोटे कमरे के लिए सर्वथा अनुचित हो सकता है। इसी से उत्तम फर्नीचर सदैव किसी कमरे-विशेष के विचार से, उसके आकार व नाप के विचार से खरीदा जाना चाहिए। इससे कमरे में स्थान का बचाव रहता है एवं कमरा सुविधामय व सुव्यवस्थित प्रतीत होता है। यदि बाजार का बना फर्नीचर अपने कमरे-विशेष के अनुरूप न हो तो किसी बढ़िया कारीगर से कमरे के अनुकूल ही फर्नीचर बनवाना चाहिए।

किसी कमरे की व्यवस्था करने के लिये सर्वप्रथम एक योजना या कल्पना चित्र बना लेना चाहिए। इसमें जितना फर्नीचर रखा जाये वह प्रयोजन के अनुकूल हो। फर्नीचर की प्रत्येक वस्तु रखते समय प्रयोजनों के साथ सौन्दर्य को बनाये रखने के विचार से रंग व रेखा के सन्तुलन (Balance), समभाव (Harmony), लय (Rhythm) तथा अनुपात (Proportion) आदि की ओर पूर्ण ध्यान रखना चाहिए। यदि सोफा की भारी कुर्सी के साथ हल्की मेज तथा हल्का लैम्प रखा जाये तो यह असन्तुलन का भाव जाग्रत करते हैं।

धन की दृष्टि से मितव्ययतापूर्ण फर्नीचर—भारत में दरिद्रता की दशा में अधिकांश व्यक्तियों के लिए तो अपनी मुख्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ही आर्थिक साधनों का अभाव है, बढ़िया फर्नीचर का तो उनके लिए प्रश्न ही नहीं उठता। देहातों या नगरों में निर्धन जनता के घरों में यदि सोने के लिए चारपाई प्राप्त हो तो बहुत सौभाग्य समझिए। किन्तु ऐसी दशा में भी यदि वे लोग प्रयत्न एवं परिश्रम से न घबरायें तथा बुद्धिमत्ता से काम लें, तो वे अपने हाथ से या मामूली बढ़ई से काम चलाऊ सामान साधारण लकड़ी व पैकिंग केसों अर्थात् सामान बन्द करने की लकड़ी की पेटियों से ही बना सकते हैं। इससे खर्च बहुत कम होता है तथा घर में क्रम व कुछ व्यवस्था आ जाती है। यहाँ कामचलाऊ फर्नीचर के कुछ चित्र दिये जा रहे हैं। इनमें दिखाया गया है कि किस प्रकार लकड़ी की पेटियों में बिना अधिक हेर-फेर किये, बहुधा जैसे के तैसे ही उनको और रूप देकर अनेक आवश्यकताओं के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

रसोईघर के लिए
मितव्ययतापूर्ण अल्मारी

खाने की वस्तुएँ रखने की यह अल्मारी लकड़ी की पेटी मे केवल तीन दूसरी पेटी के तख्ते लगाने से व नीचे की ओर दो लम्बी लकड़ी के टुकड़े पाये के लिए लगाने से बनी है।

पुस्तको के लिए यह अल्मारी भी खाने की अल्मारी की भाँति बिना विशेष परिश्रम, खर्च व कौशल से तैयार हो सकती है।

पुस्तकों के लिए मितव्ययतापूर्ण अल्मारी

लिखने-पढ़ने या भोजन के लिए चौकी की भी व्यवस्था कठिन नही है।

दो पेटियों से बनी चौकी

उठने-बैठने के लिए समान आकार व नाप की चार पेटियों को बराबर-बराबर मिलाकर उल्टा रखने से व ऊपर से रुईदार गद्दे व चादर द्वारा ढकने से सुन्दर तख्त भी बनाया जा सकता है।

अल्मारियों व मेजों के ताले, साँकल, कब्जे आदि भी सब उत्तम श्रेणी के रहने से ही फर्नीचर द्वारा पूर्ण सुख-लाभ उठाया जा सकता है।

फर्नीचर का कमरे के नाप व आकार के अनुकूल होना बहुत आवश्यक है। एक बड़े कमरे के लिए जो फर्नीचर उपयुक्त है वही एक छोटे कमरे के लिए सर्वथा अनुचित हो सकता है। इसी से उत्तम फर्नीचर सदैव किसी कमरे-विशेष के विचार से, उसके आकार व नाप के विचार से खरीदा जाना चाहिए। इससे कमरे में स्थान का बचाव रहता है एवं कमरा सुविधामय व सुव्यवस्थित प्रतीत होता है। यदि बाजार का बना फर्नीचर अपने कमरे-विशेष के अनुरूप न हो तो किसी बढ़िया कारीगर से कमरे के अनुकूल ही फर्नीचर बनवाना चाहिए।

किसी कमरे की व्यवस्था करने के लिये सर्वप्रथम एक योजना या कल्पना चित्र बना लेना चाहिए। इसमें जितना फर्नीचर रखा जाये वह प्रयोजन के अनुकूल हो। फर्नीचर की प्रत्येक वस्तु रखते समय प्रयोजनों के साथ सौन्दर्य को बनाये रखने के विचार से रंग व रेखा के सन्तुलन (Balance), समभाव (Harmony), लय (Rhythm) तथा अनुपात (Proportion) आदि की ओर पूर्ण ध्यान रखना चाहिए। यदि सोफा की भारी कुर्सी के साथ हल्की मेज तथा हलका लैम्प रखा जाये तो यह असन्तुलन का भाव जाग्रत करते हैं।

धन की दृष्टि से मितव्ययतापूर्ण फर्नीचर—भारत में दरिद्रता की दशा में अधिकांश व्यक्तियों के लिए तो अपनी मुख्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ही आर्थिक साधनों का अभाव है, बढ़िया फर्नीचर का तो उनके लिए प्रश्न ही नहीं उठता। देहातों या नगरों में निर्धन जनता के घरों में यदि सोने के लिए चारपाई प्राप्त हो तो बहुत सौभाग्य समझिए। किन्तु ऐसी दशा में भी यदि वे लोग प्रयत्न एवं परिश्रम से न घबरायें तथा बुद्धिमत्ता से काम-लें, तो वे अपने हाथ से या मामूली बढ़ई से काम चलाऊ सामान साधारण लकड़ी व पैकिंग केसों अर्थात् सामान बन्द करने की लकड़ी की पेटियों से ही बना सकते हैं। इससे खर्च बहुत कम होता है तथा घर में क्रम व कुछ व्यवस्था आ जाती है। यहाँ कामचलाऊ फर्नीचर के कुछ चित्र दिये जा रहे हैं। इनमें दिखाया गया है कि किस प्रकार लकड़ी की पेटियों में बिना अधिक हेर-फेर किये, बहुधा जैसे के तैसे ही उनको और रूप देकर अनेक आवश्यकताओं के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

रसोईघर के लिए मितव्ययतापूर्ण अल्मारी

खाने की वस्तुएँ रखने की यह अल्मारी लकड़ी की पेटी में केवल तीन दूसरी पेटी के तख्ते लगाने से व नीचे की ओर दो लम्बी लकड़ी के टुकड़े पाये के लिए लगाने से बनी है।

पुस्तकों के लिए यह अल्मारी भी खाने की अल्मारी की भाँति बिना विशेष परिश्रम, खर्च व कौशल से तैयार हो सकती है।

पुस्तकों के लिए मितव्ययतापूर्ण अल्मारी

लिखने-पढ़ने या भोजन के लिए चौकी की भी व्यवस्था कठिन नहीं है।

दो पेटियों से बनी चौकी

उठने-बैठने के लिए समान आकार व नाप की चार पेटियों को बराबर-बराबर मिलाकर उल्टा रखने से व ऊपर से रुईदार गद्दे व चादर द्वारा ढकने से सुन्दर तख्त भी बनाया जा सकता है।

अलमारी, चौकी आदि को रेगमार से साफ करके सुन्दर रंग के पेण्ट कर देने से इन्हें सुन्दर बनाया जा सकता है।
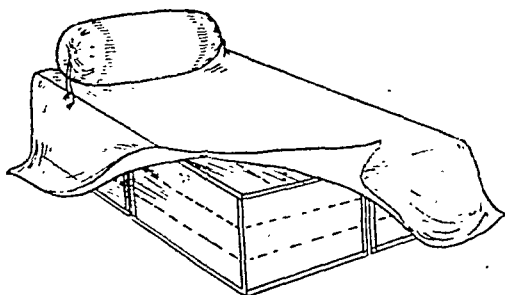
चार बड़ी पेटियों से बना तख्त

स्थान की दृष्टि से मितव्ययतापूर्ण फर्नीचर—स्थानाभाव के कारण हमारे बड़े नगरों में भी यह आवश्यक हो गया है कि विदेशी नगरों के घरों की भाँति स्थान-बचाऊ तथा विविध कार्यों के लिए उपयुक्त फर्नीचर का प्रयोग किया जाय। अमरीका व इंगलैंड में तो ऐसे सुविधामय व युक्तिपूर्ण फर्नीचर के निर्माण में नित्य-प्रति उन्नति हो रही है। उदाहरणार्थ जब आधुनिक घरों में अतिथि के लिये कोई अलग कमरा सुलभ नहीं हो पाता तो बैठक में ही विशेष प्रकार के फर्नीचर के प्रयोग से वे इस कठिनाई को सुलझा लेते हैं। यह स्पष्ट है कि एक छोटी बैठक में प्रायः अन्य फर्नीचर के साथ एक अतिरिक्त पलंग बिछाने को न स्थान ही होता है न एक छोटे गृह में एक फालतू पलंग रखने की जगह ही। ऐसी दशा में विशेष प्रकार के इसी प्रयोजन से बने सोफा या दिवान को, जो रात्रि में खुलकर पलंग का काम दे सके, प्रयोग में लाने से बहुत सुविधा होती है। कभी-कभी तो अतिथि के लिए ही नहीं, गृहस्थी के सदस्यों के लिए भी सोने का उचित अलग स्थान प्राप्त नहीं होता और इसी प्रकार के साधनों की सहायता से काम चलाया जाता है।

कभी-कभी आधुनिक छोटे मकानों में सोने के लिए अलग कमरा ही प्राप्त नहीं हो पाता। उस दशा में सोने का प्रबन्ध किसी अन्य कमरे में करना पड़ता है और वह तभी सम्भव होता है जब फर्नीचर फैलने-सिकुड़ने, खुलने-बन्द होने वाला हो जो या तो काम दे—एक दिन को व दूसरा रात को—या विशेष कार्य के पश्चात् बन्द होकर अधिक स्थान न घेरे।

बहुधा देखा गया है कि पाश्चात्य देशों में लोग ऐसा सुविधामय फर्नीचर प्रयोग में लाते हैं व अपने छोटे कमरों को ऐसे विधिपूर्वक भिन्न-भिन्न रूपों में व्यवस्थित कर लेते हैं कि आश्चर्य होता है। वास्तव में पाश्चात्य सुघड़ गृहिणी अपने छोटे गृह को ही कम किन्तु उत्तम फर्नीचर से इस प्रकार युक्तिपूर्वक सजाती है कि कम स्थान में ही सब प्रकार की सुविधा प्राप्त हो जाती है और घर का दैनिक कार्य भी बढ़ने नहीं

पाता । आजकल भारत मे भी—विशेषकर बड़े नगरों मे—स्थानाभाव की समस्या अत्यन्त कठिन हो गयी है, इस कारण यहाँ की गृहिणियों को भी इस प्रकार स्थान-बचाऊ फर्नीचर की आवश्यकता अनुभव हो रही है। वैसे तो गृहिणियों के लिये छोटे मकान एक प्रकार से अधिक शुभ होते हैं, क्योंकि इससे गृहिणी को सफाई व अन्य कार्यों मे अत्यन्त सुविधा होती है, किन्तु इन छोटे मकानों के साथ-ही-साथ जो फर्नीचर प्रयोग में लाया जाय वह युक्तिपूर्वक बना हुआ, विविध प्रयोगों के उपयुक्त व बन्द होने वाला होना चाहिए। यदि अधिक खर्च करने की सामर्थ्य नही है तो भी कुछ भारतीय फर्नीचर जैसे साधारण चौकियाँ, तख्त आदि रात-दिन भिन्न-भिन्न कामों मे आ सकते हैं और इस प्रकार इनका विधिपूर्वक प्रयोग करके छोटे घरों मे उत्तम व्यवस्था लायी जा सकती है।

फर्नीचर का चयन

मकान के विभिन्न कमरो के लिये उपयुक्त फर्नीचर का चयन सोच-समझ कर करना चाहिए। घर की सुसज्जा उचित फर्नीचर के चुनाव पर बहुत कुछ निर्भर करती है—फर्नीचर का चुनाव करते समय निम्नांकित तथ्यों की ओर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है—

(१) अभिव्यंजकता (Expressiveness)—घर या कमरा किस विचार को व्यक्त करता है यह तथ्य फर्नीचर के चुनाव में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। एक *साधारण किस्म के अनौपचारिक मकान के लिये सादा, आरामदायक फर्नीचर की* आवश्यकता होती है। लकड़ी का प्रकार, वस्तुओं की आकृति, शैली, रग आदि सभी बातें वांछित चित्तवृत्ति के निर्माण में सहायक होती हैं। मकान की रचना से प्रकट होने वाली भावना को ध्यान मे रखकर फर्नीचर का चुनाव किया जाये, ताकि जो भावना मकान से व्यक्त हो रही है वही फर्नीचर से भी व्यक्त हो।

(२) शैली—फर्नीचर तीन शैलियों का होता है—परम्परागत, सादा तथा आधुनिक। इसका निर्णय करने मे किस प्रकार का फर्नीचर घर मे है तथा मकान की शैली किस प्रकार की है ये दोनो बातें सहायक होती हैं।

(३) सुन्दरता—फर्नीचर में अच्छे डिजाइन कम ही मिलते हैं। फर्नीचर का चुनाव करते समय इस सामान्य नियम का पालन अवश्य ही किया जाना चाहिए कि सादा वस्तुएँ अधिक अच्छी होती हैं।

(४) उपयोगिता—फर्नीचर की सबसे महत्त्वपूर्ण कसौटी उसकी उपयोगिता है। यदि किसी फर्नीचर की उपयोगिता नही हो तो उसे घर मे प्रयुक्त नही करना चाहिए, चाहे वह कितना ही सुन्दर क्यों न हो तथा उसके प्रति हमारा कितना ही संवेगात्मक सम्बन्ध क्यों न हो।

वह फर्नीचर सर्वोत्तम होता है जिससे दो प्रयोजन सध सकें। जैसे रेडियो जो मेज का भी कार्य कर सके, नीची किताबो की अलमारी जिसे अधिक लोगों के आने पर बैठने के लिये भी प्रयुक्त किया जा सके।

उपयोगिता की दृष्टि से छोटे क्वार्टर्स के लिये आधुनिक यूनिट फर्नीचर सर्वोत्तम होता है। इसमें कप बॉर्ड्स, अल्मारियाँ, मेज, रेडियो, डैस्क तथा कुर्सियाँ सभी बने होते हैं। यूनिट फर्नीचर के द्वारा एक कमरे का उपयोग कई प्रयोजनों के लिये किया जा सकता है, क्योंकि इसमें उपकरण को छिपे रहने के लिये पर्याप्त व्यवस्था होती है।

(५) आरामदायक (Comfortable)—अधिकांश लोगों के लिये फर्नीचर की महत्त्वपूर्ण विशेषता उसका आरामदायक होना है। कोई मकान रहने योग्य तभी माना जाता है, जबकि उसमें आरामदायक सुसज्जा पर्याप्त रूप से उपस्थित है। व्यक्तिगत आराम की दृष्टि से यह आवश्यक है कि फर्नीचर अपने मर्जी का हो तथा उसे क्रय करने से पूर्व उसका भली प्रकार परीक्षण कर लिया जाये।

अधिकांश फर्नीचर सामान्य ऊँचाई के व्यक्ति (५ फीट ८ इंच) के लिये निर्मित किया जाता है। इसी माप के अनुसार अधिकांश सोफा व कुर्सियाँ बनाई जाती हैं। एक औसत आराम कुर्सी की सीट की गहराई २२ से २४ इंच, और सामने लगभग १७ इंच ऊँची तथा पीछे की इससे कुछ कम ऊँची होती है।

यदि औसत आकार से छोटा या बड़ा फर्नीचर खरीदना हो तो उसे विशेष आर्डर देकर अपनी आवश्यकतानुसार बनवाना चाहिए। कुर्सी की गहराई इतनी होनी चाहिए कि बैठने वाले के घुटनों के पीछे के भाग तक पहुँच सके। कुर्सी का पीछे का भाग इतना तिरछा हो कि बैठने वाले को आराम मिले तथा दोनों कन्धों को अथवा यदि आवश्यक हो तो सिर को भी पर्याप्त आश्रय मिल जाये।

बिस्तर पर्याप्त रूप से आरामदायक होना चाहिए। पूर्ण विश्राम के लिए आरामदायक बिस्तर नितान्त आवश्यक है। बिस्तर पर्याप्त रूप से कोमल होना चाहिए। गर्म प्रदेशों में वातानुकूलित बिस्तर प्रयुक्त किये जाने चाहिए।

बच्चों का फर्नीचर उनके आकार के अनुकूल होना चाहिए। कुछ इस प्रकार का भी फर्नीचर बनाया जाता है जिसमें बच्चे के विकास और वृद्धि के अनुसार उसको छोटा या बड़ा किया जा सकता है। ऐसे फर्नीचर में समायोजनशीलता का गुण होता है।

फर्नीचर का भार तथा उसकी गतिशीलता भी इसके आरामदायक गुण को प्रभावित करती है। रहने के कमरों में हल्की कुर्सियाँ और स्टूल प्रयुक्त किये जाने चाहिए, ताकि उन्हें आवश्यकतानुसार सरलता से एक स्थान से दूसरे स्थान को हटाया जा सके। गतिशील फर्नीचर के पायों में पहिए या चिकनी धातु की गोल प्लेट लगी होनी चाहिए।

फर्नीचर-व्यवस्था

सुन्दर, आरामदायक कमरों की सुव्यवस्थित सुसज्जा के लिए प्रारम्भिक योजनाओं का सावधानीपूर्वक निर्माण करना परमावश्यक है। जिस प्रकार

चित्रकार अच्छा चित्र बनाने के लिए रंगों के साथ कार्य करता है तथा प्राकृतिक दृश्यों की डिजाइन बनाने वाला कलाकार पौधों का उपयोग करता है—इसी प्रकार गृह की आन्तरिक सज्जा करने वाली गृहिणी फर्नीचर और साज-सज्जा के उप साधनों की व्यवस्था करती है।

फर्नीचर की अच्छी व्यवस्था का आधार सन्तुलन है। कमरे की चार बगलों (Sides) में से प्रत्येक बगल सन्तुलन की भावना का आभास कराने के लिए फर्नीचर व्यवस्था की दृष्टि समान रूप से भारी होनी चाहिए। आमने-सामने की दीवारें विशेष रूप से सुसन्तुलित होनी चाहिए। प्रत्येक दीवार भी सन्तुलित होनी चाहिए, दीवार के प्रथम आधे भाग का भार शेष दूसरे भाग के अनुकूल होना आवश्यक है; दीवार में सबसे अधिक सुसज्जित भाग केन्द्र में होना चाहिए।

एक कमरे में औपचारिक अथवा अनौपचारिक सन्तुलन प्रभुत्वपूर्ण होता है। औपचारिक भवनों के लिए औपचारिक सन्तुलन उपयुक्त होता है। अधिकांश घरों में अनौपचारिक सन्तुलन का उपयोग किया जाना तो अधिक वाछनीय होता है। असममितीय घरों में तो इस प्रकार के सन्तुलन की अत्यधिक आवश्यकता होती है।

फर्नीचर-व्यवस्था-योजना बनाते समय रास्ते व अन्य आवश्यक क्रिया कलापों के लिए स्थान छोड देना चाहिए। कमरों की बनावट के अनुरूप फर्नीचर की व्यवस्था करना आवश्यक है। फर्नीचर के बडे आकार के नग दीवार के समानान्तर रखने चाहिए, अन्यथा वे स्थिर बुनियादी रेखाओं को भग कर देंगी। गद्दीयुक्त कुर्सियाँ कोनों पर रखी जानी चाहिए, क्योंकि स्वय उनमें ही रेखाओं की विविधता उपस्थित होती हैं। सीधी कुर्सियाँ दीवार के सहारे रखने पर ही भली लगती हैं।

उपयोगिता, स्थान की बचत तथा सुन्दरता की दृष्टि से फर्नीचर को समूहों में संयोजित करके रखना चाहिए। ये समूह आकर्षण के केन्द्र-बिन्दु होते हैं जिनके कारण व्यवस्था विवेकपूर्ण एव उपयोगी दिखाई देती है। फर्नीचर का समूहीकरण वार्तालाप करना, लिखना, पढ़ना तथा संगीत का आनन्द लेना जैसी क्रियाओं पर आधारित होता है।

समूह के अन्दर रेखा, बनावट, माप, और रंग सम्बन्धी एकता का होना अति आवश्यक होता है। उसके साथ साथ रुचि को बनाए रखने के लिए उसमें विविधता की भी आवश्यकता होती है। उनकी मोटाई और ऊँचाई मे अन्तर होना उचित ही होता है। बनावट व रंग मे भेद होने के कारण देखने में आनन्द प्राप्त होता है। फर्नीचर को महत्त्वपूर्ण वस्तुओं के चारों ओर रखकर रोचक समूह बनाए जा सकते हैं। फर्नीचर के ऊँचे नग कोने या कोने के समीप नहीं रखने चाहिए।

फर्नीचर की व्यवस्था करते समय सौन्दर्यात्मक पक्ष की अपेक्षा उपयोगितावादी पक्ष को अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए। फर्नीचर सज्जा के सर्वप्रथम आराम की ओर ध्यान देना चाहिए, परन्तु अन्य अतिरिक्त आवश्यकताओं को भुला नहीं देना

चाहिए, उदाहरणस्वरूप रहने के कमरे में फर्नीचर-व्यवस्था ऐसी हो कि बातचीत करने में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित न हो। यहाँ पृथक्-पृथक् कमरों की फर्नीचर सम्बन्धी विशिष्ट आवश्यकताओं के सम्बन्ध में विचार किया जाएगा।

बैठक—यह कमरा परिवार के सदस्यों के मनोरंजनात्मक क्रिया-कलापों के लिए होता है। इसमें परिवार के सदस्य पढ़ने-लिखने, रेडियो व संगीत सुनने, ताश, व कैरम आदि खेलने व बातचीत करने के लिए प्रयुक्त करते हैं। अतिथि के सत्कार के लिए यह कमरा अधिक आरामदायक व आकर्षक होता है।

आदर्श बैठक में सुन्दर एवं आनन्द प्रदान करने वाले फूल व पर्दे तथा आरामदायक सोफा का प्रबन्ध होना चाहिए। उसमें रेडियो, लिखने के लिए मेज-कुर्सी तथा अन्य कार्य करने के लिए मेज, भारतीय रीति का लकड़ी का तख्त, छोटी-छोटी सुन्दर मूढ़ियाँ, आरामदायक हल्की कुर्सियाँ जो सरलता से इधर-उधर ले जाई जा सकें, कई प्रकार के लैम्प, पत्र-पत्रिकाएँ तथा पुस्तकें होनी चाहिए।

बैठक के कमरे की सुसज्जा इस प्रकार की जाए कि वह आकर्षण का केन्द्र बन सके। बड़ी बैठक में आकर्षण का गौण केन्द्र भी वांछनीय होता है।

बैठक में जो फर्नीचर काम में आए वह आकर्षक होना चाहिए। फर्नीचर के इस समूह में कम-से-कम आठ व्यक्तियों के बैठने की व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि इधर-उधर से कुर्सियाँ न उठवानी पड़ें। आधुनिक घरों में दीवार में बना फर्नीचर ही मकानों में बना होता है बातचीत के कोने में L के आकार का सोफा तथा कुर्सियाँ जिन पर फोम (Foam) की गद्दियाँ हों, होना चाहिए। यदि कमरे में फाइरप्लेस है तो सर्दियों में बातचीत के समय प्रयुक्त होने वाला फर्नीचर फायरप्लेस के आस-पास रखा जाए। कमरे के पढ़ने-लिखने के क्षेत्र में दिन व रात में प्रकाश का प्रबन्ध होना चाहिए। इसलिए यह क्षेत्र खिड़की के पास होना चाहिए। परन्तु यह क्षेत्र बातचीत करने वाले क्षेत्र से पर्याप्त दूरी पर होना चाहिए। कमरे के पढ़ने-लिखने के क्षेत्र में मेज और एक या दो कुर्सी होना आवश्यक है। साथ में पुस्तकें, पत्रिका तथा समाचार-पत्र आदि रखने के लिए मेज या अल्मारी हो तो अच्छा है। पुस्तकों को सुन्दर व सुरक्षित रखने के लिए शीशे की अलमारी सर्वोत्तम होती है। पढ़ने-लिखने के लिए ऐसी मेज जिसमें आवश्यक कागज-पत्र बन्द किए जा सकें, विशेष सुविधाजनक होती है।

संगीत का आनन्द लेने के क्षेत्र में रेडियो, ग्रामोफोन, टेपरिकार्डर आदि मनोरंजन के साधन रखे जाने चाहिए। रेडियो आदि के लिए उपयुक्त मेजें तथा बैठने के लिए दो या चार कुर्सियाँ होनी चाहिए।

बैठक के कमरे में खेलने के लिए भारतीय नमूने का तख्त तथा कुछ कुर्सियाँ होनी चाहिए। तख्त पर गुदगुदा गद्दा भी बिछा होना चाहिए।

बैठक के कमरे की फर्नीचर-व्यवस्था को कुछ समय बाद परिवर्तित करते रहना चाहिए, चाहे घर के कुछ सदस्य इस परिवर्तन के प्रति आपत्ति क्यों न उठाएँ।

परिवर्तन करते रहने से कमरे के वातावरण में सजीवता, नवीनता व रोचकता बनी रहती है।

भोजन करने का कमरा (Dining Room)

देशी या विदेशी शैली, दोनों के अनुसार खान-पान का ढंग बिल्कुल भिन्न होने से खानपान का कमरा भिन्न रूपों मे व्यवस्थित किया जाता है। विदेशी शैली के अनुसार खाने के कमरे में एक बडी मेज रहती है और मेज के चारों ओर बिना हत्थे की कुर्सियाँ। खाने की मेज कमरे के मध्य मे होनी चाहिए। इसे किसी खिड़की के पास भी लगाया जा सकता है, जिससे भोजन करने वाले खिड़की में होकर बाहर के दृश्य को भी देख सकें। मेज स्वच्छ सूती या प्लास्टिक के मेजपोश से ढकी रहे तो सुन्दर लगता है। आजकल प्रायः पालिश की हुई मेजों पर मोटा मजबूत शीशा लगा रहता है। यह देखने में सुन्दर लगता है व स्वच्छता के विचार से सुविधापूर्ण है। केवल सावधानी से प्रयोग मे लाना चाहिए। आजकल मेज पर सनमाइका लगाने का भी रिवाज है। सनमाइका मजबूत व आकर्षक होता है। इस पर गर्मी का प्रभाव नहीं पड़ता तथा इसकी सफाई सरलता से की जा सकती है। यह कई रंगों में मिलता है। इसके रंग का चयन कमरे की रंग-व्यवस्था के अनुसार किया जाना चाहिए।

खाने के कमरे में एक अल्मारी (Side board) जिसमे खाने के बढ़िया बर्तन सजाकर रख सकें, आवश्यक है।

यदि खाने का कमरा देशी शैली के अनुसार व्यवस्थित करना है तो आसन, चौकी, तख्त-चौकी का प्रयोग किया जाता है। बैठने के आसन व पटरे सुन्दर व स्वच्छ होने चाहिए पटरों पर रुई या फोम की गद्दी रखी जा सकती है। चौकी व तख्त को सुन्दर कपड़े से ढकना चाहिए। मेज की भाँति चौकी पर भी शीशा या सनमाइका लगाया जा सकता है। खाने की यह विधि भी सुन्दर प्रतीत होती है, विशेषतः जब फर्श बढ़िया हो। इस व्यवस्था में एक दोष भी है। विदेशी पोशाक पहनने वाले पुरुषों को फर्श या तख्त पर आल्ती-पाल्ती मारकर बैठने से असुविधा होती है और कपड़ों में सलवटें पड जाती हैं। स्त्रियों की साड़ियो मे तो और भी अधिक सिलवटें पड़ जाती हैं। इसके अतिरिक्त खाते समय कपडों को हाथों से सँभालकर उठने-बैठने मे धब्बे लगने का भय रहता है।

यदि खाने के कक्ष में अन्य दूसरे काम जैसे पढने-लिखने, सिलाई-बुनाई आदि काम करने पड़ें तो उसकी सज्जा इस प्रकार करनी चाहिए कि वह बैठक के कमरे का विस्तृतीकरण ही प्रतीत हो। आरामदायक फर्नीचर समूह मे लगाने चाहिए। यदि बैठक के कमरे से खान-पान का कमरा लगा हुआ हो तो दोनों का एक-सा होना चाहिए जिससे दोनो का एक ही कमरा मालूम हो।

शयन-कक्ष (Bed Room)—शयन-कक्ष का फर्नीचर प्रथमत आरामदायक एवं सुविधाजनक होना चाहिए। पलग चाहे मूँज, सन, निवाड़ किसी का भी हो परन्तु वह आरामदायक होना चाहिए। पलंग उचित नाप

हिए । यदि सम्भव हो तो शयन-कक्ष में आकर्षण केन्द्र का निर्माण करना चाहिए । र्नीचर का समूहीकरण आकर्षक ढंग से करना चाहिए ।

शयन-कक्ष की व्यवस्था बड़ी लचीली होनी चाहिए, ताकि परिस्थितियों के अनुसार उसमें सरलता से परिवर्तन किया जा सके । अच्छे सम्वातल के लिए यह आवश्यक है कि मौसम के अनुसार पलंग की स्थिति वदल दी जानी चाहिए । साधारणतः एक या दो पलंग दीवार के मध्य भाग से कमरे के वीचोंवीच में लगाए जाते हैं । कभी-कभी पलंग समानान्तर के दीवार कमरे के कोनों में लगा दिए जाते हैं । इससे यह लाभ है कि कमरे के मध्य में पर्याप्त स्थान अन्य कार्य के उपयोग के लिए मिल जाता है ।

शयन-कक्ष का शेष फर्नीचर सुविधानुसार व्यवस्थित कर देना चाहिए । एक आराम कुर्सी जिसके वाईं ओर एक लैम्प रखा हो; वह भी इस कमरे में आवश्यक रूप से होनी चाहिए । पलंग के सिरहाने की ओर पलंग की ऊँचाई के वरावर की छोटी मेज रहने से उस पर रात्रि के लिए आवश्यक वस्तुएँ रखने की सुविधा रहती है । यदि इस मेज में ड्रॉअर हों तो और भी अच्छा है । एक लैम्प पलंग के पास वाली मेज पर हो तो पढ़ने में सुविधा रहेगी । कमरे की रोशनी जलाने व वुझाने के लिए वैड स्विच अत्यन्त सुविधाजनक होता है । रात्रि के धीमे प्रकाश के लिए मन्द वल्व जलाना अत्यन्त हितकर होता है ।

घर में कमरों की कमी होने के कारण प्रायः शृङ्गार का प्रवन्ध भी शयन-क में ही किया जा सकता है । उस दशा में कपड़ों के लिए अलमारियाँ तथा शृङ्ग के लिए मेज भी पलंगों के अतिरिक्त शयन-कक्ष में ही रहेंगी । कपड़े टाँगने लिए एक-दो खूँटियाँ यदि पर्दे के पीछे रहें तो वहुत उत्तम है । वस्त्रों के ट की घोड़ी व मैले वस्त्रों के लिए एक डोली या थैली भी आवश्यक है । इन स कमरे में यथास्थान सुन्दर रीति से व्यवस्थित करना चाहिए । यदि शृङ्गा मेज सुलभ न हो तो ताक या आतिशदान पर दर्पण तथा अन्य शृङ्गार सजायी जा सकती है । कपड़ों की अलमारी सुलभ न होने पर सन्दूकों व को ही कमरे में सुचारु रूप से रखकर सुन्दर मेजपोश या चादर से ढका ज है । वड़े-वड़े सन्दूकों को वरावर-वरावर लगाकर, गद्दे व पलंगपोश से ढक के लिए सुन्दर स्थान वनाया जा सकता है ।

शयन-गृह में हलके गम्भीर रंग के पर्दे लगाना उचित है, जिससे प्रकाश का आगमन रोका जा सके और कमरे में एकान्तवास (privacy) सके । शीतकाल में उष्णता प्राप्त करने के लिए फर्श विछा रहना चाहिए सजावट के लिए तसवीर, फूल तथा अन्य सजावट की वस्तुओं का प्रयोग क

जूतों के लिए भी नियत स्थान होना चाहिए, जिससे वे धूल से न हों तथा देखने में भी वुरे न लगें ।

बालकों के कमरे—आयु तथा आवश्यकतानुसार बालको के लिए दो प्रकार की व्यवस्था की आवश्यकता है—

बड़े बालकों के कक्ष—स्कूल-कालिज जाने वाले बालको के लिए यह अति आवश्यक है कि उन्हे घर में कोई स्थान इस प्रकार सुसज्जित मिले, जहाँ पर वे शान्तिपूर्वक मन को एकाग्र करके पढ-लिख सकें। अध्ययन के कमरे मे किताबें रखने के लिए बन्द अलमारी, या तो दीवार में बनी हुई या अलग से, अनिवार्य है। पढ़ने के लिए कुर्सी तथा मेज या डेस्क भी आवश्यक हैं। मेज यदि खानो वाली हो और उसके ऊपर शीशा या गर्म फलालैन लगा हो तो बहुत उत्तम है, नही तो पालिशदार लकड़ी की मेज भी ठीक है जिस पर मेजपोश भी बिछाया जा सकता है। मेज की ऊँचाई कुर्सी की ऊँचाई को ध्यान मे रखकर बालको के लिए उपयुक्त होनी आवश्यक है, नही तो बैठनविधि में दोप आने से बालकों के स्वास्थ्य तथा नेत्र दृष्टि में दोप आ सकता है।

यदि देशी विधि से ही नीचे बैठकर पढने का प्रबन्ध करना चाहे तो उसके लिए फर्श पर बैठने के लिए आसन तथा पुस्तक, कापी रखने के लिए लगभग २०-२५ सेण्टीमीटर ऊँची चौकी की व्यवस्था करनी चाहिए।

प्राय: स्थानाभाव के कारण अध्ययन के कमरे में ही बालको के सोने का भी प्रबन्ध कर दिया जाता है। ऐसी दशा में उसी कमरे में पलंग व बिस्तर रहता है। पलंग के पास एक-एक छोटी मेज रहने से विशेष सुविधा रहती है। कमरे मे मेज-कुर्सी तथा चारपाई आदि को विधिपूर्वक लगवाना चाहिए, जिससे सुविधा तथा सुन्दरता दोनो प्राप्त हों।

कभी-कभी इसी कमरे मे बालको के वस्त्रादि भी रखने पडते हैं। इसके लिए यदि वस्त्रों की अलमारी उपलब्ध हो तब तो ठीक है, नही तो बक्स, सूटकेस आदि को ढंग से लगाना चाहिए। जूते आदि भी विधिपूर्वक इसी कमरे मे सजाये जा सकते हैं।

शिशु-कक्ष—छोटे बालको व शिशुओ के लिए यदि अलग स्थान प्राप्त हो सके तो उसे भी क्रमपूर्वक सजाना चाहिए। पाश्चात्य देशो मे तो इस प्रकार के कमरों पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसमें बालको के क्रीडा व मनोरंजन के लिए [illegible] अन्य आकर्षक खिलौने, उठने-बैठने के लिए छोटी-छोटी कुर्सी, मेज, खाने-पीने के [illegible] छोटे-छोटे सुन्दर बर्तन व उपयुक्त फर्नीचर, सोने व [illegible] के लिए सुन्दर [illegible] पलग आदि सजाये जाते हैं। भारतीय गृहो मे बालकों के लिए अभी [illegible] कमरा (आवश्यक होते हुए भी) साधारणत: [illegible] में [illegible] निर्धनता तथा अज्ञानता दोनो ही है।

स्वत: ज्ञान [illegible]

१. घर के लिए फर्नीचर का [illegible] ध्यान देने की आवश्यकता है [illegible]
२. फर्नीचर-व्यवस्था में [illegible]
३. विभिन्न भागों की [illegible]

अध्याय २३

पुष्प-विन्यास

पुष्प-विन्यास भी एक कला है। इसका प्रमुख उद्देश्य वातावरण की प्रसन्नता, सजीवता एवं सुन्दरता में वृद्धि करना है। फूलों, पत्तियों व टहनियों तथा फूलदानों को आकार, बनावट एवं रंग की अनुरूपतायुक्त संगठन की कला को ही पुष्प-विन्यास कहते हैं।

पुष्प-विन्यास की कला के इतिहास पर दृष्टिपात करने से यह ज्ञात होता है कि छठी शताब्दी से ही यह कला प्रचलन में रही है। इस शताब्दी में चीन में रहने वाले बौद्ध साधु अपने शिष्यों को मठों में अपने आराध्य के समक्ष फूल-पत्तियों को श्रद्धापूर्वक सजाने की शिक्षा दिया करते थे। जापानियों ने इस कला को पुष्प-विन्यास के अनेक स्कूलों के माध्यम से अत्यधिक विकसित किया। इस सम्बन्ध में उनका प्रभाव विश्वभर में व्याप्त है।

सोलहवीं शताब्दी के यूरोप के कलाकारों ने फूलों से सजे चित्र चित्रित किये, जिन्हे कि वर्तमान अमेरिकन पद्धति को प्रभावित किया।

पूर्वीय देशों में मठाधीशों ने पुष्प-विन्यास कला का विकास किया तो यूरोप के राजकीय दरबारों ने इसे विकसित किया तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में स्वयं जनता इसका विकास कर रही है।

पुष्प-विन्यास ही, निस्सन्देह, ललित कलाओं का ऐसा क्षेत्र है जिसमें अध्ययन और अनुभव के द्वारा प्राय: किसी भी व्यक्ति की रचनात्मक योग्यता विकसित हो सकती है। यह कला सांस्कृतिक विकास का प्रभावपूर्ण माध्यम है। सांस्कृतिक विकास के परिणामस्वरूप जीवन की पूर्णता व सम्पन्नता में विकास होता है। इस कला को गृह-निर्माण में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप किये बिना घर में ही सीखा जा सकता है। इस कला के उपयोग में धन की भी आवश्यकता नहीं होती। फूल व पत्ती आदि सड़क के किनारे या मैदान में मिल जाती हैं व उन्हें सजाने के लिए डिब्बे आदि रसोई घर से उपलब्ध हो जाते हैं। पुष्प-विन्यास व्यक्ति को दु:ख और चिन्ताओं से मुक्त रखने व सान्त्वना प्रदान करने का साधन है।

व्यक्तित्व

पुष्प-विन्यास की अपनी सुन्दरता और अपना व्यक्तित्व होना चाहिए। गृहिणी को पुष्प-विन्यास में अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने का अभ्यास करना चाहिए। पुष्प-विन्यास की योजना बनाते समय भावना, नाम अथवा विषय-वस्तु का चयन एक निश्चित विचार को अभिव्यक्त करने वाले व्यक्तित्व की ओर निर्देशित करने में सहायता प्रदान करना है।

कला के तत्त्व

रेखा और आकार—प्रत्येक सृजन-कर्ता अथवा निर्णय-कर्ता पुष्प-विन्यास की वास्तुकला को सर्वप्रथम महत्त्व प्रदान करेगा। इसके लिए बुनियादी रेखाएँ वृत्त, त्रिभुज एव चतुर्भुज हैं। इसके लिए आधारीय आकार गोल शंकु तथा घन हैं।

पुष्प-विन्यास में ये रेखाएँ एव आकार अत्यधिक संशोधित किये जाते हैं परन्तु आधुनिक रचनाओं के अनुसार वे बहुधा ज्यामितीय होते हैं। विन्यास हेतु चुना गया आकार प्रयुक्त की जाने वाली वनस्पति सामग्री की प्रमुख रेखा पर निर्भर करती हैं। गुलदस्ते हेतु पात्र भी ऐसा चुना जाता है जिसमे वनस्पति सामग्री के अनुकूल रेखा गति हो। तैयार किया हुआ पूरा गुलदस्ता एक इकाई के रूप में दिखाई देना चाहिए।

पुष्प-विन्यास के आकार को कोई महत्त्व दिये बिना उन सभी की रेखा की तुलना पत्तों रहित पेड़ से जिसकी शाखाएँ तने से निकल रही हो, करनी चाहिए। पुष्प-विन्यास में गुलदस्ते का पात्र उस तने का कार्य करता है, जिससे टहनियाँ निकल रही हो। जिस प्रकार पेड़ की शाखाएँ ऊपरी सिरे पर जाकर अपेक्षाकृत छोटी हो जाती हैं, इसी प्रकार वनस्पति सामग्री पुष्प-व्यवस्था के अन्तिम सिरे पर अपेक्षाकृत छोटी और दूर हो जानी चाहिए।

पुष्प-व्यवस्था का छाया चित्र अच्छी डिजाइन से युक्त और विविधतापूर्ण होना चाहिए। अधिकांश पुष्प-रचनाओ में उनकी सीमा रेखाओ पर एक निकास होना चाहिए। पौधे की सामग्री का आकार भी बहुत महत्त्वपूर्ण होता है; तीन विभिन्न आकृति (Form) और आकार (Sizes) से अच्छी रचना बनती है। बडी गोल आकृतियों में भारी वस्तु व्यवस्था के केन्द्र-विन्दु के पास स्थित होने से सुन्दरता आ जाती है। लम्बी बेलनाकार टहनियो से वायु युक्तता एवं विविधता उत्पन्न हो जाती है। विभिन्न आकृतियो की मध्यम आकार की कोमल टहनियाँ आनन्ददायक प्रभाव डालती हैं।

बनावट—धरातल तथा पौधे की सामग्री उनकी बनावट का निर्धारण करती है। पुष्पों को हम कोमल, कठोर अथवा मखमली इन तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। वैसे पुष्प बनावट के आधार पर अन्य कई प्रकार के भी होते हैं।

फूलो के मध्य तथा फूल और फूलदान के मध्य बनावट की एकता होना नितान्त आवश्यक है। उदाहरणर्थ गुलाब पतले शीशे के पात्र में साथ-साथ रखे हुए बहुत

अच्छे दिखाई देते हैं, क्योंकि इन सभी में कोमलता होती है। डैफोडिल्स धातु के बने फूलदान में अच्छे लगते हैं।

रंग (Colours)

फूल तथा फूलदान के रंग फूलों की व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। बल और एकता के लिए पुष्प-विन्यास में प्रभावपूर्ण रंग आवश्यक होता है। यदि तीन रंगों का उपयोग किया जाए तो एक सबसे अधिक मात्रा में, दूसरा उससे कम तथा तीसरा सबसे कम प्रयुक्त किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त केवल एक ही रंग सर्वाधिक चमकीला व तेज होना चाहिए।

पुष्प-विन्यास में गर्म रंगों का संयोजन होना चाहिए, क्योंकि सभी गर्म रंग अनुरूपतापूर्ण होते हैं। गर्म रंगों के अन्तर्गत पीला तथा पीले प्रधान अन्य सभी रंग जैसे पीला-हरा, क्रीम, नारंगी, बादामी, सिंदूरी आदि सम्मिलित होते हैं। ठण्डे रंगों को एक साथ संयोजित करना चाहिए, क्योंकि वे अनुरूपतापूर्ण होते हैं। सभी नीले रंग तथा नीले युक्त अन्य सभी रंग जैसे नीला-हरा, नीला, नीला-बैंगनी, लैवेन्डर, ठण्डा गुलाबी, भूरा, नीला-लाल तथा सफेद आदि ठण्डे रंग कहलाते हैं।

पुष्प-व्यवस्था में रंगों का मान हल्का व गहरा—महत्त्वपूर्ण होते हैं। एक रंग की अपेक्षा उसके कई शेड (Shade) अधिक अच्छे माने जाते हैं। गहरे या साधारण गहरे रंगों की पुष्प-व्यवस्था में सफेद, हल्का-सफेद या हल्के-पीले रंग के फूलों का उपयोग करने से उसकी चमक बढ़ जाएगी। हल्के रंग के फूल साधारणतः गुल-दस्ते के ऊपरी भाग में अधिक सुन्दर दिखाई देते हैं, जबकि गहरे रंग के फूल उसके नीचे के हिस्से में अच्छे लगते हैं। अत्यधिक गहरे रंग के फूल प्रभावपूर्ण आकर्षण के केन्द्र नहीं बन सकते। गहरे रंग साधारणतः सम्पन्न और नाटकीय दिखाई देते हैं, हल्के रंग सौन्दर्यपूर्ण और शान्ति प्रदान करने वाले होते हैं। फीके रंग कृत्रिम प्रकाश की अपेक्षा दिन के प्रकाश में अधिक अच्छे लगते हैं।

डिजाइन के सिद्धान्त

पुष्प-विन्यास की सुन्दरता को बढ़ाने में डिजाइन के सिद्धान्त अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। फूलों को सजाते समय डिजाइन के समस्त सिद्धान्तों को प्रयुक्त करना चाहिए।

लय—प्रत्येक वृद्धि एवं विकासशील की अपनी लय अथवा वृद्धि-गति होती है। जिस ढंग से फूल बढ़ता है उसका व्यक्ति को निरीक्षण करना चाहिए, तत्पश्चात् ही उसको सजाने में प्रयुक्त की जाने वाली लय का चुनाव करना चाहिये। सभी प्रकार की लय गति और आवृत्ति पर आधारित होती हैं।

विकिरण सम्बन्धी लय (Rediating Rhythm)—इसका अधिकांश पुष्प-व्यवस्थाओं में प्रयोग किया जाता है। परन्तु इसका उपयोग विशेषकर गोलाकार या

पुष्प विन्यास

अच्छे दिखाई देते हैं, क्योंकि इन सभी में कोमलता होती है। डैफोडिल्स धातु के बने फूलदान में अच्छे लगते हैं।

रंग (Colours)

फूल तथा फूलदान के रंग फूलों की व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। बल और एकता के लिए पुष्प-विन्यास में प्रभावपूर्ण रंग आवश्यक होता है। यदि तीन रंगों का उपयोग किया जाए तो एक सबसे अधिक मात्रा में, दूसरा उससे कम तथा तीसरा सबसे कम प्रयुक्त किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त केवल एक ही रंग सर्वाधिक चमकीला व तेज होना चाहिए।

पुष्प-विन्यास में गर्म रंगों का संयोजन होना चाहिए, क्योंकि सभी गर्म रंग अनुरूपतापूर्ण होते हैं। गर्म रंगों के अन्तर्गत पीला तथा पीले प्रधान अन्य सभी रंग जैसे पीला-हरा, क्रीम, नारंगी, बादामी, सिंदूरी आदि सम्मिलित होते हैं। ठण्डे रंगों को एक साथ संयोजित करना चाहिए, क्योंकि वे अनुरूपतापूर्ण होते हैं। सभी नीले रंग तथा नीले युक्त अन्य सभी रंग जैसे नीला-हरा, नीला, नीला-बैंगनी, लैवेन्डर, ठण्डा गुलाबी, भूरा, नीला-लाल तथा सफेद आदि ठण्डे रंग कहलाते हैं।

पुष्प-व्यवस्था में रंगों का मान हल्का व गहरा—महत्त्वपूर्ण होते हैं। एक रंग की अपेक्षा उसके कई शेड (Shade) अधिक अच्छे माने जाते हैं। गहरे या साधारण गहरे रंगों की पुष्प-व्यवस्था में सफेद, हल्का-सफेद या हल्के-पीले रंग के फूलों का उपयोग करने से उसकी चमक बढ़ जाएगी। हल्के रंग के फूल साधारणतः गुल-दस्ते के ऊपरी भाग में अधिक सुन्दर दिखाई देते हैं, जबकि गहरे रंग के फूल उसके नीचे के हिस्से में अच्छे लगते हैं। अत्यधिक गहरे रंग के फूल प्रभावपूर्ण आकर्षण के केन्द्र नहीं बन सकते। गहरे रंग साधारणतः सम्पन्न और नाटकीय दिखाई देते हैं, हल्के रंग सौन्दर्यपूर्ण और शान्ति प्रदान करने वाले होते हैं। फीके रंग कृत्रिम प्रकाश की अपेक्षा दिन के प्रकाश में अधिक अच्छे लगते हैं।

डिजाइन के सिद्धान्त

पुष्प-विन्यास की सुन्दरता को बढ़ाने में डिजाइन के सिद्धान्त अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। फूलों को सजाते समय डिजाइन के समस्त सिद्धान्तों को प्रयुक्त करना चाहिए।

लय—प्रत्येक वृद्धि एवं विकासशील की अपनी लय अथवा वृद्धि-गति होती है। जिस ढंग से फूल बढ़ता है उसका व्यक्ति को निरीक्षण करना चाहिए, तत्पश्चात् ही उसको सजाने में प्रयुक्त की जाने वाली लय का चुनाव करना चाहिये। सभी प्रकार की लय गति और आवृत्ति पर आधारित होती हैं।

विकिरण सम्बन्धी लय (Rediating Rhythm)—इसका अधिकांश पुष्प-व्यवस्थाओं में प्रयोग किया जाता है। परन्तु इसका उपयोग विशेषकर गोलाकार या

पुष्प विन्यास

त्रिभुजाकार उन रचनाओं मे किया जाता है जहाँ रेखाएँ किसी एक स्थान से विभिन्न दशाओं को छूटती हैं।

वक्राकार लय (Curvilinear Rhythm)—यह लय उन समतल रेखाओं में दृष्टिगोचर होती है जो नेत्रों को सम्पूर्ण रचना तथा पात्र को देखने के लिये विवश करती है। सम्पूर्ण गुलदस्ते को देखने के पश्चात् वे सर्वाधिक आकर्षक बिन्दु पर रुक जाती हैं। वक्राकार लय फूलों की व्यवस्था मे जान-बूझ कर उत्पन्न की जा सकती है।

विकर्ण या तिरछी लय (Diagonal Rhythm)—पुष्प-विन्यास मे प्राप्त की जाने वाली यह अत्यधिक सक्रिय लय है। किसी पुष्प सज्जित वस्तु की प्रमुख रेखा को तिरछा बनाकर गत्यात्मकता तथा इसे सीधी करके स्थिरता प्रदान की जा सकती है। जब प्रमुख रेखा एक दिशा में तिरछी होती है तो छोटी अन्य रेखाएँ गति को रोके रखने के लिए विपरीत दिशा में तिरछी होनी चाहिए।

पुष्प विन्यास (१)

समानुपात (Proportion)—पुष्प-सज्जा में अङ्गों के सम्बन्धों की सुन्दरता समानुपात पर आधारित होती है। साधारण व्यक्तियों के लिए एक सरल-सा नियम यह है कि फूलदान में प्रयुक्त किये जाने वाले पौधे के अङ्ग की लम्बाई पात्र की लम्बाई से १½ गुनी होनी चाहिए। यद्यपि कभी-कभी २½ गुनी लम्बाई की वनस्पति-सामग्री प्रयुक्त की जाती है। अधिक लम्बाई वाले गुलदस्ते आकृति में सँकरे तथा सिरे पर पतले होने चाहिए। कभी-कभी पुष्प-सज्जा विशेषज्ञ सुन्दर फूलदानों में फूलों के थोड़े-से अनुपात को उनमें प्रयुक्त करके उन पर अधिक बल देते हैं। यदि पुष्प-सामग्री नीचे के पात्र से १½ गुनी चौड़ी हो तो क्षितिजीय सज्जा सुन्दर दिखाई देती है। चौरस सज्जा, जब ऊपर से देखी जाये तो जल के भाग का ⅓ या ⅔ पुष्प सामग्री से आच्छादित होना चाहिए।

पुष्प विन्यास

भार या शक्ति का प्रयोग केवल मात्रा के सन्दर्भ में ही नहीं किया जाता, अपितु सज्जा के शेष भाग की अपेक्षा अधिक बड़े आकार या अधिक तीव्र रंग के सन्दर्भ में भी प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ किसी पात्र में गहरे बीगोनिया (Begonia) की कुछ पत्तियाँ किसी पात्र के दाँए किनारे को आच्छादित किये हुए हैं तो सन्तुलन स्थापित करने के लिये बाईं तरफ अपेक्षाकृत लम्बी वनस्पतीय सामग्री की आवश्यकता होगी।

पुष्प विन्यास (३)

बल (Emphasis)—पुष्प-सज्जा में बल प्रदान करने के लिए आकर्षक बिन्दु पर पुष्प सबसे बड़े, संख्या में सर्वाधिक तथा सामान्यतः विरोधी रंग के अथवा बहुत चमकीले रंग के रखे जाते हैं। स्थिरता प्रदान करने के लिये केन्द्र वनस्पतीय पदार्थ के नीचे के भाग में तथा साधारणतः पात्र के बीचोबीच में नहीं, वरन् केन्द्र-बिन्दु के समीप ही स्थापित किया जाता है। त्रिभुजाकार रचनाओं में पात्र के अन्दर जहाँ दोनों रेखाएँ मिलती हैं वहीं आकर्षण का बिन्दु होता है।

कई पुष्प-विन्यासों में प्रमुख रेखा पर बल दिया जाना वांछित होता है।

पुष्प-विन्यास में प्रयुक्त फूलों में से एक अधिक प्रबल फूल का उपयोग करके एक प्रबल रंग तथा एक प्रबल बनावट का बल प्राप्त किया जा सकता है। पात्र तथा पृष्ठभूमि को कम महत्त्व प्रदान करने का स्पष्ट अर्थ फूलों को बल प्रदान करना है।

पुष्प विन्यास (४)

पुष्प-विन्यास के प्रकार

फूलों को रेखाबद्ध करके सजाना—इस सज्जा-व्यवस्था में रेखा के तत्त्व को सबसे अधिक महत्त्व दिया जाता है। इस पद्धति में फूल-पत्तियां अपेक्षाकृत कम मात्रा में ही प्रयुक्त की जाती हैं, ताकि पौधों की वृद्धि की सुन्दर और विशिष्ट रेखाएँ स्पष्ट रूप से प्रदर्शित हो सकें। एक सुन्दर रेखाबुद्ध पुष्प-व्यवस्था में विभिन्न लम्बाई की तीन टहनियाँ एक ही दिशा में या त्रिभुज का निर्माण करती हुई इस्तेमाल की जाती हैं।

पुष्प व पत्तियों को समूहबद्ध करके सजाना—इस सजावट-व्यवस्था में अपेक्षाकृत अधिक सामग्री का उपयोग किया जाता है। इसमें रेखा की अपेक्षा पुष्पों के समूह तथा रंग को अधिक महत्त्व दिया जाता है। फूलों की समूहीकृत रचना गठी हुई (Compact) अर्ध गठी या बिखरी (airy) हो सकती है।

पुष्पों की समूहबद्ध व्यवस्था स्वाभाविक (natural), निगूढ़ (stylized) अथवा आवर्तकाल (Period type) हो सकती है। अनौपचारिक कमरों में साधारण प्रकार के फूलों के लिए स्वाभाविक प्रभाव उपयुक्त होता है। निगूढ़ समकालीन समूह-बद्ध पुष्प-व्यवस्था में फूलों के समूह में आकर्षण का केन्द्र-बिन्दु, पृथकत्व प्रदर्शित करने

वाले रंग और कभी-कभी रेखीय नमूना भी होता है। आवर्तकाल पुष्प-व्यवस्था वह होती है जो ऐतिहासिक कालों मे यूरोप के महलों में प्रयुक्त की जाती थी।

संयोजित अथवा रेखीय और समूहबद्ध व्यवस्था का मिश्रित रूप—पुष्प-विन्यास की यह अमेरिकन पद्धति है। इसमें रेखीय और समूहबद्ध पद्धतियो की सर्वोत्तम विशेषताएँ चुनकर इस्तेमाल की जाती है। रंगों के समूह को रेखा का प्रयोग करके आकर्षक बनाया जाता है। परन्तु फूलों के समूह को रेखा की अपेक्षा अधिक महत्त्व नही दिया जाना चाहिए, यद्यपि समूह ही रचना को आकर्षण का केन्द्र व और अधिक महत्त्व प्रदान करता है।

उप साधन (Accessories)

पुष्प-सज्जा में प्रयुक्त किए जाने वाले उपसाधन सुन्दर तथा सज्जा की विषय-वस्तु के अनुरूप होने चाहिए। वे पुष्पो के साथ मिलकर एक इकाई का निर्माण कर सकने योग्य होने चाहिए।

सामग्री (Materials)—प्राकृतिक वस्तुएँ जैसे घोंघा, स्टारफिश, मूँगा, चट्टाने एवं पंख भावात्मक दशा निर्मित करने मे सहायता प्रदान करते हैं। उदाहरणार्थ मूँगा या बहकर आई हुई लकड़ी से क्रमशः उष्ण कटिबन्धीय अथवा समुद्रीय प्रभाव का बोध होता है। वनस्पतीय वस्तु तथा उपसाधन की वस्तुएँ समान मात्रा में होना उपयुक्त नही होता।

मनुष्य, पशु तथा पक्षियों की छोटी मूर्तियो का उपयोग करने से पुष्प-विन्यास में और भी अधिक आकर्षण उत्पन्न हो जाता है। परन्तु दुर्भाग्यवश मूर्तियाँ बहुधा अनुरूप नही होती। अन्य वस्तुएँ जैसे मोमवत्ती, पुस्तकें, सजावट के सन्दूक, खपरैल, शीशे के बल्ब, अथवा पखे कभी-कभी रचना को पूर्णता प्रदान करने वाले रग या आकृति सम्बन्धी विरोध प्रदान करते हैं।

प्रसन्नता एव उत्साहपूर्ण वातावरण का निर्माण करने के लिए कृत्रिम वस्तुएँ जैसे गिलट, चाँदी अथवा रगीन कागज के झण्डे, कागज के फीते या रिवन्स का प्रयोग फूलों के साथ किया जाता है।

विषय-सामग्री (Theme)—पुष्प-सज्जा हेतु निश्चित विषय होना चाहिए। निश्चितता होने से आवश्यक वस्तुओ का संयोजन नही होने पाता। सुसंगत विचार का प्रयोग करना चाहिए। उदाहरणार्थ जल के अन्दर जल के जीव ही होने चाहिए। भ्रान्ति को बनाए रखने के लिए जमीन पर रहने वाले पशु चट्टानों, भूखण्डों अथवा अन्य ठोस वस्तुओ पर खडे होने चाहिए।

डिजाइन—उप साधनों की सामग्री और पुष्प-विन्यास का सयोजन करके रचना की एक इकाई का निर्माण करना चाहिए। इस कार्य को सम्पन्न करने की एक विधि यह है कि डिस्क के एक सिरे पर आकृति रखें और दूसरे सिरे पर फूलदान रखें और फूल-पत्ती की व्यवस्था इस प्रकार करें कि इसकी रेखाएं आकृति की ओर अग्रसर हों और समस्त अंगों को एक ही साथ एकत्रित कर दें।

पात्र (Containers)

विभिन्न आकार-प्रकार और धातुओं के पात्रों के अभाव में पुष्पों को सजाना असम्भव है। कुछ पात्र जोड़े के साथ क्रय किए जाने चाहिए। पात्र कमरे के अनुकूल होने चाहिए। औपचारिक समय में प्रयुक्त किए जाने वाले कमरों के लिए कलश होने चाहिए। आधुनिक वातावरण के लिए असामान्य आकार के पात्र तथा ग्रामीण मकानों के लिए निम्नकोटि के व पेंदेदार आकार के पात्र प्रयोग में लाने चाहिए।

बनावट (Texture)—पात्र किस धातु से बना है यही धातु का प्रकार उसकी बनावट को सामान्यतः निर्धारित करता है। कई प्रकार के फूलों के लिए धातु के बने पात्र उपयुक्त नहीं समझे जाते; फिर भी चाँदी, सिलवर, शीशा, चद्दर (टीन), पीतल, ताँबे के बने उपयुक्त पात्र प्रयोग किए जाते हैं।

कांच के बने पात्र भी उपयोग में लाए जाते हैं। जिन गुलदस्तों का आधा भाग जल में डूबा रहता हो उनके लिए बड़े गोल काँच के प्याले जैसे बनवा लेने चाहिए।

मिट्टी के पात्र—मिट्टी के पात्रों की बनावट भी मिट्टी के प्रकार तथा उनके आकार के आधार पर भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। इनमें भी बड़े आकर्षक आकारों के उपलब्ध हो जाते हैं।

चीनी मिट्टी (Porcelain) के बने पात्र—चीनी मिट्टी के पात्र नवीन व प्राचीन दोनों ही डिजाइनों के प्रयोग में लाए जाते हैं।

लकड़ी के बने पात्र—लकड़ी के बने पात्र फल या सब्जी को सजाने के लिए अधिकांशतः इन पात्रों का उपयोग किया जाता है। लकड़ी के बने सुन्दर पात्रों को क्रय करना चाहिए। इन्हें घर पर भी आसानी से बनाया जा सकता है।

प्लास्टिक के बने पात्र—आजकल प्लास्टिक के बने पात्र भी मिलते हैं। ये सस्ते व टिकाऊ होते हैं तथा देखने में सुन्दर दिखाई देते हैं।

आकार (Form)—पात्रों की डिजाइन आवश्यक रूप से सादी होनी चाहिए क्योंकि आकर्षण की दृष्टि से ये फूलों के प्रतिद्वन्द्वी नहीं होने चाहिए।

विविध प्रकार के पात्रों का उपयोग सफल पुष्प-विन्यास के लिए परम आवश्यक है। नीची, मध्यम और लम्बी आकृति वाले तथा बड़े मध्यम और छोटे सभी माप के पात्रों की आवश्यकता होती है। तश्तरी के समान चौरस पात्र गोल, अण्डाकार या आयताकार हो सकते हैं। समतलीय, शीर्षाकार या आयताकार पुष्प-सज्जा करने पर बड़े सुन्दर दिखाई देते हैं। लम्बाई में नीचे पात्र पर्याप्त रूप से गहरे होने चाहिए, ताकि तने को ग्रहण करने की ऊँचाई से ऊपर पर्याप्त जल भरा जा सके। (Foilage arrangements) पत्तियों की सुसज्जा के लिए बहुत बड़े पात्रों का उपयोग किया जाता है।

मध्यम ऊँचाई के ऐसे पात्र जिनके मुँह सँकरे होते हैं उनमें फूल-पत्तियों की कम मात्रा प्रयुक्त की जाती है तथा उनमें तने को रोकने की व्यवस्था नहीं होती। पुष्प-सज्जा का प्रारम्भिक ज्ञान रखने वालों के द्वारा तथा जल्दी के समय इनका इस्तेमा

पुष्प विन्यास

किया जाता है। उपयोगिता की दृष्टि से सर्वोत्तम पात्र वे होते हैं जिनके अन्दर तने तथा जल के लिए पर्याप्त स्थान हो।

आधुनिक पुष्प-सज्जा के लिए ज्यामितीय आकार जैसे घन, आयत, पिरामिड, बेलनाकार, कोण, गोल, अर्धचन्द्राकार—के पात्रों का प्रयोग अधिक अच्छा समझा जाता है। स्तम्भ अथवा दो हत्थों वाले पात्र सममितीय पुष्प-व्यवस्था के लिए विशिष्ट रूप से प्रयुक्त किये जाते हैं। अनौपचारिक पुष्प-सज्जा के लिए असममितीय पात्रों, जैसे ढालू, सर्पाकार अथवा सींग के आकार का उपयोग आकर्षक होता है।

रंग (Colour)—पात्रों का रंग भी अधिक आकर्षक होना चाहिये, अन्यथा फूलों की ओर ध्यान आकर्षित नहीं होगा। भूरे, हल्के सफेद, बादामी, पुट्टी (Putty) मटमैला (beiges) तथा प्राकृतिक रंग सर्वाधिक उपयोगी होते हैं। कभी-कभी हल्का कोमल नीला, पत्ती के समान हरा, सफेद, हल्का लाल रंग भी प्रयोग किये जाते हैं। यदि पात्र लकड़ी के बने हों तो उनका रंग धुएँ जैसा और मिट्टी के रंग का होना चाहिये। जब छोटे लाल-बैंगनी, फीरोजी-नीले, जैड-ग्रीन अथवा नीबू के समान पीले पात्रों में उन्हीं के निकटवर्ती अपेक्षा अधिक गहरे रंग के फूल सजाए जाते हैं तो उसका अधिक उत्तेजक प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के संयोजन का प्रयोग बड़ी सावधानीपूर्वक करना चाहिए। हल्के नीले-पीले रंग के पात्रों, जो कि अधिक सस्ते व साधारण होने के लिए प्रसिद्ध हैं, का उपयोग यथासम्भव नहीं करना चाहिए, क्योंकि इन्हें नीली-हरी पत्तियों तथा सफेद या लेवेन्डर फूलों के लिए ही प्रयुक्त किया जाना उचित होता है। पत्तियों के समान हरे रंग के पात्र सर्वोत्तम होते हैं। गहरे रंग के फूलों के लिए गहरे रंग के पात्र और सफेद या बहुत हल्के रंग के फूलों के लिए सफेद पात्र काम में लाने चाहिए।

पुष्प-सज्जाओं का उपयोग

विभिन्न प्रकार की पुष्प-सज्जाओं का उपयोग करते समय निम्नलिखित तथ्यों को दृष्टिगत रखकर करना चाहिये—

व्यक्तित्व (Personality)—जिस व्यक्ति-विशेष या परिवार के लिए पुष्प-सज्जा की जा रही है उसके व्यक्तित्व तथा रुचि के अनुकूल ही सज्जा होनी चाहिये; क्योंकि उसका आनन्द सम्बन्धित व्यक्ति तक [illegible] जबकि वह उनकी रुचि व व्यक्तित्व को आकर्षक प्रतीत होने वाली हो। पुराने विचारों को मानने वाला परिवार विरोधी रंगों, बड़े आकार अथवा अन्य उत्तेजक विषय जो कि किशोरों को आनन्द देने वाले हों उन्हें पुष्प-सज्जा में अच्छा नहीं समझता। एक अनुभवी सज्जा करने वाला अपनी चित्तवृत्ति (moods) को अपनी रचना में सम्मिलित करता है।

अवसर—जिस अवसर के लिए पुष्पों की सज्जा की जा रही हो, सज्जा उसी अवसर के अनुकूल होनी चाहिये। औपचारिक अवसरों के लिए भड़कदार फूलों की [illegible] सममितीय सज्जा उपयुक्त होती है। [illegible] पूर्वक

सर पर सुन्दर पुष्पों के छोटे गुलदस्ते पर्याप्त होते हैं। भोजन को मेज पर फूलों की
ज्जा ऐसी हो कि उससे किसी भोज के आयोजन की भावना अभिव्यक्त हो।

कमरा (Room)—कमरे से जो चित्तवृत्ति या भावना प्रकट हो रही हो उसी के अनुकूल फूलों का चयन, पुष्प-पात्रों का प्रकार तथा पुष्प-सज्जा की विधि का निर्धारण किया जाना चाहिये। उदाहरण के लिए भव्य औपचारिक कमरे के चाँदी के कलशों में हल्के गुलाबी रंग के गुलाब, नीले डैल्फीनियम और सफेद मटर की सज्जा अधिक उपयुक्त होती है। मिट्टी के बादामी रंग के प्याले में फलोक्स के पुष्प स्वाभाविक ढङ्ग से सजाकर साधारण मकान में प्रयुक्त किए जाने चाहिये। कला-कक्ष (Artists Studio) में तीन साइकिड अपुष्प पर्ण (Cycad frouds) तथा कुछ मैग्नोलिया (Magnolia) की पत्तियाँ उसे सजाने के लिये पर्याप्त हैं।

कमरे का डिजाइन भी फूलों की सजावट के डिजाइन को निर्धारित करने में योग प्रदान करता है। कमरे में किस रंग के फूलों का प्रयोग किया जाए इस बात को तय करते समय कमरे के रंग को भी ध्यान में रखना पड़ता है। यदि कमरे की दीवारें हल्के कोमल, हरे रँग से रंगी हुई हैं तो अधिकांश पुष्पों का उपयोग कमरे में किया जा सकता है। सामान्यतः कमरे का जो रंग हो लगभग उसी रंग के फूलों का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है।

गुलदस्ता रखने का स्थान (Placement)

किसी कमरे में गुलदस्ते रखने से पूर्व इस बात का अध्ययन कर लेना चाहिए कि कमरे के डिजाइन को अधिक बल देने के लिए गुलदस्तों को किन स्थानों प रखा जाए। यदि कमरे के महत्त्वहीन स्थानों पर आकर्षक रूप से सजे हुए गुलद रख दिये जाएँ तो उससे कमरे की एकता नष्ट हो जाती है।

रहने वाले कमरे में बड़ा और आकर्षक गुलदस्ता कमरे में जहाँ अँगीठी हो वहाँ रखना चाहिए। यदि कुछ अतिरिक्त गुलदस्तों की आवश्यकता अनुभव हो अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण एक या दो गुलदस्ते फर्नीचर जहाँ रखा हो वहाँ र चाहिए। जो कमरा अतिथियों आदि के रहने के लिए प्रयुक्त होता हो उसमें सजे हुए दो गुलदस्ते मैन्टल शैल्फ (Mantal Shelf) के दोनों किनारों पर रख देना चाहिये। छोटे मकान में जहाँ उपयुक्त स्थान दिखे वहाँ छोटा-सा रख देना चाहिए।

भोजन-कक्ष में छोटे गुलदस्ते भोजन करने की मेज पर रखने चाहि मेज पर रखी भोज्य सामग्री स्पष्ट रूप से दिखाई देती रहे।

बड़े हॉल में शीशे के नीचे की अलमारी या मेज पर प्रमुख गु जाना चाहिए।
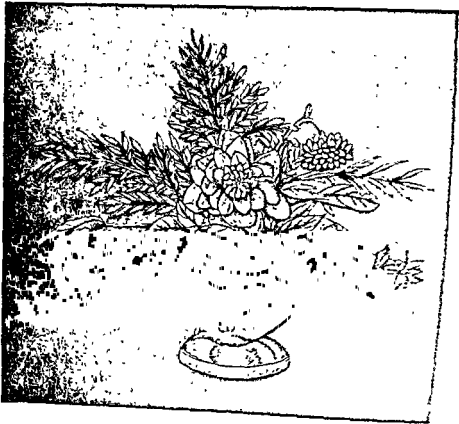
पुष्प विन्यास

गुलदस्तों को कमरों में रखते समय माप का ध्यान अवश्य रखना चाहिए। बड़ी मेज पर छोटे गुलदस्ते तथा छोटी मेज पर बड़े गुलदस्ते अच्छे नहीं लगते। छोटे कमरे में छोटे और बड़े कमरे में बड़े गुलदस्ते प्रयोग किए जाने चाहिए।

तना होल्डर्स

पुष्प-सज्जा में तने को उपयुक्त स्थिति में बनाए रखने के लिए साधारणतः कुछ यान्त्रिक साधनों का सहारा लेना आवश्यक है। पुष्प-सज्जा में कई आकार और आकृतियों के तना साधक इस्तेमाल किए जाते हैं। पिन पॉइन्ट स्टेम होल्डर्स तथा हेयर पिन स्टैम होल्डर्स विशेष रूप से अच्छे माने जाते हैं। तना साधक को खिलौने बनाने वाली मिट्टी या गर्म पैरेफिन मोम से फूलदान में चिपका दिया जाता है, जब साधक और फूलदान दोनों पूर्णतः सूख जाते हैं तभी उन्हें काम में लाया जाता है।

सशोधित तना साधकों की भी आवश्यकता होती है। प्रत्येक साधे अथवा मध्यम आकार के अपारदर्शी फूलदान में दो इन्च मुड़े हुए तार का जाल जैसा होता है। यह अपने स्थान पर मॉडल बनाने की मिट्टी से जकड़ा हुआ होता है। तारयुक्त वस्त्र के कोनाकार, बेलनाकार तथा वृत्ताकार साधक उपयोगी होते हैं। देवदार तने एक कांटेदार छोटी छड़ी जो कि बेलनाकार फूलदान के अन्दर फिट की जाती है एक सुन्दर प्रकार का जापानी तना साधक होता है। एक टहनी को अन्तिम सिरे से चीर कर दोनों भागों को एक दूसरे पर लाकर बांध देने से भी तना साधा रहता है।

तना साधक का प्रयोग इस प्रकार किया जाए कि वह छिपा रहे, स्पष्ट दिखाई न दे। फूल और पत्ते तना साधक को ढकने के उत्तम साधन हैं, परन्तु इस कार्य के लिये काँच, बालू, घोंघा, कार्क, लकड़ी की तीली, पानी में बही हुई लकड़ी, पत्थर के टुकड़े का उपयोग स्वाभाविक ढंग से किया जा सकता है।

पुष्प के तने को ढकने व उसे उचित सहारा प्रदान करने के लिए [illegible] छोटे टुकड़े काटकर उसके ठीक ऊपर रख जा सकते हैं।

आधार (Bases)

फूलदानों की सुन्दरता बढ़ाने के लिए तथा उनके [illegible] करने के लिए उनके नीचे आधार, [illegible] फूलदान को [illegible] पर रखने से उसका [illegible] तथा पुष्प-सज्जा को भी अधिक [illegible] पूर्वी देशों में [illegible] किए जाते हैं। [illegible] आयताकार विभिन्न रंगों के लकड़ी के टुकड़े [illegible] बनाए जा सकते हैं। [illegible] होती है।

पुष्प-व्यवस्था

पुष्प-व्यवस्था या विन्यास करने के लिए लम्बी कैंची, तना साधक, स्पंज, कागज के टुकड़े, नली साफ करने वाला तार, गार्डन टाइंग टैप, रबर वैण्ड, चिपकाने वाला टैप, लीड का स्ट्रिप, मोडल बनाने की मिट्टी की आवश्यकता होती है।

पुष्प-विन्यास करते समय सर्वप्रथम यह सोचना चाहिये कि किस चित्त-वृत्ति और डिजायन का प्रयोग करना है। इसके बाद ही उस भाव व डिजायन के लिए उपयुक्त फूलों व उनके डिजायनों का निर्धारण करना चाहिए। फूल और उनकी व्यवस्था के अनुकूल ही फूलदान का चुनाव करना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो गुलदस्ते बनाने का कार्य रसोईघर में न करके जहाँ इसका उपयोग होना है, उसी स्थान पर करना अधिक अच्छा होता है।

उदाहरण के लिए मान लो आप को आधुनिक किस्म के छोटे-से कमरे के लिए लिली और उसकी पत्तियों का गुलदस्ता बनाना है। सर्वप्रथम आप सबसे अधिक लम्बे, छोटे और सुन्दर फूलों को चुन लीजिए। इन्हें तना साधक से जमा लीजिए, ताकि फूल फूलदान के मध्य में सबसे ऊपर दिखाई दे। इसके बाद पहले फूल से थोड़ा बड़ा फूल, पहले फूल से थोड़ा-सा नीचे उसकी बाईं या दाईं ओर लगा दीजिए। तीसरा फूल दूसरे से थोड़ा बड़ा इसी क्रम से उन्हें ऐसा सजाइए कि धीरे-धीरे चारों ओर सीढ़ी के आकार की डिजाइन बनती चली जाए। अन्त में सबसे बड़ा फूल सबसे नीचे बीचों-बीच में ऐसे स्थान पर रखा जाए जहाँ सबका ध्यान आकर्षित हो सके। इस डिजाइन के लिए उत्तम फूलों का ही उपयोग करना चाहिए। दो पत्ती आधार के दोनों ओर एक-एक इस प्रकार रखनी चाहिए कि छोटी पत्ती बड़ी से थोड़ी ऊपर रहे। ऐसा करने से तना साधक ढक भी जाएगा तथा गुलदस्ते की डिजाइन की शोभा भी बढ़ेगी।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. कला का पुष्प-विन्यास में क्या स्थान है ?
२. पुष्प-विन्यास में डिजाइन के कौन-से सिद्धान्त लगते हैं ?
३. पुष्प-विन्यास के मुख्य कौन-कौन-से प्रकार हैं ?
४. पुष्प-विन्यास में कौन-कौन-से उपसाधन प्रयोग में लाये जाते हैं ?
५. पुष्प-सज्जाओं के उपयोग पर एक निबन्ध लिखिये।

भाग ६

गृह-व्यवस्था व सुरक्षा

- गृह की सफाई व सुरक्षा
- गृह में संग्रहीकरण व सुरक्षा
- घरेलू कीड़े और मकोड़े

अध्याय २४

गृह की सफाई व सुरक्षा

गृह की सुव्यवस्था के अन्तर्गत केवल सजावट व सुविधा का ही स्थान नही है, वरन् स्वच्छता का भी है। यह निश्चित है कि एक गृह जिसमें सब प्रकार का आवश्यक सुविधामय फर्नीचर तथा साज-समान उपस्थित है तथा उचित स्थानो पर लगा भी है, तब तक पूर्णतः सुव्यवस्थित नही कहला सकता, जब तक कि गृह का प्रत्येक भाग व सब वस्तुएँ पूर्ण रूप से स्वच्छ न हो। एक सर्व-सुविधा-सम्पन्न गृह मे भी यदि धूल, मिट्टी व गन्दगी को हटाने की ओर ध्यान नही दिया जाता तो ऐसा गृह सभ्य व्यक्तियों के रहने योग्य नही। उससे तो एक साफ-सुथरी चिकनी मिट्टी से पुती कच्ची झोपड़ी ही अधिक भली है।

घर की सफाई का महत्त्व केवल सुन्दरता के दृष्टिकोण से ही नही है। सौन्दर्य के साथ-ही-साथ स्वास्थ्य भी एक ऐसी मान्य निधि है जिसको गन्दगी, धूल व मिट्टी विशेष हानि पहुँचाती है। मिट्टी, धूल, दाग व धब्बे, मक्खी-मच्छर व अन्य कीड़े-मकोडे देखने में घृणास्पद ही नही प्रतीत होते, वरन् व्यक्तियो मे अनेक रोग फैलाते हैं। इसी से स्वच्छता जो सौन्दर्य व स्वास्थ्य दोनों निधियो का एक सरल साधन है देव-तुल्य कहलाती है। इस अध्याय मे गृह व गृह-सम्बन्धी विभिन्न वस्तुओ को साफ करने के विषय पर विचार करेंगे।

स्पष्ट है कि गृह की स्वच्छता की ओर पूर्ण ध्यान देना गृहिणी का कर्तव्य है। घर को साफ रखने के लिए यह आवश्यक है कि प्रतिदिन गृहिणी कुछ समय विभिन्न कमरों व भागों को धूल-मिट्टी से मुक्त करने तथा वस्तुओ को यथास्थान रखने मे व्यतीत करे।

दैनिक सफाई

प्रतिदिन उठने-बैठने व सोने वाले कमरों, स्नानागार तथा शौच-गृह, रसोई एवं आँगन-बराण्डे आदि की सफाई होना आवश्यक है। किन्तु समय के परिमित होने के कारण यह स्वाभाविक ही है कि गृह के इन सब भागों की तथा इन भागों के पूर्ण साज सामान की पूरी तरह सफाई करना सम्भव नहीं। उदाहरणार्थ यह कदापि सम्भव नहीं कि प्रतिदिन कमरे के सोफा-कुर्सी व कालीन-दरी, तख्त-दिवान आदि को कमरे से बाहर निकाला जाय और कमरों की दीवारों, छत एवं फर्श के कोने-कोने को झाड़ा-पोंछा जाय। इसी प्रकार यह भी बड़ा कठिन है कि प्रतिदिन पलंग पर से पूरा बिस्तर उठाकर धूप में झाड़ा-सुखाया जाय या प्रतिदिन घर के फर्नीचर को पालिश व वार्निश किया जाय। इसी से घर की दैनिक सफाई ऐसी धूल-मिट्टी को हटाने तक ही सीमित है जो फर्श व फर्नीचर तथा अन्य साज-सामान पर प्रतिदिन पड़ जाती है। दैनिक कार्यों के कारण जो अन्य गन्दगी व कूड़ा-करकट प्रतिदिन घर में जमा होता है, जैसे तरकारियों व फलों के छिलके आदि, उसको दूर करना भी प्रतिदिन का ही काम है। इसके अतिरिक्त जिन स्थानों पर आँधियाँ बहुतायत से आती हैं, वहाँ पर मकानों की सफाई दिन में दो बार करना अनिवार्य हो जाता है। आँधी के दिनों में प्रत्येक वस्तु उठाकर, झाड़-पोंछ कर कमरे की सफाई की जानी चाहिए।

साप्ताहिक सफाई

समय के अभाव के कारण घर के जो भाग प्रतिदिन साफ नहीं किये जा सकते तथा घर की वे वस्तुएँ जो प्रतिदिन पूर्णतः साफ नहीं की जा सकतीं, सप्ताह या पन्द्रह दिन में उनको एक बार अवश्य पूर्ण रूप से स्वच्छ करना चाहिए। दरवाजों, खिड़कियों के शीशे, दरवाजों-खिड़कियों व फर्नीचर की पॉलिश, फर्श का धोना-पोंछना, दीवारों व छत की सफ़ाई तथा बिस्तर व दरी-कालीन आदि को झाड़ना व धूप लगाना आदि सफाई के ऐसे अंग हैं, जो प्रतिदिन सम्भव न होने के कारण दैनिक सफाई में नहीं आते, किन्तु इनके लिए यह अनिवार्य है कि वे सप्ताह में कम-से-कम एक बार अवश्य स्वच्छ किए जायें। यदि दैनिक सफाई के अभावों की पूर्ति करने के लिये साप्ताहिक सफाई न की जाये तो फिर दो-चार माह के पश्चात् घर की छतें इस कदर जालों से भर जायेंगी, दीवारों पर इतनी धूल जम जायगी; फर्नीचर, दरी, कालीन आदि पर इतने दाग-धब्बे पड़ जायेंगे; दरवाजे-खिड़की व उनके शीशे इतने गन्दे हो जायेंगे कि घर का रूप विकृत हो जायगा तथा घर की वस्तुओं को भी हानि होगी। इसी से साप्ताहिक सफाई का महत्त्व भी दैनिक सफाई से कुछ कम नहीं है।

वार्षिक सफाई

जिस प्रकार दैनिक सफाई के अभावों की पूर्ति करने के लिये साप्ताहिक सफाई आवश्यक है, उसी प्रकार साप्ताहिक सफाई के अभावों की पूर्ति करने के लिये वर्ष में कम-से-कम एक बार घर को और भी विशेष रूप से साफ करना अनिवार्य है। इस

प्रकार की वार्षिक सफाई के अन्तर्गत घर की पुताई व पॉलिश के साथ ही घर, फर्नीचर व अन्य साज-सामान की मरम्मत, सुधार व परिवर्तन आदि आते हैं। कमरों से सब सामान हटाकर घर-भर की पूरी सफाई व पुनर्व्यवस्था कर देना प्रतिदिन या प्रति सप्ताह का कार्य नहीं है। किन्तु वर्ष में कम-से-कम एक बार घर को पूर्णतः नवीन-रूप देना आवश्यक है। वार्षिक सफाई कोई सरल काम नहीं है, इसमें बहुत समय व शक्ति लगती है। गृहिणी को वार्षिक सफाई के लिये लगभग एक सप्ताह का कार्य-क्रम बना लेना चाहिए व गृह के विभिन्न सदस्यों को विभिन्न कार्य सौंप देना चाहिए, जिससे सम्पूर्ण-गृह की पूरी सफाई हो सके। पाश्चात्य देशों में वार्षिक सफाई के लिए बसन्त ऋतु अति सुविधामय रहती है, क्योंकि बरफ व शीत का अन्त हो जाता है तथा मौसम सुहावना रहता है। किन्तु भारत में सबसे अनुकूल समय दशहरा-दिवाली का रहता है। इस समय वर्षा का अन्त हो चुकता है, अतः इस समय की हुई सफाई, मरम्मत व पुताई आदि अगली वर्षा तक ठीक रहती है।

रसोईघर की सफाई

रसोईघर व रसोई के साज-सामान की सफाई व सुरक्षा का विषय गृह-प्रबन्ध में अति महत्वपूर्ण है। स्वच्छ रसोईघर में तैयार किया भोजन न केवल स्वच्छ व स्वास्थ्यकर होता है, वरन् आनन्ददायक भी होता है। उचित देखभाल से रसोई के खाद्य-पदार्थ खराब होने से बचते हैं व अन्य सामान की आयु व उपयोगिता बढ़ती है। एक फूहड़ गृहिणी का रसोईघर अस्त-व्यस्त ही नहीं, गन्दा भी रहता है। छत-दीवारों पर धुएँ से काले जाले व मकड़े लटकते हैं। नाली में राख, कूड़े व जूठन से जल-प्रवाह रुका रहता है। मक्खी व अन्य कीड़ो-मकोड़ो, झींगुर के मारे नाक में दम हो जाता है। चूहों को भी खूब मौज रहती है। चूल्हा, अंगीठी, स्टोव व रसोई के बर्तन सभी शोचनीय दशा में पाये जाते हैं। स्पष्ट है कि ऐसे रसोईघर में काम करना व वहाँ पर बना हुआ भोजन करना दोनों ही अप्रिय अनुभव होते हैं। ऐसे रसोईघर स्वास्थ्य को ही हानि नहीं पहुँचाते, वरन् आर्थिक क्षति भी पहुँचाते हैं, क्योंकि गन्दगी व असावधानी से वस्तुओं का नष्ट होना स्वाभाविक ही है।

रसोईघर की सफाई में भी वे सब नियम व विधियाँ लागू हैं जो गृह के अन्य भागों की सफाई के लिए प्रयोग में लाई जाती हैं। रसोईघर की प्रतिदिन की सफाई के अतिरिक्त मासिक व वार्षिक सफाई भी की जानी चाहिए।

दैनिक सफाई—रसोईघर के प्रत्येक कार्य-केन्द्र की सफाई प्रतिदिन होनी चाहिए। निश्चित रूप से यह कहना कि केन्द्रों व वस्तुओं की सफाई का कोई विशेष क्रम हो, सम्भव नहीं। परिस्थिति व स्वभावानुसार विभिन्न गृहिणियों को भिन्न क्रम से सफाई का कार्य करने की आदत होती है। फिर भी साधारणतः रसोई की सफाई का मुख्य कार्य भोजन करने के पश्चात् ही आरम्भ होता है। खाना खिलाने के पश्चात् यदि कुछ भोजन बच रहे तो उसे छोटे उपयुक्त बर्तनों में पलट कर जाली की

अलमारी में रख देना चाहिए। तदुपरान्त पकाने व भोजन करने के जूठे वर्तनों को सफाई के स्थान पर एकत्रित करना चाहिए। परोसने व तैयारी के स्थानों को झाड़-पोंछ कर स्वच्छ करना चाहिए। यदि भोजन करने का प्रवन्ध भी रसोईघर में ही हो, तो चौकी-पटरे या मेज-कुर्सी को पोंछना चाहिए। फिर रसोई में प्रयुक्त विभिन्न सामग्रियों को यथास्थान व्यवस्थित करना चाहिए व चूल्हा, वर्तनों व कूड़ा-करकट के डिव्वे तथा फर्श की पूर्णतः सफाई करनी चाहिए।

चूल्हा—खाना पकाने के केन्द्र में चूल्हे की सफाई मुख्य है। भिन्न-भिन्न प्रकार के चूल्हों की सफाई व सुरक्षा भिन्न-भिन्न विधियों से करना आवश्यक है। मिट्टी के वने चूल्हे या अँगीठी की प्रतिदिन चिकनी मिट्टी के गाढ़े घोल से लिपाई होनी चाहिए। चूल्हा लीपने से पहले राख व कोयलों आदि से पूरी तरह मुक्त कर लेना चाहिए।

लोहे की अँगीठी को झाड़ कर खाली करना आवश्यक है। इसे पानी से धोने से जंग लग जाता है। अतः यथासम्भव सूखा ही रखना चाहिए। यदि चिकनाई या भोजन उवलने या गिरने से अँगीठी इतनी गन्दी हो जाये कि सूखे कपड़े से पोंछने से स्वच्छ न हो सके तो गीले कपड़े से पोंछ कर फिर सुखा देना चाहिये। अँगीठी में पानी डाल कर कोयले वुझाने से लोहे की सलाखें कमजोर हो कर शीघ्र टूट जाती हैं।

तेल, गैस या विजली के स्टोव आदि पूर्ण सावधानी से प्रयोग में लाये जायँ तो प्रतिदिन साफ करने के लिए उन्हें नरम कागज व सूखे कपड़े से रगड़कर पोंछ देना ही पर्याप्त है। किन्तु जव असावधानी के कारण स्टोव पर कोई खाद्य-पदार्थ गिर जाये तो ध्यानपूर्वक गीले कपड़े से पोंछ देना चाहिए।

वर्तन—खाना पकाने के प्रयोग में आये वर्तनों की प्रतिदिन उचित सफाई होनी चाहिए। सब्जी काटने के चाकू, चकला-वेलन व चिमटा-सँड़ासी आदि धोकर सूखे कपड़े से पोंछ कर यथास्थान रखना चाहिए। थाली, कटोरी, परात आदि ऐसे वर्तन जो भोजन की तैयारी में काम आये हों व चिकने न हों उन्हें साफ पानी से धोकर ही स्वच्छ किया जा सकता है। जिन भगोनों व देगचियों आदि में खाना पका हो जिससे वे चिकनी व वाहर से काली हो गई हों उन्हें माँजने वाले वर्तनों के साथ उचित स्थान पर पहुँचाना चाहिए व उचित प्रकार से साफ करना चाहिए। मूँज या सन की कूँची अथवा सूखी तुरई की जाली से वारीक छनी वालू या राख से रगड़ कर, सख्त धातु के खाना पकाने के वर्तनों को साफ करना व चमकाना चाहिए। पीतल, काँसा, लोहा व ताँबा आदि के वर्तन इस विधि द्वारा ठीक साफ होते हैं। लोहे का तवा या कढ़ाई जव वहुत चिकनी अथवा जंगदार हो जाये तो उसे ईंट के चिकने टुकड़े से घिस कर साफ करने में विशेष हानि नहीं। लोहे के वर्तनों को माँजने-धोने के पश्चात् जंग से वचाने के लिए पोंछ कर सुखा देना आवश्यक है। अन्य वर्तन इस प्रकार उलट कर रखना चाहिए कि पानी निचुड़ जाय।

खाना खाने के बर्तन भिन्न धातुओ के ही नहीं, कांच, चीनी मिट्टी व प्लास्टिक आदि के भी होते है। भिन्न धातुओं के बर्तनों व अन्य विविध प्रकार के बर्तनो की सफाई की विशेष विधियों के सम्बन्ध में हम विचार कर चुके हैं। यहाँ हम बर्तनो की सफाई के कुछ सामान्य नियमो का वर्णन करेंगे।

बर्तनों की सफाई व सुरक्षा के कुछ सामान्य नियम

१. खाना बनाने व खाने के सब बर्तनों को यथासम्भव उपयोग मे लाने के पश्चात् एकदम धो डाला जाये, नही तो उनमें लगी अवशेष भोजन सामग्री सूखने पर उन्हें साफ करना अति कठिन हो जाता है। यदि एकदम बर्तन साफ करने का समय न हो तो बर्तनों को पानी मे भिगो देना चाहिए, जिससे उनमे लगा भोजन न सूखे।

२. चिकनाई वाले बर्तनो को साफ करने के लिये गर्म पानी अति सुविधामय रहता है। यदि भोजन करने के पश्चात् या जब भी आग खाली हो, बर्तनो की सफाई के लिए थोड़ा पानी गर्म किया जा सके तो अति उत्तम है। किन्तु कांच व प्लास्टिक के बर्तन धोते समय अधिक गर्म पानी का प्रयोग न करना चाहिए।

३. भिन्न-भिन्न प्रकार की गन्दगी या विभिन्न किस्म के बर्तन अलग-अलग करके एक साथ धोना उचित है। उदाहरणार्थ खाना पकाने के भगोने, देगची व भोजन करने की प्लेटें व तश्तरियाँ आदि एक साथ ही मली-धोई जायेंगी तो उतनी सुविधा व स्वच्छता न होगी, जितनी उनके अलग-अलग धोने मे। यह भी आवश्यक है कि कम गन्दे या सरलता से साफ होने वाले बर्तनों को सबसे पहले धोया जाय।

४. मुड़े किनारे वाली पतीली, थाली, तश्तरी आदि अथवा नक्काशी-खुदाई वाले फूलदार बर्तनो की सफाई मे विशेष सावधानी की आवश्यकता है। इनमे भोजन ही नही, राख व मिट्टी भी दरारों व गड्ढो मे भर जाती है। इनकी सफाई के लिए सोडा, साबुन का घोल व ब्रुश अति आवश्यक हैं।

५. खाना खाने के चाँदी, शीशे, कांच या धब्बा रहित इस्पात के बर्तनो को सावधानी से धोकर साफ करना ही पर्याप्त नही। उन्हें साफ झाड़न से रगड़ कर चमकाना भी आवश्यक है।

६. विभिन्न बर्तनो को साफ करने के लिए बारीक राख व साफ मिट्टी के अतिरिक्त साबुन, सोडा, विम, तलछट की सफेदी व अनेक सामग्रियाँ भी प्रयोग मे लानी चाहिए।

७. जिस कूची या ब्रुश से बर्तन साफ किये जायँ उसे काम करने के पश्चात् गर्म पानी व साबुन या सोडे से धो कर सूखने के लिए टाँगना चाहिए। इसी प्रकार

बर्तन पोंछने वाले नरम व बेरोयेंदार झाड़नों को भी प्रतिदिन साफ पानी व साबुन से धोकर सुखाना चाहिए, अन्यथा सफाई के स्थान पर गन्दगी व दुर्गन्ध का कारण बनते हैं।

८. धोने व पोंछने के पश्चात् विविध बर्तनों को निर्धारित स्थानों पर व्यवस्थित कर देना चाहिए।

९. बर्तन मलने व धोने के स्थान अथवा सिंक को भली प्रकार रगड़ कर या उपयुक्त साधन सामग्री के प्रयोग से साफ करना अति आवश्यक है।
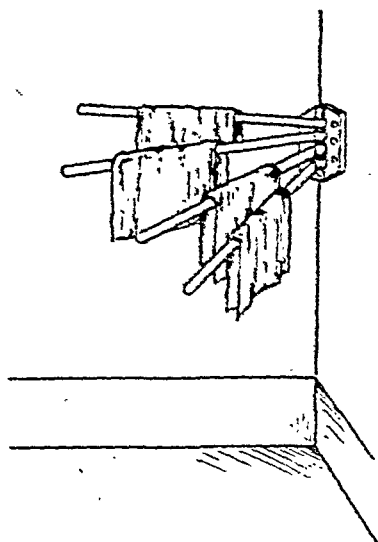
झाड़न सुखाने की खूँटी

कूड़ा-करकट—खाने की तैयारी रखने में जो छिलके व कूड़ा प्रतिदिन निकलता है उसे रसोईघर में रखे एक उचित डिब्बे में भरना चाहिए। यदि कूड़ा डालने से पहले इसमें एक रद्दी कागज बिछा दिया जाय अथवा कूड़ा कागज में लपेट कर डाला जाय तो डिब्बा स्वच्छ व दुर्गन्ध-रहित रहता है। प्रतिदिन इस डिब्बे का कूड़ा गृह के मुख्य कूड़े के डोल में पलट दिया जाना चाहिए।

फर्श—बर्तनों व रसोईघर के विभिन्न केन्द्रों की सफाई हो जाने के पश्चात् फर्श को साफ करना चाहिए। रसोईघर की नीची व्यवस्था में तो प्रायः बर्तन मलने के पश्चात् फर्श को दिन में दो बार खुले पानी से धोया जाता है। फर्श धोने के लिए सख्त सींकों का झाड़ू या ब्रुश प्रयोग में लाना चाहिए। फर्श धोने में दीवारों पर छींटे नहीं देने चाहिए। नाली को एक लकड़ी की छड़ डाल कर साफ करना आवश्यक है। धूल झाड़ने के पश्चात् फर्श को एक सूखे मोटे झाड़न से रगड़ कर पोंछ देना चाहिए, जिससे फर्श शीघ्र सूख जाय।

ऊँची व्यवस्था में भोजन पकाने से फर्श बहुत कम गन्दा होता है। अतः इस दशा में साधारणतः दिन में एक बार फर्श धोना ही पर्याप्त है। कभी-कभी फर्श चिकनी टाइल या सीमेन्ट का होने की दशा में तो प्रतिदिन भोजन पकाने के पश्चात् नरम ब्रुश से झाड़ कर गीले कपड़े से पोंछ देने से ही निखर जाता है।

साप्ताहिक सफाई

दैनिक सफाई के अतिरिक्त प्रति सप्ताह अन्य कमरों की भाँति ही रसोईघर की भी विशेष रूप से सफाई की जानी चाहिए। इसके लिए कमरे की छत व दीवारों

रोशनदान, खिड़कियों व दरवाज़ों आदि को भली प्रकार झाड़ा व पोंछा जाना चाहिए। खाने की सामग्री रखने के स्थान व डिब्बे-बोतलों आदि को भी साफ करना आवश्यक है। जो आवश्यक सामान समाप्त हो गया हो उसकी पूर्ति करनी चाहिए। अल्मारी डोली में से सामान बाहर निकाल कर पोंछ कर व्यवस्थित करना उचित है।

प्रति सप्ताह फर्श धोने में प्रतिदिन से अधिक ध्यान दिया जाय तो अच्छा है; विशेषतः जब प्रतिदिन फर्श न धोया जाता हो। सोडा अथवा साबुन के प्रयोग से फर्श निखर जाता है। नाली-मोरी में थोड़ी फिनाइल छोड़ना लाभदायक है।

दाग-धब्बे पड़ने वाले बर्तनों को विशेष साधनों द्वारा पूर्णतः साफ कर चमकाना चाहिए; उदाहरणार्थ—पीतल के बर्तनों को इमली या नीबू आदि की खटाई से।

वार्षिक सफाई

यह अति आवश्यक है कि समस्त गृह के समान रसोईघर को भी प्रतिवर्ष खाली करके पूर्णतः साफ किया जाय व टूट-फूट की मरम्मत अथवा आवश्यक सुधार कराये जायें। दीवारो व छत को पुतवाना, दरवाजो-खिड़कियों व फर्नीचर आदि की पूर्ण सफाई व रोगन-वार्निश करवाना; अल्मारियों, ताकों आदि को विशेष रूप से साफ करके पुनः व्यवस्थित करना प्रतिवर्ष की सफाई के अन्तर्गत आता है। रसोई की चिमनी की सफाई भी प्रति वर्ष होनी आवश्यक है। चूल्हे-चिमनी की मरम्मत या कुछ परिवर्तन करना भी वार्षिक सफाई के समय सुविधामय रहता है। जो वस्तुएँ निरर्थक हो गई हों उन्हे निकाल देना उचित है।

सफाई करने का सामान व सामग्री

गृह की पूर्ण सफाई करने के लिए अनेक प्रकार की सामग्री व साधनों की आवश्यकता पड़ती है। ऐसी आवश्यक वस्तुओं को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

१. कपड़े-चिथड़े (clothes and rags)।
२. झाड़ू व ब्रुश (brooms and brushes)।
३. बर्तन (utensils)।
४. सफाई के लिए सामग्री (cleaning agents)।

१. कपड़े-चिथड़े—घर की सफाई में अनेक प्रकार के कपड़ों-चिथड़ों की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरणार्थ—

(अ) सूखी सफाई के लिए—
  (i) मोटे झाड़न—साधारण सफाई के लिए।
  (ii) फलालेन के झाड़न—पॉलिश आदि के लिए।
  (iii) नरम चमड़े के टुकड़े—चाँदी व शीशा आदि चमकाने

(ब) गीले काम के लिए—

मोटा, खुरदरा कपड़ा—फर्श पोंछने के लिए।

(स) साधारण सफाई के लिए—

(i) मामूली कपड़ा—स्नानागार, वॉश बेसिन और अन्य वस्तुओं की सफाई के लिए।

(ii) मामूली कपड़ा—रसोई में वर्तन धोने व पोंछने के लिए।

(iii) छोटे-छोटे चिथड़े—पॉलिश आदि लगाने के लिए।

२. झाड़ू व ब्रुश—स्थान-स्थान व वस्तु-वस्तु की सफाई के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के सख्त या नरम झाड़ू व ब्रुशों की आवश्यकता होती है। जैसे—

मूँजी की कूची; बोतल धोने के नरम ब्रुश; सुतली का ब्रुश; वर्तन धोने के लिए तुरई का ब्रुश; कालीन, दरी साफ करने का सख्त ब्रुश; फर्श साफ करने का नरम ब्रुश; खजूर की झाड़ू; नरम झाड़ू; नारियल की सींक की झाड़ू; छत, दीवार साफ करने का नरम ब्रुश; फर्श रगड़ कर साफ करने के लिए सख्त तिनकों का ब्रुश; स्नान-गृह व रसोईघर का फर्श साफ करने के लिए।

(अ) सख्त—(i) नारियल की सींकों का लम्बा झाड़ू फर्श व आँगन धोने के लिए।

(ii) सख्त तिनकों का ब्रुश दरी व कालीन की सफाई के लिए।
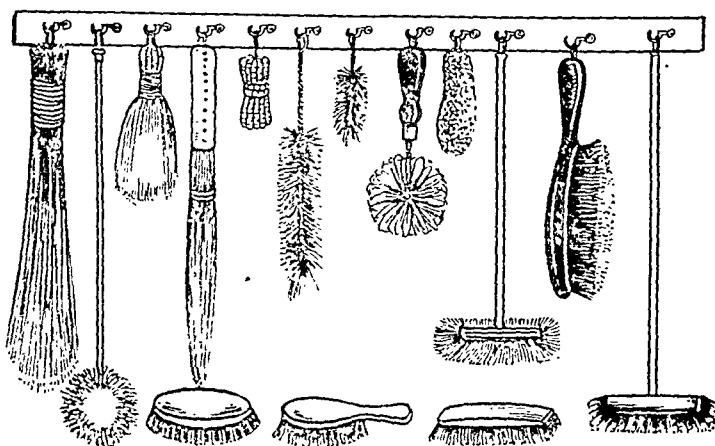
सफाई के लिए ब्रुश व झाड़ू

इससे कमरों की धुलाई भी की जाती है। सख्त ब्रुश से कुर्सी व तख्त पर चढ़े हुए गिलाफों को भी झाड़ा जाता है।

(iii) तार का ब्रुश फर्श की काई रगड़ने के लिए।

(ब) नरम—(i) फर्श की सफाई के लिए नरम ब्रुश तथा खजूर का या अन्य नरम झाड़ू।

(ii) छत व दीवारों के जाले व धूल झाड़ने के लिए नरम ब्रुश।

(iii) फर्नीचर को साफ करने का व पॉलिश करने का ब्रुश।

(स) जूतों का ब्रुश—नरम मिट्टी झाड़ने का पॉलिश के लिए।

(ड) रसोई के लिए विशेष ब्रुश—बर्तन साफ करने के लिए मूँज की सख्त ची या तोरई की जाली या सुतली का विशेष प्रकार का ब्रुश।

(च) बोतलें साफ करने के लिए ब्रुश।

(छ) फर्नीचर पर रोगन व वार्निश करने के ब्रुश
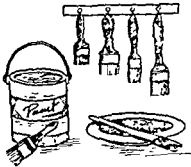
पॉलिश, वार्निश व रोगन करने के ब्रुश व बर्तन

३. सफाई के लिए बर्तन—

(अ) कूड़े के लिए बड़ा ढक्कनदार ड्रोन।

(ब) स्थान-स्थान से कूड़ा उठाने के लिए विशेष बर्तन (Dust pan)।

(स) बाल्टी व तसला धोने व पोंछने के लिए।

(द) मग या लोटा छोटी-मोटी सफाई के लिए।

(य) पॉलिश के लिए प्याला व तश्तरी आदि।

(र) भिन्न-भिन्न सामग्री रखने के लिए डिब्बे व बोतलें।

४. सफाई के लिए साधन-सामग्री—

(अ) साधारण सफाई के लिए—साबुन सोडा, राख, रेत, विम, स्प्रिट, अमोनिया, नमक, सफेदी तथा पैराफिन आदि।

(ब) दाग छुड़ाने के लिए—स्प्रिट, बैंजीन, तारपीन का तेल, सिरका, क्लोरीन, नीबू व हाइड्रोक्लोरिक ऐसिड आदि।

(स) जीव-जन्तु-नाशक—फिनाइल, फ्लिट, डी. डी. टी., मिट्टी का तेल, चूना।

(द) फर्नीचर, धातु, शीशा व पत्थर आदि को चमकाने के लिए—अनेक प्रकार के उचित मिश्रण, पालिश, वार्निश व क्रीम आदि जो बाजार में मिलते हैं। कुछ सरल साधन स्वयं भी बनाये जा सकते हैं जिनके नुस्खे निम्न हैं—

विशेष नुस्खे

(अ) फर्नीचर के लिए—

१. द्रवीय पॉलिश—यह तारपीन तथा लिनसीड का दो-दो भाग व मिथिलेटेड स्प्रिट और सिरके का एक-एक भाग एक बोतल में डाल कर मिलाने से तैयार होता है। यह फर्नीचर को उत्तम दशा में रखता तथा चमकाता है।

२. फर्नीचर क्रीम—हल्के रंग के बढ़िया पॉलिश वाले फर्नीचर को सुरक्षित व ठीक दशा में रखने के लिए अति उपयोगी है। इसके लिए ५० ग्राम सफेदा और १०० ग्राम मधुमक्खी के मोम को छोटा-छोटा छीलकर बर्तन में डालो और उस पर २५० ग्राम तारपीन का तेल छोड़ो। एक दूसरे बड़े बर्तन में ५० ग्राम उबलते पानी में २५ ग्राम Castile साबुन को घोलो और हल्की आँच पर एक और बर्तन में पानी गर्म होने को चूल्हे पर रक्खो तथा उसमें मोम व तेल का बर्तन घुलने के लिए रख दो। घुल जाने पर उतार लो। दोनों साबुन व मोम के घोलों को उस समय तक, जब तक वे क्रीम-सी न बन जाये, मिलाते जाओ। इसे ढक्कन वाले डिब्बों में बन्द कर के रखो।

(ब) धातु की पॉलिश—

१. २५० ग्राम उबलते पानी में ५० ग्राम मुलायम साबुन घोल कर ठण्डा करो। ५० ग्राम झामे के चूरे को एक बोतल में डाल कर उस पर साबुन का घोल डालो। २ बड़े चम्मच अमोनिया डाल कर डाट बन्द करो। प्रयोग करने से पहले हिलाओ। यह घोल ताँबे व पीतल की चीजों के लिए बहुत अच्छा है।

२. प्लेट पाउडर—३ भाग तनछट की सफेदी व १ भाग हौजरी द्वारा प्रयोग में आने वाला महावर मिला लो। सूखा अथवा गीला करके चाँदी, एनैमिल या स्टेनलैस की प्लेटों और अन्य बर्तनों को साफ करने व चमकाने के लिए बहुत ठीक है।

(स) चमकाने का मिश्रण—

दो भाग साबुन का चूर्ण और एक भाग झामक पत्थर (Pumice stone) का चूर्ण मिलकर बनता है। इसे कठोर धातुओं हौज, पत्थर व सीमेंट के फर्श आदि को साफ करने के लिए प्रयोग करना चाहिए।

(द) संगमरमर की क्रीम—

घुली सफेदी १०० ग्राम, झामक पत्थर का चूर्ण १०० ग्राम, सोडा २०० ग्राम सबको उबलते पानी में डाल लेई-सी बना कर संगमरमर के धब्बे छुड़ाने के काम में लाओ। मिश्रण को २०-२२ घण्टों के लिए धब्बे पर छोड़ देना चाहिए तथा फिर धो देना चाहिए।

सफाई के सामान के लिए डिब्बा—सफाई की विभिन्न सामग्री व सामान आदि को एक साथ रखने व लाने-ले जाने की सुविधा के लिए यदि एक लकड़ी का डिब्बा उपलब्ध हो तो अति लाभदायक है। इसमें सब आवश्यक सामान एक साथ रखा जाता है व व्यवस्थित रहता है।

विविध कमरों को सफाई

बैठक, शयन-कक्ष, भोजन-कक्ष व अन्य मुख्य कमरों की सफाई

(अ) प्रतिदिन—खिड़की-दरवाजे खोलकर कमरे का सब सामान यथास्थान सजा दीजिए। फूलदान, सिगरेट की राख की ट्रे, रद्दी की टोकरी आदि बाहर रख दीजिए। फिर सफाई करने का सब सामान अन्दर लाकर दरवाजे-खिड़की बन्द कर दीजिए। उसके पश्चात् कमरे के सब सामान को पूरी तरह झाड़िए-पोंछिए। कुर्सियों की गद्दियाँ, बिस्तर का सामान, मेजपोश आदि झाड़िए व विधिपूर्वक लगा दीजिए। कालीन, दरी यदि छोटे हैं तो उठाकर बाहर रख दीजिए। फर्श को ब्रुश से साफ करिये। इसके पश्चात् कुछ समय के लिए जब धूल बैठे, आप फूल-दानों, ऐश-ट्रे व चिमनी आदि की ओर ध्यान दीजिए। फूलदानों में फूल का पानी बदलिए, साफ कर रखिए, घड़ी में चाभी लगाइये, दरी-कालीन बिछाइये व खिड़की दरवाजे खोल दीजिए।

(ब) प्रति सप्ताह—प्रतिदिन की भाँति ही खिड़की-दरवाजे खोलिए। कालीन, दरी यदि हल्के हों तो बाहर ले जाकर झाड़िये, अन्यथा सख्त ब्रुश से साफ करिये और गोल लपेट कर एक ओर कर दीजिये। सोफा व गद्दियों तथा अन्य सब फर्नीचर को साफ करके एक ओर जमा करके चादरों से ढक दीजिए। बिस्तरों को झाड़ कर बाहर धूप में फैलाइए व चादर व गिलाफ बदलिए। किताबों की खुली अलमारी के लिए तो इस प्रकार ढकना बहुत ही आवश्यक है। कमरे के हल्के व बढ़िया परदों को झाड़िये व सोफा या पलंग पर ही अन्य सामान सहित ढक दीजिए। अब सबसे पहले छत को लम्बे बाँस के ब्रुश से साफ करिये व मिट्टी तथा जाले छुड़ाइए। फिर दीवारों के ऊपरी भाग को भी इसी ब्रुश से साफ करिए। तत्पश्चात् छोटे ब्रुश व झाड़न से दीवारों का नीचे का भाग झाड़िए। अन्त में फर्श को ब्रुश से साफ करिए। जब तक धूल बैठे तब तक फर्नीचर व अन्य सजावट के सामान को कमरे के [illegible] झाड़-पोंछ

कर अच्छी तरह साफ करिये। उसके पश्चात् कमरे के बल्ब, लैम्प-शेड, तसवीरें, खिड़की-दरवाजे, शीशे, कुण्डे-सांकल, परदे के ब्रेकेट तथा बिना ढके फर्नीचर आदि सब को साफ करिये। फर्श को साबुन के घोल में भीगे कपड़े से धो कर, फिर सूखे कपड़े से पोंछ डालिए व सूखने दीजिये। अब सब साज-सामान यथासम्भव लगा दीजिए। फर्श सूखने पर कालीन-दरी फर्श पर बिछाइये। परदे ठीक से टाँगिये।

(स) प्रतिवर्ष—कमरे का सब हटने वाला सामान—फर्नीचर, परदे, दरी, कालीन, सजावट का सामान व किताबें आदि बाहर निकाल कर कमरा खाली करिये। तसवीरें भी दीवारों से उतार कर कमरे से बाहर पहुँचाइये। दीवार में बनी अलमारियों, ताक आदि को भी खाली करिये। यदि ऐसा कोई सामान हो जो बाहर निकालना अति कठिन हो उसे दीवारों से हटा कर कमरे के बीच में रखकर अच्छी तरह मोटे कपड़े से ढक दीजिए, ताकि कमरे की सफाई करने में खराब न हो।

छत व दीवारें—दरवाजे-खिड़की ढक कर कमरे में प्रतिवर्ष पुताई कराना ठीक रहता है। इसके लिये दीवारों व छत को खूब झाड़िये व फिर उनकी पुताई अपनी रुचि व योजनानुसार उचित रंग में कराइये।

फर्श—पुताई के पश्चात् फर्श को झाड़ू से साफ करके सोड़ा या साबुन के घोल से धुलवाइये व पुछवाइए फिर उसे पूर्ण रूप से सूखने दीजिये।

दरवाजे-खिड़की—पहले झाड़िए, पोंछिये व धोइये। फिर उचित पॉलिश या वार्निश का प्रयोग कर चमकाइये। काँच को भी धो-पोंछ कर चमका दीजिये।

चटखनी, कब्जे तथा धातु के अन्य भाग—धातु के सब सामान को खूब अच्छी तरह साफ कर उचित साधनों द्वारा चमकाइये।

जब तक कमरे की सफाई, पुताई आदि हो रही हो, तब तक कमरे से बाहर निकाले हुए सामान की सफाई तथा मरम्मत आदि करना चाहिए।

अलमारियाँ—अलमारियों का सामान बाहर निकाल कर जो कागज या कपड़ा उनमें बिछा हो उसे बदलिए। दरवाजों के अन्दर की ओर भी खूब पोंछ कर साफ करिये। सब अलमारी के सामान को छाँट-छाँट कर विधिपूर्वक सजा दीजिए। चीजें लगाते समय ध्यान रखिए कि अधिक काम आने वाली वस्तुएँ निकट व सामने रहें, एक सी वस्तुएँ साथ रहें व कभी-कभी काम आने वाली वस्तुओं पर नाम की चिट लग जाय जिससे समय पर आसानी से मिल सकें। किताबों की अलमारी साफ करते समय ध्यान रहे कि प्रत्येक किताब बड़ी सावधानी से झाड़ी जाय तथा ठीक स्थान पर विषय व उपयोग के अनुसार रखी जाय। वस्त्रों की अलमारियों की सफाई में यह अच्छा रहता है कि सब वस्त्रों को छाँटकर आवश्यकतानुसार मरम्मत या परिवर्तन करके विधि-पूर्वक लगाया जाय।

दराज—मेजों की दराजों को निकाल कर खाली करते समय सब वस्तुओ को भाड़िए व पोंछिए। व्यर्थ वस्तुओं को अलग करती जाइये। काम की वस्तुओं को छाँट-छाँट कर व साफ करके एक ट्रे मे लगाकर ढक दीजिए। दराजों को बाहर ले जाकर उलटिये, भाड़िये व पोछिये। धातु के भागो पर और दराज पर पॉलिश करिये, दराजो में नये कागज बिछाइये। काम की सब वस्तुओं की विधिपूर्वक लगाइये, ताकि वस्तुओं के प्रयोग में पूर्ण सुविधा हो।

बिजली के बल्ब व शेड—गीले व सूखे कपड़े से पोंछ कर साफ करिये।

तसवीरें—तस्वीरो को साफ करने व सुधारने के लिए प्राय. उसके पीछे का कागज, टाँगने की डोरी व कभी-कभी उसके चारो ओर कागज भी बदलना पड़ता है। तसवीरो के फ्रेम अलग करके साफ करिये व प्रकारानुसार पॉलिश से चमकाइए। तसवीर को साफ करके उसके चारों ओर उपयुक्त कागज लगाइये। शीशे को खूब साफ करके चमकाइये। फिर सब भागो को इकट्ठा करके उचित रूप से फ्रेम मे जड दीजिए, आवश्यकतानुसार नई डोरी भी लगाइये।

दरी-कालीन—फर्श पर बिछाने वाले दरी-कालीन आदि को पूर्ण रूप से भाड़िये। यदि प्रति सप्ताह कालीन-दरी पूर्ण रूप से साफ न हुए हो तो आवश्यक है कि इस समय उन्हें घर से बाहर ले जाकर सख्त ब्रुश से ऊपर-नीचे दोनो ओर से भाड़ा जाय। यदि इस प्रकार पूर्णतया साफ न हो तो उठा कर उल्टी ओर से लकडी से पीट कर धूल भाड़ी जा सकती है।

परदे—परदो व अन्य भारी गिलाफो आदि को धोइये या धुलवाइये। धुलने के पूर्व आवश्यकतानुसार मरम्मत भी करनी चाहिए। यदि रंग खराब हो गया हो तो फिर से पक्का रंग करवा लेना चाहिए।

फर्नीचर—समस्त फर्नीचर को भाड़िए, पोछिए तथा नरम कपड़े व साबुन से साफ करिये और उचित पॉलिश करिये।

अन्य सामान—सजावट तथा प्रयोग के अन्य सामान को भी उसके प्रकार के अनुरूप विधिपूर्वक खूब साफ करिए। उदाहरणार्थ काँच या शीशे की, धातु की, लकड़ी व कपडे की वस्तुओं को भिन्न रीतियो से साफ करना होगा। कमरा व कमरे का अन्य सामान ठीक हो जाने पर सामान को कमरे में पुन: लगाइए। यह कदापि [illegible] नही कि पुन. पूर्ववत् ही सामान की व्यवस्था की जाय, [illegible] सामान को [illegible] व व्यवस्था से सजाने से एक प्रकार की नवीनता व हर्ष का अनुभव होता है।

गृह के अन्य स्थानों की सफाई

निवास के कमरो, रसोईघर व स्नानगृह के अतिरिक्त घर के [illegible] कोठरियाँ, गोदाम, बराण्डे, आँगन व सीढ़ियाँ आदि को भी पूर्ण [illegible] व्यवस्थित करना चाहिए। मकान की बाहरी दीवारों व छत की [illegible]

रम्मत, सफाई व पुताई करवाना आवश्यक है। इसी प्रकार मकान का अहाता
तिवर्ष एक बार पूर्ण रूप से साफ़ व व्यवस्थित किया जाना चाहिए।

गृह की विभिन्न वस्तुओं की सफाई

कमरों की सफाई करने की विधि के वर्णन से यह स्पष्ट है कि कमरों की
वारों, छत व फर्श की सफाई के अतिरिक्त यह आवश्यक है कि कमरे की प्रत्येक वस्तु
स्वच्छ हो। घर की विभिन्न वस्तुएँ विविध पदार्थों की बनी होती हैं, अतः यह उचित
प्रतीत होता है कि हम गृह की विविध वस्तुओं को साफ़ करने की मुख्य विधियों पर
विचार करें।

लकड़ी का सामान

गृह में लकड़ी की वस्तुएँ जिस प्रकार की होती हैं—उदाहरणार्थ साधारण
या सफेद लकड़ी की, पालिश की हुई, वार्निश की हुई, रोगन व इनैमल की हुई।
साधारणतः सभी प्रकार की लकड़ी गर्म पानी व कपड़े से साफ़ हो जाती है। अधिक
गन्दी होने पर यदि उपर्युक्त विधि से साफ़ न हों तो निम्न विधियाँ प्रयोग में लाई
जा सकती हैं—

सफेद लकड़ी—गर्म पानी से भिगोकर, गर्म ब्रुश या कपड़े में साबुन लगाकर
हल्के-हल्के रगड़िए। साबुन को गर्म पानी से धोकर दूर करिए और लकड़ी को ठण्डे
पानी से पोंछकर फिर सुखाइए। लकड़ी को सुखाने के लिए धूप में न रखिए। इससे
लकड़ी का रंग फीका पड़ जाता है और लकड़ी में दरारें पड़ सकती हैं। खुली हवा व
छाया में सुखाने से रङ्ग निखर जाता है।

पॉलिश की हुई लकड़ी—आधा किलो गुनगुने पानी में एक बड़ा चम्मच सिरका
मिलाकर घोल तैयार कर लकड़ी को कपड़ा भिगो-भिगो कर धोइए। धोने के बा[द]
लकड़ी को कुछ समय सूखने दीजिए। फिर कोमल, बेरोएँ वाला एक चौपड़ा लेक[र]
लकड़ी की सतह पर लकड़ी की पॉलिश थोड़ी-थोड़ी लेकर रगड़िए। अथवा लक[ड़ी]
पॉलिश में भीगी रुई की पोटली बनाकर रगड़िए। एक बार में थोड़ी पॉलिश [...]
चाहिए, तत्पश्चात् एक और मुलायम कपड़े से हल्के-हल्के, रेशे के साथ मल कर
चमकाइए।

वार्निश की हुई लकड़ी—ऐसी लकड़ी को साफ़ करने के लिए एक [...]
पानी में एक बड़ा चम्मच पैराफिन डाल कर कपड़े से धो डालिए। धोने के [...]
लकड़ी को सूखने दीजिए और फिर खूब रगड़ कर चमकाइए। आवश्यकतानुसा[र]
वार्निश करिए।

रोगन या इनैमल की हुई लकड़ी—प्रायः उचित रूप से पोंछने [...]
क्रीम के प्रयोग से ठीक रहती है। पूर्ण सफाई के लिए इसको गुनगुने पानी [...]
घोल से धोइए। लकड़ी में यदि धब्बे हों तो थोड़ी पैराफिन डालने से [...]

धोते समय नरम कपड़े का प्रयोग कीजिए। भली प्रकार धोने के पश्चात् चमक लाने के लिए साफ पानी में थोड़ा सिरका मिलाकर धोइए, सूखे कपड़े से रगड़िए व सुखाइए। सूखने पर कपड़े से रगड़ कर चमकाइए। यदि रोगन खराब हो गया हो तो फिर से रोगन कर दीजिए। यद्यपि विभिन्न प्रकार की लकड़ी के सामान को विभिन्न रीतियों से साफ किया जाता है, तथापि कुछ ऐसे साधारण नियम हैं जो सब प्रकार की लकड़ी की सफाई में लागू होते हैं—

१. सर्वप्रथम लकड़ी को धूल से मुक्त करने के लिये साफ व नरम कपड़े से पोंछना चाहिए।
२. *गर्म पानी व साबुन से लकडी को धोने से ऊपरी मैल व धब्बे छूट* जाते हैं।
३. एक बार में थोड़े स्थान को गीला करिए जिससे लकडी पानी न सोखे।
४. *चमकाने से पहले लकड़ी सर्वथा सूख जानी चाहिए।*
५. साफ कोमल कपड़े से खूब जोर से *जल्दी-जल्दी रगडने से ही बढिया* चमक आती है।

धातु का सामान

जिस प्रकार गृह में लकडी का सामान विविध प्रकार का हो सकता है *उसी प्रकार विभिन्न धातुओं का भी। ये धातुएँ दो वर्गों मे विभाजित की जा* सकती हैं—

१. कोमल—जिनमे सरलता से खरोंच पड जाते हैं (चाँदी, ताँबा, इनैमल, कलई)।
२. कठोर—जिन पर खरोंच नही पड़ते (लोहा, इस्पात, पीतल आदि)।

दोनों प्रकार की धातुओं को साफ करने मे कुछ साधारण बातो को ध्यान मे रखना आवश्यक है—

१. फर्श या मेज जिस पर रखकर धातु की वस्तुएँ साफ की जाएँगी उन्हें काम आरम्भ करने के पूर्व रद्दी कागज या कपड़े से ढक कर गन्दा होने से बचाइए।
२. आरम्भ में ही गर्म साबुन के घोल मे धोकर चिकनाई व मैल को छुडाना आवश्यक है।
३. पॉलिश करने व चमकाने से पहले बर्तन को पूर्णतः सूखने दीजिए।
४. पॉलिश लगाकर बर्तन कुछ समय छोड़ दीजिए।
५. फिर सूखे कपड़े से रगड़ कर चमकाइए।

अब हम अगले पृष्ठों मे विभिन्न धातुओं को साफ करने के भिन्न-भिन्न तरीकों पर विचार करेंगे।

चाँदी—वायुमण्डल में कुछ ऐसे तत्त्व हैं जो चाँदी की वस्तुओं की रंगत विगाड़ देते हैं। इसी से चाँदी का सव सामान विशेष कर हवा में खुला हुआ सामान, समय-समय पर साफ किया जाना चाहिए। इसके लिए साफ भगोने में एक किलो पानी में एक छोटा चम्मच नमक और एक चम्मच सोडा डालिए। पानी को उवाल कर चाँदी की चीजें उसमें छोड़ दीजिए। पानी पकने दीजिए। चार-पाँच मिनट में ही चीजें निखर जायेंगी। तव वर्तन नीचे उतार कर वस्तुओं को निकाल कर सावुन व साफ पानी से धोइए। अन्त में एक नरम, साफ कपड़े से पोंछिए व पॉलिश करिए।

चाँदी साफ करने के वने-वनाये पॉलिश वहुवा चाँदी को नष्ट करते हैं। इसलिए केवल वही पॉलिश प्रयोग में लाना चाहिए जो सबसे कम धातु खुरचता हो। उसे एक नरम व साफ कपड़े के टुकड़े से मलना चाहिए। इसके पश्चात् सावुन से धोना चाहिए व फिर पोंछ कर सुखा डालना चाहिए। नक्काशी के सामान को छोटे नरम व्रुश से साफ करना चाहिए।

पीतल—पीतल की वनी वस्तुएँ वहुत शीघ्र मैली-सी हो जाती हैं और उनमें धव्वे भी पड़ जाते हैं। इनको साफ करने के लिए नीवू के टुकड़े पर नमक छिड़क कर पीतल की गन्दी व धव्वेदार चीजों पर खूव रगड़िये। कुछ देर ऐसे ही सूखने दीजिए, फिर उवलते हुए पानी में धोकर सुखाइये व चमकाइये। इमली या कच्चा आम भी पीतल को साफ करने व चमकाने में सहायक होते हैं।

इनके अतिरिक्त वने-वनाये पॉलिश, जैसे व्रासो, मँहगे तो होते हैं किन्तु सजावट की चीजों के लिये वहुत अच्छे रहते हैं। पॉलिश को एक नरम कपड़े से सव भागों पर वरावर लगाकर साफ कपड़े से पोंछिये व चमकाइये।

तांवा—तांवे की वस्तुए साफ करने के लिये चूने की सफेदी वहुत लाभदायक है। वर्तन को पानी में गर्म कर यदि सफेद महीन चूने को भिगोकर एक चीथड़े से खूव रगड़ा जाय और फिर गर्म पानी में धोकर सुखा दिया जाय तो प्रायः निखर जाता है। चूना, सोडा व सिरका काम में लाने से तो वहुत गन्दे तांवे के वर्तन भी साफ किए जा सकते हैं।

इस्पात—इसके लिये या तो गर्म पानी में सफेदी या अमोनिया का घोल वना कर प्रयोग में लाना चाहिये या कोई विशेष पॉलिश। रगड़ने वाली या खुरदरी सामग्री इस्पात की, विशेषतः धव्वे-रहित इस्पात (Stainless Steel) की वस्तुएँ साफ करने के काम में न लाइए। इनको गर्म पानी व सावुन से धोइए व ठीक तरह सुखाकर नर्म कपड़े से रगड़ कर चमकाइए।

वढ़िया चाकुओं के व्लेड जो प्रायः इस्पात के ही होते हैं, असावधानी से गन्दे हो सकते हैं। चाकू साफ करते समय ध्यान रखिये कि उनके दस्तों को जो लकड़ी, हाथीदाँत या अन्य किसी पदार्थ के हो सकते हैं, पानी में न डाला जाय। दस्तों को

केवल भीगे कपडे से पोछिये। चाकू के ब्लेड की सफाई के लिए झामे का चूरा व कच्चे आलू का प्रयोग करिये। आलू के टुकड़े कर, झामे का चूरा लगा कर ब्लेड रगड़िए। धब्बे छूट जायेंगे। धोकर सुखाइये। चाकू, सूटकेसों के ताले व कुण्डे आदि यदि कुछ दिन प्रयोग में न लाने हों तो मीठे तेल में चुपड़कर रखना चाहिए।

टीन—साबुन व पानी से धोकर सुखाना चाहिए। जला खाना छुड़ाने के लिए कुछ घण्टे पानी मे भीगा रहने दीजिये, फिर पानी मे सोडा डालकर उबालिये, तत्पश्चात् हल्के से रगड़ कर साफ करिये, ताकि ऊपरी तह न निकल जाय, क्योंकि उसके बिना ऐसे बर्तनों में जग लगने लगता है।

एल्यूमिनियम—क्षार के प्रयोग से एल्यूमिनियम काला हो जाता है, इसलिए सोडे से एल्यूमिनियम को साफ नही करना चाहिए। साबुन के हल्के घोल मे साफ करने से साधारण गन्दगी छूट जायगी। किन्तु बहुत गन्दा होने पर या चूने की तह छुड़ाने के लिए उबलते पानी मे थोडा सिरका या नीबू का रस मिलाकर बर्तन को उसमें भिगोना चाहिये। यदि बर्तन मे खाना इतना जल गया हो कि रगड़ने से न छूटे तो उसे कुछ पानी या नमक डालकर आँच पर रखें जिससे जले हुए खाने की तह छूट जाय। विशेष गन्दगी या चूना छूट जाने के पश्चात् अन्य धातुओ के समान ही धो-पोंछ कर सुखाइये।

क्रोमियम या कलईदार पदार्थ—क्रोमियम प्लेटेड सामान पर रगडने व खरोंचने वाले पदार्थों का प्रयोग नही करना चाहिये; क्योकि उसकी ऊपरी तह व तनछट आसानी से छूट सकती है। एक नरम कपडे से साबुन व तनछट की सफेदी लगा कर केवल पोंछने व धोने से ही ऐसा सामान साफ रहता है। धोने के पश्चात् सावधानी-पूर्वक उसी समय साफ कपड़े से पोछकर सुखा डालना चाहिए नही तो पानी के दाग पड़ जाते हैं।

लोहा—वातावरण की नमी लोहे के सामान पर अन्य धातुओ से अधिक प्रभाव डालती है। नमी के कारण लोहे पर बहुत जल्दी जग लग जाता है। जग लगने से बचाने के लिए लोहे के सामान पर सरसों या मिट्टी का तेल लगाकर रखना चाहिए। जंग छुड़ाने के लिए भी चिकनाई का प्रयोग किया जाता है।

शीशे का सामान

खिड़कियों व दरवाजों के शीशे—शीशो को गीले कपडे व साबुन से धोकर या Chamois leather से गर्म पानी मे भिगोकर धोने के बाद सुखाइये। सूखे शीशे या मिथिलेटेड स्प्रिट को चिथड़े या बारीक कागज (Tissue paper) मे लगाकर रगड़ने से शीशे चमक जाते हैं। साफ पानी मे सिरका मिलाकर धोने से भी यह स्वच्छ हो जाता है या एक अखबार के कागज की गद्दी-सी बनाकर उस पर थोड़ी [illegible] लगाइए। शीशे पर लम्बाई व चौडाई दोनो ओर इस गद्दी से विधिपूर्वक [illegible] पर विशेष ध्यान दीजिये, फिर साफ अखबार से रगडकर चमकाइये या [illegible]

गुनगुना पानी लेकर थोड़ी पैराफिन मिलाइए, फिर एक झाड़न को इस पानी में भिगो-कर निचोड़िये व उससे शीशे को रगड़िये। एक साफ झाड़न या अखबार के कागज से पोंछकर चमकाइये।

दर्पण व तसवीरों के शीशे चमकाने के लिए भी यही विधि प्रयोग में लानी चाहिए। किन्तु ध्यान रहे कि गीले कपड़े से पोंछने से पहले कपड़ा अच्छी प्रकार निचोड़ लिया जाय, ताकि पानी शीशे के किनारों पर, पीछे व भीतर न चला जाय। शीशे की बोतलें व फूलदान साफ करने के लिए साबुन व गर्म पानी प्रयोग में लाइए। धब्बे छुड़ाने के लिए एक अखबार के कागज पर साबुन मल कर उसके टुकड़े-टुकड़े करके गर्म पानी के साथ बोतल में भर दीजिए। बोतल को थोड़ी-थोड़ी देर बाद हिलाते रहिये जब तक कि दाग छूट न जाय। तत्पश्चात् ठण्डे साफ पानी से धोकर किसी बर्तन में उलट कर सूखने को रख दीजिए जिससे गिरे नहीं। फूलदानों में यदि साबुन का चूरा व पानी कुछ दिन छोड़ दिया जाय तो सब धब्बे आसानी से छूट जाते हैं अथवा फूलदान में एक चम्मच सिरका, नमक व चाय की पत्ती डाल कर पानी से भर दीजिए व थोड़ी-थोड़ी देर बाद हिलाइए। दाग छूट जायेंगे। काँच के बर्तनों को साफ करने के लिए गुनगुने पानी में थोड़ी अमोनिया की बूँदें डालकर उसमें भिगो दीजिये, फिर कपड़े या कूँची से रगड़ कर साफ करिये व पोंछ कर सुखाइए। चमक के लिए कपड़े में लगाने का नील पानी में मिलाया जा सकता है। कॉफी या चाय का दाग छुड़ाने के लिए पहले सिरका लगा कर, फिर एक गीले कपड़े में नमक लगा कर बर्तन को रगड़िए, धब्बे छूट जायेंगे।

बोतलें व अमृतबान आदि सँकरे मुँह के बर्तनों को साफ करने के लिए बोतल साफ करने का ब्रुश आवश्यक है। गुनगुने पानी में साबुन घोल कर बर्तन में भरिए व ब्रुश अन्दर डाल कर सब ओर घुमा कर साफ करिये। थर्मस बोतल को साफ करने की भी यही विधि है। दूध या चाय का प्रयोग करने के पश्चात् यदि साबुन या सोडे के घोल में थोड़ी अमोनिया की बूँदें भी मिला ली जायँ तो उत्तम रहता है। बोतलें साफ करने का ब्रुश न होने पर किसी पतली लकड़ी, सरकण्डे या करछी की डण्डी पर कपड़े का चीथड़ा या नर्म कागज लपेट कर ब्रुश के समान प्रयोग किया जा सकता है अथवा बोतल में कागज के छोटे-छोटे टुकड़े व चाय की पुरानी पत्ती डाल कर, साबुन के घोल से भर कर हिलाते जाइये। दाग-धब्बे व गन्दगी छूट जायगी।

बिजली के बल्ब गीले व सूखे कपड़े से बहुत सावधानी से पोंछ कर चमकाना चाहिए।

चीनी मिट्टी या इनैमिल का सामान

चीनी मिट्टी के नये बर्तनों पर एक प्रकार का चिकना व चमकीला पालिश रहता है, जिसमें सफाई के खुरदरे साधनों (राख, मिट्टी आदि) के प्रयोग से खरोंचें

पड़ जाती हैं और तब ऐसे बर्तनों को पूर्णतः रखना कठिन हो जाता है। चाय या अन्य भोजन के धब्बे छुड़ाने के लिए कभी-कभी किसी रगड़ने वाले साधन, जैसे विम की सहायता ली जा सकती है। चीनी के बर्तनों की सफाई के लिए साधारणतया पानी व साबुन ही पर्याप्त है। पानी में लवणों की अधिकता से यदि चीनी के बर्तनों में पीलापन-सा आ जाय तो वह किसी अम्ल, जैसे सिरका के प्रयोग से छुड़ाया जा सकता है।

इनैमल के जग, तसला या बाल्टी या खाने के बर्तन भी चीनी के बर्तनों के समान ही साफ किये जाते हैं। इनको किसी रगड़ने वाले साधन अथवा पैनी वस्तु के प्रयोग से हानि पहुँचती है, क्योंकि खरोंचों के अतिरिक्त सतह पर की इनैमल की तह भी उखड़ सकती है।

प्लास्टिक का सामान

प्लास्टिक के बर्तन व शीशियों के साथ ही परदे, फर्नीचर, गिलाफ व मेजपोश आदि भी प्रयोग में आते हैं। प्लास्टिक की सख्त या लचकदार वस्तुओं को साफ करने के लिए एक भीगे कपड़े में साबुन लगा कर पोंछिए, फिर साफ ठण्डे पानी में धोकर व साफ गीले कपड़े से पोंछ कर सूखे कपड़े से रगड़ कर चमकाइए। रबर के सामान, अधिकांश प्लास्टिक के भी, गर्मी से पिघल जाते हैं, इसलिए ठण्डे पानी का ही प्रयोग किया जाना चाहिए। रगड़ने वाले साधन भी प्लास्टिक की सफाई करने के लिए उपयुक्त नहीं।

पत्थर का सामान

सीमेन्ट, पत्थर या टाइल के फर्श आदि को प्रतिदिन झाड़-बुहार कर धूल से साफ रखिए। समय-समय पर उसे पानी व साबुन से धोइए। साबुन के स्थान में सोडा भी प्रयोग किया जा सकता है। यदि फर्श अधिक गन्दा हो तो घिस-खुरच कर धोना चाहिए। इसके लिए सख्त तिनकों का ब्रुश या तार का ब्रुश काम में आयेगा। फिर साफ पानी से ठीक तरह धोकर अच्छी प्रकार सूखे फर्श के झाड़न से पोंछ कर सुखा डालिए। संगमरमर की खिड़की की सिलों या मेज आदि को साफ रखने के लिए गीले कपड़े में साबुन लगा कर पोंछिए। फिर साफ कपड़े से धो कर सुखाइए। संगमरमर की क्रीम लगा कर २४ घण्टे तक छोड़ दीजिए। इसके बाद पॉलिश करने से चमक आ जायगी। ऐसिड प्रयोग न करिए।

सफाई सम्बन्धी कुछ ध्यान देने योग्य बातें

सफाई का स्तर—यद्यपि अपने विचार में प्रत्येक गृहिणी [illegible] रखती ही है, तथापि देखने में कोई घर अधिक साफ लगता है [illegible] साफ घर वाली गृहिणी को बताया जाए कि उनके घर में [illegible] तो उसकी समझ में बहुधा यह नहीं आता। कई बड़े घरों [illegible]

दावतों में वर्तन इतने गन्दे होते हैं कि भोजन करना प्रायः कठिन-सा हो जाता है। जहाँ प्लेटों के किनारों के उभरे भागों में गन्दगी भरी होती है, चम्मचों में सूखा हुआ खाना तक लगा रहता है, चाय के वर्तन व गिलास आदि पर भी गन्दे धव्वे होते हैं, वहाँ पूर्णतया साफ बर्तनों में चमक का तो नाम ही नहीं। कुछ घरों में फर्श पर भाड़ू भी दी जाती है, प्रतिदिन धुलता भी है, परन्तु नाम-मात्र को ही। गन्दगी की कई तहें उस पर सदैव जमी रहती हैं। दीवारें तो डेढ़-डेढ़ फुट तक फर्श की धुलाई के गन्दे पानी के छीटों से सर्वत्र ढक जाती हैं। दरवाजों, खिड़कियों पर तो महीनों की धूल जम चुकी होती है। ऐसे घरों में प्रायः इन वातों की ओर कभी किंचिन्मात्र भी ध्यान नहीं जाता। यही सफाई का निम्न स्तर है। वह व्यक्ति जिसको उच्च दर्जे की सफाई का अभ्यास व अनुभव है, जो व्यक्ति सुव्यवस्थित व साफ घर में पला है, जिसमें स्वच्छता की भावना विकसित हो चुकी है, जिसको सुव्यवस्था व नियमितता की आदतें पड़ी हुई हैं, जो घर की स्वच्छता व सुन्दरता का मूल्य समझता है, वह ऐसे अपूर्ण सफाई के वातावरण में तुरन्त ही वेचैन-सा होने लगता है।

यह स्पष्ट है कि प्रत्येक गृहिणी का सफाई का स्तर भिन्न है। जहाँ एक गृहिणी अपने अपूर्ण स्वच्छ गृह से पूर्ण सन्तुष्ट है, वहाँ कहीं अधिक स्वच्छ गृह की स्वामिनी अपने गृह की स्वच्छता से असन्तुष्ट हो सकती है। यह सफाई के स्तर की भिन्नता नौकर-नौकर में भी पाई जाती है। आप दो नौकरों से एक समान गन्दे काँच के गिलास धुलवाइए और उनके सफाई के स्तरों में अन्तर देखिए। आप एक साधारण नौकर के व अपने स्वयं के साफ किये हुए गिलासों की तुलना कीजिए तथा अपने व नौकर के सफाई के स्तर में भिन्नता पहचानिए। इन उदाहरणों से तात्पर्य यह निकलता है कि गृहिणी के सफाई के स्तर को ऊँचा करने से ही पाश्चात्य देशों की भाँति गृहों को पूर्णतया स्वच्छ व आकर्षित वनाया जा सकता है।

योजना व कार्यक्रम के अन्तर्गत विधिवत् तथा क्रमबद्ध सफाई करना

घर की सफाई के स्तर को ऊँचा करने के लिए यह अति आवश्यक है कि योजनाबद्ध सफाई की व्यवस्था की जाय। गृहिणी को चाहिए कि जितने भी घर के सफाई सम्बन्धी कार्य हैं, उनकी सूची वना कर प्रत्येक के लिए उचित समय नियोजित करे तथा सफाई का पूर्ण कार्य-क्रम वनाए। ऐसा करने से कोई काम छूटेगा नहीं तथा सभी प्रकार की सफाई सरलता से हो सकेगी।

सफाई के विभिन्न कार्यों को सुचारु रूप से करने हेतु तीन और वातों को ध्यान में रखना चाहिए—

(१) भिन्न-भिन्न कार्यों के करने का क्रम निश्चित करना, अर्थात् किस वस्तु की सफाई पहले होनी चाहिए और किस की उसके पश्चात्। जैसे कमरे की साप्ताहिक सफाई में छत व दीवारों के ऊपरी भाग को पहले साफ करना चाहिए, दीवारों के निचले भाग व वस्तुओं व फर्श को उसके पश्चात्।

(२) एक प्रकार के कार्य एक साथ किये जायें, जैसे लकड़ी के सभी सामान की सफाई व वार्निश एवं पॉलिश आदि एक साथ हो जायें तो सुभीता रहेगी। रसोई-गृह में कांच व चीनी के बर्तन एक साथ धोने से, समय व परिश्रम दोनों का बचाव होगा तथा उनकी सफाई भी अधिक अच्छी होगी।

(३) विभिन्न वस्तुओं की सफाई उचित विधि से करनी चाहिए। जैसे लकड़ी के फर्नीचर को पॉलिश करते समय पॉलिश लगा कर रेशे के साथ-साथ ही कपड़े को रगड़ कर चमकाना चाहिए। अधिक धूल वाले कमरों की सफाई के समय भिन्न वस्तुओं को धूल से बचाने के लिए फर्श पर सीला लकड़ी का बारीक बुरादा या चाय की भीगी हुई पत्ती डालकर ब्रुश लगाया जाय तो धूल नहीं उड़ेगी तथा फर्श भी अधिक साफ होगा। इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु व स्थान की सफाई उचित विधि से ही करनी चाहिए।

परिवार का सहयोग—उचित रूप से यदि घर के सभी स्थानों व वस्तुओं की सफाई की जाय तो सफाई का काम ही इतना अधिक हो जाता है कि गृहिणी परिवार के सहयोग के बिना अपने भरसक प्रयत्न से भी पूर्ण सफल नहीं हो सकती। सफाई के कई ऐसे दैनिक कार्य हैं जिनमें घर के अन्य व्यक्ति सरलता से हाथ बँटा सकते हैं, जैसे अपना बिस्तर बिछाना व उठाना, अपने वस्त्रों, जूतों व अन्य वस्तुओं को विधिपूर्वक साफ करना व सजा कर रखना तथा नौकर न होने की दशा में अपने कमरे की पूर्ण सफाई करना। पाश्चात्य देशों में जहाँ प्रायः घरों में नौकर होते ही नहीं, रात के भोजन के पश्चात् सब मिल कर खाने की मेज साफ करते हैं, बर्तन आदि भी गृहिणी के साथ साफ करते हैं तथा सबके पश्चात् मिलकर बैठक में मनोरंजन व विश्राम करते हैं। यदि भारतीय गृहों में भी सभी सदस्यों की घर की स्वच्छता में रुचि हो जाय तो वे लोग घर को यथासम्भव गन्दा होने से बचाने का प्रयत्न ही न करेंगे, वरन् गृहिणी की आवश्यकतानुसार व अपनी योग्यतानुसार सहायता करना कर्तव्य समझेंगे।

गन्दगी कम करना—एक और भी बात समझने योग्य है। हमारे घरों में घर वालों की असावधानी से गन्दगी इतनी बढ़ जाती है कि घर को स्वच्छ रखना वास्तव में गृहिणी के लिए असम्भव हो जाता है। उदाहरणार्थ यदि दरवाजों के पास रखे पायदान का उचित प्रयोग नहीं किया जाता तो फर्श को प्रातःकाल साफ करने से क्या लाभ ? वह तो थोड़े ही समय में पुनः गन्दा हो जायगा। गृहिणी स्वयं भी बहुधा नासमझी से सफाई का काम बढ़ा लेती है, सब्जी व फल काटते समय छिलके फर्श पर डालने से, छत व दीवारें झाड़ते समय नीचे रखी हुई वस्तुएँ व फर्नीचर आदि को न ढकने से उसकी सफाई का काम बढ़ जाता है। डिब्बे आदि से खाद्य-पदार्थों जैसे चीनी, आटा, दालें, असावधानी से निकालने से कुछ आस-पास गिर जाती हैं, गन्दे हाथ अन्य वस्तुओं को लगाने से और विभिन्न वस्तुओं को यथास्थान रखने का स्वभाव न होने से भी सफाई के समय अधिक परिश्रम करना पड़ता है।

दावतों में वर्तन इतने गन्दे होते हैं कि भोजन करना प्रायः कठिन-सा हो जाता है। जहाँ प्लेटों के किनारों के उभरे भागों में गन्दगी भरी होती है, चम्मचों में सूखा हुआ खाना तक लगा रहता है, चाय के वर्तन व गिलास आदि पर भी गन्दे धब्बे होते हैं, वहाँ पूर्णतया साफ वर्तनों में चमक का तो नाम ही नहीं। कुछ घरों में फर्श पर झाड़ू भी दी जाती है, प्रतिदिन धुलता भी है, परन्तु नाम-मात्र को ही। गन्दगी की कई तहें उस पर सदैव जमी रहती हैं। दीवारें तो डेढ़-डेढ़ फुट तक फर्श की धुलाई के गन्दे पानी के छीटों से सर्वत्र ढक जाती हैं। दरवाजों, खिड़कियों पर तो महीनों की धूल जम चुकी होती है। ऐसे घरों में प्रायः इन वातों की ओर कभी किंचिन्मात्र भी ध्यान नहीं जाता। यही सफाई का निम्न स्तर है। वह व्यक्ति जिसको उच्च दर्जे की सफाई का अभ्यास व अनुभव है, जो व्यक्ति सुव्यवस्थित व साफ घर में पला है, जिसमें स्वच्छता की भावना विकसित हो चुकी है, जिसको सुव्यवस्था व नियमितता की आदतें पड़ी हुई हैं, जो घर की स्वच्छता व सुन्दरता का मूल्य समझता है, वह ऐसे अपूर्ण सफाई के वातावरण में तुरन्त ही वेचैन-सा होने लगता है।

यह स्पष्ट है कि प्रत्येक गृहिणी का सफाई का स्तर भिन्न है। जहाँ एक गृहिणी अपने अपूर्ण स्वच्छ गृह से पूर्ण सन्तुष्ट है, वहाँ कहीं अधिक स्वच्छ गृह की स्वामिनी अपने गृह की स्वच्छता से असन्तुष्ट हो सकती है। यह सफाई के स्तर की भिन्नता नौकर-नौकर में भी पाई जाती है। आप दो नौकरों से एक समान गन्दे काँच के गिलास धुलवाइए और उनके सफाई के स्तरों में अन्तर देखिए। आप एक साधारण नौकर के व अपने स्वयं के साफ किये हुए गिलासों की तुलना कीजिए तथा अपने व नौकर के सफाई के स्तर में भिन्नता पहचानिए। इन उदाहरणों से तात्पर्य यह निकलता है कि गृहिणी के सफाई के स्तर को ऊँचा करने से ही पाश्चात्य देशों की भाँति गृहों को पूर्णतया स्वच्छ व आकर्षित वनाया जा सकता है।

योजना व कार्यक्रम के अन्तर्गत विधिवत् तथा क्रमबद्ध सफाई करना

घर की सफाई के स्तर को ऊँचा करने के लिए यह अति आवश्यक है कि योजनाबद्ध सफाई की व्यवस्था की जाय। गृहिणी को चाहिए कि जितने भी घर के सफाई सम्बन्धी कार्य हैं, उनकी सूची वना कर प्रत्येक के लिए उचित समय नियोजित करे तथा सफाई का पूर्ण कार्य-क्रम वनाए। ऐसा करने से कोई काम छूटेगा नहीं तथा सभी प्रकार की सफाई सरलता से हो सकेगी।

सफाई के विभिन्न कार्यों को सुचारु रूप से करने हेतु तीन और वातों को ध्यान में रखना चाहिए—

(१) भिन्न-भिन्न कार्यों के करने का क्रम निश्चित करना, अर्थात् किस वस्तु की सफाई पहले होनी चाहिए और किस की उसके पश्चात्। जैसे कमरे की साप्ताहिक सफाई में छत व दीवारों के ऊपरी भाग को पहले साफ करना चाहिए, दीवारों के निचले भाग व वस्तुओं व फर्श को उसके पश्चात्।

(२) एक प्रकार के कार्य एक साथ किये जायें, जैसे लकड़ी के सभी सामान की सफाई व वार्निश एव पॉलिश आदि एक साथ हो जायें तो सुभीता- रहेगी। रसोई-गृह में कांच व चीनी के बर्तन एक साथ धोने से, समय व परिश्रम दोनों का बचाव होगा तथा उनकी सफाई भी अधिक अच्छी होगी।

(३) विभिन्न वस्तुओं की सफाई उचित विधि से करनी चाहिए। जैसे लकडी के फर्नीचर को पॉलिश करते समय पॉलिश लगा कर रेशे के साथ-साथ ही कपड़े को रगड़ कर चमकाना चाहिए। अधिक धूल वाले कमरो की सफाई के समय भिन्न वस्तुओं को धूल से बचाने के लिए फर्श पर गीला लकड़ी का बारीक बुरादा या चाय की भीगी हुई पत्ती डालकर ब्रुश लगाया जाय तो धूल नही उड़ेगी तथा फर्श भी अधिक साफ होगा। इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु व स्थान की सफाई उचित विधि से ही करनी चाहिए।

परिवार का सहयोग—उचित रूप से यदि घर के सभी स्थानो व वस्तुओ की सफाई की जाय तो सफाई का काम ही इतना अधिक हो जाता है कि गृहिणी परिवार के सहयोग के बिना अपने भरसक प्रयत्न से भी पूर्ण सफल नही हो सकती। सफाई के कई ऐसे दैनिक कार्य हैं जिनमें घर के अन्य व्यक्ति सरलता से हाथ बँटा सकते हैं, जैसे अपना बिस्तर बिछाना व उठाना; अपने वस्त्रो, जूतो व अन्य वस्तुओ को विधिपूर्वक साफ करना व सजा कर रखना तथा नौकर न होने की दशा में अपने कमरे की पूर्ण सफाई करना। पाश्चात्य देशो में जहाँ प्राय. घरो में नौकर होते ही नही, रात के भोजन के पश्चात् सब मिल कर खाने की मेज साफ करते हैं, बर्तन आदि भी गृहिणी के साथ साफ करते हैं तथा सबके पश्चात् मिलकर बैठक में मनोरजन व विश्राम करते हैं। यदि भारतीय गृहो में भी सभी सदस्यों को घर की स्वच्छता में रुचि हो जाय तो वे लोग घर को यथासम्भव गन्दा होने से बचाने का प्रयत्न ही न करेंगे, वरन् गृहिणी की आवश्यकतानुसार व अपनी योग्यतानुसार सहायता करना कर्तव्य समझेंगे।

गन्दगी कम करना—एक और भी बात समझने योग्य है। हमारे घरो में घर वालो की असावधानी से गन्दगी इतनी बढ जाती है कि घर को स्वच्छ रखना वास्तव में गृहिणी के लिए असम्भव हो जाता है। उदाहरणार्थ यदि दरवाजों के पास रखे पायदान का उचित प्रयोग नहीं किया जाता तो फर्श को प्रात.काल साफ करने से क्या लाभ ? वह तो थोड़े ही समय में पुन. गन्दा हो जायगा। गृहिणी स्वय भी बहुधा नासमझी से सफाई का काम बढ़ा लेती है, सब्जी व फल काटते समय छिलके फर्श पर डालने से, छत व दीवारें झाड़ते समय नीचे रखी हुई वस्तुऐं व फर्नीचर आदि को न ढकने से उसकी सफाई का काम बढ़ जाता है। डिब्बे आदि से खाद्य-पदार्थों जैसे चीनी, आटा, दालें, असावधानी से निकालने से कुछ आस-पास गिर जाती हैं, गन्दे हाथ अन्य वस्तुओं को लगाने से और विभिन्न वस्तुओं को यथास्थान रखने का स्वभाव न होने से भी सफाई के समय अधिक परिश्रम करना पड़ता है।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. घर की साप्ताहिक सफाई की योजना गृहिणी को किस प्रकार बनानी चाहिए जिससे उसका समय और शक्ति कम खर्च हो ?
२. लकड़ी के बने हुए विविध सामान को साफ करने व चमकाने के लिए गृहिणी को क्या करना चाहिए ?
३. घर में प्रयुक्त विविध धातुओं की सफाई का वर्णन करो।
४. शीशा, काँच व चीनी मिट्टी की वस्तुओं की पूर्ण सफाई की विधियाँ लिखो।
५. 'परिवार के सफाई के उच्च व निम्न स्तर' से आप क्या समझती हैं ?
६. घर की सफाई के सम्बन्ध में परिवार के सभी व्यक्तियों के सहयोग की क्यों आवश्यकता है ? उदाहरण देकर बताओ कि समस्त परिवार गृहिणी की किस प्रकार सहायता कर सकता है।
७. गृह की सफाई के लिए कार्यक्रम का नियोजन करना क्यों आवश्यक है ?
८. "गृह की सफाई के लिए विशेष सामान व सामग्री की आवश्यकता नहीं, एक झाड़ू ही बहुत है।" क्या तुम इससे सहमत हो ? यदि नहीं तो क्यों ? अपने उत्तर की पुष्टि के लिए उचित उदाहरण देकर व्याख्या कीजिए।
९. "घर की सफाई का सर्वोत्तम साधन घर को गन्दा होने से बचाना है।" उदाहरण सहित समझाओ।

अध्याय २५

गृह में संग्रहीकरण व सुरक्षा

गृह की योजना, सुव्यवस्था, सुसज्जा एवं स्वच्छता आनन्दपूर्ण पारिवारिक जीवन के लिए नितान्त आवश्यक हैं। इनके अतिरिक्त, परन्तु अधिक महत्त्वपूर्ण, परिवार के सदस्यों को अच्छे भोजन व वस्त्रों की व्यवस्था, स्वास्थ्य व सुखप्रद जीवन के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। सर्वाधिक सफल गृहिणी वही मानी जाती है जो उपलब्ध साधनों का मितव्ययितापूर्ण ढंग से उपयोग करे तथा घर में भोज्य पदार्थों व वस्त्रों को भली प्रकार सुरक्षित रखकर उन्हें नष्ट होने से बचाए। गृहिणी की थोड़ी सी लापरवाही भोज्य पदार्थों को नष्ट व दूषित होने मे योग दे सकती है। इसी प्रकार वस्त्रों की उचित रूप से सुरक्षा व संग्रह करने सम्बन्धी सावधानी न बरती जाए तो वस्त्रों को चूहे व वस्त्रों के कीड़े काटकर नष्ट कर सकते हैं। गृहिणी को यह भली प्रकार विदित होना चाहिए कि भोज्य पदार्थ किस प्रकार सड़ते व नष्ट होते हैं तथा कौन-कौन-से कीड़े व कीटाणु उन्हें हानि पहुँचाते हैं। वस्त्रों को हानि पहुँचाने वाले कीड़े आदि कौन-से हैं व उनसे कैसे बचा जा सकता है। इस अध्याय में भोज्य पदार्थों व वस्त्रों की सुरक्षा एवं संग्रहीकरण की आवश्यकता, महत्त्व एवं विधियों के सम्बन्ध में वर्णन किया गया है।

भोज्य पदार्थों को नष्ट करने वाले कीटाणु दो प्रकार के होते हैं—(१) स्वयं भोज्य पदार्थों से उत्पन्न होने वाले कीटाणु व (२) बाह्य कीटाणु आदि।

सामान्यतः शीघ्र नष्ट होने वाले भोज्य पदार्थों मे स्वयं भोज्य पदार्थों में उत्पन्न होने वाले कीटाणु आदि उत्पन्न होते हैं। ये वस्तुओं को सड़ा कर दूषित कर देते हैं। शीघ्र नष्ट होने वाले खाद्य पदार्थ सामान्यतः निम्न कारणों से दूषित होते हैं—

(१) फफूँदी से, (२) जीवाणुओं से, (३) खमीर से, (४) कीटाणुओं से।

फफूँदी—फफूँदी पनीर, जैम, अचार, मुरब्बा, डबलरोटी आदि पर रूई के सफेद तार के रूप में छा जाती है। यह भोज्य पदार्थ की सुगन्ध, [illegible] स्वरूप व

दूषित कर देती है। थोड़ी मात्रा में लगी फफूँदी पदार्थों को अधिक विषाक्त नहीं करती।

शाकाणु—ये बहुत ही सूक्ष्म होते हैं। मांस, मछली, अण्डे आदि में ये बड़ी शीघ्रता से पनपते हैं। चूँकि ये पदार्थ नाइट्रोजनयुक्त होते हैं, इसलिए ये इनमें बड़ी ही जल्दी प्रवेश कर जाते हैं या उन्हीं में विद्यमान रहते हैं। सरल खाद्योंजो पर वे शीघ्र ही प्रभाव डालकर उन्हें सड़ा देते हैं। इनमें उसका संरक्षण गुण उपस्थित नहीं होता। शाकाणु द्वारा विषाक्त भोज्य पदार्थ अत्यन्त हानिकारक होते हैं, कभी-कभी तो विषाक्त भोजन करने पर मृत्यु तक हो जाती है।

खमीर—ये भी एक प्रकार के शाकाणु होते हैं जो शक्कर व मीठी वस्तुओं पर एक दम क्रिया करते हैं तथा उन्हें कारबन डाइआक्साइड व मद्यार्क का रूप दे देते हैं। इनके बीजाणु वातावरण में ही उपस्थित रहते हैं। फलों के रसों में ये प्रविष्ट हो उन्हें सड़ा देते हैं।

बीजाणु—ये प्राणिजन्य व वनस्पतिजन्य दोनों ही प्रकार के भोज्य पदार्थों को नष्ट करते हैं।

उक्त समस्त शाकाणु व बीजाणु उष्णता, वायु एवं आर्द्रता-जन्य विशेष परिस्थितियों में पनपते व बढ़ते हैं तथा भोज्य पदार्थों को दूषित करते हैं। गृहिणियों को उक्त दूषित करने वाले कारणों को ध्यान में रखकर शीघ्र नष्ट होने वाले भोज्य पदार्थों की सुरक्षा व संग्रह की व्यवस्था करनी चाहिए।

शीघ्र ही न नष्ट होने वाले भोज्य पदार्थ जैसे विभिन्न अनाज, दालें, मसाले आदि को अनेक प्रकार के जीव-जन्तु व कीटाणु नष्ट कर देते हैं। इन सभी वस्तुओं के सबसे बड़े शत्रु चूहे होते हैं। चूहे खाद्य पदार्थों को खा जाते व फैला देते हैं। अधिकांश अनाजों व दालों को घुन लग जाता है। घुन खाद्यानों को अन्दर ही अन्दर खाकर खोखला कर देता है। इनके अतिरिक्त गिड़ार, सुरहरी, दीमक, चींटी, चींटे, पई आदि कीटाणु खाद्यान्नों को दूषित व नष्ट कर देते हैं। गृहिणी को इन सभी से खाद्य पदार्थों को सुरक्षित रखना चाहिए।

भोज्य सामग्री का संग्रह एवं सुरक्षा

भोजन हमारे जीवन की बड़ी ही महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। भोजन सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति हेतु प्रत्येक मनुष्य भोज्य पदार्थों को जुटाने का प्रयत्न सदैव करता रहता है। जो भोज्य सामग्री जुटाई जाती है वे सब की सब तुरन्त ही उपभोग नहीं की जाती उन्हें कुछ समय के लिए संगृहीत करके रखना पड़ता है। अतः घर में इन पदार्थों को सुरक्षित रूप से कुछ समय तक संगृहीत करने की व्यवस्था होनी चाहिए। कुछ शीघ्र नष्ट न होने वाली ऐसी वस्तुएँ भी होती हैं जो कुछ सप्ताह, महीने या वर्ष भर के लिए संगृहीत करके घर में रखी जाती हैं। दैनिक उपयोग के

शीघ्र नष्ट होने वाले भोज्य पदार्थों को भी उपभोग करने तक कुछ घन्टों या दिनों के लिए सुरक्षित रखना पड़ता है।

खाद्य-वस्तुओं को सुरक्षित रूप से संगृहीत करने से श्रम व शक्ति की बचत होती हैं। कुछ समय विशेष के लिए सामग्री एक साथ क्रय कर ली जाती है, बार बार बाजार जाने की आवश्यकता नही होती। फसल के समय पर एक ही साथ क्रय करने पर वह सस्ते मूल्य पर ही मिल जाती है। इससे धन की भी बचत होती है।

इतना ही नही कुछ भोज्य पदार्थ ऐसे होते हैं जो अधिक समय तक संग्रह कर रखने से उनके स्वाद, सुगन्ध, स्वरूप तथा उपयोगिता में सुधार हो जाता है। उदाहरणस्वरूप पुराना चावल अधिक सुगन्धमय व अच्छा होता है। इसी प्रकार मुरब्बे, अचार, सिरका, गुलकन्द आदि भी कुछ समय तक संगृहीत होने पर उनमें सुधार हो जाता है।

घर मे संगृहीत भोज्य पदार्थ अप्रत्याशित परिस्थितियों में बड़े सहायक व उपयोगी सिद्ध होते है। घर में यकायक अधिक संख्या में मेहमान आ जाने पर संगृहीत खाद्य-पदार्थ बड़ा काम देते है।

शीघ्र नष्ट न होने वाले भोज्य पदार्थों का संग्रहीकरण एवं सुरक्षा

जो भोज्य-पदार्थ शीघ्र नष्ट होने वाले नही हैं जैसे मसाले, दालें, मेवे, आदि उन्हे विधिवत् स्वच्छ व सूखी बोतलो या डिब्बो आदि में भरकर ठीक से ढककर रखना चाहिए। यदि गृहिणी एक साथ बहुत-सी भोज्य सामग्री न खरीद कर प्रति सप्ताह अथवा प्रति माह आवश्यक मात्रा मे खरीदती है तब तो व्यवस्था करना सरल ही है। बाजार से आए समान को छान-बीन कर तथा पूर्णतः साफ कर डिब्बों, बोतलो या मर्तबानों में भर लेना चाहिए व रसोईघर की व्यवस्थानुसार उचित स्थान पर लगा देना चाहिए। इसके विपरीत यदि गृहिणी कुछ विशेष अवधि के लिए, व बिगड़ने वाले भोज्य पदार्थ एक साथ खरीदने की अभ्यस्त है तो भोज्य पदार्थों की अधिक मात्रा को संभालने में अत्यन्त सावधानी की आवश्यकता है। इस दशा मे भी रसोईघर में तो प्रायः थोड़े काल के लिए थोडी मात्रा में ही सामग्री रखी जाती है, किन्तु उसके अतिरिक्त अलग भण्डार मे ही भोजन संग्रह करने का प्रबन्ध करना पड़ता है।

भण्डार-गृह में मे नमी नही होनी चाहिए, अन्यथा वस्तुएँ खराब हो जायेंगी। वह ठण्डा व प्रकाशमय भी होना चाहिए। दीवारो पर यदाकदा सफेदी कराते रहना चाहिए। उसमें अल्मारियाँ, एक मेज, एक तराजू तथा एक हिसाब लिखने की पुस्तिका भी होनी चाहिए। दाल के लिए ऐसे डिब्बे हों जिनमें वायु प्रवेश न कर सके। आटे के लिए कनस्तर तथा गेहूँ के लिए टंकी होनी चाहिए।

अनाज, दाल, चावल आदि प्रतिदिन हम अपने भोजन हेतु प्रयोग करते है। ये पदार्थ ऐसे हैं जिन्हे फसल पर इकट्ठा खरीदकर वर्ष भर के लिए संगृहीत किया जा

सकता है। एक चतुर गृहिणी को घर में इनका संग्रह करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से धन व समय की बचत होती है। परन्तु इन वस्तुओं के समुचित संग्रह तथा सुरक्षा के लिए गृहिणी को कुछ बातों की जानकारी नितान्त आवश्यक है। इस सम्बन्ध में कुछ निर्देश निम्नानुसार हैं—

(१) **अनाज व दालें** (Grains or Cereals)—अनाज व दालों में बहुधा कीड़े लग जाते हैं जो इन्हें काट देते हैं तथा उनके पोषक तत्त्व को बिल्कुल ही नष्ट कर देते हैं। कीड़े आदि से इन्हें सुरक्षित रखने के लिए भण्डार में रखते समय इनके अन्दर छाया में सुखाई गई नीम की पत्तियाँ डाल देनी चाहिए। नीम की पत्तियाँ कीटाणुनाशक एवं निसंक्रामक होती हैं। समय-समय पर इन्हें धूप में सुखाते भी रहना चाहिए।

(२) **चावल** (Rice)—चावल को सुरक्षित रखने के लिए हल्दी व तेल का प्रयोग किया जाता है। चावल को भण्डार में रखने के पूर्व हल्दी व तेल मिलाकर लगा देना चाहिए। ऐसा करने से कीड़े चावल को खराब नहीं करते। प्रयोग करने से पहले अच्छी तरह धो लेना चाहिए।

(३) **आटा** (Flour)—गेहूँ यदि सस्ता मिलता हो तो पर्याप्त खरीदना चाहिए, अन्यथा थोड़ा-थोड़ा करके कई बार में खरीदना चाहिए। आटा अधिक नहीं खरीदना चाहिए, क्योंकि अधिक रखे रहने पर उसमें सीलन आ जाती है और कीड़े पड़ जाते हैं। फलस्वरूप वह खाने के योग्य नहीं रहता। आटे को सदैव ढक कर, सूखे स्थान पर रखना चाहिए। नया आटा लाने से पूर्व पुराने आटे को काम में ले लेना चाहिए।

(४) **शक्कर** (Sugar)—शक्कर शीघ्रता से खराब नहीं होती, इसलिए पर्याप्त मात्रा में क्रय करके रख लेनी चाहिए। इसे नमी से दूर रखना चाहिए।

(५) **चाय व कॉफी** (Tea or Coffee)—यदि ऐसा कोई बर्तन रखने के लिए हो जिसमें वायु प्रवेश न कर सके तो चाय व कॉफी अधिक मात्रा में क्रय करनी चाहिए, अन्यथा थोड़ी-थोड़ी आवश्यकतानुसार खरीदनी चाहिए।

(६) **घी**—घरों में बहुधा घी भी इकट्ठा खरीद लिया जाता है। परन्तु घी को सुरक्षित रखने के सम्बन्ध में थोड़ी-सी भी लापरवाही की गयी तो खराब हो सकता है। अतः घी को अधिक दिनों तक सुरक्षित रखने के लिए उसे खूब गरम करके उसकी छाछ निकाल देनी चाहिए। तत्पश्चात् उसमें थोड़ा-सा नमक का ढेला डालकर संगृहीत कर लेना चाहिए।

(७) **मुरब्बा तथा जैम**—मुरब्बा और जैम को साफ बोतलों में भरकर ठण्डे तथा शुष्क स्थान पर सुरक्षित रूप से रखना चाहिए।

शीघ्र नष्ट होने वाले पदार्थों का संग्रहीकरण एवं सुरक्षा

खाद्य पदार्थों को भली प्रकार संगृहीत करने और उनकी देखभाल व सुरक्षा का उचित प्रबन्ध करने से असावधानी के कारण नष्ट होने वाले कितने ही भोजन नष्ट होने से बच जाते हैं। प्रतिदिन प्रयोग में आने वाले ऐसे पदार्थ जो शीघ्र बिगड़ जाते हैं जैसे दूध, दही, सब्जी, फल, मांस, अण्डा आदि सावधानी से ही बिगड़ने से बचाए जा सकते हैं। ऐसे पदार्थों को विशेषतः ग्रीष्मकाल में ठण्डक की आवश्यकता होती है। रेफ्रीजरेटर इसी श्रेणी की वस्तुओं की सुरक्षा के लिए प्रयुक्त होता है। जन-साधारण के लिए यह आवश्यक है कि जल्दी बिगडने वाले भोज्य पदार्थ सुरक्षा के लिए एक जालीदार अल्मारी का प्रबन्ध करें व उसे जरा ठण्डे स्थान में रखें। फल सब्जी, दूध, दही आदि के अतिरिक्त डबल रोटी, मक्खन व मिठाई आदि भी जालीदार अल्मारी में रखना ही बेहतर है। यदि इस अल्मारी में चीटे व चीटियाँ चढ़ें तो उसके पायों को पानी भरी कटोरियो मे रखना चाहिए व मीठी चीजों को यथासम्भव बन्द डिब्बे या बोतल में भरकर रखना चाहिए।

नीचे शीघ्र ही नष्ट होने वाले कुछ पदार्थों की सुरक्षा हेतु ध्यान देने योग्य बातें प्रस्तुत की जा रही हैं :—

(१) *मांस—मांस शीघ्र ही खराब होने वाली सामग्री है।* उसे सुरक्षित रखने के लिए निम्नलिखित सावधानियाँ बरतनी चाहिए—

(अ) मांस को लटका देना चाहिए, ताकि हवा लगती रहे।

(ब) मक्खियो से बचाने की व्यवस्था होनी चाहिए। इसे मलमल के थैले में लटकाना उचित होता है। थैला मांस मे स्पर्श करता हुआ नहीं हो।

(२) *मछली—मछली को संगृहीत करने के लिए उसे यथासम्भव ठण्डे स्थान* पर रखना चाहिए। इसे कपड़े मे ढककर या जालीदार अल्मारी में रखा जाना ठीक होता है।

(३) दूध—दूध को किसी उथले बर्तन में पतले व साफ कपड़े से ढककर रखना चाहिए। इस बर्तन को ठण्डे स्थान पर रखना चाहिए। गर्मी पाकर दूध शीघ्र खराब होता है।

(४) पनीर—पनीर सख्त न हो इसलिए, उसे चिकनाई का असर न होने वाले कागज में रखना चाहिए। पनीर को मक्खन और दूध से दूर ढक कर रखना चाहिए।

(५) पका हुआ भोजन—पकी सब्जी, दाल, खीर, चावल आदि वस्तुएँ बडी सावधानी से पतले कपडे या जाली से ढककर पानी में ठण्डे स्थान पर रखनी चाहिए।

(६) डबलरोटी—डबलरोटी को मिट्टी या चीनी के बर्तन में रखना चाहिए। धातु के बर्तन में रखने से रोटी पसीजकर धातु की दुर्गन्ध से युक्त हो जाती है। बर्तन के ऊपर हवादार ढक्कन होना चाहिए, ताकि उसे मक्खियो से बचाया जा सके।

(७) मक्खन—घी की अपेक्षा मक्खन शीघ्रता से खराब होता है। इसलिये उसे रखने की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। मक्खन सदैव स्लेट या संगमरमर के बर्तन में रखा जाना चाहिए। गर्मियों के मौसम में इसे अत्यन्त ही ठण्डे स्थान पर किसी बड़े बर्तन से ढक कर रखना चाहिए। मक्खन की तश्तरी को पानी के बर्तन में रख देने से मक्खन शीघ्र खराब नहीं होता। धनी लोग इसे रेफ्रीजीरेटर में रखते हैं।

फल और हरी सब्जियाँ—फल व सब्जियाँ सदैव ताजी ही प्रयोग में लानी चाहिए। इन्हें टोकरियों में पृथक्-पृथक् फैलाकर रखना चाहिए। फलों को अन्न के भण्डार से दूर रखना चाहिए। इन्हें हवादार स्थान पर रखना आवश्यक है। प्याज, लहसुन को दूध के बर्तन से दूर रखना चाहिए। बिना पत्ते वाली सब्जियों को सूखा रखना चाहिए। पानी के सम्पर्क से इनके सड़ने या उगने की सम्भावना रहती है। फल व हरी सब्जियों को रेफ्रीजीरेटर में अपेक्षाकृत अधिक समय तक सुरक्षित रूप से संगृहीत किया जा सकता है। फल व सब्जियों को अधिक दिनों तक मुरब्बा, जैम, जैली तथा अचार के रूप में सुरक्षित रखा जा सकता है।

वस्त्रों की सुरक्षा एवं संग्रहीकरण

वस्त्रों का टिकाऊपन उनको सुरक्षित रखने पर बहुत कुछ निर्भर करता है। वस्त्रों की सुरक्षा का अर्थ है उन्हें प्रयुक्त करने की अवधि में इस्तेमाल करने का ढङ्ग, उनकी मरम्मत, स्वच्छता तथा संग्रह करने की उचित व्यवस्था। वस्त्रों को सुरक्षित रूप से रखने व प्रयुक्त करने हेतु गृहिणी में सर्वप्रथम वस्त्रों की सुरक्षा हेतु अभिवृत्ति का विकास होना चाहिए, इसके बाद वस्त्रों को सुरक्षित रखने की विधियों का ज्ञान होना चाहिए तथा अन्त में वस्त्रों को सुरक्षित रखने की आदत का विकास होना चाहिए तभी वस्त्रों को सुरक्षात्मक ढँग से रखकर उनका जीवन बढ़ाया जा सकता है।

किसी मौसम-विशेष में प्रयुक्त होने वाले वस्त्रों का उस मौसम की समाप्ति पर सुरक्षित रूप से रखने के लिए योजना बनाना तथा उन्हें संग्रह करना गृहिणी का महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व है।

जिस कक्ष में वस्त्रों का संग्रह किया जाए उसमें प्रत्येक प्रकार के वस्त्रों के रखने के लिए निश्चित स्थान होना चाहिए। इससे समय की बचत होती है, वस्तु की दशा ठीक बनी रहती है उसकी जिन्दगी बढ़ती है। इस प्रकार धन, समय व शक्ति के सन्दर्भ में मूल्य में भी कमी होती है।

घर में सूती, रेशमी, ऊनी, नायलोन आदि के वस्त्र मौसम के अनुसार इस्तेमाल किए जाते हैं। वस्त्रों को चूहों से सुरक्षित रखना नितान्त आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त रेशमी कपड़ों को झींगुर, सिल्वर फिश आदि, गर्म कपड़ों का कीड़ा (Moth) काट व नष्ट कर देते हैं। सूती व अन्य सभी प्रकार के कपड़ों में सीलन के कारण फफूँदी लग जाती है जिससे कपड़े का रंग व रूप नष्ट हो जाता है। अतः वस्त्रों को सुरक्षित रूप से रखने के लिए विशेष ध्यान देना चाहिए।

नीचे कुछ सुझाव दिए जा रहे हैं जिनका यदि अनुगमन किया जाए तो निश्चय वस्त्रों की कीटाणुओं से रक्षा सम्भव हो सकेगी।

वस्त्र की सावधानी

१. वस्त्र को भली प्रकार ब्रुश करके उसे धूल रहित रखना चाहिए। ब्रुश करने से पहले समस्त जेबों को खाली कर उसे अच्छी तरह हिलाओ या फटकारो। वस्त्र को धूप एवं वायु में रखने से कीटाणु नष्ट हो जाते हैं।

२. पुराने वस्त्रों को उस समय तक सन्दूक में नहीं रखना चाहिए, जब तक कि उन्हें पर्याप्त मात्रा में हवा नहीं दे दी जाय। अलमारियों तथा संदूकों आदि को भी समय-समय पर हवा देते रहना चाहिए।

३. जिन वस्त्रों की धुलाई सम्भव हो उन्हें प्रायः धोते रहना चाहिये। ऊनी कोट, सूट तथा शालों को धोकर लोहा कराना चाहिए। जिन वस्त्रों की धुलाई संभव नहीं हो उनकी अवसरानुसार शुष्क धुलाई करवाते रहना चाहिए। यह ध्यान रहे कि शुष्क धुलाई से पूर्व वस्त्र अत्याधिक गन्दे नहीं होने चाहिए।

४. *पहनने वाले ऊनी वस्त्रों को उतार कर हेंगर पर लटका देना चाहिए।* यदि कोट आदि की बाँह में पतला कागज लगा दिया जाए तो इससे उसकी बाँह की आकृति ठीक बनी रहेगी। हेंगर पर वस्त्र को लटकाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उसकी बाहें हेंगर पर ठीक प्रकार जम गयी हैं या नहीं।

५. प्रकाश बहुधा वस्त्रों के रंगों को भद्दा कर देता है। अतः वस्त्रों को इस कार्य के लिए निर्मित ढकने से ढक देना चाहिए। वस्त्रों को ऐसे अंधकार वाले स्थान पर रखो जहाँ पर बहुधा वायु पहुँच सके।

६. नमी वाले स्थानों में वस्त्रों को नहीं रखना चाहिए, क्योंकि नमी से फफूँदी उत्पन्न होती है जो कि वस्त्र के तन्तुओं में घुसकर वस्त्र के रंग *को बदल देती है। इसके परिणामस्वरूप वस्त्र के टुकड़े-टुकड़े भी हो* सकते हैं। प्रत्येक बार वस्त्र पहनने के उपरान्त उतारने पर वस्त्र को ब्रुश करके तथा सूखे स्थान पर लटका कर रखने से फँफूदी सफलतापूर्वक रोकी जा सकती है।

७. वस्त्रों के कीड़े भूरे रंग के होते हैं। ये कीटाणु अधिकतर ऊनी वस्त्र, गलीचे, रुएँदार वस्त्र तथा पंखों के तन्तुओं को खाते हैं। इन नाशक

कीटाणुओं से वस्त्रों की सुरक्षा करने के लिए आगे लिखे उपाय करने चाहिए :—

(अ) **छिड़काव करना**—ऊनी वस्त्रों पर तथा जिस स्थान पर वे संगृहीत किए गए हैं वहाँ पर डी० डी० टी० का छिड़काव करा देना चाहिए ।

(ब) **प्रतिकारक पदार्थ रखना**—तम्वाकू, सूखी नीम की पत्तियाँ, देवदार वृक्ष की छाल, कपूर तथा फिनाइल की गोलियाँ इस कार्य के लिए प्रयोग की जाती हैं । किन्तु इन पर पूर्णरूप से विश्वास करना सन्देहात्मक है । इन प्रतिकारकों का वस्त्र पर के अण्डों पर कोई प्रभाव नहीं होगा । कीड़ों की गोलियाँ केवल उसी समय तक प्रभावशाली होती है, जब तक कि पर्याप्त रूप से वाष्प का प्रभाव नहीं होता है । कीटाणुनाशक गोलियों की अपेक्षा नेप्थलीन के टुकड़े अधिक प्रभावपूर्ण होते हैं । पेराडिम्लोरोवेन्जीन सर्वोत्तम प्रतिकारक है किन्तु यह व्यय-साध्य होता है ।

(स) **बाँधकर रखना**—समस्त ऊनी, एवं रुएँदार वस्त्रों को पुराने अखवार के कागजों में बाँधकर रखना चाहिए. क्योंकि कीटाणुओं के लिए अखवार की स्याही रुचिकर नहीं होती । देवदार वृक्ष की छाल के टुकड़े, चन्दन का चूरा, यूकेलिप्टस तथा नीम की पत्तियाँ उसी समय तक अच्छी सिद्ध होती हैं जव तक कि उनमें सुगन्ध वनी रहती है ।

(द) **जहरीली गैस से सेंक करना**—हाइड्रसायनिक एसिड से सेक करने पर कीटाणु नष्ट हो जाते हैं । किन्तु इसका प्रयोग केवल विशेषज्ञ लोग ही कर सकते हैं, अन्यथा यह हानिकारक सिद्ध हो सकती है ।

(य) **कृमिनाशक पदार्थ का ऊन में मिश्रण**—ऊन में इस प्रकार के पदार्थ के मिश्रण से या तो जीवाणु नष्ट हो जाते हैं या ऊन उनके लिए अपाच्य हो जाता है ।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अभी तक ऐसा कोई भी पदार्थ तैयार नहीं हुआ है जो वस्त्रों के कीटाणुओं को पूर्णरूप से नष्ट कर सके । अतः इस सम्वन्ध में जितने भी पदार्थ उपलव्ध हैं, उनमें से कार्य के लिए जो सन्तोपजनक सिद्ध हो उसे चुनकर कार्य चलाना चाहिए ।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. भोज्य पदार्थों का संग्रहीकरण क्यों आवश्यक है ? अनाज व दालों को अधिक समय तक रखने के लिए क्या उपाय करने चाहिए ?

२. आटा, घी तथा मुरब्बा एवं जैम का संग्रह करने हेतु किन बातों की ओर ध्यान देना चाहिए ?

३. मांस व मछली की सुरक्षा के उपाय बताइए।

४. दूध तथा दूध से बने पदार्थों को खराब होने से बचाने के लिए क्या करना चाहिए ?

५. वस्त्रों का संग्रहीकरण करते समय कौन-कौन-सी बातें ध्यान देने योग्य हैं ?

अध्याय २६

घरेलू कीड़े-मकोड़े

घर में अनेक ऐसे कीड़े-मकोड़े उत्पन्न हो जाते हैं जो मानव शरीर को रोगी बनाने में योग देते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ कीड़े-मकोड़े घर की वस्तुओं; जैसे—वस्त्र, पुस्तकें, लकड़ी के फर्नीचर तथा भोज्य पदार्थों को नष्ट कर देते हैं। गृह का संचालन सुव्यवस्थित रूप से करने तथा परिवार के कल्याण की दृष्टि से गृहिणी को यह जानना अति आवश्यक है कि कीड़े-मकोड़े किन परिस्थितियों में उत्पन्न होते हैं, उनकी वृद्धि को कैसे रोका जा सकता है? वे परिवार के लिए किस प्रकार हानिप्रद हैं? अतः अब हम इनके सम्बन्ध में संक्षिप्त रूप में वर्णन करेंगे।
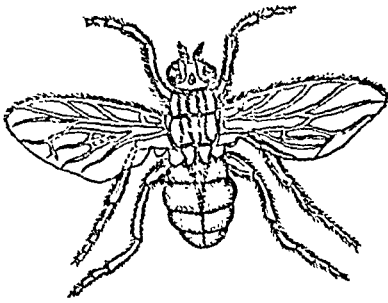
मक्खी

घरेलू मक्खी—मक्खियाँ मनुष्य की सबसे बड़ी शत्रु हैं। ये अनेक रोगों को फैलाने में सहायता देती हैं। हैजा, ज्वर, पेचिश, तपेदिक आदि रोगों को फैलाने का कार्य यही करती हैं।

मक्खियों की वृद्धि—ये मल-मूत्र, थूक, कूड़ा-करकट, खाद, कीचड़ और अन्य गन्दे स्थानों में अण्डे देती हैं। इनकी वृद्धि बड़ी शीघ्रता से होती है। एक मक्खी एक समय में १०० से १५० तक अण्डे देती है। एक मक्खी औसतन अपने जीवन काल में ७०० अण्डे देती है तथा वर्ष में यह पाँच बार अण्डे देती है। अण्डे परिपक्व होने की क्रिया भी बड़ी शीघ्रता से होती है। यह कार्य कुछ घण्टों से लेकर अधिक-से-अधिक ३ दिन में समाप्त हो जाता है। ठण्डे देशों की अपेक्षा गर्म देशों में यह कार्य शीघ्रता से होता है।

लगभग ३ दिन मे लारवा प्यूपा के रूप में बदलता है। प्यूपा की दशा में वह हिल नही सकता। इस स्थिति में वह एक बेलनाकार खोल में बन्द रहता है।

३ से ८ दिन मे प्यूपा पूर्ण विकसित मक्खी का रूप प्राप्त कर लेता है।

मक्खी की आदतें—(१) मक्खी उन पदार्थों की ओर आकर्षित होती है, जिनमें रोगो के सजीवीय पदार्थ उपस्थित रहते हैं। मक्खी के रोएँदार शरीर तथा चिपचिपे पैरो में गन्दगी तथा रोगो के कीटाणु आसानी से लग जाते हैं।

(२) मक्खियाँ जैम, पनीर, कटे फल, दूध, शक्कर-युक्त पदार्थ, भोज्य पदार्थों पर बड़ी शीघ्रता से बैठती हैं। ये जिन भोज्य पदार्थों पर बैठती हैं अपने योग्य बनाने के लिये उन पर उल्टियाँ करती है तथा अपने चिपचिपे पैरो से मुलायम बनाती हैं। इसके अतिरिक्त जब कोई चीज खाती हैं तो उस पर टट्टी भी करती हैं। इस प्रकार ये भोज्य पदार्थ पर असख्य रोगाणुओ को एकत्रित कर देती है। फलस्वरूप रोगाणु युक्त पदार्थों का सेवन करने वाला व्यक्ति अनेक रोगों का शिकार हो जाता है।

मक्खियों से बचने के उपाय—मक्खियों से बचने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिये—

(१) घर के आस-पास मक्खियो के पैदा होने वाले गन्दे स्थानों की सफाई करनी चाहिए।

(२) घर के पास कूड़ा-करकट के ढेर नहीं रखना चाहिए। घरेलू कूड़े को ढक्कनदार कूड़ेदान में एकत्रित करना चाहिए। कूड़ेदान से प्रतिदिन नियमित रूप से कूड़ा-करकट को ऐसे स्थान पर फिकवाते रहना चाहिए, जहाँ से मक्खियों की उत्पत्ति की संभावना न हो।

(३) भोज्य पदार्थों को सदैव ढक कर रखना चाहिए।

(४) स्वच्छता की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

(५) समय-समय पर डी० डी० टी० का छिड़काव करते रहना चाहिए।
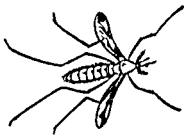
मच्छर

मच्छर—चाहे मच्छर मलेरिया फैलाने वाला, अर्थात् एनोफिलिज (Anopheles) हो, चाहे क्यूलेक्स (Culex) हो उतना खतरनाक नहीं, परन्तु मच्छर का घर में होना ही अति खतरनाक है। मच्छर उत्पन्न करने वाले स्थान ये हैं:

होता है। यह मनुष्य की त्वचा को छेदकर उसके भीतर रोग के जीवाणु प्रविष्ट कर देता है। एक विचित्र बात यह है कि सदैव मादा मच्छर ही खून पीने, रोग जीवाणु ढोने व उन्हें मानव-शरीर में छोड़ने का कार्य करती है। विभिन्न प्रकार के मच्छर मलेरिया, फाइलेरिया, पीतज्वर, डेंगू आदि रोग फैलाते हैं। ये बहुधा अँधेरे सीले हुए कमरों तथा गन्दे व सड़े हुए पानी के एकत्रित होने वाले स्थानों में उत्पन्न होते व पनपते हैं। इनके द्वारा उत्पन्न रोगों से बचने के लिए सक्रिय प्रयत्न करने चाहिए। इससे बचने के उपाय भी दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं—

१. बचने के उपाय।
२. नष्ट करने के उपाय।

बचने के उपाय—(१) मच्छरों से बचने के लिए रात्रि को उचित प्रबन्ध करना चाहिए, क्योंकि मच्छर अंधेरा होने पर ही निकलते हैं। दिन-भर वे अँधेरे स्थानों व सामान के नीचे व पीछे छिपे रहते हैं, या घर के बाहर गन्दे व अंधेरे स्थानों, नालों, सोतों, वृक्षों व झाड़ियों आदि में छिपे रहते हैं। अँधेरा होने पर बाहर के मच्छर प्रायः अन्दर आ जाते हैं। इसलिए सूर्यास्त होते ही घर की खिड़की, दरवाजे बन्द करके बाहर के मच्छरों को अन्दर आने से रोका जा सकता है। इसके लिए जाली के दरवाजे सर्वोत्तम रहते हैं।

(२) बिस्तर पर मच्छरदानी लगा कर सोना—विशेष कर ऐसे दिनों में जबकि मच्छर बहुत बढ़े हुए हों—आवश्यक है।

(३) सोते समय खुले बदन पर Citronella या अन्य तेल लगाइये जो मच्छरों के विरोधी हों।

(४) मच्छरमार द्रव जैसे Flit या D. D. T. अवश्य छिड़किए, खास कर चारपाई, कुर्सी आदि के नीचे व अलमारियों व गहरे रंग के पदार्थों आदि पर, क्योंकि मच्छर ऐसे स्थानों पर बैठना पसन्द करते हैं।

(५) कमरे में तम्बाकू, नीम की पत्ती, धूप या अगरबत्ती जलाइए। इनके धुएँ से वे भागते हैं।

नष्ट करने के उपाय—मक्खी के समान ही मच्छर भी बहुत बढ़ते हैं। मादा मच्छर एक बार में १००-५०० अण्डे देती हैं जो लगभग दो सप्ताह में मच्छर बन जाते हैं।

(१) इनकी वृद्धि को रोकने के लिए प्रथम तो अण्डे देने के लिए उपयुक्त स्थान न रहने देना चाहिए तथा दिए हुए अण्डों को नष्ट कर देना चाहिए।

(२) अण्डे देने के स्थान हटाने के लिए कहीं पर पानी जमा न होने दीजिए। घर के अन्दर या बाहर जो भी ऐसे स्थान हों, जहाँ पानी जमा हो सकता है, उनको भरवा देना चाहिए।

(३) कोई ऐसे टूटे-फूटे टीन या बर्तन आदि बाहर न रहने दीजिए [illegible] जमा हो सके।

(४) घर की नालियों व मोरियों को खूब साफ रखिये। [illegible] गड्ढों आदि पर जहाँ मच्छर के अण्डों की सम्भावना हो, मिट्टी का [illegible] दीजिए। इससे पानी के ऊपर एक चिकनी तह बन जाती है [illegible] के लार्वा साँस नहीं ले सकते व नष्ट हो जाते हैं।

मच्छर-मार तेल आदि चाहें तो घर पर भी बन सकता है। [illegible] २½ दर्जन नेफ्थलीन की गोलियों का चूरा, एक [illegible] एक बड़ा चम्मच यूकिलप्टिस का तेल और दो बड़े [illegible] मिट्टी के तेल में मिला दीजिए। इसे रंगीन शीशे की [illegible] प्रयोग के पूर्व खूब हिला लेना चाहिए, फिर [illegible] छिड़कना चाहिए।

खटमल—यह लाल रंग का कीड़ा होता है। इसकी लम्बाई लगभग १½ मिली-था चौड़ाई ३ मिलीमीटर तक होती है। इसके शरीर की बनावट चपटी है।

आदतें—(१) यह दीवारों, चारपाइयों के छिद्रों तथा फर्नीचर में अण्डे है।

(२) यह बहुत तेज दौड़ता है।

(३) यह रात को काटता है तथा मनुष्य रक्त को चूसता है।

(४) यह सामान, फर्नीचर तथा वस्त्रों के माध्यम से एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाता है।

बचने के उपाय—(१) चारपाइयों की दरारों में उबलता हुआ पानी डालना चाहिये।

(२) इनको नष्ट करने के लिए तारपी[illegible] तथा मिट्टी के तेल के मिश्रण का छिड़काव सहाय[illegible] होता है।

खटमल

(३) गैमक्सीन पाउडर को पानी में मिलाकर छिड़कना चाहिए।

(४) गंधक का धुँआ भी खटमलों को नष्ट कर देता है।

छिपकली—घरों में छिपकली सदैव ही दृष्टिगोचर होती है। यह हानि[illegible] जन्तु नहीं है। यह घर के हानिप्रद कीड़े-मकोड़ों को नष्ट करने का कार्य क[illegible] इस दृष्टि से यह उपयोगी है। परन्तु यह गन्दगी फैलाने में सहायक होती है

छिपकली

यह गन्दे घरों में निवास करती है। अतः इसकी उपस्थिति गन्दगी का प्रती[illegible] [illegible] होती है। भोज्य वस्तुओं को सदैव ढककर रखना चाहिए।

बिच्छू

बिच्छू—बिच्छू बड़ा जहरीला जन्तु है। इसका विष बहुत तीव्र होता है। कभी-कभी तो इसके काटने पर मनुष्य की मृत्यु तक हो जाती है। यह सीलन वाले गन्दे स्थानों में उत्पन्न होता है। यह भी घरेलू कीड़े-मकोड़ों को भोजन के रूप में खाकर नष्ट करता है।

साँप—कभी-कभी साँप भी घरों में दिखाई देते हैं। इनकी कुछ किस्में तो अत्यधिक विषैली होती हैं। ये बहुधा घर के पास रखी घास के ढेर में, झाड़ी, कूड़ा-करकट आदि में निवास करते हैं। अतः इनसे बचने के लिए घर के आस-पास कूड़ा-करकट तथा गन्दगी नहीं रहने देनी चाहिए। घर में बिल्ली या नेवला भी पाले जा सकते हैं, क्योंकि ये साँप के शत्रु हैं। घर के अहाते में देशी तम्बाकू मिला पानी छिड़क देना चाहिए।
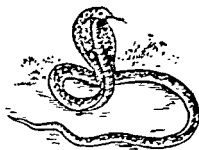
साँप

चूहा—चूहा बहुत हानिप्रद जन्तु है। यह घरेलू वस्तुओं को नष्ट कर देता है। बहुधा यह कपड़ों व पुस्तकों को काटकर व्यर्थ कर देता है तथा भोज्य पदार्थों को खाता है। इसके अतिरिक्त यह प्लेग के पिस्सुओं को घर में फैला देता है।

इससे बचने के लिए अनाज आदि खाद्य वस्तुओं को ढक कर रखना चाहिए। कपड़ों व पुस्तकों को ऐसी अलमारी या सन्दूकों में रखना चाहिए जिनमें चूहे प्रविष्ट न हो सकें।

इन्हें नष्ट करने के लिए घर में बिल्ली पालनी चाहिए। इन्हें पिंजड़े में पकड़ कर जंगल में छोड़ देना चाहिए। चूहे मारने वाली गोलियाँ भी आजकल प्रयोग में लाई जाती हैं। ये गोलियाँ आटे में मिलाकर डाली जाती हैं। इन्हें खाने पर चूहों की मृत्यु हो जाती है।

चूहा

दीमक (White ants)—दीमक भी हानिकारक घरेलू कीड़ा है।

आदतें—(१) यह नमी वाले स्थानों पर ही उत्पन्न होती है।

(२) लकड़ी ही इसका मुख्य भोजन है इसलिए लकड़ी से बनी वस्तुओं को बड़ी शीघ्रता से नष्ट करती है। ये पुस्तकों, वस्त्रों, आदि को नष्ट कर देती है।

दीमक

बचने के उपाय—(१) वस्तुओं को सीलन तथा नमी वाले स्थानों से दूर रखना चाहिए।

(२) वस्तुओं को समय-समय पर धूप में सुखाते रहना चाहिए।

(३) किसी एक ही वस्तु को एक ही स्थान पर अधिक समय तक नहीं र
ने देना चाहिए।

(४) जहाँ दीमक के उत्पन्न होने की सम्भावना हो वहाँ से वस्तुओं को तुरन्त
ी हटा देना चाहिये तथा उस स्थान पर मिट्टी के तेल का छिड़काव कर देना चाहिए।

(५) डी० डी० टी० पाउडर का छिड़काव भी दीमक को नष्ट करने में सहायक होता है।

मकड़ी—मकड़ी बहुधा गन्दे घरों में रहती है। घरेलू कीड़े-मकोड़े ही इसका मुख्य भोजन है। यह भी जहरीला जन्तु है। परन्तु इसका जहर अधिक तीव्र नहीं होता। इसके शरीर का लस यदि मनुष्य के शरीर से लग जाए तो त्वचा पर फफोले जैसे हो जाते हैं।
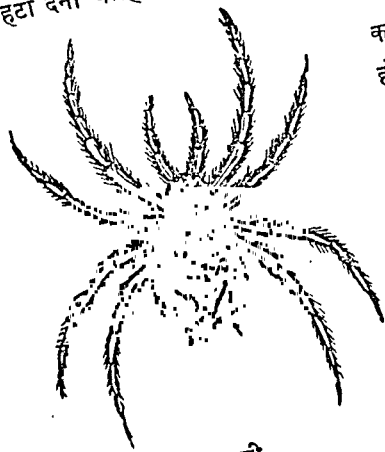
मकड़ी

सिलवर फिश (Silver Fish)—यह भी हानिकारक कीड़ा होता है।

आदतें—(१) यह लेई, माँड़ आदि लगी हुई वस्तुओं को नष्ट करती है।

(२) यह कृत्रिम रेशम को बड़ी शीघ्रता से नष्ट करती है।

सिलवर फिश

बचने के उपाय—(१) लेई या माँड़ लगी
फ रखना चाहिए।

(२) जहाँ ये हों वहाँ पिरेथ्रम (Pyrethrum) पाउडर छिड़क देना चाहिए।

(३) कमरे में गन्धक जला देना चाहिए।

चींटी (Ants)—वैसे चीटी लाभदायक कीड़ा है क्योंकि यह गन्दगी तथा कीड़े-मकोड़े को घर से बाहर ले जाती है। परन्तु यह भोजन सामग्रियों को हानि भी पहुँचाती है। अतः भोज्य पदार्थों का इनसे बचाव करना चाहिए।

बचने के उपाय—(१) इन्हें नष्ट करने के लिए छिद्रों को सीमेन्ट आदि से बन्द कर देना चाहिए।

(२) अनाज चीनी आदि भोज्य पदार्थों को ढक्कनदार डिब्बों में रखना चाहिए।

चींटा

(३) खाने की अल्मारी के पाए पानी के बर्तन में रखने चाहिए।

(४) चीटियों के छिद्रों के आस-पास बोरेक्स तथा बाजार मे मिलने वाले अन्य कीटाणुनाशक पाउडर को फैला देना चाहिए।

किताबों के कीड़े (Book lice)—ये कीड़े बहुत छोटे होते हैं तथा पुस्तकों के अन्दर बहुधा देखने को मिलते हैं।

आदतें—(१) ये पुस्तकों की जिल्दों, तस्वीर की फ्रेमों आदि में लगी लेई को खाते हैं।

(२) जब घर मे पुस्तकें या अन्य सामान बहुत दिनो तक बन्द रहे तभी ये कीडे प्रकट होते हैं।

बचने के उपाय—(१) कमरे की सभी वस्तुओं को खूब हवा लगानी चाहिए।

(२) पुस्तकों की अल्मारी की समय-समय पर भली प्रकार सफाई करनी चाहिए।

किताबों का कीड़ा

(३) यदि कमरे मे किताब के कीड़े अधिक हों तो उसे १३०° फारेनहाइट के ताप पर गर्म करके उन्हें नष्ट कर देना चाहिये।

(४) कमरे मे गन्धक जलाने से भी इन कीड़ों को नष्ट किया जाता है।

झींगुर (Cockroaches)—झींगुर कई किस्म के होते हैं। ये घर की सभी वस्तुओं को हानि पहुँचाते हैं।

आदतें—(१) ये भोज्य सामग्रियों को नष्ट करते हैं। इनकी कुछ किस्मे कपड़े, पुस्तकें तथा चमड़े को भी हानि पहुँचाती हैं।

(२) ये बहुधा भण्डार-गृह तथा अधिक सामान वाले कमरों में रहते हैं।

बचने के उपाय—(१) घर के सभी कमरों तथा वस्तुओं की भली प्रकार स्वच्छता करनी चाहिए।

(२) जहाँ झींगुर रहते हों उन स्थानों में बोरेक्स (borax), पिरेथ्रम (Pyrethrum) अथवा गन्धक (Sulphur) का छिड़काव कर देना चाहिए।

(३) पुस्तकों, वस्त्रों आदि में नैप्थलीन की गोलियाँ रख देनी चाहिए।

(४) समस्त भोज्य पदार्थों को ढक कर रखना चाहिए।

कपड़ों के कीड़े—कपड़ों को हानि पहुँचाने वाले कीड़े विशिष्ट प्रकार के होते हैं। इनकी मुख्य दो किस्में होती हैं—

कपड़ों का कीड़ा

(१) रेशमी कपड़ों को काटने वाले तथा

(२) ऊनी कपड़े काटने वाले कीड़े।

आदतें—(१) ये कीड़े रेशमी या ऊनी कपड़ों में पैदा होते हैं।

(२) ये अंधेरा व उष्णता पसन्द करते हैं।

बचाव के साधन—(१) कपड़ों में समय-समय पर लेवेण्डर (Lavender), चन्दन तथा कपूर (Camphor) का तेल डालते रहना चाहिए।

(२) ये कीड़े कागज की चिकनाई को पसन्द नहीं करते, इसलिए कपड़ों को कागज में लपेट कर रखना चाहिए।

(३) वस्त्रों को समय-समय पर धूप में सुखाते रहना चाहिए तथा उन्हें ब्रुश से झाड़ देना चाहिए।

(४) बक्स में नीम के पत्ते तथा नैप्थलीन की गोलियाँ रख देनी चाहिए।

स्वतः ज्ञान परीक्षा प्रश्न

१. "मक्खी मनुष्य की शत्रु है।" क्यों ? मक्खियों से बचने के उपाय लिखो

२. अपने गृह में मच्छरों और मक्खियों को आप क्यों और किस प्रकार नष्ट करेंगी ?

३. पिस्सू तथा खटमल मनुष्य के किस प्रकार शत्रु हैं ? इनसे बचने के उपाय बताइए।

४. चूहे वस्तुओं को किस प्रकार नष्ट करते हैं ? यदि घर में चूहे अधिक हों तो उन्हें किस प्रकार कम किया जा सकता है ?

५. दीमक हानिकारक कीड़ा क्यों है ? इससे बचने के लिए क्या प्रयत्न करने चाहिए।

६. वस्त्रों तथा पुस्तकों में लगने वाले कीड़ों के नाम बताइए। इनसे वस्तुओं की रक्षा किस प्रकार की जा सकती है।